चौमासा

वर्ष-30 अंक-93
नवम्बर 2013-फरवरी 20114

प्रधान सम्पादक
श्रीराम तिवारी

सम्पादक
अशोक मिश्र

आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल का प्रकाशन

ISSN 2249-5479
© स्वत्वाधिकार सुरक्षित

सम्पर्क
आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्
मध्यप्रदेश जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स
भोपाल-462002
फोन/ फैक्स : 0755-2661948, 2661640
E-mail : mplokkala@rediffmail.com,
mptribalmuseum@gmail.com
web. : www.mptribalmuseum.com

मूल्य
एक प्रति बीस रूपये
वार्षिक सदस्यता - पचास रूपये
आजीवन सदस्यता - पन्द्रह सौ रूपये
चौमासा का वार्षिक शुल्क अनुषंग पुस्तिका के साथ सौ रूपये

प्रचार/प्रसार
प्रवीण गावण्डे - (मो. 9827351093)

शब्दांकन
आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी
मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्

मुद्रण
शासकीय मुद्रणालय, भोपाल

- चौमासा में प्रकाशित सामग्री लेखकों के अपने कार्य और विचार हैं। आवश्यक नहीं कि अकादमी उससे सहमत हो।
- पत्रिका और प्रकाशन से संबंधित समस्त विवादों का न्यायालयीन कार्यक्षेत्र भोपाल रहेगा।

निदेशक, आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्- भोपाल मुद्रक, प्रकाशक द्वारा शासकीय मुद्रणालय, भोपाल से मुद्रित कराकर आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, जनजातीय संग्रहालय, श्यामला हिल्स- भोपाल से प्रकाशित।

सम्पादक-अशोक मिश्र

इस अंक में

संस्कारों की उपादेयता / डॉ. एच.आर. रैदास / 7
गर्भाधान से लासण जूण तक / डॉ. महेन्द्र भानावत / 14
संस्कारों का महत्त्व / डॉ. पूरन सहगल / 29
मानव जन्म की गाथा / मायापति मिश्र / 34
जन्म के अवधी गीत / डॉ विद्या विन्दु सिंह / 38
अवधी संस्कार गीत / डॉ. अंशुबाला मिश्र / 63
भोजपुरी गीतों में जन्म / डॉ. आद्याप्रसाद द्विवेदी / 66
ब्रज के सौभर गीत / सर्वोत्तम त्रिवेदी / 72
बज्जिका गीतों में जन्म / डॉ. ब्रजनंदन वर्मा / 76
छत्तीसगढ़ी सोहर गीत / प्रो. अश्विनी केशरवानी / 81
छत्तीसगढ़ी जन्म गीत / उर्मिला शुक्ल / 93
बुन्देली जन्म गीत/ श्रीमती अर्पणा बादल / 97
बुन्देली जन्म गीत / डॉ. रामस्वरूप ढेंगुला /104
जन्म के बुन्देली प्रतीक / पं. गुणसागर 'सत्यार्थी' / 108
बुन्देली जन्म संस्कार / वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक' / 112
बुन्देली अनुष्ठान -चरुआ / आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल /121
बुन्देली जन्म संस्कार / रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय / 124
बुन्देली जन्म संस्कार / सुधा तैलंग / 128
जन्म सम्बन्धी संस्कार / डॉ. प्रभा पहारिया / 134
जन्म दिवस का लोक विज्ञान / एम.एस. पारासर / 137
जन्म संस्कार / डॉ. नीलिमा गुप्ता /140
पवारों के जन्म संस्कार / गोपीनाथ कालभोर / 146
मालवी लोक में जन्म / नरहरि पटेल / 153
मालवी गीतों में जन्म / डॉ. शशि निगम / 156
जन्मे राम आनन्द भयो मन में / रमेशचन्द्र तोमर / 162
निमाड़ में जन्म संस्कार / छोगालाल कुमरावत 'सुजस' / 180
जन्म पूर्व के संस्कार / डॉ. पुष्पा रानी गर्ग / 186
बंजारा जन्म गीत / डॉ. हंसा कमलेश / 189
कोरकू जन्म संस्कार / डॉ. धर्मेन्द्र पारे / 197
भिलाला जन्म संस्कार / डॉ. श्रीमती गुलाब सोलंकी / 206
जनजातीय जन्म संस्कार / राधाकृष्ण बावनिया / 209
बैगा जनजाति में जन्म संस्कार / डॉ. विजय चौरसिया / 213

वाचिक साहित्य में पुत्र-जन्म के गीत और उत्सव की बहुवर्णी परम्पराएँ व्यवहार में हैं। नागर, लोक और कुछेक जनजातीय समाजों में पुत्र-जन्म के ही गीत पाये जाते हैं। पुत्री-जन्म के गीत और उत्सव की परम्परा का न पाया जाना प्रथमत: ऐसा लगता है कि पुत्री का जन्म समाज में उत्सव का विषय नहीं रहा है- और वह पुत्र जन्म से कहीं कमतर है। पुत्री जन्म के उत्सव का स्वरूप न होने के कारणों में ऐसा लगता है कि हमारी परम्परा में जो जन्मीं ही है जन्म देने के लिए उसके उत्सव की रचना न कर उसकी पूजा पद्धति विकसित की है- ऐसा देखा जाना चाहिए। लोक समाजों में कन्या को देवी स्वरूपा स्वीकार करते हुए उसकी आराधना की पद्धतियाँ विकसित की गई हैं।

जन्म, जीवन और मृत्यु की समवेत प्रतीकात्मकता 'जन्म' में सन्निहित है। हमारी परम्परा ने पैदा होने को 'जन्म' कहा है। जन्म में क्रमश: ज (जगतपिता ब्रह्मा) न् (नारायण) म (महादेव) का प्रतीक प्रतीत होता है। इन तीनों ही प्रतीकों में पुरुष वाचक संज्ञाएँ हैं। पुत्र-जन्म का उत्सव रचकर हमारी परम्परा ने त्रि-देवों की एक साथ अभ्यर्थना की सम्भवत: विधि विकसित की है।

इन्हीं सन्दर्भों में जन्म गीत और उनके वर्ण्य विषय को भी देखा जाना चाहिए। जन्म गीतों में नवजात राम या कृष्ण है, माँ- कौशल्या या यशोदा, पिता-दशरथ या नन्द को कहा गया है। गीतों में कहीं स्वर्ण थाल में भोजन परोसा जा रहा है, तो कहीं स्वर्ण या चाँदी की कटोरी में मेवा-मिष्ठान आदि के भोग की चर्चा है। लोक में सोहर गीत त्रि-देवों की समवेत आराधना और उससे जुड़े अनुष्ठान से लगते हैं।

चौमासा का यह अंक परम्परा में जन्म संस्कार से जुड़ी मान्यताओं, अनुष्ठानों और उसके उत्सव को विविधता और गीतों पर आधारित प्रकाशित किया जा रहा है। अकादमी इस अंक में प्रकाशित आलेखों के लेखकों/संकलनकर्त्ताओं के प्रति आभार प्रकट करती है। लोक परम्पराओं में उत्सुक पाठकों/अध्येताओं को यह अंक रूचिकर लगेगा, ऐसी आशा है।

- सम्पादक

संस्कारों की उपादेयता

डॉ. एच.आर. रैदास

भगवान शिव माता पार्वती से कहते हैं – 'शरीर माद्यं खलु धर्म साधनम्' शरीर के स्वस्थ रहने पर ही सभी प्रकार के धर्म की साधना सम्भव है। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिक का निवास होता है। शरीर का अस्तित्व पवित्र कर्मों पर आश्रित है, और अन्त:करण व आत्मा का अस्तित्व पवित्र ज्ञान पर आधारित है। निष्कर्ष रूपेण शरीर का धर्म है 'कर्म' और आत्मा का धर्म है– 'ज्ञान'। यही दोनों मानव जीवन के अवलम्बन, आधार आश्रय व अमृत पुञ्ज हैं। ज्ञानाराधना व कर्माराधना के सहारे व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अपना सर्वांगीण विकास, उन्नति व उदय प्राप्त करता है। कर्म व ज्ञान के रहस्य को हमारे पूर्वज मंत्रद्रष्टा ऋषियों ने भली–भांति जान लिया था। अत: कर्म की पवित्रता हेतु आश्रम व्यवस्था (सम्पूर्ण श्रम–कर्म) व पवित्र यज्ञकर्म की कल्पना की तथा ज्ञान की पवित्रता हेतु– मंत्रराशि वेद (सम्पूर्ण ज्ञान) का आविष्कार किया– जो अपूर्व, अद्‌भुत, अद्वितीय व मानवीय प्रज्ञा से परे था। यह सब सम्भव हुआ उन ऋषियों के संस्कारित शरीरों से और संस्कारित मंत्र पूतवाणी से। ज्ञान और कर्म सहचर सहभागी सदा रहे हैं। यज्ञकर्म में पवित्र (ज्ञानराशि) मंत्रों का पाठ करने से देवता प्रसन्न होकर ऋत्विजों और यजमानों को मनवांच्छित फल देते थे। संस्कारित छन्दोमयी वाणी का उच्चारण करने वाले ऋषियों के शरीर संस्कारित होकर ही किसी भी पुनीत कार्य में प्रवृत्त होते थे– चाहे वह यज्ञ हो, दान हो तप हो, अथवा अध्ययन–अध्यापन, मनन–चिंतन व निदिध्यासन। सर्वत्र पवित्रीकरण की प्रक्रिया प्रचलित रही। मन और शरीर के पवित्रीकरण की इसी विधि को आगे चलकर पृथकतया 'संस्कार' नाम या संज्ञा प्रदान की गई, जिसकी विवेचना– उपनिषदों, आख्यानों, पुराणों, स्मृतियों आदि धर्म व नीति ग्रन्थों में विधिवत की गई है।

संस्कार संस्कृत भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है किसी पदार्थ, वस्तु या व्यक्ति को भलीभांति सम्यक् रूप से परिमार्जित करना, निर्माण करना या उपयोगी अथवा योग्य बनाना। अच्छी रचना, अच्छा सृजन या उत्तम कोटि की निर्दोष संरचना संस्कार की परिधि में आती है। पुरातन मनीषियों की आकांक्षा सदा यही रही है कि विश्व मानव सर्वोत्तम गुणों से परिपूर्ण व सर्वश्रेष्ठ भावनाओं से ओतप्रोत रहे, तभी विश्व के राष्ट्र सर्वतोन्मुखी मंगलमयी उन्नति कर सकेंगे –

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत।।

इस निमित्त संसार में सर्वगुण सम्पन्न उत्तम सन्तति का होना अत्यावश्यक है और गुणवान संतान की उत्पत्ति शुद्ध अन्तःकरण व परिशुद्ध शरीरों वाले माता–पिता से ही संभव है। इसी हेतु मानव के पर्यावरण की शुद्धि हेतु भविष्यज्ञाता ऋषियों ने यज्ञों की अवधारणा आविष्कृत कर मानव के बाह्य व आंतरिक स्वरूप व आकार को निर्मल करने का साधन खोजा– वह भी प्रकृति आधारित। यज्ञावशिष्ट पवित्र अन्न खाने से मन–वाणी और कर्म भी पवित्र होंगे तथा आने वाली संतति भी उत्तम गुणों से भरपूर होगी–

यादृशं वपते बीजं, तादृशं लभते फलम्।

शुद्ध बीज से ही शुद्ध फसल पैदा होती है। उन ऋषियों से हमने शुद्ध चरित्र निर्माण की शिक्षा पायी है–

एतद् देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्ष्मरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।।

हमारे पुरोधाओं ने संस्कार की प्रक्रिया को तीन रूपों में रूपायित किया– प्रथमतः दोषमार्जन को संस्कार कहते हैं– अर्थात् – प्राकृतिक पदार्थ में जिस अनुपयोगी तत्त्वों का समावेश हो गया है, उन दोषों को दूर करना। जैसे लौकिक उदाहरण लिया जा सकता है– अन्न का। प्राकृतिक रूप से खेत में जिस प्रकार अनाज पैदा होता है। उसे उसी मूल रूप में ग्रहण नहीं किया जा सकता। उसका तुष, भूस आदि जो अनुपयुक्त अंश हो उसे दूर करके शुद्ध दाने तैयार करना। दोष मार्जन संस्कार है। दूसरा होता है– 'अतिशयाधान संस्कार।' जैसे– दोषमार्जन के पश्चात् अन्न में कूटपीस कर अग्नि पाक द्वारा जो विशेषताएँ या संस्कार किये जाते हैं, वह अतिशय आधान संस्कार है। तीसरा है– हीनांगपूर्ति संस्कार। दोषमार्जन और अतिशयाधान के बाद वस्तु में जो कमी दिखती है, उसे दूर करना दोष अर्जन हो यथा कूट पीसकर पकाये गये अन्न में रूचि अनुसार औषधीय मिश्रण– मधुर, लवण, तिक्त या घृत आदि पौष्टिक द्रव्यों के द्वारा उस कमी को दूर करके संस्कार करना हीनांगपूर्ति संस्कार है।

मनुष्य को संस्कारित करने की जो विधि शास्त्रों में बताई गई हैं, उन्हें शास्त्रीय संस्कार कहा गया है। ये संस्कार दो प्रकार के होते हैं– पहला श्रौत और दूसरा स्मार्त। बाह्य या आत्म संस्कार को स्मार्त कहते हैं। इन संस्कारों के मूल में स्मृतियाँ हैं। किन्तु इनकी कर्तव्य पद्धति स्मार्त ग्रन्थों में है। इसी कारण इन्हें स्मार्त संस्कार कहा गया। श्रौत संस्कार का सम्बन्ध श्रुति प्रतिपादित नियमों से हैं। दैव संस्कार की इतिकर्तव्यता श्रुतियों में विशदरूप से वर्णित है, अतः इन्हें श्रौत संस्कार कहते हैं– स्मृति श्रुति की अनुगामिनी है। कालिदास ने लिखा है–

श्रुतेरिवार्थ स्मृति रन्वगच्छत्।

स्मार्त संस्कार के इक्कीस भेद माने जाते हैं। इन इक्कीस भेदों में तीन अवान्तर भेद कहे गये हैं। इनमें प्रथम गर्भ संस्कार के अन्तर्गत आठ संस्कार तथा अनुव्रत के अन्तर्गत् आठ एवं धर्म शुद्धि के अन्तर्गत पाँच अवान्तर भेद हैं। उपर्युक्त में से अंतिम पाँच जो कि धर्म शुद्धि के अन्तर्गत हैं, वे दैव या श्रौत संस्कार की मूल प्रतिष्ठा बनते हैं। अतः इन्हें श्रौत संस्कार में अन्तर्भूत मान लिया जाता है। इस प्रकार स्मार्त संस्कार के सोलह भेद ही शेष रहते हैं, जो भारतीय मनीषियों को सर्वमान्य हैं और भारतीय सनातन समाज में प्रचलित है। इन सोलह संस्कारों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार देखा जा सकता है–

(क) गर्भ संस्कार

गर्भ संस्कार के अन्तर्गत आठ भेद माने गये हैं– गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, इन्हें अन्तर्गर्भ संस्कार भी कहा जाता है, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन और चौलकर्म इन पाँचों को बहिर्गभ संस्कार भी कहते हैं। ये आठ संस्कार शोधक और दोषमार्जक है। ये संस्कार जातक के पिता द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं।

(ख) अनुव्रत संस्कार

इस दूसरे अनुव्रत संस्कार के भी आठ भेद हैं– कर्णभेद, उपनयन, व्रतादेश, वेद स्वाध्याय, केशान्त, स्नान, विवाह और

अग्निपरिग्रह। ये आठों संस्कार वाह्य भाग में अतिशय आधान करते हैं। ये विशेषक हैं और आचार्य द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं।

(ग) धर्मशुद्धि (श्रौत) संस्कार

इसके अन्तर्गत पाँच संस्कार आते है- शरीर शुद्धि, द्रव्य शुद्धि, एनः शुद्धि, अघशुद्धि और भाव शुद्धि। उपर्युक्त संस्कारों में से स्मार्त सोलह संस्कारों का दिग्दर्शन निम्नानुसार है-

गर्भाधान संस्कार

प्रत्येक गर्भस्थ जीव माता-पिता के रज-वीर्य जनित प्राकृतिक एवं आगन्तुक दोषों से प्रभावित होने के अतिरिक्त जन्मान्तर में अर्जित अपने अच्छे-बुरे कर्मों को भी साथ लाता है। गर्भाधान संस्कार द्वारा उनका मार्जन (शुद्धिकरण) हो जाता है। अथर्ववेद में गर्भस्थ जीव की रक्षा एवं संवर्धन के लिये प्रार्थना की गई है। विवाह सम्पन्न होने के कम से कम तीन दिन और अधिक से अधिक सात वर्ष तक पूरा ब्रह्मचर्य पालन कर गर्भाधान किया जाना चाहिये। इस संस्कार को पुत्रेष्टि भी कहते हैं।

1. पुंसवन संस्कार

यह संस्कार गर्भाधान के तीन मास बाद किया जाता है। इसके द्वारा गर्भस्थ जीव में पुरुषभाव का आधान किया जाता है। यदि जीव में पुरुष भ्रूण का अधिक्य होता है तो पुरुष और यदि स्त्रीभ्रूण की अधिकता होती है तो स्त्रीभाव का आधान होता है। इसमें मंत्रोच्चारण के साथ कुछ औषधियों का रस गर्भिणी के नासारन्ध्रों में प्रवेश कराया जाता हैं। इस संस्कार का उद्देश्य गर्भ को स्वस्थ तथा बलवत्तर बनाना है।

2. सीमान्त संस्कार

गर्भिणी स्त्री के केश को दो समान भागों में विभाजित करने वाली सिन्दूर रेखा को सीमन्त कहते हैं। गर्भाधन के चौथे, छठें या आठवें मास यह संस्कार किया जाता है। इसका उद्देश्य यह है कि गर्भिणी का गर्भपात न हो। इसमें स्त्री की मांग में स्रुही के कांटे का स्पर्श कराया जाता है और सोम आदि की स्तुति की जाती है। इसका प्रयोजन गर्भिणी के दोहद (तीव्र इच्छा) को पूर्ण करना है। उसे प्रसन्न व संतुष्ट रखने से आने वाला शिशु भी स्वस्थ व निरोगी रहता है, इसमें वरिष्ठजन स्त्री को वीर प्रसविनी होने का आशीर्वाद देते हैं। मधुर संगीत आदि का आयोजन भी किया जाता है।

3. जातकर्म संस्कार

यह शिशु के जन्म लेने के पश्चात् सम्पन्न होता है। इसका उद्देश्य नवजात शिशु की बुद्धि तथा आयु की वृद्धि है। नालोच्छेद के पहले शिशु को सुवर्ण पात्र से दधि, घृत और मधु मिलाकर चटाया जाता है और साथ ही मंत्रोच्चारण के साथ बालक की जीभ में सुवर्ण शलाका से वेद लिखा जाता है और यह कामना की जाती हैं कि यह बालक गुण-कर्मों से अपने पिता-पितामह से अधिक उन्नति करे।

4. नामकरण संस्कार

यह संस्कार प्रसव के ग्यारवें दिन किया जाता हैं। नामाक्षर के सम्बन्ध में स्मृतियों में बताया गया है कि नाम के अक्षर ऐसे हों, जिनसे सात्विक व पवित्र भाव द्योतित हों। नाम देवताओं के, महापुरुषों के गुणों का अनुसरण करने वाले दो या चार अक्षरों का होना चाहिये। संसार में व्यक्ति का नाम ही शेष रह जाता है। अतः नाम पवित्र एवं सार्थक सोद्देश्य हो। कुछ आचार्य दसवें या बारहवें दिन भी नामकरण का विधान करते हैं।

5. निष्क्रमण संस्कार

नवजात शिशु को प्रथम बार घर से निकालने के समय यह संस्कार किया जाता है यह जन्म के चौथे मास में सम्पन्न होता है। इसके पूर्व शिशु को घर में रखा जाता है। रक्षक प्राण देवताओं से सम्बद्ध मंत्रों का उच्चारण करने के साथ बच्चे को सूर्य दर्शन कराया जाता है। शारीरिक दृष्टि से शिशु निरोगी रहे और प्राकृतिक तथा भौतिक व्याधियों से बचा रहे। इस बात को ध्यान में रखकर यह संस्कार किया जाता है।

6. अन्नप्राशन संस्कार

बालक ज्यो-ज्यों बड़ा होता है, उसकी भूख बढ़ती जाती है और माता के स्तन का दूध घटता जाता है। बालक की शरीर रक्षा के लिये अन्नप्राशन संस्कार द्वारा उसे अन्न (मधु और खीर) दिया जाता है। अन्न से उसके मन और शरीरादि में बल का संवर्धन होता है। अन्नप्राशन छठें मास करने का प्रावधान है। अन्न देवरूप है, अतः मंत्रों के उच्चारण पूर्वक यह संस्कार किया जाता है। शिशु का पिता वाक्, बल तथा पुष्टि आदि के लिए अग्नि में

हवि डालता है। फिर बालक को भोजन का ग्रास देते हुए ऊँ भू:,भुव: स्व: का उच्चारण करता है।

7. चूड़ा कर्म

विधि निर्देश के अनुसार इस संस्कार में शरीर के बाहर जो केश हैं, उनमें पवित्रीकरण न होने से ने त्याज्य हैं। इसे चौलकर्म भी कहते हैं। इनमें केशों का वपन किया जाता है। केश जब तक शरीर में रहते हैं। कर्मो और संस्कार द्वारा तब तक उनमें पवित्रता बनी रहती है। किन्तु शरीर मे अलग होते ही वे अपवित्र हो जाते हैं। अपवित्र बालों के बार-बार वपन करने का विधान हो, इसलिए सर्वप्रथम उनका वपन करते समय विधि-विधान पूर्वक यह संस्कार सम्पन्न किया जाता है। इसमें मंत्रोच्चारण द्वारा सोम तथा अग्नि आदि देवों से बालक के कष्टों को हरने की प्रार्थना की जाती हैं। चूड़ा करण में शिखा का वपन निषेद्य है, क्योंकि शिखा स्थल पर ब्रह्मरन्ध्र होता है। जहाँ से होकर सूर्य प्राण शरीर में प्रवेश करते हैं और उसी रास्ते से प्राण सूर्य की ओर जाते हैं। अत: शिखा में ग्रन्थि बाँधने से प्राण रक्षा होती है।

8. कर्णवेध संस्कार

यह संस्कार स्वास्थ्य, सुरक्षा और सौंदर्य के निमित्त किया जाता है। आयुर्वेद के अनुसार इसे करने से आन्त्रवृद्धि (हार्निया की बीमारी) नहीं होती। यह तीसरे या पाँचवें वर्ष में किया जाता है इससे ज्ञान का प्रवेश श्रवणेन्द्रियों में होता है तथा मस्तिष्क व शरीर सदा चैतन्य रहता है। इस संस्कार के समय 'भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम' मंत्र का उच्चारण किया जाता है। यह संस्कार शरीर के विकारों को दूर करता है।

9. विद्यारम्भ संस्कार

इसे अक्षराम्भ अक्षर स्वीकरण तथा अक्षर लेखन संस्कार भी कहा जाता है। कौटिल्य के अनुसार यह चौलकर्म के बाद ही प्रारम्भ होता था। इसमें विष्णु, लक्ष्मी, विनायक, सरस्वती और बृहस्पति आदि देवों की पूजा करके अग्नि में हवि डाली जाती है। अध्यापक पूर्व की ओर तथा ब्रह्मचारी पश्चिम की ओर मुँह करके बैठते हैं तथा पढ़ना-लिखना सिखाया जाता है। यह संस्कार पर्याप्त अर्वाचीन माना जाता है।

10. उपनयन संस्कार

इससे यज्ञोपवीत या व्रतबन्ध संस्कार भी कहते हैं। इस संस्कार के करने से बालक की बुद्धि का परिमार्जन होता है और वह विद्याध्ययन के उपयुक्त बन जाता है। उपनयन का अर्थ है बालक को गुरू के समीप ले जाना। बालक गुरू के आश्रम में दीक्षित होकर वेदाध्ययन का अधिकारी बनता है। यह पाँचवें, छठवें या आठवें वर्ष में किया जाता है। ब्रह्मचारी में बुद्धि के अधिष्ठता सूर्य देव की आराधना और यज्ञ का विधान किया जाता है। यज्ञ में पलाश की समिधाओं की आहुति दी जाती हैं तथा बालक ब्रह्मचारी बनकर पलाश दण्ड धारण करता है। इस संस्कार में ब्रह्मचारी बालक में तेज, बल और वीर्य का आधान होता है। इस अवस्था में ब्रह्मचारी द्विज जाति से च्युत हो जाता है। वह किसी पुण्यकार्य या विवाहादि का अभिकार नहीं रखता है। आचार्य ब्रह्मचारी को सूर्य का दर्शन कराता है तथा कामना करता है कि- हे देव सविता! यह तुम्हारा ब्रह्मचारी है, इसका संरक्षण करो, यह मृत्यु को प्राप्त न होवे।

देव सवितरेषते ब्रह्मचारी तं गोपाय स मा मृत।

11. व्रतादेश संस्कार

उपनयन के बाद आचार्य जिस व्रत के अनुष्ठान तथा परिपालन के लिये आदेश देता है, उसे व्रतादेश कहते हैं। इस संस्कारों में गृहस्थाश्रम में प्रवेश के पूर्व आचार्य उसे सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचार्य आदि व्रतों के पालन का आदेश देते हैं तथा नियमन: का भी वचन लेते हैं, तभी वह गृहस्थ जीवन का अधिकारी बन सकता है।

12. वेदारम्भ संस्कार

इसे वेद स्वाध्याय संस्कार भी कहते हैं। इस संस्कार के पश्चात् ही ब्राह्मण को श्रौत संस्कारों के सम्पादन का अधिकार प्राप्त होता है। इसमें ब्रह्मचारी वेद स्वाध्याय के बिना यज्ञादि कार्यों का अधिकारी नहीं बनता। मनु का कहना है कि वेदों का विधिवत् अध्ययन करने के उपरान्त ब्रह्मचारी की रक्षा करता हुआ युवक गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने योग्य बनता हैं। कुछ आचार्य इसे व्रतादेश संस्कार का ही भाग मानते हैं।

13. समावर्तन संस्कार

सांगोपांग वेदाध्ययन के उपरान्त यह संस्कार ब्रह्मचर्याश्रम की समाप्ति का सूचक है। इस संस्कार के बाद वह स्नातक होकर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने का अधिकारी हो जाता है। समावर्तन के समय उसने ब्रह्मचर्याश्रम की अवधि में जो मेखला, मृगचर्म तथा दण्ड आदि धारण किये थे, उनका परित्याग कर देता है। इस समय गुरू उसे माता-पिता, गुरू, अतिथि आदि की सेवा परिचर्या और मानवता के लिए उपयोगी उदात्त कर्तव्यों के परिपालन करने का उपदेश देते हैं,

14. विवाह संस्कार

इसे महत्त्वपूर्ण संस्कार मानकर ब्रह्मचारी को पाणिग्रहण संस्कार कराकर गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट कराया जाता है। यह सभी संस्कारों की अपेक्षा कठिन है व सृष्टि का मूलकारण बनता है। इसमें वर-वधू, जल और अग्नि के समक्ष आजीवन तथा परलोक तक में साथ रहने का वचन देते हैं। जल और अग्नि के मेल से जो अथाह शक्ति उत्पन्न होती है। वैवाहिक बंधन में बंधे स्त्री-पुरुष में उस शक्ति का संचार होता है। इस समय पति-पत्नी गृहस्थ जीवन के अनुष्ठान के लिये जिन व्रतों के परिपालन की प्रतिज्ञा करते हैं, उनसे यह सिद्ध होता है कि लोक-परलोक तक उनका सम्बन्ध बना रहता है।

15. अग्नि परिग्रह

विवाह संस्कार के बाद गृहस्थ जीवन में प्रवेश करने के बाद अग्नि परिग्रह संस्कार का विधान है। गृहस्थ जीवन के सुख-ऐश्वर्य और आत्मा-देहादि धर्मों की पवित्रता तथा अभ्युदय के लिये श्रुतियों में तथा स्मृतियों में गृहयाग्नि की प्रतिष्ठा की जानी चाहिये, इसका विधान है। इसमें पाँच महायज्ञों का अनुष्ठान बताया गया है।

16. अंत्येष्टि संस्कार

मानव जीवन की सर्वांगीण उन्नति के बाद अंतिम समय उसका ह्रास काल है, जो अनिवार्य है। गीता आदि दर्शन ग्रंथों में जीवन की नश्वरता का विशद् विवेचन है। जिसका जन्म हुआ है, उसकी मृत्यु भी अकाट्य है, निश्चित है। निरूक्त में जीवन के छह विकार बताये गये हैं-जायते, अस्ति, विपरिणमते, वर्धते, अपक्षीयते और विनश्यति। ये विकार जड़-चेतन सभी में होते हैं। किन्तु हमारा सनातन धर्म इसे भी संस्कार की मान्यता देता है। संसार की कई जातियाँ इसे उतना ही महत्त्व देती हैं, जितना जन्म को। कालिदास ने कहा है-मरणं प्रकृति प्राणिनां विकृतिर्जीवितमुच्यते वुधैः। अर्थात् मृत्यु ही प्रकृति है और जीवन तो विकार मात्र है, जैसे दूध प्रकृति है, सत्य है- तथा उस विकार दही आदि बनते और मिटते रहते हैं।

जात संस्कार

वैदिककाल में पुत्र जन्म के अवसर पर जात संस्कार सम्पन्न किया जाता था। यह संस्कार जातक के पिता द्वारा सम्पन्न किया जाता था। इसमें द्वादश कपाल पर पकाये हुए रोट को वैश्वानर (अग्नि) के लिये समर्पित करके कृतज्ञता प्रकट की जाती थी। लोगों की मान्यता थी कि जिस पुत्र के जन्म के अवसर पर उपर्युक्त विधि से वैश्वानर को तृप्त किया जाता है, वह पवित्र, तेजस्वी, अन्नाद, इन्द्रिजल से सम्पन्न और अनेक पशुओं का स्वामी होता है।

वैदिक युग में नवजात शिशु की नाभि कटने के पूर्व पाँच ब्राह्मणों को बुलाकर उस शिशु को अनुप्राणित करने का विधान था। इस विधान से बालक के पूर्ण जीवन और बुद्धि की आशा की जाती थी, जिससे उस शिशु में ब्राह्मणोचित वृत्तियों का विकास हो एतदर्थ ब्राह्मणों के संसर्ग के महत्त्व को दृष्टिगत रखते हुए ब्राह्मणों को आमंत्रित किया जाता था। बृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार नवजात शिशु को गोद में लेकर उसका पिता जमे हुए दूध और घी की हवि बनाकर हवन करता था। हवन करते समय पिता कामना करता था कि- अपने घर में इस शिशु से संवर्धनशील होकर मैं सहस्रों का पोषण करूँ। पशुओं और संतति का कभी मेरे लिये विच्छेद न हो। इसके पश्चात् पिता शिशु के दाहिने कान के समीप तीन बार 'वाक्' कहता था- *भूस्ते दधामि। भुवस्ते दधामि। स्वस्ते दधामि। भूर्भुवः स्वः सर्वं त्वयि दधामि।*

अर्थात् मैं तुममें भूः (पृथ्वी) भुवः (वायुलोक) और स्वः (स्वर्गलोक) की प्रतिष्ठा करता हूँ। इस प्रतिष्ठा के द्वारा मानव के विश्वात्मक व्यक्तित्व का नियोजित विकास होता था। वैज्ञानिक दृष्टि से मानव अखिल ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म स्वरूप है- यत्पिण्डे

तत्ब्रह्माण्डे। यत्ब्रह्माण्डे तत्पिण्डे। इस दार्शनिक तत्वानुशीलन की मानसिक प्रतिष्ठा के लिये शिशु का जन्म प्रथम अवसर था।

इस प्रतिष्ठा के पश्चात् पिता शिशु को माता का दूध पीने के लिये देता था। माता का दूध पिलाते समय शिशु का पिता वाग्देवी सरस्वती की स्तुति इन शब्दों में करता है- हे सरस्वती! तुम शिशु के द्वारा आत्मसात् होने के लिए माता के स्तन में प्रवेश करो। तुम्हीं समस्त प्राणियों का पोषण करती हो, रत्न धारण करती हो और उदार हो। अन्त में पिता शिशु की वीर प्रसविनी माता का अभिनंदन इन शब्दों में करता था- हे मैत्रावरूणि, वीरांगने, तुम इला हो तुमने वीर पुत्र को जन्म दिया है, तुम वीरवती हो, और तुमने हमारे कुल को वीर पुत्र से समृद्ध किया है। फिर अन्य परिवार के सदस्य उस शिशु को आशीर्वाद देते थे कि - तुम अपने पिता से बढ़कर हो, पितामह से बढ़कर बनो। इस प्रकार के ज्ञान से पुत्र- श्री, ब्रह्मचर्य और यश से सर्वोच्च पद प्राप्त करता है।

आश्वलायन गृह्यसूत्र के अनुसार दही और घी का घोल चटाते समय पिता शिशु के सौ वर्ष तक जीने की कामना करता था। इसके पश्चात् वह मेधाजनन की प्रक्रिया सम्पन्न करता था। वह अपना मुख शिशु के कान के समीप ले जाकर यह मंत्र पढ़ता था-

मेधां त्वे देवः सविता मेधां देवी सरस्वती।
मेधां त्वे अश्विनौ देवावाधतां पुष्करस्रजौ।।

अर्थात् - सविता देव तुमको बुद्धि प्रदान करें, देवी सरस्वती तुम्हारी मेधा को बढ़ाएँ, अश्विनीकुमार तुम्हारी बुद्धि का वर्धन करें। अंत में नवजात शिशु के कंधों का स्पर्श करके पिता कहता है-

अश्मा भव, पाशुर्भव, हिरण्यमस्तृतं भव।
वेदो वै पुत्रनामासि जीव शरदः शतभिति।।
इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धैह्यस्मै।
प्रयन्धि मधवन्नृजीषिन्।

अर्थात् - पत्थर के समान मजबूत व दृढ़ बनो, परशु के समान तीक्ष्ण व तेजस्वी बनो, अक्षुण्ण स्वर्ण की भाँति कांतिमान, गुणवान व मूल्यवान बनो, तुम्हारा नाम निश्चय ही वेद (सर्वज्ञ) है, तुम सौ वर्ष की आयु को प्राप्त करो। हे इन्द्र! इस शिशु को सारे श्रेष्ठ धन प्रदान करना।

उपर्युक्त आशीर्वाद केवल औपचारिकता या परम्परा मात्र नहीं होता था, अपितु इसे प्रत्यक्ष रूप दिया गया था। पत्थर के ऊपर परशु और परशु के ऊपर स्वर्ण तथा स्वर्ण के ऊपर शिशु को रखकर प्रकट किया जाता था कि वह प्रत्यक्ष ही। प्रस्तर, परशु और हिरण्य के ऊपर है, और गुणों के द्वारा भी इनसे बढ़कर है। कुछ उन्नत कुलों में शिशु को ब्रह्मलोक परायण बनाने के लिये जन्म के दिन निरंतर अग्नि को प्रज्ज्वलित रखा जाता था। जन्मोत्सव के अवसर पर गौ और निष्क (मुद्रा) आदि का ब्राह्मणों को दान में देने की रीति विद्यमान थी। महाकवि भास ने अपने नाटक 'पंचरात्र' में बताया है कि राजा विराट के जन्म दिवस के अवसर पर असंख्य गौएँ दान में दी गई थीं। अथर्ववेद के एक सूक्त में बालक के सुरक्षित जन्म के लिये विविध प्रार्थनाएँ तथा अभिचार विधियाँ बताईं गईं हैं। इस संस्कार के द्वारा मातृ-पितृज शारीरिक दोषों का शमन होता है। इस संस्कार में शिशु को जन्म के समय पिता द्वारा स्वर्ण की सलाई से मधु और घी का घोल चटाने का भी वैज्ञानिक महत्त्व है। आयुर्वेदानुसार स्वर्ण वायु का शमन करता है तथा मधु से पित्तकोश सजग होता है और कफ शांत होता है। घृत शरीर में तापवृद्धि करता है और बलवर्धक तथा विरेचक होता है। इस प्रकार जातकर्म संस्कार करने से शिशु की शारीरिक कार्यप्रणली सुचारू रूप से कार्य करने लग जाती है। इस विधान के द्वारा पिता शिशु को विश्व की विभूतिओं का उपयोग करने का आशीर्वाद देता है। तथा स्वार्थ भावना से ऊपर उठने का संस्कार समारोपित करता है। अथर्ववेद में गाय के द्वारा अपने बछड़े के जन्म के समय किये जाने वाले संस्कार और उसका वत्स (बछड़े) के प्रति अगाध स्नेह का द्रष्टान्त देखने को मिलता है। ऋषि मनुष्यों से कहता है कि तुम लोग वैसे ही स्नेह और प्रेम करो, जैसे गाय अपने बछड़े को प्राणपण से प्रेम करती है- *वत्सं जातमिवाध्न्या।*

सन्तति के जन्म से सारा कुल धन्य और पुनीत हो जाता है। कालिदास ने पर्वतराज हिमालय के घर में जन्मी पार्वती के जात संस्कार का वर्णन करते हुए कहा है कि पार्वती के जन्म से नगाधिराज का कुल वैसे ही धन्य, पवित्र और सुशोभित हुआ, जैसे संस्कारवती वाणी से विद्वान पवित्र और विभूषित होता है।

प्रभामहत्था दीपास्त्रिमार्गयेव त्रिदिवस्य मार्गः।
संस्कारवत्या गिरामनीषी तथा सा पूतश्च विभूषितश्च।।

कालिदास के इस कथन से पुत्रियों के भी पुराकाल में जात संस्कार होने की पुष्टि होती है। आचार्य मनु का भी मत है कि उपनयन को छोड़कर प्राचीन काल में कन्याओं के भी सभी संस्कार सम्पन्न कराये जाते थे तथा उनका भी उत्तम तरीके से शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध होता था। इसका परिपुष्ट प्रमाण यह है कि अनेक मंत्रदृष्टी ऋषिकाएँ, वेदों में वर्णित हैं। दार्शनिक क्षेत्र में भी ऋषिकाओं की महती भूमिका का निदर्शन वैदिक वाङ्मय में भरा पड़ा है। सभी गृह्यसूत्र संस्कारों की विशद् विवेचना प्रस्तुत करते हैं। बलिष्ठ काल की परिवर्तनशालिनी शक्ति ने शनैः-शनैः युगधर्म बदले और धीरे-धीरे संस्कृति और संस्कारों का क्षरण व ह्रास क्रमशः होने लगा। आज संसार की भयंकर दुर्दशा का कारण है हमारे द्वारा पुरातन आदर्शों, मूल्यों और संस्कारों को विस्मृत कर देना या उनके रहस्य को व वैज्ञानिकता को न समझ पाना है। इतना होने पर भी आज भी ऐसे अनेक परिवार और समाज इस धरा पर विद्यमान हैं, जो परम्परया संस्कृति और संस्कारों के संरक्षण में संनद्ध हैं। हम सभी का यह दायित्व, कर्तव्य और परम धर्म होना चाहिये कि हम आगामी पीढ़ी को इन सबसे अवगत करायें और इनका आचरण करें, अन्यथा प्रकृति अपना सन्तुलन बनाना जानती है। काल भी प्रकृति के अधीन है। जब-जब धर्म की हानि होती है, प्रकृति विनाश करके नयी सृष्टि करती है और इसी को प्रलय और सृष्टि कहते हैं। प्रकृति को संचालित करने ईश्वर भी अवतरित होते है-

यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

-श्रीमद्भगवद् गीता

गर्भाधान से लासण जूण तक

डॉ. महेन्द्र भानावत

पूरी सृष्टि विचित्रताओं से भरी हुई है। हम जो जानते हैं उससे कई गुना अधिक अनजाना है, रहस्यमय है- जिसे जानने की हमारी तमन्ना, उत्कण्ठा, जिज्ञासा बनी रहती है। हमारा जन्म भी अपने में कई रहस्यों का पिटारा लिए है। कहते हैं नारी की सफलता ही उसके मातृत्व में है। जो नारी माँ नहीं बन सकती, उसे स्वयं को भी अपना जीवन नकारा लगता है। घर-परिवार और समाज में भी उसे तिरस्कार ही मिलता है। वह कई रूपों में कइयों द्वारा प्रताड़ित रहती है।

नि:संतान औरतें संतान प्राप्ति के लिए नाना प्रकार के टोने-टोटके करती हैं। देवी-देवताओं की शरण पकड़ती हैं और समझेबुझों से, डाक्टरों से इलाज पूछती हैं। कई दृष्टियों से वे ठगी जाती हैं। लोकदेवी-देवताओं में बहुत से देवता निपूती को संतान देते हैं। इसके लिए उसकी गोद भरते हैं। पालने बँधवाये जाते हैं। कल्लाजी राठौड़ ऐसे ही देव हैं, जिन्होंने सैकड़ों निपूतियों को सपूत दिये। राजस्थान के अलावा मध्यप्रदेश, गुजरात, हरियाणा आदि में इनके 900 से अधिक थानक (पूजा स्थल) हैं।

कहते हैं कि आबू के अग्निकुंड से चह्वाण वंश उपजा। इस वंश में नरू नामक एक राजा हुआ। उसने 108 विवाह किए पर संतान एक भी नहीं हुई, तब बाँसवाड़ा जिले के धारणा गाँव के आमल्या बाबाजी (इमली वृक्ष के नीचे विराजमान देवता) की मनौती बोली गई। वहाँ एक सौ आठ पालने बँधवाये गये। इससे नरू राजा के 108 बालक हुए। इन्हीं से आगे जाकर आदिवासियों में एक सौ आठ अटके किंवा साखें अथवा गोत्रें चली। वर्तमान में भी ये सभी साखें वाले आदिवासी बाँसवाड़ा में मिल जायेंगे।

दूधां न्हावो पूतां फलो

यह सही है कि हमारे यहाँ पुत्र-जन्म को ही सर्वाधिक महत्त्व दिया गया है। स्वयं माताएँ भी पुत्र जन्म को श्रेष्ठ मानती हैं और लड़की को पराई समझती हैं। वंश को चलायमान पुत्र ही रखता है। वंशवृक्ष-वंशावली रखने वाले पोथी वाचक अथवा बही भाट भी अपनी बहियों-पोथियों में इसी को प्राथमिकता देते हैं। यजमान जिनकी पीढ़ियों का वे लेखा-जोखा रखते हैं, उसमें भी पुत्रांकन का ही बोलबाला मिलता है। लोकजीवन में जो कहावतें मिलती हैं, वे भी पुत्र-जन्म की ही बलिहारी का बखान लिए हैं। सर्वाधिक चर्चित 'दूधां न्हावो पूतां फलो' कहावत में पूत से तात्पर्य पुत्र से ही है। किसी सौभाग्यवती को आशीष देते समय भी 'पुत्रवती' हो, कहा जाता है।

पुत्री का जन्म शुभ नहीं माना जाता, इसीलिए उसके जन्म की सूचना अड़ोसी-पड़ोसी को सूप थपथपाकर दी जाती है। वहीं पुत्र-जन्म के लिए थाली की गूँजती आवाज सुनाई जाती है। नारियल की चटकें और पतासियाँ बाँटी जाती हैं। रात्रि को बच्चों को कहानियाँ सुनाने वाली दादी भी कहानी समाप्ति के अंत में यही कहती सुनी जाती हैं-

खाजो पीजो
म्हारी कैणी मोटी वीजो
हामले घरे छोरो वीजो
पांच पतायां थांई खाजो
पांच पतायां म्हाणे मलजो

अर्थात् बच्चों! खूब खाओ-पीओ यानी फलो-फूलो। हमारी कहानी भी बढ़ती रहे, बड़ाई पाती रहे। सामने वाले के पुत्र पैदा हो। उसकी खुशी में पाँच पतासी तुम्हें खाने को मिले और हमें भी पाँच पतासी प्राप्त हो।

पुत्री-परिवार

अधिक पुत्रियाँ पैदा करने वाली महिला न अपने परिवार में और न ही समाज में सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। मैंने ऐसी महिलाएँ देखी है, जिनके एक दर्जन तक संतानें हुईं। उनके लिए 'गडूरी' (शूकरी) सम्बोधन सुना। कहीं-कहीं 'भूंडण' शब्द का प्रयोग मिलता है। ऐसी भी महिलाएँ देखने में आयी हैं, जिन्होंने पुत्र की आशा में छह-आठ तक लड़कियाँ पैदा कर दीं। मेरी बुआजी के तेरह लड़कियाँ हुई, किंतु एक भी जीवित नहीं रही। किसी समझे-बुझे ने कहा कि उनकी पीठ पर सर्पणी (नागिन) की आकृति होने के कारण वह किसी को जीवित नहीं रहने देती है। पुत्र की प्राप्ति अच्छे भाग्य की निशानी है। पुत्री प्राप्ति बोदे अथवा खोटे भाग्य की सूचक है, किन्तु अब इस सोच में बड़ा बदलाव आ रहा है।

अधिक पुत्रियाँ होने पर उनके नाम भी अणछाई (बिना चाह पैदा हुई), धापू (लड़कियाँ पैदा कर धाप गई, तृप्त हो गई), कचरी (कचरे की तरह व्यर्थ एवं मूल्यहीन, त्याज्य), रोड़ी (कचरे के ढेर अथवा ढगले), बगदी (मूल्यहीन कचरा) मिलते हैं। जिस परिवार में लड़के हों, वहाँ यदि लड़की का जन्म हो जाय तो उसका नाम चावती (चाहने वाली, सबकी प्रिय) रखकर प्रसन्नता व्यक्त की जाती है।

मानव जीवन सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है। इस जन्म के लिए देवता भी तरसते हैं। देवता अशरीरी होते हैं। मनुष्य के शरीर में आकर वे अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। बातचीत करते हैं। निरोग करते हैं। समस्याओं का समाधान देते हैं। अपने चमत्कारी कार्य से सबकी श्रद्धा एवं आस्था के पात्र बनते हैं। इनका स्थान देवरा होता है। जिसके शरीर में ये भाव अथवा उपस्थिति देते हैं वह भोपा कहलाता है। एक पूर्वज होते हैं, गृहदेव जो घर-परिवार तक सीमित रहते हैं। कुल देवता पूरे कुल-गोत्र के रूप में समग्र कुल के रक्षक होते हैं। ये घर-कुल के ही किसी व्यक्ति के शरीर में आते हैं, जो उनका 'घोड़ला' कहलाता है।

मृत पूर्वज

दो माह, चार माह का गर्भ गिर जाने पर जो बच्चे मृत जन्म लेते हैं, वे भी पूर्वज बनते देखे गये हैं। ऐसी स्थिति में वे अपनी माता के शरीर में आकर अपनी उपस्थिति का एहसास कराते हैं। कोई-कोई पीने को पानी अथवा दूध माँगते हैं। घूँट-दो-घूँट पीने के पश्चात् वे चले जाते हैं। यदि कोई उस अवस्था में अपना मुँह खोलता है यानी वाणी देता है, बोलता है तो उसके सम्मुख जो भी प्रश्न या समस्या रखी जाती है, उसका भली प्रकार उत्तर मिलता है और उसकी कही बात सच सिद्ध होती है।

शरीर में नहीं आने वाले कभी-कभी स्वप्न देकर कोई बात कह जाते हैं। ऐसे बाल-मृतक विधिवत् पूर्वज के रूप में उस परिवार में स्थापित नहीं होते, मगर किसी को मोहवश अपनी स्थापना पूर्वज के रूप में करनी होती है, तब वे स्पष्टत: उसका संकेत देकर स्थापित होने वाली तिथि, उसकी प्रक्रिया और स्थान विशेष के बारे में सारी जानकारी देकर परिजनों को निश्चिंत कर देते हैं। परिजन उन्हें स्थापित कर प्रसन्न होते हैं, कारण कि पूर्वज सदैव ही उस घर-परिवार के रक्षक तथा सुख और समृद्धि देने वाले होते हैं।

मेरे अपने ही परिवार में बच्चा होने पर जलवाय पूजने का ज्योतिषी से मुहूर्त निकलवाया, किंतु उसी रात पूर्वज बाबाजी ने जच्चा को स्वप्न दिया कि जो मुहूर्त निकाला गया है, वह ठीक नहीं है। उस दिन का चन्द्रमा मोरा है- बोदा है, अत: कोई दूसरा मुहूर्त निकलवाना। यही किया गया।

श्राद्धपक्ष में पूर्वज की मृत्यु तिथि पर विधिपूर्वक स्मरण कर मिष्ठान्न मुख्यत: खीर-पूड़ी की धूप दी जाती है। यों श्राद्ध की पंचमी को कुँवारों की पांचम के दिन कुँवारे मृतक पूर्वजों को धूप दी जाती है। नवमी को डोकर्‌या नव के दिन बूढ़े मृतकों के नाम धूप दी जाती है। यह तब किया जाता है, जब मृतकों की मृत्यु तिथि की जानकारी नहीं रहती है। कोई इन तिथियों पर भी किसी कारणवश अपने पूर्वजों को याद नहीं कर पाता है, तब श्राद्ध के आखिरी दिन जो भी अनाम अथवा अंजान पूर्वज हुए हों, उनके नाम की धूप दी जाती है। ऐसी स्थिति में पूर्वजों के नाम का जो भी दोष होता है, वह टल जाता है।

जो जीव जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही फल मिलता है। हमारे यहाँ चौरासी लाख जीव योनी कही गई है। इनमें भटकता हुआ अंत में कोई जीव मनुष्य योनी प्राप्त करता है। इसलिए मनुष्य को अच्छा मनुष्य बने रहने के लिए अच्छा कार्य करते रहना चाहिए।

यह मनुष्य पूर्व जन्म का विश्वासी है। अगले जन्म का विश्वासी है और जन्म-जन्म का विश्वासी है। अकाल मृत्यु पाने वाले को पुन:-पुन: सात बार जन्म धारण करना पड़ता है। मीराबाई ने द्वारिका में समुद्र समर्पण किया। रैदास को भी दुश्मनों के हाथ अपना मस्तक कटाना पड़ा। गाँधीजी की भी हत्या हुई। वीरवर कल्ला राठौड़ भी युद्ध के दौरान मुंड विहीन हुए। युद्ध में, जौहर में, जल प्लावन में मौत पानेवालों की यही गति होती है।

जन्म धारण करने पर या तो बच्चा मुस्कराता है या फिर रोता है। उसके मुस्कराने से तात्पर्य उसका पूर्वजन्म सुखी एवं आनंददायी रहा और उसके रुदन से तात्पर्य उसका जीवन कष्टमय व्यतीत हुआ समझा जाता है। बच्चा जब तक अबोध होता है, उसे पूर्वजन्म की सारी स्मृतियाँ, सारा लेखा-जोखा, घर-परिवार याद रहता है। पत्र-पत्रिकाओं में यदा-कदा ऐसे समाचार भी प्रकाशित होते रहते हैं। ऐसे बच्चे जब अपने पिछले जन्म की सारी दास्तान सुनाकर सच-सच उगलते हैं और पूर्व के निकटस्थ सम्बन्धियों से मिलते हैं तो सभी अचम्भित हो अवाक् रह जाते हैं।

बच्चे की पहली अभिव्यक्ति रुदन

सभी जानते हैं कि पैदा होते ही बच्चा रोता है। यह रुदन ही उसकी पहली अभिव्यक्ति है, जिसके माध्यम से वह अपनी उपस्थिति का एहसास कराता है। जब तक बच्चा माँ के गर्भ में रहता है, वह अपने को परम सुखी, परम सुरक्षित एवं परम निश्चिंत पाता है। किंतु ज्यों ही वह गर्भावस्था से बाहर आता है, अपने को असुरक्षित एवं भयाकांत समझ सिहर उठता है। फलस्वरूप रुदन कर यह संकेत करता है कि वह ऐसी दुनिया में पहुँच गया है, जहाँ अपने को नितांत असहाय महसूस कर रहा है।

अपवाद स्वरूप यदि कोई बच्चा नहीं रो पाता है, तब दाई-डाक्टर थपकी-स्पर्श कर उसे रुलाने की चेष्टा करते है। बच्चे के रुदन करने पर यह मान लिया जाता है कि सफलतापूर्वक उसका जन्म हो गया है और जच्चा-बच्चा दोनों सुखी हैं। माटी के लौंदे के रूप में बच्चे का यह जन्म सृष्टि का पहला उपहार है। इस समय बच्चा सर्वथा अबोध होता है, इसीलिए उसे माटी का पुतला कहा गया है।

गर्भ में रहते हुए बच्चा अपनी माता की नाभि से जुड़ी नली विशेष नाल से श्वास लेता है, किंतु बाहर आते ही वह दाई अथवा डाक्टर द्वारा जुदा कर दिया जाता है। नाल अलग करते ही बच्चा बाहर की श्वास लेना प्रारंभ कर देता है। इसके लिए कहा जाता है कि विधाता ने उसे संसार में भेजकर नया जीवन प्रदान किया है।

श्वासों के जरिए बच्चा जीवित रहता है, किंतु उसका पोषण नहीं हो पाता। इसलिए श्वास के साथ ही उतनी ही महत्त्वपूर्ण जीवन-निधि के रूप में विधाता बालक की माँ को दुग्ध के रूप में सर्वथा पवित्र पेय देती है। यह पेय सृष्टि का सर्वोत्तम, सर्वोत्कृष्ट अमृत है, जिसका कोई सानी नहीं। इसी के साथ पालना रूप में बच्चा माँ की गोद पाता है। इस प्रकार माँ जहाँ बच्चे को सर्वप्रकारेण धारण करने वाली धारित्री है- धरती है वहाँ उसका पिता बीज-फल है। इस बीजांकुर से ही समग्र सृष्टि फलती-फूलती है।

माँ पहली पाठशाला

माँ बच्चे की पहली पाठशाला है। उसी का सान्निध्य पाकर बच्चा चहचहाना सीखता है। यह चहचहाहट चिड़ियों की तरह होती है। यदि कोई बच्चा नहीं चहचहाता तो उसे घूँट के रूप में चिड़ियों का जूठा पानी दिया जाता है। मैंने ऐसे कुछ बच्चे देखे हैं, जिनकी जबान नहीं खुलने से उन्हें चिड़ियों का पानी पिलाया गया और वे चहचहाने लग गए।

सोचो, अगर बच्चे की माँ न हो तो क्या बच्चे का ठीक से लालन-पालन हो जायेगा? कदापि नहीं। इसीलिए लोकजीवन में कहावत बनी हुई है- बाप न रहे, बच्चे की माँ नहीं मरे। माँ के नहीं रहने पर बच्चे का जीवन कण-कण का, छिन्न-भिन्न हो जायेगा। माँ तो सौ कष्ट झेलकर भी बच्चे की परवरिश कर लेगी। उसका नानपण (अनाथ समय) निकाल देगी, पर पिता उसका ठीक से पालन-पोषण नहीं कर पायेगा और बच्चा दर-दर की ठोकरें खाता रहेगा।

खुशी का पारावार

माँझल रात में जन्म धारण करने वाले कीके के हर्षोल्लास का क्या कहना! सुखदेवी जच्चा ने वंशवृद्धि की है। नणदबाई अमर बधावा लेकर आई है। नाई हालर-हूलर सौभाग्यसूचक सुभागपड़ा ले बालजन्म की खबर नाना-नानी को देने पहुँचा है। लोहार-सुथार रूणझुण पालना बनाने की तैयारी में लग गये हैं। देवर अजमा लाने, बाईसा द्वारा उसे छज्जों पर सुखाने, देराणियों-जेठाणियों द्वारा उसे खांडने, सगुणी सास द्वारा उसके लड्डू बनाने तथा गृह-राजवी ससुर द्वारा नेग चुकाने की होड़ाहोड़ी में सब फूले नहीं समा रहे हैं। कीका, कूका बच्चे के प्रिय संबोधन हैं। महाराणा प्रताप को भी बचपन में कूका कहकर सम्बोधित करते थे।

पक्षी-जगत में भी खुशियों के मारे चहचहाट शुरू हो गई है। इनमें मोर ने सर्वाधिक रंग बिखेरे हैं। वह अपने सारे पंखों को फैलाकर अपनी बोली द्वारा न केवल धरती के प्राणियों को ही, अपितु आकाश के दल-बादल को भी कूका के जन्म लेने का पैगाम पहुँचाता बावला बना लग रहा है।

उड़ान भरते मयूर की खबर चारों ओर गुंजित होती है, तभी मार्ग में एक नन्ही चिड़िया मिलती है। दोनों के बड़े ही दिलचस्प संवाद होते हैं। इस तरह-

चिड़िया	-	मोर्‌या रे मोर्‌या कठे चाल्यो ? (मोर ए मोर किधर चला?)
मयूर	-	बागां में (बागों में)
चिड़िया	-	कई लेवा ? (क्या लेने?)
मयूर	-	अजमो (अजवाइन)
चिड़िया	-	कणी मंगायो ? (किसने मंगवाया?)
मयूर	-	नानी भाभी (छोटी भाभी ने)
चिड़िया	-	कई व्यो ? (क्या हुआ?)
मयूर	-	ऊकल्यो (कूका)
चिड़िया	-	नाम कई? (नाम क्या?)
मयूर	-	भग्ल्यो (भगल्या)

एक नन्ही चिड़िया का मोर से यह संवाद सार्थक और सकारात्मक है। मोर के पंख ज्ञान-संपदा को वर्धन देने वाले हैं। कृष्ण ने अपने मुकुट में मोर-पंख को वरण किया था। उनके मुकाबले अन्य कोई ज्ञानी, ध्यानी और सम्मानी नहीं हुआ। गीता और महाभारत साक्षी हैं। बचपन में हम लोगों ने कई बार मोर का पंख अपनी किताबों में रखा था। माँ सब जानती थी। तब से मोर-पंख का झाड़ू मेरे घर की शोभा बना हुआ है।

यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि मोर कभी भोग नहीं करता। नृत्य करते समय जब वह अश्रु-पात करता है, तब ढेलड़ी (मयूरनी) उसे अपने मुँह में झेलती है। उससे वह जो गर्भ धारण करती है, मयूर पैदा होता है और वही आँसू जब धरती पर गिर जाता है, तब मयूरनी उसे अपने उदर में डालती है। उससे मयूरनी पैदा होती है। मोर अनगिनत ज्ञान, गुण तथा संपदा का रहस्यमय खजाना है। इसी कारण वह हमारे देश का राष्ट्रीय पक्षी बना हुआ है।

बच्चे की वाणी का क्रमिक खुलना चीड़ा-चीड़ी की चहक और चहलकदमी से ही प्रारंभ होकर विकास की गति पकड़ता है। पालने में जब बच्चा सुलाया जाता है, तब उसकी निगाहें भी उसकी डोरों से लिपटे रंगबिरंगी चीड़ा-चीड़ी की ओर ही केन्द्रित रहती है और उन्हीं को देख-देख वह रंजित हुआ मन ही मन मरक-मरक मुस्कान मारता है।

कुशल गृहिणियाँ अपने कुशाग्र कला-कौशल से कपड़े की खोल बना उनमें रुई भरकर हू-ब-हू जो चीड़ा-चीड़ी बनाती हैं, वे बेजान होकर भी असल को मात देने वाले होते हैं। भाँति-भाँति के कपड़े की किनारियों से निकाली उनकी खूबसूरत चोंचें और उनके दायें-बायें लगी काली-काली आँखें ऐसा दरसाव देती हैं जैसे वे किसी डाल पर बसेरा किये चहचहा रहे हैं। उनके बीच हराकच लाल चोंच निकाले मिट्ठू, आत्माराम, सुआराम, तोतामल (तोते के विभिन्न नाम) की उपस्थिति से जो सुषमा मंडित होती है, वह उस बाल-मन की सौंदर्यजनित चेतना का बोध-बंध है। महाकवि सूरदास ने 'जसोदा हरि पालने झुलावै' नामक पद में अपनी अंधी आँखों से उसका जो वर्णन किया है, वैसा लाख-लाख, करोड़-करोड़ खुली आँखें भी आज तक नहीं कर पाई।

कहना नहीं होगा कि बच्चे की पलकें ज्यों-ज्यों पुलकित होती रहती हैं, उसकी अभिव्यक्ति का अनुभव विस्तार पाता है। फिर गुरु-ज्ञान की प्राप्ति के लिए वह स्कूल में प्रवेश करता है, अच्छा इंसान बनने के लिए, श्रेष्ठत्व की प्राप्ति के लिए।

आत्मा अमर होती है। नश्वर तो शरीर होता है। आत्मा नया-नया शरीर धारण करती रहती है। आयुष्य पूर्ण होने पर यमदूत आकर पकड़ ले जाते हैं। मनुष्य के कर्मों का सारा लेखा-जोखा यमराज रखता है। कभी-कभी चूक होने पर यमराज के दूत भूल या भ्रमवश अन्य व्यक्ति को पकड़ ले जाते हैं, किंतु जब उसका यमलोक में लेखा देखा जाता है तो उसे पुनः धरती पर भेज दिया जाता है। मरा हुआ व्यक्ति जब पुनः जीवित हो उठता है तब समझ लिया जाता है कि उसके जीवित रहने का समय है, मुझे अपनी शोध-यात्राओं में ऐसे कई व्यक्ति मिले, जो मर कर पुनः जीवित हुए और वे बाद में बीस, तीस, चालीस वर्ष तक जीवित रहे।

गर्भावस्था में गर्भचिंतारणियाँ

किसी के जन्म से तात्पर्य गर्भ से बाहर आना नहीं, अपितु गर्भावस्था प्राप्त करने किंवा गर्भ में आने से है। नौ माह गर्भकाल में रहने का जीवन कम महत्त्वपूर्ण नहीं होता। उस दौरान माता से जैसा खानपान, सोच, समझ, संस्कार उस नवजात को प्राप्त होता है, वही उसकी नींव का मजबूत सोपान बनता है। यही प्रबल सोच लिए गर्भवती महिलाओं को गर्भचिंतारणियाँ सुनाई जाती हैं। इन गर्भचिंतारणियों में नवजात मानवी को अच्छे-बुरे जीवन की गणना द्वारा सत्कर्म करने की चेतना दी जाती है। गर्भकाल में जीव की अवस्था के साथ-साथ उसे उसके पूर्वभव की दास्तान सुनाकर ठाठबाट का जीवन जीने की प्रेरणा दी जाती है। उसके स्वभाव, कर्म तथा व्यवहार को लेकर भी दो टूक बात कही जाती है। उसके समृद्ध तथा एश्वर्यपूर्ण जीवन का दिग्दर्शन करने के साथ बोदे (बुरे) चरित्र एवं खोटे कार्य की फटकार और प्रताड़ना भी दी जाती है। बुरे कार्य के लिए दुत्कारा जाता है। उदाहणार्थ-

नर नारी रे मिल्या रे संजोग
भोगर्‌या संसार्‌या रा भोग
कांसे जो आया गरभ के माँय
नीचा रे मस्तक ऊँचा जो पाँय
गर्भवती ओ नारी सेवती।

नर-नारी का संयोग मिला तो संसार के भोग-भोग रहे। रे जीव! तू कहाँ से आया गर्भ में! नीचा सिर और ऊँचा पाँव। गर्भवती नारी तुम्हारी देखभाल कर रही।

दासी तो थारे ऊभी कर जोड़
एके बुलावे ने दस आवे दोड़
परबला ओ पत्र परताप सू।

दासी तुम्हारे हाथ जोड़े सेवा चाकरी में खड़ी है। एक को बुलाने पर दस दौड़ आती हैं। तुम्हारे पूर्वजन्म के प्रताप से ही तुम्हें यह सुख-सुविधा उपलब्ध है।

गेणा रा डाबा ने रतनां री कोत
लाग रही थारे जगमग जोत
थूं चेते उचेते मानवी।

रे मानवी! गहनों का पिटारा और अमूल्य रत्नों का जगमगाता प्रकाश तुम्हें नसीब हो। तू चेतनशील बन।

कारा भमर थारे होता जी केश
दन-दन करतो नवा-नवा वेश
सैल सपाटा सरतो घणो।

हे जीव! पूर्वजन्म में घने काले तुम्हारे बाल और प्रतिदिन बदलता नया वेश धारण किए तू बहुत अधिक सैर-सपाटा करता रहता।

चालतो नरखतो आपणी पाग
तीज मतासे ने देखतो बाग
माता-पिता नहीं पूछतो।

तू चलते रास्ते अपनी पगड़ी निरखता। तीज-त्योहार पर बागों में मौज करता, किंतु माता-पिता की खोज खबर तक नहीं लेता।

देतो रे ताण मरोड़तो मूँछ
हाथी ने घोड़ा री पकड़े पूँछ
धरम वना थारो कई होसी।

मद में चूर हो तू अपनी मूँछ पर ताव देता। हाथी घोड़े की पूँछ पकड़ अपने ऐश्वर्य की समृद्धि देता। धर्म बिना तुम्हारा क्या होगा?

रतना रा प्याला ने सोना रा थाल
मूंग मिठाई ने चावल दाल
भोजन भल-भल भांत रो।

सोने के थाल और रत्नों के प्यालों में महंगी मिठाई और चावल-दाल का, भाँति-भाँति का स्वादिष्ट भोजन करता।

गंगा जल पाणी दीधो रे ठार
वस्तु मंगावो ने तुरत तयार
कभी ए नहीं कणी बात री।

तेरे लिए गंगाजल की कोई कमी नहीं रहती। जो चीज माँगता, तुरन्त हाजिर होती। किसी बात की कमी नहीं रहती।

परबारी जावे थारी पंचां में साक
दंडत-फंडत काटे जी नाक
लोगां माई फट फट करे।

खोटे कर्म से पंचों से तेरी पैठ चली गई। दंड स्वरूप तेरी नाक काट दी गई। सभी ओर तू निंदा का पात्र बना रहा।

असी कणी थने दीधी रे सीख
भव भव माय तू माँगसी भीख
थूं चेते उचेते मानवी।

ऐसी शिक्षा तुम्हें किसने दी? हर भव में तू भिक्षा मांगता रहा। तू अब भी संभल जा।

हालरा हालरिया

जन्म से लेकर जब तक बच्चा घड्‌ये-घड्‌ये (घुटनों के बल) चलता है, तब तक उसकी विशेष देखभाल की जाती है। इस अवस्था में वह टग्गी (जिद्‌द) पकड़ता है और माँ के साथ चिपका ही रहना चाहता है। वह अपने को असुरक्षित भी समझता है। इस समय उसे थपकी देकर, घोड़े लेकर (घुटने के बल सुलाकर) या फिर पालने में हींदा (झूला) देकर झुलाया जाता है। सुलाते समय लोरी गीत गाये जाते हैं। यह अवस्था अमूमन छह माह तक की होती है।

लोरी गीत मेवाड़ में हालरा नाम से जाने जाते हैं। इन्हें हालरिया तथा पालणा भी कहते हैं। इस समय के गीत छोटे-छोटे और बालमन को बहलाने वाले होते हैं। इन गीतों में बालक के स्वभाव, उसका पालन-पोषण, पहनावा, खानपान, दैनिक चर्या तथा अधिक रोने पर उसे डराने धमकाने के प्रसंग भी मिलते हैं। कुछ गीत यहाँ द्रष्टव्य हैं-

हालर हूलर हांसी रो
दूध पावे थारी मासी रो
लाल चूड़ो थारी भुवा रो
सुई जा रे नान्या सुई जा.....

हालर हूलर (धीरे-धीरे झूला देने की क्रिया) तेरी हंसी के लिए। रोते हुए बच्चे को मुस्कान दिलाने के लिए 'हालर हूलर हांसी रो' पंक्ति भी प्यार भरे स्नेहिल ढंग रंग से उच्चरित की जाती है। दूध पिलाने के लिए मासी (बच्चे की माता की बहिन) की

यादगार भी प्रासंगिक है। जिस बच्चे की छोटी उम्र में माता चल बसती है, उसका लालन-पालन मासी (मौसी) द्वारा किया जाता है। ऐसी स्थिति में मौसी ही उसे अपना स्तन पान कराती है और मातृत्व सुख एवं सुरक्षा प्रदान करती है। इसीलिए मासी को 'मासी माँ' भी कहा जाता है। मौसी को माँ का दर्जा दिया गया है।

लोरी गीतों के साथ-साथ टोपी गीत भी गाये जाते हैं। झगला टोपी बच्चों का खास पहनावा रहा और समधियों द्वारा भी बच्चे के लिए लाये जाते हैं। मासी की अनुपस्थिति में बुआ ही उसकी मुख्य पालक होती है, इसीलिए बुआ को लाल चूड़ेवाली अर्थात् सौभाग्यवती कहा गया है। लाल रंग सौभाग्य का सूचक है। लाल चूड़ा, लाल बिंदी, लाल पोशाक सौभाग्यवती नारी का शृँगार है। जैसे मासी बच्चे की माता की बहिन होती है, वैसे ही भुआ (बुआ) बच्चे के पिता की बहिन को कहते हैं। यह रिश्ता खून-सम्बन्ध का भी परिचायक है। मासी माँ की तरह बुआ के साथ भी माँ का संबोधन 'भुआ माँ' के रूप में प्रचलन में है। 'सो जा रे नन्हा सो जा' पंक्ति बाल मनोभाव की दृष्टि से यह ध्वनित करती है कि धीरे-धीरे बच्चा रोना बंद कर सो जाएगा।

सुई जा रे नान्या सुई जा
थारी मावड़ पाणी गी
घर में गंडकड़ा वारी गी
एक गंडकड़ो घटीग्यो

नान्या रो नाक कटीग्यो

सो जा रे नन्हा सो जा। तेरी माता पानी लेने गई। घर में कुत्ते छोड़ गई। एक कुत्ता घट गया, कम हो गया। नन्हें का नाक कट गया।

नानो तो दोड़्यो नाना रे जा
नाना रे जावे ने घी खीचड़ी खा
नानी दीधी कुतरी गा
मामा रे मामा दूधड़्लो दूं
मामी मसल्यो कानड़ो क्यूं

नन्हा दौड़कर नाना (बच्चे की माँ के पिता) के घर गया। नाना ने घी-खीचड़ी खाने को दी। नानी (बच्चे की माँ की माँ) ने कटे कान की गाय दी। मामा (बच्चे की माँ का भाई) ओ मामा! दूध निकाल। मामी (मामे की बहू) ने मेरा कान क्यों मसला?

नानो तो छे भयां को
दूध पीवे दस गायां को
गायां कीधो पोटो
नान्या रे कई टोटो
हलवो पूड़ी खावो सा
नान्या ने परणावो सा

नन्हें (नवजात) के छह भाई हैं। वह दस गायों का दूध पीता है। गायों ने गोबर किया। नन्हें को किसकी कमी? हलुआ पूड़ी खाओ। नन्हे का ब्याह रचाओ।

नान्या थारे पालणो गलादे सामी पोल
आवतड़ा जावतड़ा थारा दादा झूलो देवे रे
हूल रे नाना हूल रे.....
थारे सोना रा झांझरिया
थारे रेशम री गज डोर
लालजी हूल रे नाना हूल रे.....

इस गीत में बच्चा अपनी माता के श्वसुर गृह में पल रहा है, इसीलिए बच्चे का पालना सूर्य के सामने वाली पोल अर्थात् पूर्व दिशा के निवास में है। यहाँ आते-जाते, चलते-फिरते दादा उसे झूला दे रहे हैं और गा रहे हैं- सो जा नन्हा सो जा। पाँवों में तुम्हारे सोने की नन्हीं-नन्हीं झांझरियाँ पहनी हुई है। पालना (झूला) रेशम की डोर से बँधा हैं। सोना और गजडोर अति लाड़-प्यार, समृद्ध एवं सम्पन्नता की सूचक है। दादा से तात्पर्य नन्हें के पिता के पिता से है। यह नन्हा दादाजी के पुत्र का पुत्र यानी पौत्र है, जो लोकांचल में पोता नाम से जाना जाता है।

अब तक के लोरी गीतों में बच्चे की माता के पीहर-परिवार के नाना-नानी, मामा-मामी का जुड़ाव दिखाई दिया। सुना भी है कि लड़की अपने माता-पिता के यहाँ शिशु जन्म देना चाहती है। यों प्रथम संतान का जन्म तो वहीं होने का रिवाज भी है।

लोरी गीत केवल बच्चों का ही मन बहलाव नहीं करते, बड़ों की ममता के भी संबल होते हैं। मेरी अपनी ही बात कहूँ। दिसम्बर 1960 में, मैं भारतीय लोककला मंडल की और से मणिपुरी की आदिम जातियों के सर्वेक्षण के लिए मणिपुर गया। वहाँ के उखरूल के डाक बंगले में भोर में कोई चार बजे अचानक

मेरी नींद उड़ी और माँ की याद सताने लगी। यह याद ऐसी बनती गई कि मेरा रुदन रोके नहीं रुका। ऐसी स्थिति में मैंने कागज पेंसिल उठाई और सुबक-सुबक आँसू बहाते लोरी गीत लिखा, तब जाकर मुझे शांति मिली और लगा कि मुझे मेरी माँ मिल गई।

इस समय मेरी 23 के करीब उम्र थी और पहली बार इतनी दूर लम्बे समय के लिए निकला था। अविवाहित था और घर में माँ ही सर्वेसर्वा थी। दादा, पिता, चाचा सब स्मृति शेष हो गए थे। मैं गीत की पंक्ति लिखता जाता और फूट-फूट कर रोता रहता। ऐसे रुदन के दौरान मैंने गीत पूरा किया। यह गीत चार चरण लिए है। यहाँ उसका प्रथम तथा तृतीय चरण प्रस्तुत है-

आकास्या पर काकास्या थारा वानर ताड़े रे
कोचला बीजू खावे रे
गंडकड़ो पूँछ हिलावे रे
मिनक्यां लड़ मुळकावे रे
चिड़कल्यां चुग्गो लावे रे
चिड़कला चोंच लड़ावे रे
नान्या सुई जाजे। (प्रथम चरण)
हलरावे दुलरावे थारी
मायलड़ी हिंचावे
हाथ पगां मूंडा पर थारे
मामा आंख मिंचावे
हुलहुल हालर गावे रे
सोगन गंगा जावे रे
अंगूठो थूं क्यूं धावे रे
कई थारे मन में आवे रे
नान्या सुई जाजे। (तृतीय चरण)

आकास्या (चांदणी अर्थात् छत की नाल को ढकने वाला स्थान) पर तुम्हारे काकास्या (काकासा अर्थात् पिता) बंदर भगा रहे हैं। बिज्जू (नेवले जैसा जानवर) कोचला (कद्दू की पतली-पतली चीरें, फांके जो सूखने के बाद कोचला कहलाती हैं। यह बिज्जू अर्थात् वेरबला को बेहद प्रसन्न है) खाती है। कुत्ता पूँछ हिलाता है। बिल्लियाँ आपस में झगड़ मुस्कराती हैं। चिड़ियाँ चुग्गा लाती है। चीड़े चोंच लड़ाते हैं। नन्हें सो जाना।

हलरा-हुलरा कर तेरी माता झुला रही है। हाथ, पाँव, मुँह पर मामे (ऊँगली से काजल के निशान लगाती है, ताकि नजर नहीं लगे) शोभित हैं। माता हुलहुल हालर गा रही है। सौगंध गंगा जा रहे हैं, तू अंगूठा क्यों चूस रहा है? तेरे मन में क्या आ रहा है? नन्हे सो जाना।

अब मेरी माँ नहीं रही, तब भी मैं इस गीत को गाकर महसूस करता हूँ कि मैं माँ की गोद में हूँ। वह मुझे अपनी थपकियों से सुला रही है और मैं मुस्करा रहा हूँ।

रुदन बलवर्धक

रुदन बच्चों के लिए बलवर्धक कहा गया है। यह रुदन उन्हें शक्ति देता है। इसीलिए 'बालानाम् रोदनं बलम्' कहा जाता है। बालरोग विशेषज्ञ ने मुझे बताया था कि बालजन्म के बाद हर बच्चा रोता ही है। अपवाद स्वरूप ही कोई बच्चा नहीं रोता है, तब न केवल उसके अभिभावक अपितु चिकित्सक तक चिंतित हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में उसे रुलाने की कोशिश की जाती है।

एक चिकित्सक ने मुझे बताया कि जब वे डूंगरपुर हॉस्पिटल में थे, तब गलियाकोट के एक बोहराजी उनके पास एक नवजात को लेकर आए। जन्म के बाद चार घंटे व्यतीत हो गये। नवजात ने रोने की कोई हरकत नहीं की, तब मैंने उनसे कहा कि मैं प्रयत्न कर सकता हूँ पर बच्चे का जीना, नहीं जीना ऊपरवाले के हाथ है। बोहराजी क्या करते असहाय थे। मैंने भगवान को स्मरण करते हुए एक इंजेक्शन लगाया। देखते-देखते बच्चे ने रोना प्रारंभ कर दिया। मेरे लिए भी वह अनहोनी तथा अजूबी घटना थी। इससे भी अधिक अजूबापन यह रहा कि वह बच्चा रोता ही रहा। लगभग चार घंटे बाद उस रोते हुए बच्चे को बोहराजी पुनः मेरे पास लाये। मैंने उन्हें दिलासा देते हुए संतुष्ट किया, कि जब रोते-रोते बच्चा थक जाएगा तब स्वतः ही रोना बंद कर देगा, और यही हुआ। बोहरा परिवार तो इतना प्रसन्न हुआ कि जब भी वे दुबई से आते, मुझसे मिलने अवश्य आते और उस बच्चे को भी साथ लाते।

मास्या बच्चे

साधारणतया नौ माह गर्भावस्था भोगने के बाद बच्चा पैदा होता है। पाँच माह, छह माह पूरे होने पर यदि गर्भ गिर जाता है तो

पाँच मास्या, छह मास्या गर्भ गिरना कहते हैं। ऐसी स्थिति में कोई बालक जीवित नहीं रहता है। सात माह में सात मास्या होने पर बच्चा जीवित रह जाता है। उसे रुई की पहल में ढककर रखा जाता है। बिना किसी बाधा, परेशानी अथवा शंका रहित जो बच्चा राजीखुशी पैदा हो जाता है, उसके लिए कहा जाता है कि हाके-ताके हो गया। तब बाहर वालों या पड़ोसियों को कोई सूचना नहीं देकर उसके जन्म की बात छिपाकर ही रखी जाती है। किसी को पता भी चल जाता है तो केवल यही कहकर सूचना दे दी जाती है कि वह हाके-ताके होगया। मेरे अग्रज को भी इसी प्रकार छिपाकर रखा गया। जब जन्म की बात छिपी नहीं रही, तब कहा गया कि लड़की ने जन्म लिया है। यह बताने के लिए उनके नाक में छोटी सी चाँदी की नथ भी पहनाई गई। आठ मास्या बच्चा जीवित नहीं रहता और यदि रह भी जाता है अपवाद स्वरूप तो वह मांगलिक यानी शुभ नहीं माना जाता। यों दसवें महीने में भी कभी कोई बच्चा जन्म लेता है तो उसे दस मासिया कहते हैं।

डूंटा बच्चा

किसी बच्चे के जन्म से ही डूंटी (नाभि) की बजाय डूंटा निकल आता है। ऐसी स्थिति में उसके मामा पर भार आ जाता है। तब मामे को बुलाकर पांव के अंगूठे का सात बार हल्का सा स्पर्श कराया जाता है। दो-तीन दिन तक यह क्रिया करने के बाद वह डूंटा बैठ जाता है। बचपन में मैंने अपने गाँव में एक पड़ोसिन की लड़की के डूंटा देखा जो पानीपतासे की तरह फूला हुआ था। तब तीन दिन तक लगातार उसके मामे से पाँव के अंगूठे का स्पर्श कराया गया और वह डूंटा धीरे-धीरे बैठ कर सामान्य नाभि की शक्ल में आ गया। आज भी जब कभी वह लड़की मिलती है, मैं उसे डूंटेवाली कहकर ही संबोधित करता हूँ।

बच्चों के पहली बार मुँह में जो दाँत निकलता है, वह नीचली पंक्ति पर ही आता है। प्रारंभ में बीचोंबीच दाँत निकलता है। कच्चे दांत दूध्ये दाँत कहलाते हैं। ऐसे दाँत स्थायी नहीं होते। उनकी बजाय दूसरे दाँत आते हैं। दूध्ये दाँत गिरने पर पड़ोसी के घर के ऊपर फेंक दिया जाता है। माना जाता है कि उसके भी संतान होगी और वह लड़का होगा।

उल्टा बाल जन्म

बच्चा जब भी गर्भ से बाहर आता है, उसका सिर वाला हिस्सा पहले आता है, लेकिन अपवाद स्वरूप उल्टे बच्चे भी पैदा होते हैं। ऐसी स्थिति में उनका जन्म पाँव की ओर से होकर अंत में सिर बाहर आता है। ऐसे बच्चों का पाँव चलता है, अर्थात् जिस किसी को चड़क आ जाती है, तब चड़क वाले स्थान विशेष पर ऐसे पैदा हुए के बायें पाँव के अंगूठे से सात बार स्पर्श कराया जाता है। इससे उसकी चड़क जाती रहती है। मेरी माताजी भी चड़क निकालने में माहिर थीं, किंतु वह ओखल के सहारे चड़क के बोल-बोलकर निकालती थी। मेरी नानीजी का जन्म उल्टा हुआ था। उनका पांव बहुत चलता है। आये दिन कोई न कोई चड़क का रोगी उनके यहाँ आता है और उनके पाँव के अंगूठे के स्पर्श से वह चंगा हो जाता। पूरे गाँव में उनकी प्रसिद्धि होने के कारण राजमहलों में भी दो-तीन बार रानीजी की चड़क निकालने के लिए नानी गई थीं। यह बात कोई अस्सी-नब्बे वर्ष पुरानी है। मेरी नानी का स्मरण मुझे भी है। वह छोटी थड़ी की ठिंगनी महिला थीं। उनकी कमर थोड़ी झुकी हुई रहती थीं और दोनों पाँवों में छह-छह अंगुलियाँ थीं।

प्रथम बालजन्म पर सुभागपड़ा

पड़ा छोटे कपड़े पर बने मांगलिक चित्रण को कहते हैं। यह पड़ की तरह ही चित्रांकन लिए होता है। सुभागपड़ा से तात्पर्य सौभाग्य सूचक प्रथम बालजन्म पर भेजे जाने वाले सूचनापरक चित्रांकन से है। मुख्यत: सवर्ण जातियों में इसका प्रचलन रहा है। विवाहित युवती का प्रथम जापा (प्रसव) उसके पीहर में होता है। उस अवस्था में बालक या बालिका के जन्म की सूचना उसके ससुराल वालों को भिजवानी होती है। सुभागपड़ा इसका माध्यम है।

सुभागपड़ा चित्रांकन करने वाले चितेरे मांगीलाल मिस्त्री ने बताया कि सवा हाथ सम चौरस कपड़े पर सुभागपड़ा बनाया जाता है। यह पड़ा बालक और बालिका जन्म के लिए अलग-अलग प्रकार से बनता है। इसमें मुख्यत: केन्द्र में तो पगल्याजी ही होते हैं, शेष प्रतीक चिन्ह सूरज, चाँद, मंगल कलश, दीपक, दोनों पड़ों में चित्रित किए होते हैं, किंतु बालिका जन्म के पड़े में मोर, चिड़िया, बंधनवार तथा हरे-भरे पौधे और फूल-पत्ती विशेष

होते हैं। बालक जन्म के पड़े में कमल फूल, आम तथा तोते मुख्य अंकन लिए होते हैं और यही इन पड़ों की पहचान है। यह पड़ा नाई के साथ भेजा जाता रहा है।

सुभागपड़ा बनाने का नेग (पारिश्रमिक) चितेरा को बहुत पहले सवा रूपया तथा नारियल दिया जाता था। उसके बाद यह नेग पाँच, दस से लेकर पच्चीस, पचास और सौ रूपये तक बढ़ा हुआ देखा गया। यों व्यक्ति अपनी हैसियत के अनुसार पारिश्रमिक देकर चितेरा को प्रसन्न करता है। नाई का नेग जच्चे के ससुराल वाले देते हैं। यह नेग भी चितेरा के नेग जैसा ही होता है, किंतु अक्सर देखा यह गया है कि बालक के जन्म पर चितेरा और नाई दोनों ही अधिक नेग प्राप्त करते हैं। बालिका जन्म पर सबकी खुशी सिमट जाती है।

दोनों पड़ों का यदि ठीक से अध्ययन किया जाय, तो पता चलेगा कि बालिका जन्म पर बनने वाला पड़ा अधिक मांगलिक और फलदायी होता है। इससे लगता है कि समाज में कन्या जन्म को किसी कदर नीचा, हीन या कि दोयम दर्जे का नहीं कहा गया है। दरअसल वंशवृद्धि की अधिकारिणी महिला ही होती है। उसके बिना गृहस्थ जीवन सूना और निस्तेज बना रहता है।

सुभागपड़ा में चित्रित चित्रों के प्रतीक अर्थ परिवार और गृहस्थ जीवन में सुख-समृद्धि, आनंद-मंगल और सौहार्द्र तथा प्रेमभाव को बढ़ावा देने वाले होते हैं। नवजात शिशु विनायक जैसा मंगलकारी, कलश जैसा आत्मनिष्ठ, सूर्य जैसा तेजोमय, चाँद जैसा शांत सुखद, दीपक जैसा प्रकाशवान, तोते जैसा मृदुभाषी, मोर जैसा ज्ञानी-गुणी, चिड़िया जैसा चहकप्रिय-हँसमुख, कमल जैसा निर्मल एवं सतोगुणी, आम जैसा रससिक्त तथा बंधनवार एवं फूल-पत्ती की तरह सर्वकल्याणक एवं सुखदाता हो।

लोकजीवन में संस्कारों से जुड़ी संस्कृति की कितनी व्यापक इन्द्रधनुषावलियाँ देखने को मिलती हैं। इनके विविध रंग, रूप और सौहार्द्र सरोकार जैसा जीवन निर्माण करते हैं, वैसा परिवार और समाज यदि व्यावहारिक धरातल पर देखने को मिले तो सच्चे मायने में वसुधैव कुटुम्बकम् की सोच सार्थक हो सकती है। ऐसी सोच और समाज हमारे देश में कभी आदर्श रूप में रहा है। यही कारण है कि भारतीयता की पहचान पूरे विश्व में दखल रखती है।

छठी का थापा

बालजन्म के छह दिन बाद नायण द्वारा दीवाल पर जो थापा बनाया जाता है, उसे छठी का थापा कहते हैं। यह कुमकुम (कंकू) का होता है। इसके नीचे एक सेर के करीब धान (गेहूँ), गुड़ की डली, चवन्नी (पैसा), लच्छा, काजल, कंकू तथा कलम रख दी जाती है। पास में एक कोरा (खाली) पाठा रख दिया जाता है। घी का दीपक जला दिया जाता है। यह थापा साँझ को बनाया जाता है। कहते हैं कि रात्रि को बेमाता (विधाता माता) आकर बच्चे का भाग्यांकन करती है। इस अवसर पर बच्चे के हाथ-पाँव में लच्छा बांधा जाता है और आँख में काजल लगाया जाता है। इस दिन औरतें गीत गाती हैं और विधाता की कहानी कहती हैं।

गाँवों में यह बेमाता 'छठी देवी' के नाम से जानी जाती है। हरियाणा प्रदेश में इसका एक नाम 'सती देवी' भी है, जो बच्चा और जच्चा को आशीर्वाद देती है। अवधी क्षेत्र में छठी संस्कार को 'छठी जगो' कहते हैं। इस देवी को बच्चे अधिक प्यारे हैं। जहाँ वह उनका पालन-पोषण करती है, वहाँ उनकी रक्षा का दायित्व भी वहन करती है। खड़ीबोली प्रदेश में छठी को 'सतबाई' भी कहते हैं। कहा जाता है कि यह एक निशाचरी है, जिसे राजी (खुश)करने के लिए पूजा की जाती है। बच्चों को किसी प्रकार का रोग नहीं हो पाये और वे सर्व प्रकार की प्रेत बाधाओं से सुरक्षित रहें, इसलिए भी छठी का थापांकन किया जाता है। इस अवसर पर छठी की मेवाड़ प्रदेश में जो कहानी कही जाती है वह इस प्रकार है-

कैलाशपुरी में एक ब्राह्मण और एक गमार रहते थे, जिनकी आपस में बड़ी पक्की दोस्ती थी। दोनों के घर एक ही साथ थे। ब्राह्मण के घर गमार के घर के सामने से होकर जाने का रास्ता था। कभी-कभी ब्राह्मण गमार के घर बैठ जाता। दोनों में काफी बातें होतीं, परन्तु जब ब्राह्मण उठकर चला जाता तो गमार उस स्थान पर पानी छिड़ककर उसकी सफाई करता। एक दिन ब्राह्मण ने गमार को ऐसा करते देख लिया, तब उससे पूछा- मेरे उठने के बाद तुम ऐसा क्यों करते हो? गमार ने कहा - तुम निपूते (निसंतान) हो। हमारे यहाँ निपूते का मुँह देखना अपशकुन का प्रतीक है। मेरे छोटे-छोटे बच्चे यहाँ प्रतिदिन खेलते रहते हैं, इसलिए मैं पानी का

छिड़काव करता हूँ। ब्राह्मण यह सुन उदास हो गया। घर पहुँचा। उसकी पत्नी ने जब उसे उदास देखा तो उसका कारण पूछा। ब्राह्मण ने आपबीती घटना कह सुनाई और कहा कि लछमी (लक्ष्मी) तुम्हारी सहेली है। यदि तुम उससे एक संतान माँग लो तो ठीक रहेगा। ब्राह्मणी लक्ष्मी के पास गई और अपनी बात कह सुनाई। लक्ष्मी ने कहा- यह बात मेरे बस की नहीं है। पार्वती इसके लिए ठीक रहेंगी, चलो उसी के पास चलें।

दोनों पार्वती के पास पहुँची। पार्वती ने कहा कि मैं भी इस काम को नहीं कर सकती। चलो तीनों मिलकर सावित्री के पास चलें, वही इस काम को कर सकती हैं। तीनों सावित्री के पास पहुँचीं। सावित्री ने कहा कि यह बात मेरे भी वश की नहीं है। इसके लिए संतान देवी 'छठी' के पास चलें। चारों सहेलियाँ छठी के पास पहुँचीं। छठी उन्हें देखकर बड़ी प्रसन्न हुई और आने का कारण पूछा। पार्वती-सावित्री ने संतान देने की बात कही तो छठी ने कहा कि इस ब्राह्मणी के भाग्य में इस जन्म में तो क्या सात जन्म में भी संतान प्राप्ति का कहीं योग नहीं है, परन्तु जब तुम सब इसीलिए आई हो तो चलो कहीं देखें। यदि कोई अपनी संतान से संतुष्ट नहीं होगा तो उसी को उठा लायेंगे।

सब मिलकर एक कुम्हार के घर गई और वहाँ जाकर उसके घर की दीवाल की आड़ में खड़ी हो गई। कुम्हारिन उसी समय बाजार से बर्तन बेचकर आई। आते ही उसने फटाफट हंडिया में दलिया बनाया। उसे ठंडा किया और बच्चों को खिलाकर पूछा- कोई भूखा तो नहीं रहा? बच्चों ने कहा-सब का पेट भर चूका। इतना खा लिया है कि यदि एक भाई और होता तो उसका भी पेट भर जाता।

छठी ने सहेलियों से कहा कि यहाँ एक बच्चे की और जरूरत है। चलो यहाँ से कहीं और चलें। वे वहाँ से एक कहारिन के यहाँ गई जो चने बेचकर घर लौटी ही थी। ज्योंही वह घर लौटी कि सारे बच्चे खुशी के मारे उसे देख उछल पड़े। उसने किसी के सिर पर हाथ फेर, किसी को गोद में उठाकर, किसी की पीठ थपथपाकर सबके प्रति अपना लाड़ (प्यार) प्रदर्शित किया और खाना खिलाकर सबको आराम से सुला दिया। कहारिन ने पूछा कि किसी को और ओड़ने-बिछाने की आवश्यकता तो नहीं है? बच्चों ने कहा- यदि एक भाई और होता तो वह भी आराम से हमारे बीच सो सकता।

यह सुन छठी ने कहा कि यहाँ भी एक बच्चा और चाहिए। चलो यहाँ से राजा के वहाँ चलें। राजा का लड़का बीमार था। नौकर पंखा ढार रहे थे। लोकगीत में पंक्ति आती है- 'पंखियो ढलाऊं सारी रैन।' दाई दवा पिला रही थी। सब लोग परेशान थे। रानी ने कहा- हे भगवान! या तो इसे ठीक कर दे, नहीं तो उठाले। उसके यह कहते ही बच्चे की श्वास जाती रही।

उसी दिन से ब्राह्मणी के गर्भ रह गया। नवें महीने उसके एक सुंदर पुत्र का जन्म हुआ। जन्म के कुछ दिन बाद सभी सहेलियाँ उसके पास गईं और बोली कि अब तुम्हारा बाँझपन जाता रहा। इस बच्चे को वापस कर दो। ब्राह्मणी बोली- जब इसे तुमने दिया ही है, तो मुझे पीलिया (बालजन्म का पहनावा, साड़ी विशेष) पहिनने दो, फिर आकर ले जाना। पाँच साल बीते फिर सहेलियाँ गई और बच्चे को देने को कहा तो ब्राह्मणी बोली कि जरा इसे बड़ा होने दो। मुझे इससे लाड़ लड़ाने दो। मैं इसे जनेऊ पहना दूँ फिर आकर ले जाना।

सहेलियाँ लौटीं। बच्चा बड़ा हो गया। वह जो भी माँगता उसे मिल जाता। उसका यज्ञोपवीत संस्कार भी हो गया। एक दिन सहेलियाँ फिर गईं और बच्चा माँगा। इस पर ब्राह्मणी बोली कि जब इतना रुक गई हो तो थोड़ी और सब्र करो। मुझे इसका विवाह कर लेने दो फिर लेकर चली जाना। वे चली गई। ब्राह्मणी ने उसका विवाह कर दिया। एक सुंदर सी बहू आई। बहू को समझाया कि जब उसकी सहेलियाँ आये तो पैर छूकर आशीर्वाद प्राप्त करना।

सहेलियाँ बुलाई गईं। बहू ने उनके पैर छुए। सहेलियों ने आशीर्वाद दिया- दूधों न्हाओ पूतो फलो। गंगा-जमुना की तरह तुम्हारा सुहाग अखंड बना रहे। सहेलियाँ जब लौटने लगीं तो उन्होंने फिर उसी बात की याद दिलाई तो ब्राह्मणी ने कहा कि अब तो बेटा बहू का हो चुका। मेरा नहीं रहा। तुम उसी से माँगो। उन्होंने जब बहू से कहा तो बहू ने कहा कि अभी तो आपने मुझे पौत्रवती और अखण्ड सौभाग्यवती होने का आशीर्वाद दिया और अभी इन्हें माँग बैठी। सहेलियों ने लाचार होकर हार मान ली। वे चुपचाप वहाँ से लौट गयी। उस दिन भाद्र माह की उजियाली छठ थी। ब्राह्मणी ने अपने पुत्र की रक्षार्थ उस दिन छठी के नाम से व्रत किया। दीवाल पर उसका थापा अंकित किया और विधिवत् उसकी पूजा कर अपना व्रत खोला।

ए छठी देवी जैसी ब्राह्मणी पर टूटी (तुष्ट हुई) और उसका बाँझपन दूर किया, वैसी ही सब पर टूटना। सबको फलाफूला परिवार देना।

बिल्ली से बचाव

छोटे बच्चे बहुत कोमल शरीर के होते हैं। उन्हें ठीक से रखना पड़ता है। ठीक से उठाना, नहलाना तथा अन्य आवश्यक क्रियाएँ करानी पड़ती हैं। कभी-कभी कोई अन्य उसे लाड़-प्यार हेतु अपने हाथों में लेते हैं, तब भी वे शरीर से डगपच हो जाते हैं। प्रथम प्रसव पीहर में कराने के पीछे भी यही भावना रहती है कि प्रसविका अपनी माता तथा अन्य परिजनों के साथ निश्चिंत होकर रहे। श्वसुरजनों के साथ वे उतनी उन्मुक्त नहीं हो पाती हैं और न अपने मन की चाह ही कह पाती हैं। उनसे उसका संकोच भी रहता है। माता-पिता उसे हर तरह के संस्कार देते रहते हैं। बच्चे को ठीक से पालने-पोसने के गुर सीखाते रहते हैं और जच्चे-बच्चे से जुड़ी प्रत्येक क्रिया के साथ खुलकर संवाद करते हैं। मुख्यत: खानपान से सम्बन्धित बहुत सारी बातें ऐसी होती हैं जो उसके पीहर में रहने पर ही, माता के साथ ही पूरी होनी समीचीन लगती हैं।

संतान के पैदा होने के सात-आठ माह कठिन रहन-सहन के होते हैं। बच्चे का इस दौरान बहुत ध्यान रखना पड़ता है। दो-चार माह तक तो प्रसविका को बच्चे के साथ ही सोते, उठते, बैठते रहकर उसे जहाँ तक हो, अकेला नहीं रहने दिया जाता। सबसे बड़ा ध्यान उसे बिल्ली से बचाये रखने का होता है। कहते हैं बिल्ली को नवजात की तीव्र गंध आती है। ऐसी स्थिति में वह उस गंध के सहारे बच्चे तक पहुँच उसे उठा ले जाती है। मैंने हर परिवार में इन दिनों प्राय: महिलाओं को जच्चा कक्ष के किवाड़ बंद रखते देखा है, ताकि कभी कोई बिल्ली वहाँ तक नहीं पहुँच पाये।

मेरी माताजी ने तो मुझे यह भी बताया कि बिल्ली को डाकिन की शक्ति मिली होती है। बच्चा उठाने में तो वह तनिक भी देर नहीं करती, किंतु उसकी निगाह भी खराब होती है, अत: उससे भी बच्चे को बचाना जरूरी होता है। बिल्ली की नजर यदि किसी बच्चे को लग जाए तो वह बीमार हो जाता है और उसकी कुदृष्टि से मुक्ति दिलाने के लिए बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है। अड़क इलाज, टोने-टोटके करने तथा देव-देवरे ढोक दिलाने पर उसकी बीमारी का शमन होता है और कई बार उसे जीवन से भी हाथ धोना पड़ता है।

काजल का टीका

बच्चों को किसी की नजर न लग जाय, इसलिए नहलाने के बाद उसके दोनों हाथों की हथेली तथा पाँवों की पगथली में काजल की मोटी बिंदियाँ लगाई जाती हैं। ललाट के एक ओर भी ऐसी ही बड़ी बिंदी लगा दी जाती है। आँखों में काजल लगाया जाता है। हथेली में काजल लगाने का एक अर्थ यह भी है कि बच्चा यदि कोई चीज पकड़ता है, तो वह उसके हाथ में नहीं आकर फिसल पड़ती है। कभी-कभी कोई नुकीली अथवा किनारेदार चीज बच्चे के हाथ लग जाती है, जो उसे हानि पहुँचा सकती है। काजल ऐसी हरकतों से भी उसे बचाये रखता है।

लोई करना

साल- छह माह तक के बच्चे के शरीर पर घी की मालिश की जाती है। फिर सरसों के तेल की मालिश कर उसके प्रत्येक अंग को पुष्ट-दुरुस्त बनाया जाता है। मालिश से उसके शरीर में स्फूर्ति बनी रहती है तथा नींद अच्छी आने से वह निरोगी बना रहता है। भूख भी अच्छी लगती है। मालिश करने के बाद घी-तेल उतारने के लिए उसके पूरे अंगों पर लोई की जाती है। यह लोई एक प्रकार का गूदा होता है। यह आटा, हल्दी तथा घी के मिश्रण से लचकदार बनाया जाता है। इससे जो गूदा बनता है, उसे घुमा-घुमाकर लोई बना बच्चे के शरीर पर हल्का-हल्का रगड़ा जाता है, जिससे उसकी रूँवारी जाती रहती है। रूँवारी हल्के-फुल्के व्यर्थ के बाल होते हैं। कुछ बच्चों के लोई ठीक नहीं करने पर बड़े होने पर भी उनके पांवों तथा हाथों पर घने बाल उग आते हैं, जो ठीक नहीं समझे जाते।

प्रारंभ में बच्चे को तीन साल तक माता का दूध पिलाया जाता था। अमूमन दूसरा बच्चा होने के बीच की दूरी भी तीन वर्ष रहती है, किंतु यदि दूसरा बच्चा जल्दी हो गया, तब पहले वाले बच्चे को मजबूरी में माँ से अलग करने पर दूध देना बंद करना होता है। बहुत से बच्चे बड़े होने पर भी माँ का दूध पीना नहीं छोड़ते। दाँत आ जाने पर भी वे दूध पीते रहते हैं और जब पर्याप्त

दूध नहीं होता है तो वे माँ का स्तन भी अपने दाँतों से दबा देते हैं, ऐसी स्थिति में माँ अपने बच्चे को न केवल डांट-डपट लगाती है, अपितु परेशान होकर पिटाई भी कर देती है। कई बच्चे इतने ढीठ हो जाते हैं कि मार खाने पर भी दूध पीना नहीं छोड़ते, तब माताएँ नीम के पत्ते बाँट उसके घोल को स्तन के शीर्ष भाग, (बींटड़ी) पर लगा देती हैं। ऐसी स्थिति में बच्चे का मुँह कड़वा हो जाता है और वह धीरे-धीरे दूध छोड़ना प्रारंभ कर देता है।

जन्म से लेकर दो माह तक बच्चे को नीम अथवा मरवा के ढाई पत्ते पानी के साथ बांट कर गुटकी देते हैं ताकि उसका पेट साफ रहे और किसी तरह की कोई बीमारी नहीं हो।

तालवा के बाल

निपूती महिला की कूख (कुक्षि) चले और वह भी पुत्रवती हो, इसके लिए उसे कई तरह के टोटकों से गुजरना पड़ता है। ऐसी स्थिति में वह किसी नवजात शिशु के सिर के बीच चोटीवाले हिस्से जिसे तालवा कहते हैं, से बाल चूंटकर ले जाती हैं और उन्हें जलाकर उसका पानी पी जाती है। ऐसा करने पर उसकी कूख चल पड़ती है। मुख्यत: नवजात को नहलाते वक्त ऐसी घटना होती है। अत: माताएँ बहुत ध्यान रखती हैं। नहलाते समय बच्चे के सिर के बाल अत्यंत कोमल हो जाते हैं और वह रोने भी लगता है। उसकी रूलाई के समय कोई तालवा के बाल उखाड़ ले तो बच्चे के अधिक रोने की आशंका बनी रहती है। बच्चा अधिक देर तक रोता रहता है और चुप नहीं हो पाता है, तब माताएँ उसके तालवे के स्थान को देखती हैं। होशियार दाइयाँ ऐसी बीमारी बहुत जल्द पकड़ लेती हैं। बाल उखाड़ने के कारण उस स्थान पर खून जमा हो जाता है, तब घी लगाकर और ऊंगली फेरकर बच्चे को थपथपी दे चुप किया जाता है।

पोतड़ा पहनाना

सफेद कपड़े का छोटा सा तिकोना कपड़ा पोतड़ा कहलाता है, जो नवजात का अधोवस्त्र होता है। ऐसे कम से कम 8-10 पोतड़े होते हैं, जो बच्चे के गीले अथवा गंदे करते ही बदल दिये जाते हैं। इन पोतड़ों को ध्यानपूर्वक काम में लिया जाता है और सूखने पर सावधानीपूर्वक रखा जाता है। निपूती औरतें ऐसे पोतड़े चुराने में भी दक्ष होती हैं। ऐसी महिला को पोतड़ा हाथ लगने पर उसके एक किनारे के टुकड़े को लेकर जला दिया जाता है और उसकी राख को पानी में घोलकर पीने से उसकी कूख चालू हो जाती है, किंतु नवजात की माँ भविष्य में संतान पैदा नहीं कर पाती है।

मेरे गाँव में एक पड़ोसिन की बड़ी बहू अपनी देवरानी की संतान के पोतड़े धोने गई। लौटकर जब उसकी सास ने पोतड़े गिने तो एक कम निकला, फलस्वरूप तत्काल सास ने बहू को तालाब भेज पोतड़ा लाने को कहा। बहू दौड़ी-दौड़ी तालाब गई और पानी में रह गया, वह पोतड़ा ढूँढकर लाई। सास ने नसीहत देते उसे कहा कि वह भविष्य में ऐसी गलती कभी न करे। पोतड़ा ज्यों-ज्यों पानी में गलता जाता है, त्यों-त्यों बालक का शरीर गलता जाता है और अंत में पोतड़े की तरह उसका शरीरांत भी हो सकता है।

हंसली डिगना

बच्चे को उठाते समय, गोद में लेते समय या दूसरे के हाथ में देते समय एक हाथ उसकी गर्दन के नीचे और दूसरा कमर के नीचे हथेली में देना होता है। इससे उसके शरीर का संतुलन बना रहता है। जब यह संतुलन गड़बड़ा जाता है, तब मुख्यत: उसकी गर्दन तथा कंधे की हड्डी फिसल जाती है। ऐसी स्थिति में बच्चा बड़ी बेचैनी महसूस करता है। वह रोता रहता है। माँ का दूध तक पीना छोड़ देता है। हड्डी के फिसलाव से जो बीमारी हो जाती है, उसे हंसली डिगना कहते हैं।

एक चिकित्सक ने मुझे बताया कि हंसली डिगने से तात्पर्य हड्डी का अपनी जगह से सरक जाना होता है। यह एक प्रकार का डिसलोकेशन है, जब हड्डी अपनी जोड़ से अलग हो जाती है। कभी-कभी छोटे बच्चों की माँशपेशियाँ दबी रहने पर ऐंठन आ जाती है, जिससे बच्चे का हिलना-डुलना रुक जाता है। ऐसी स्थिति में बच्चे को एक चादर में सुलाकर उसको दोनों ओर से दो व्यक्ति दोनों हाथों में एक-एक पल्ला (किनारा) पकड़ झुलाने की क्रिया करते हैं। उस चादर में बच्चा इधर-उधर गुड़िन्दे खाता झूलता हुआ अपने को अच्छा महसूस करता है। धीरे-धीरे उसकी रूलाई (रुदन) जाती रहती है और झुलाते-झुलाते ही बच्चा नींद पकड़ लेता है। समझा जाता है कि बच्चे की हंसली ठिकाने लग गई है। इस क्रिया को नरग निकालना कहते हैं।

बच्चों की हंसली डिग जाने पर मामा एक पाँव पर खड़ा रहकर चाँदी की हँसली पहनाता है। चमड़े की डोरी गले में पहनाते हैं। काले डोरे में शेर का नाखून पहनाते हैं। शव के आगे न्यौछावर करने वाले सिक्के पहनाते हैं। शेर का नाखून सुनार से चाँदी की सूप (पतरड़ा) में जुड़वाकर मुझे भी पहनाया गया, जिसे आज भी मैंने संभाल रखा है। सांस चलने पर मंत्रित मादलिया गले में बाँधते हैं। बादला (निमोनिया) चलने पर, फिया कलेजा होने पर कांचली की कस गर्म कर दोनों भौहों के बीच की जगह दागते हैं, जिसे चमरक्या चेंटाना कहते हैं। खाँसी (निमोनिया) होने पर गाय अथवा गाडर मूत्र गर्मकर हल्दी के साथ पिलाते हैं। जुवां पड़ने पर बच्चा मुँह से लार निकलता है, तब निमोलियों का तैल लगाते हैं। सीताफल के बीजों का तेल भी लगाते हैं।

लासण जूण

पूर्वकाल में बीमारियों की पहचान और उनका इलाज दोनों का बड़ा अभाव था। अत: हर बीमारी का इलाज डाम (दग्ध चिन्ह) से किया जाता था। यहाँ तक कि जानवरों तक का इलाज भी डाम देने की क्रिया से होता। उदयपुर के पास बड़ी में, मैं एक समझे-बुझे ऐसे व्यक्ति से मिला, जिसने अपनी साठ वर्षीय आयु में लगभग एक लाख से अधिक लोगों का डाम देकर इलाज किया। बच्चों का इलाज भी इसी पद्धति से होता। मेरे खुद के नाभि की जगह दो दग्ध चिन्ह अभी भी बरकरार है जो मेरी बहुत छोटी उम्र से है। ये डाम रोगी की अवस्था और आवश्यकता के अनुसार स्थान विशेष पर सुई की नोक से लेकर चिमटे जैसे लोहे के औजार को गर्म कर लगाये (दागे) जाते थे।

छोटे बच्चों की अकाल मृत्यु हो जाती है या जिस माता के बच्चे जीवित नहीं रहते हैं, वह अपने मृत बच्चे के शरीर के किसी अंग पर काजल, हिंगलू, घी, तेल, कुमकुम में से किसी एक का निशान लगा देती है, ताकि अगला जन्म वह जहाँ भी ले, उसके उस स्थान पर वह चिन्ह उभर आए और वह बच्चा दीर्घायु प्राप्त करे। जो निशान मृत बच्चे के जिस रंग का लगाया जाता है, वही रंग उसके अगले जन्म में उभार दिये रहता है। इस चिन्ह को लासण कहते हैं।

यही नहीं, मृत्यु होने के पश्चात् बच्चे को धरती पर सुलाया जाता है। जिस स्थान पर उसे सुलाया जाता है, उसे श्मशान ले जाने के पश्चात् साफ छना हुआ आटा फैलाकर छलनी से ढक दिया जाता है। जब दागिये मृतक का श्मशानी कार्य सम्पन्न कर घर लौटते हैं, तब वह छलनी हटाकर आटे पर उभरा हुआ चिन्ह देखते हैं, जो उस मृतक बच्चे के अगले जन्म का सूचक होता है कि वह किस योनी में गया है। यह क्रिया जूण कहलाती है। ऐसी स्थिति में आटे पर कोई सर्प, पेड़, पशु, पक्षी अथवा मानवाकृति दिखाई देती है। समझे-बुझे इस आकृति से उस मृतक के अगले जूण (जन्म) का पता लगा लेते हैं।

नामकरण का झमेला

किसी भी विवाहिता की प्रथम संतान उसके पीहर में ही होती है। संतान होने को जापा जनना कहते हैं। प्रसवावस्था से किसी महिला का गुजरना बहुत दुष्कर और अत्यधिक परेशानी वाला कहा जाता है। यह स्थिति किसी भी महिला का नया जन्म धारण करना कही जाती है।

बालजन्म होने पर पीहर वाले नाना-नानी बच्चे का नामकरण अपनी मर्जी से, प्यार के उमड़ाव के साथ करते हैं। किंतु वही संतान जब उसके पितृगृह जाती है, तब उसका अन्य नाम रखा जाता है, जो ज्योतिषी के अनुसार जन्म तिथि, राशि को ध्यान में रखकर रखा जाता है। कई बार एक संतान के उसके पितृगृह का तथा ननिहाल का दिया नाम अंत तक चलता रहता है। ऐसे दो-दो नाम के कई बच्चे होते हैं। इस नाम को घर का दिया नाम कहा जाता है। अब तो स्कूल में दाखिला लेते समय का नाम अलग रखा जाता है।

सगाई के वक्त जब नामे जोड़े मिलाये जाते हैं, तब भी यदि बच्चे के पितृगृह के नाम से उसका नामा-जोड़ा नहीं मिल रहा होता है, तब चलता नाम, नाना के घर के दिये नाम से उसके नामे जोड़े मिलाकर उनके सगाई सगपण तथा विवाह का मुहूर्त निकाला जाता है। यह सब व्यक्ति ने अपनी मनचाही स्थिति अपने अनुकूल बनाने के लिए सुविधा की दृष्टि से स्वीकारा है। देवता भी कहते हैं कि जब किसी के जन्म और मृत्यु की कोई निश्चित तिथि नहीं होती है, तब उसके लिए मुहूर्त आदि निकालने की आवश्यकता नहीं है।

प्रसूता का खानपान

बालजन्म के बाद सर्वाधिक ध्यान जापावाली (प्रसूता) पर दिया जाता है। उसका खानपान कैसा हो, रहन-सहन कैसा हो, जहाँ वह रह रही है वह स्थान उसके अनुकूल है या नहीं, जापेवाली को किन-किन बातों का ध्यान रखना होता है, किन-किन चीजों से परहेज रखना है। कुल मिलाकर जच्चा-बच्चा दोनों स्वस्थ रहें, इसी चर्चा और देखभाल में मुख्यत: परिजन महिलाओं का अधिक ध्यान रहता है। इस कार्य में पुरुष की भूमिका नहीं के बराबर ही रहती है। महिलाएँ ही ध्यान रखती हैं और प्रसूता की खोज-खबर लेती रहती हैं।

बच्चे के जन्म होते ही सर्वप्रथम उसे गुड़ मिश्रित हल्का नवाया (गर्म) पानी पिलाया जाता है। यों किसी न किसी तरह से गुड़ की मात्रा अधिक दी जाती है, ताकि उसके शरीर में गर्माहट रहे और किसी तरह की बाहरी हवा का प्रवेश न हो पाये। प्रसूता का सिर भी कपड़े से बाँध दिया जाता है, ताकि सिर-दर्द न हो पाये और न कोई हवा भी लग सके। गुड़ के पानी के बाद चाय पिलाई जाती है। लगभग सप्ताह भर किसी तरह का खाद्य पदार्थ नहीं दिया जाता।

मुहूर्त के अनुसार सात दिन के बाद सूरज पूजने का संस्कार किया जाता है, तब पहली बार जच्चा-बच्चा को बाहर निकाल अन्य महिलाओं के सम्मुख लाया जाता है। सूर्य पूजन के बाद प्रसूता को दवाई के रूप में सप्ताह भर सूंठ के लड्डू खिलाये जाते हैं। सूंठ बारीक पीस-छानकर उसे घी से हल्की आँच पर सेंक दी जाती है, फिर उसमें गुड़ या शक्कर मिलाई जाती है। इसे स्वादिष्ट बनाने के लिए मेवा (बादाम, काजू) मिलाये जाते हैं। कुछ स्वाद में अत्यंत तोरा होता है, अत: लड्डू के साथ मावा तथा खोपरा मिला दिया जाता है। यह पदार्थ खाने में अच्छा नहीं लगता, अत: इसके साथ बाफे हुए मसालेदार मूंग या चने का पापड़ दिया जाता है। यह सिर की अचूक दवा कही जाती है। इसके लेने से प्रसूता सिर की बीमारी से बची रहती है।

इसके बाद बत्तीसा खाने को दिया जाता है। बत्तीसा, बत्तीस प्रकार की जड़ी बूटियों का मिश्रण कर तैयार किया जाता है। यह सामग्री पंसारी के पास मिल जाती है। पंसारी हर दवा की मात्रा जानता है। इस सामग्री को घर की महिलाएँ हमाम दस्ते में खांड-पीटकर (अब मिक्सी में पीसकर) तैयार करती हैं। इसके खाने से प्रसूता में धीरे-धीरे शक्ति का संचार होता है। इसके बाद शरीर की ठंडाई के लिए हल्दी और फिर लोद या जीरा दिया जाता है।

यह दवाई लेने के बाद अंत में गूंद (गोंद) खाने को दिया जाता है। गाँवों से धावड़ी गोंद मंगवाकर हल्की आंच के घी में उसे डाला जाता है, जिससे वह मकई की तरह फूल जाता है। इस गोंद के दाने को फूले पाड़ना कहते हैं। इन फूलों को आपस में हाथ से मसलकर खोपरा और शक्कर मिला दी जाती है। इसके खाने से शरीर में ठंडक बनी रहती है। पिछली दवाइयों से शरीर में जो गरमाहट फैल जाती है, उसका इससे दाब रहता है।

संस्कारों का महत्त्व

डॉ. पूरन सहगल

जन्म संस्कारों का निर्धारण गर्भाधान से ही प्रारम्भ हो जाता है। मानव का सम्पूर्ण जीवन संस्कारों का क्षेत्र है, इसलिए प्रजनन को भी हमें जन्म संस्कारों के अन्तर्गत ही मानना होगा। धर्मशास्त्रों के अनुसार इसके साथ कोई अशुचिता का भाव निहित नहीं है। इसी कारण अधिकांश गृह्यसूत्र में गर्भाधान के साथ ही जन्म संस्कारों का प्रारम्भ माना गया है।

जिस कर्म के द्वारा पुरुष, स्त्री में अपने बीज स्थापित करता है, उसे गर्भाधान कहते हैं।[1] शौनक भी लगभग यही परिभाषा देते हैं।[2]

इस संस्कार का विकास होने में अवश्य ही बहुत समय लगा होगा। आदिम युग में प्रसव एक प्राकृतिक कर्म था। शारीरिक आवश्यकता प्रतीत होने पर मानव युगल संतान की किसी पूर्व कल्पना के बिना सहवास कर लेता था। सहवास के स्वाभाविक परिणाम का प्रतिफल संतानोत्पत्ति थी। प्रकृति के अन्य प्राणियों की भाँति। पश्चात् समझ बढ़ने के बाद गर्भाधान संस्कार से पूर्व सुव्यवस्थित आवास, विवाह एवं देव प्रार्थना की कल्पना विकसित हुई।

वैदिक काल में गर्भधारण की ओर इंगित करने वाली प्रार्थनाएँ रची गईं। 'विष्णु गर्भाशय निर्माण करें, त्वष्टा तुम्हारा रूप सुशोभित करें, प्रजापति बीज वपन करें, धाता भ्रूण स्थापन करें। हे सरस्वती! भ्रूण को स्थापित करो। नील कमल की माला से सुशोभित दोनों अश्विनीकुमार तुम्हारे भ्रूण को प्रतिष्ठित करें।[3]

अथर्ववेद के एक मंत्र के अनुसार- गर्भधारण करने के लिए स्त्री को पर्यंक पर आने के लिए निमंत्रण का उल्लेख है। प्रसन्न चित्त होकर शैय्या पर आरूढ़ हो अपने पति के लिए संतति उत्पन्न करो।

सूत्रकाल का अध्ययन करने से हमें ज्ञात होता है कि गृह्य सूत्रों में गर्भाधान विषयक विद्वानों की सर्वप्रथम व्यवस्थित रूप से विवेचना की जाती है। उनके अनुसार विवाह के उपरांत 'ऋतुस्नान से शुद्ध पत्नी के समीप पति को प्रतिमास जाना होता था। गर्भाधान से पूर्व उसे विभिन्न प्रकार के पुत्रों, ब्राह्मण, श्रोत्रिय, अनुचान (वेदांगों का ज्ञाता) ऋषि कल्प, भ्रूण (सूत्रों और प्रवचनों का अध्येता) ऋषि (चारों वेदों का अध्येता) और देव (जो उपर्युक्त) पुत्र की इच्छा के लिए व्रत- अनुष्ठान करना होता था। व्रत समाप्ति के उपरान्त अग्नि में पकवान की आहुति दी जाती थी। तदुपरान्त पति-पत्नी को सहवास के लिए प्रस्तुत होना होता था। [4]

सहवास के पूर्व स्त्री-पुरुष दोनों को उचित अलंकारों से श्रृंगारित होकर शुद्ध तन-मन से वैदिक मंत्रों तथा अनेक श्रृंगार एव उपमायुक्त मंत्रों का उच्चारण करते हुए सहगमन के लिए तत्पर होने का प्रावधान था। [5] तब गर्भधारण एक धार्मिक अनुष्ठान माना जाता था। समस्त संस्कारों में यह संस्कार अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता था।

धर्म सूत्र एवं स्मृतियाँ इस संस्कार के कर्मकाण्डीय पक्ष में कुछ और योग देती है। ये सूत्र स्मृतियाँ सहवास को अनुशासित करने के नियमों का निर्धारण कर मानव को पशु से श्रेष्ठ बनाने का एक महत्त्वपूर्ण प्रयास है।

गर्भाधान कब हो, स्वीकृत और निषिद्ध रात्रियाँ, नक्षत्र सम्बन्धी विचार, बहुपत्नीक पति के प्रति अनुशासन आदि का निर्धारण कर गर्भधारण को एक आवश्यक कर्तव्य और इसके अपवाद, संस्कार को सम्पन्न करने की रात्रि आदि एवं सहवासोपरान्त स्नानादि से शुद्धि का विधान याज्ञवल्क्य, आपस्तम्ब और शतातप आदि ऋषियों ने इसका वर्णन किया है। [6]

समय-समय पर काल-परिस्थितियाँ, प्रयोग और पद्धतियाँ भी इस संस्कार में कुछ नये अंगों का योग करती हैं। इसके पूर्व मातृपूजा, नान्दीश्राद्ध और विनायक पूजा का विधान करती हैं।[7] संस्कार की समाप्ति पर भेंट, दक्षिणा, दान और भोज का भी विधान किया गया है। [8] वैसे ये क्रियाएँ अन्य संस्कारों में भी समान रूप से अपनायी जाती हैं।

मध्यकाल में उपरोक्त धार्मिक रूप से गर्भाधान संस्कार पर विचार विमर्श हुआ। इस विवेचन से इस तथ्य के निर्धारण पर भी चिंतन किया गया है कि क्या यह निर्धारित संस्कार गर्भाधान संस्कार हेतु मान्य हैं अथवा क्षेत्र संस्कार हेतु? [9]

अन्ततः निर्णय हुआ कि द्विज के गर्भाधान से अग्नि दाह पर्यंत समस्त संस्कार किए जाने चाहिए। गौतम सूत्र में उल्लेख है कि पुरुष के चालीस संस्कार होने चाहिए। कुछ अन्य विचारकों के अनुसार गर्भाधान संस्कार, क्षेत्र संस्कार एवं स्त्री शुद्धि का संस्कार मान्य था। यह प्रथम गर्भाधान के समय ही किया जाना उचित है। पश्चात् आवश्यक नहीं है।

समयानुसार हिन्दुओं के सामाजिक और राजनैतिक विचारों में परिवर्तन होता गया। एक पुत्र की उत्पत्ति के उपरान्त ही पुरुष 'पुत्री' माना गया और उसने पितृऋण चुका दिया, ऐसा विधान किया गया। गर्भाधान संस्कार में शिथिलता आती चली गई।

सांस्कृतिक दृष्टि से गर्भाधान संस्कार अत्यंत महत्त्वपूर्ण संस्कार था। इसके पालन से पुरुष एवं स्त्री की सहवास स्वच्छंदता पर अंकुश लगता था। आज यह स्वच्छंदता संस्कार विहीनता का ही प्रतिफल है।

गर्भधारण के बाद उसकी पुष्टि होने पर पुंसवन संस्कार का प्रावधान ऋषियों ने किया था। तब इस संस्कार का अभिप्राय पुत्र प्राप्ति की अभिलाषा थी। पुं = पुमान (पुरुष) का जन्म है, ऐसा आशय था।[10] तब दशपुत्रवती का आशीर्वाद दिया जाता था। तब आर्यों को युद्ध हेतु अधिक पुत्रों की आवश्यकता होती थी। इस कारण ऐसे आशीर्वाद तथा अनुष्ठान किए जाते थे। इसी आशय से आज भी 'पुत्रवती भवः' तथा लोक में 'दूधो नहाओ और पूतो फलो' का आशीर्वाद सौभाग्यवती स्त्रियों को दिया जाता है। धीरे-

धीरे यह संस्कार सामान्य रूप से चलन में रह गया। कहीं-कहीं गर्भस्थ शिशु में संचलन से पूर्व तथा कहीं गर्भस्थ शिशु के अंग संचलन के पश्चात् इस संस्कार को निर्वाहित किया जाता है। बहुधा सातमास पूर्ण होने पर यह संस्कार लोकरीति एवं धर्मानुशासन के अनुसार किया जाता है।

पुंसवन संस्कार प्रत्येक गर्भधारण के पश्चात् किया जाता था, किन्तु अब यह संस्कार प्रथम गर्भधारण के पश्चात् ही किया जाता है। तीसरा संस्कार सीमान्तोन्नयन संस्कार गर्भिणी स्त्री की दुष्ट आत्माओं से रक्षा के लिए किया जाता था।[11] यह संस्कार गर्भ के पाँचवे मास पूर्ण होने पर करना होता था। इस अवस्था में गर्भस्थ शिशु का मानसिक विकास प्रारंभ हो जाता है।

अस्तु गर्भिणी स्त्री की केश सज्जा, सुविधाजनक रहन-सहन, खान-पान, श्रृंगार का तथा सुंदर चित्रों, दृश्यों, मनोवांच्छित कथाओं तथा पौष्टिक भोजन का ध्यान रखना आवश्यक है। गर्भिणी प्रसन्न रहे। श्री की पूजा कर स्वयं का तथा गर्भस्थ शिशु की रक्षा की प्रार्थना करें। किसी प्रकार का रोग शोक उसे न हो।[12]

देवी भागवत में भी गर्भस्थ शिशु के क्रमिक विकास का वर्णन है। उसका भी यही आशय है।

सामवेद में कहा गया है कि जिस प्रकार प्रजापति महान ऐश्वर्य (सौभाग्य) के लिए अदिति की सीमा निर्धारित करता है, उसी प्रकार मैं संतति के दीर्घायु के लिए उसके केशों को सँवारता हूँ।[13] उसी क्रम में कहा गया है, जिस प्रकार यह वृक्ष उर्वर है, उसी प्रकार तथा इसी के समान यह भी फलवती हो।[14]

हिन्दुओं में गर्भिणी स्त्री के लिए निर्धारित सभी संस्कार आयुर्वेदिक ज्ञान पर तथा मनोविज्ञान पर आधारित है। गर्भाधारण के पश्चात् गर्भिणी के लिए मैथुन, अधिक श्रम, दिवाशयन, रात्रि जागरण, वाहन यात्रा, भय, शोक, अतिप्रसन्नता, घुटनों के बल बैठना, रेचन, कोष्ठबंधता, मूत्रबंध की वर्जना के पीछे आयुर्वेदिक ज्ञान ही कारण है। शिशु का जन्म एक प्रभावकारी, मंगलकारी एवं हर्षदायी प्रसंग होता है। वह मेल ही मानव का हो अथवा अन्य पशु-पशियों का हो। इसका श्रेय अभिभूत होकर अतिमानवीय शक्तियों का प्रदान किया गया है।

शिशु के जन्म के पश्चात् एवं नाभिबंधन से पूर्व जातकर्म संस्कार का विधान था। यदि जन्म के समय कुल में मृत्यु या अशौच हो जाय, तब जातकर्म संस्कार को शुचिता तक स्थगित कर दिया जाता था। यह संस्कार शिशु और प्रसूता की सुरक्षा के लिए भी किया जाता था। पश्चात् यह संस्कार प्रसव के पश्चात् नाभि बंधन के बाद किया जाने लगा। सुरक्षित एवं सहज प्रसव की भावना से भी यह संस्कार किया जाता था। अब यह संस्कार नहीं किया जाता।

प्रसव हेतु कक्ष का चुनाव शुद्धिकरण तथा वास्तु सम्मत समस्त व्यवस्थाएँ जुटाई जाती थी। इसी संस्कार में पिता अपने पुत्र (संतान) का मुख देखता था। संस्कार को जन्म कुण्डली निर्धारण के लिए उपयुक्त समय माना जाता था।

इसी संस्कार के प्रथम चरण में मेघाजनन संस्कार होता था। पिता अपनी तर्जनी अंगुली और स्वर्ण श्लाखा से शिशु को मधु और घृत चटाता था। वह उसके कान में भूः स्वः मंत्र का उच्चारण करता था। उसकी मेघा शक्ति में प्रगाढ़ता बनी रहे।

इसके बाद दूसरे चरण में आयुष्य संस्कार होता था। शिशु की नाभि अथवा दाहिने कान में पिता गुनगुना कर अग्नि दीर्घजीवी है, वह वृक्ष दीर्घजीवी है, मैं उस दीर्घजीवी से तुझे दीर्घजीवी करता हूँ।[15]

संस्कार समाप्त हो जाने के पश्चात् ब्राह्मणों को गौ, स्वर्ण, भूमि आदि दान की जाती थी। अब यह परम्परा प्रायः समाप्त हो चुकी है। नामकरण संस्कार भाषा शास्त्रीय समस्या है। सामाजिक चेतना के विकास के साथ मनुष्यों का भी नामकरण किया जाने लगा। इससे पूर्व केवल वस्तुओं का नामकरण किया जाता था। बाद में नामकरण की प्रथा को एक संस्कार के रूप में तथा धार्मिक अनुष्ठान के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।

शतपथ-ब्राह्मण में नवजात शिशु के नामकरण (संस्कार)

के विषय में एक नियम भी मिलता है। 'पुत्र के उत्पन्न होने पर उसका नाम रखना चाहिए।[16] नामकरण प्राय: जन्म से दसवें या बारहवें दिन सम्पन्न होता था।

मुण्डन संस्कार, उपनयन संस्कार – ये दोनों संस्कार विद्या अध्ययन के पूर्व किए जाते थे। कई बार उपनयन संस्कार गुरु आश्रम द्वारा करवाया जाता था। उपनयन संस्कार एक महत्त्वपूर्ण संस्कार था। विद्या आरम्भ के समय बालक को तीन तरह का उपनयन पहनाया जाता था, जिसका तात्पर्य था गुरू के प्रति समर्पित रहना, ब्रह्मचर्य का पालन करना तथा विद्या अध्ययन करना। वस्तुत: ये तीन सूत्र थे, जिनका पालन करने की स्मृति सदा बनी रहती थी।

विद्यापूर्ण होने के पश्चात् विवाह से पूर्व अर्थात् विवाह के समय उसे तीन तरह से और पहनाकर छह बार का उपनयन धारण करवाया जाता था। विवाह संस्कार के पश्चात् व्यक्ति के तीन दायित्व और बढ़ जाते हैं। पत्नी तथा उसके बच्चों का पालन-पोषण करना, माता-पिता की सेवा सूश्रुषा तथा देश की रक्षा। इस प्रकार छ: सूत्र अर्थात् छह दायित्वों का पालन करने का संकल्प यह उपनयन सदा करवाता रहता है। उपनयन का अर्थ ही ईश्वर द्वारा प्रदत दो नयनों के अतिरिक्त एक तीसरा नयन, यह छह सूत्रीय उपनयन कंधे पर महत्त्वपूर्ण दायित्वों के निर्वहन की सदा याद दिलाता रहता है।

लोक में आज भी कुछ संस्कार वैदिक, पौराणिक एवं लोक रीति के अनुसार निर्वाहित किए जाते हैं। अंतिम संस्कार दाहकर्म संस्कार होता है जिसका पालन उसके वंशज तथा गोत्रज विधि पूर्वक करते हैं। सभी संस्कार अपने-अपने कुल गोत्र के नियमों एवं परम्पराओं के अनुसार किए जाते हैं। वैदिक ग्रंथों में सोलह संस्कारों का उल्लेख मिलता है। इसके बावजूद जीवन में जन्म, विवाह और मृत्यु ये तीन संस्कार अधिक महत्त्वपूर्ण है। इनका निर्वाह आज भी अपने-अपने कुल-वंश एवं पुरोहितों के निर्धारण के अनुसार किया जाता है।

आदिवासी समुदायों में जन्म संस्कार एवं जन्म से पूर्व गर्भधारण की अपनी मान्यताएँ हैं। यदि हम सब समुदायों में प्रचलित लोक कथाओं और मिथक कथाओं का अध्ययन करें तो साररूप में यह तय होता है कि 'माँ के पेट में आने के पूर्व भगवान बच्चे को बनाता है। दंडामी माड़िया तथा गुजराज के कुड़मी आदिवासी यह मानते हैं कि भगवान यह तय करता है कि किस आत्मा को किस बच्चे में स्थापित करना है तथा उसे किस कुल गोत्र एवं परिवार में जन्म देना है। इसके लिए भगवान अपने दूत को भेजकर सब निर्धारण करता है। सभी शक्तियाँ आपस में मिलती है। भगवान सूप से फटकाकर आत्मा को माँ के पेट में भेज देता है।

जन्म के समय ओझा शिशु और प्रसूता का शुद्धिकरण तथा कुटिल शक्तियों से रक्षा के लिए उपाय करता है। यह जातकर्म संस्कार का ही एक लोक साध्य रूप है।

नामकरण संस्कार के अनेक तरीकों में भील आदिवासी समुदाय में एक परम्परा है कि प्रसव के तीसरे दिन स्नान कर शुद्ध होने के पश्चात् माँ अपनी झोपड़ी के द्वार पर खड़ी हो जाती है। सूर्योदय के पश्चात् उसकी पहली दृष्टि जिस वस्तु पर पड़ती है, उसी के आधार पर उस बालक/ बालिका का नाम रख दिया जाता है।

मुरिया जनजातीय समुदाय में विवाह से पूर्व घोटुल में किशोर और किशोरियाँ एक-दूसरे के साथ रहकर संयम का संस्कार सीखते है। वहीं रहकर वे लोकाचरण सीखते हैं। सामुदायिक भावना एवं सूझ-बूझ का ज्ञान प्राप्त करते हैं तथा फिर विवाह के लिए स्वयं वर का निर्धारण करते हैं।

विवाह ओझा और बड़ों के द्वारा सम्पन्न होता है। कुछ समुदायों में विवाह के अवसर पर स्तंभ स्थापना की जाती है। यह परम्परा अन्य समाजों में भी है, जिसे माणक खम्ब कहा जाता है।

मृत्यु संस्कार आदिवासी समुदायों में अन्य समुदायों की भाँति ही होता है। यही संस्कार जीवन का अंतिम संस्कार होता है। अस्वाभाविक मृत्यु होने पर आदिवासी समुदायों में 'स्मृति स्तंभ' गाड़ा जाता है। स्तंभ पर अनेक देवी-देवताओं की मूर्तियाँ

उकेरी जाती है। भारत विविधताओं का देश है। विभिन्न जातियाँ-धर्म समुदाय इसमें निवास करते हैं। सबके अपने-अपने रीति-रिवाज एवं संस्कार हैं। लोक निर्धारित, वंश-गोत्र निर्धारित एवं काल-परिस्थिति निर्धारित, जीवन जय करने के लिए अनेक रीति-रिवाजों की परम्परा यहाँ सतरंगी छटा बिखेरती दिखाई देती है।

भारत में विविधता होने के बावजूद भी ये संस्कार किसी न किसी स्तर पर एक दूसरे से मिलते-जुलते दिखते हैं। इन संस्कारों का सामाजिक, पारिवारिक एवं व्यक्तिगत विकास में, संयमित जीवन में तथा सहभागिता बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

संदर्भ

1. गर्भः संधार्यते यन कर्मणा तद् गर्भाधान मित्यनुगतार्थ कर्मनामधेयम्। पूर्व मीमांसा, अध्याय 1, पाद 4, अधि 2, वी 1 वी.मि.सं. में संस्कार में उद्धृत।
2. निषिवतो यत्प्रयोगेण गर्भः संधार्यते स्त्रिया। तद् गर्भालम्भन नाम कर्म प्रोक्तं मनीषिभिः।। वी.मि.सं. में उद्धृत
3. ऋत-वद 10, 184। वही 14, 22
4. बो.गृ. सूत्र 1, 7, 1, 18
5. वही -- ''-- 1, 7, 37-21
6. ऋतो तु गर्भ शङ्कित्वा स्नानं मैथुनिनः स्मृय याज्ञवल्क्य और आयस्तम्ब।
7. दशकर्म पद्धति।
8. वही
9. निषेकादि श्मशांतो मंत्रैर्यस्योदितो, विधि - मनु स्मृति 2, 16 एवं या स्मृति 1, 10, गौतम सूत्र 8, 14 आदि।
10. पुमान प्रसूयते येन कर्मणा तत् पुंसवनमीरितम्। शौनक, वीर मित्रोदय संस्कार -प्रकाश, भा 1 पृष्ठ 166 तथा अ. वे. 3, 23, 3 आदि।
11. सीमान्त उन्नीयते यस्मिन कर्म तत् सीमन्तोन्नयन मिति कर्मनाम धेयम्। वी.मि. सं. भा. पृष्ठ 172
12. पञ्चमे मनः प्रबुद्धतरं भवति, सष्ठे बुद्धिः- सुश्रुत शरीर स्थान, अध्याय 33
13-14. ओम। येनादिते सीमानं नयति प्रजापयतिर्महते सौभगाय।
    तैनाहमस्यै सीमानं नयामि प्रजामस्यै जरदष्टि कृणोमि।। सामवेद-मंत्र ब्राह्मण 1-5-2 एवं पागृ सूत्र 15, 6
15. पा.मृ. सूत्र 1, 16, 6
16. तस्मात्पुत्रस्य जातस्य नाम कुर्यात। 6, 1, 3, 9

मानव जन्म की गाथा

मायापति मिश्र

यह विषय सर्वदा ही भारतीय जन-मानस में विमर्श का विषय रहा है कि शास्त्र-लोक के लिए है या लोक-शास्त्र के लिए? इस गूढ़ एवं विचारणीय प्रश्न के उत्तर लोक तत्त्व की मानवीय अवधारणा में निहित हैं। लोक-शास्त्र एवं नीति-शास्त्र के अनुरूप लोक आचरण सम्भव नहीं है क्योंकि लोक आचरण की ही व्याख्या शास्त्रों में की जाती है। वास्तव में लोक जीवन में प्रचलित नीतियाँ ही शास्त्रों के नीति-निर्देशक के रूप में स्थापित हो जाती हैं, अत: लोक व्यवहार पर शास्त्रगत नीतियाँ लागू करना बेमानी होगा। पृथ्वी पर पहले मानव जीवन स्थापित हुआ, फिर उसी से लोक भावना प्रसूत हुई, और बाद में चलकर लोक जीवन की गतिविधियों एवं वाचिक परम्पराओं को स्थाई रूप देने के लिए शास्त्रों की रचना की गई। मानव की आस्था ने जब धर्म धारण किया, तो वह गूढ़ तत्त्वों से अनुस्यूत प्रतिबिम्बित होने लगी। धर्मशास्त्रों के प्रणेता प्राय: ऋषि- मुनि ही रहे। भारतीय मनीषा की अन्तश्चेतना ने अपने अनुभवों एवं देखे- सुने लोक को जिस धरातल पर व्याख्यायित किया है, उसमें लोक जीवन एवं अपने यौगिक प्रयोगों को (जो उन्होंने अपनी कठिन साधना एवं आत्म ज्ञान से प्राप्त किया था) मिश्रित करके शास्त्रों की रचना की। लम्बे समय तक बिना आहार के जीवित रहना, पृथ्वी या जल के अंदर श्वास रोककर समाधिष्ठ हो जाना, जल और आग पर चलना, शयन एवं निद्रा का त्याग करके वर्षों तपस्यारत रहना, ये सब चमत्कार भारतीय मनीषा के वैज्ञानिक आविष्कार हैं और ये ही सारे आविष्कार लोक जीवन में कल्याणकारी अवधारणा के रूप में स्थापित हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि सारे शास्त्र, यौगिक क्रियाएँ, आध्यात्म एवं दर्शन लोक के लिए हैं न कि लोक उनके लिए।

चिंतन की भारतीय अवधारणा पौराणिक कथाओं के माध्यम से व्याख्यायित की गयी है। इन्हीं कथाओं में आध्यात्मिक एवं दार्शनिक व्याख्याओं को लोक प्रतीकों एवं रूपकों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। अत: कहा जा सकता है कि भारतीय चिंतन लोक के माध्यम से पुराण प्रसूत है। पौराणिक कथाओं में प्राय: गूढ़ विषयों को एक ऋषि दूसरे जिज्ञासु को वाचिक रूप से सुनाता है। इसी सरणि पर जिज्ञासु प्रश्न पूछकर विषय को आगे बढ़ाता है, जिससे विषय का प्रतिपादन होता जाता है। शौनक आदि ऋषियों की जिज्ञासा शांत करने के लिए धर्मशास्त्रों में प्राय: मार्कण्डेय ऋषि उवाच या नारद उवाच की पद्धति बार-बार दिखायी देती है। यह पद्धति विषय को गति प्रदान करती है। ऋषि उवाच से तात्पर्य है कि सत्य ब्रूयात, सत्यं ब्रूयात अर्थात् ग्रहणीयं। गूढ़ विषयों की व्याख्या ऋषियों के माध्यम से पौराणिक प्रसंगों में कराने के भारतीय मंतव्य के पीछे मुख्य कारण लोकजीवन की यह अवधारणा है कि ऋषि झूठ नहीं बोलता और अनुभवी अन्तश्चेतना भारतीय ऋषि के लिए संसार यक्ष प्रश्न नहीं है, बल्कि संस्मरण सा सहज रूप से प्रस्तुत एवं व्याख्यायित कर देने वाला विषय है। यह ज्ञातव्य एवं ध्यातव्य है कि भारतीय ऋषि अपने आपको लोक निकष पर खरा सिद्ध करने के लिए वह सब अर्जित करता है, जो लोक को चाहिए। इसी प्रेक्ष्य बिन्दु को न ग्रहण कर पाने के कारण देव ऋषि नारद लोक जीवन में लोक ऋषि नहीं बन पाये, क्योंकि उनके क्रिया-कलाप लोक नीति के विपरीत लोकाचार में अमान्य एवं अविश्वसनीय हैं।

प्रकृति एवं पुरुष के सान्निध्य को शैव दर्शन में शिव एवं शक्ति की एकरूपता के रूप में देखा जाता है। शक्ति ही प्रकृति है, जो सृष्टि के कल्याणार्थ जीव संरचना में सहायक है। इसलिए शक्ति को माँ कहा गया है। शक्ति ही सृष्टि के सृजन के साथ उसी के कल्याणार्थ संहार भी करती है। शिव और शक्ति सृष्टि में संतुलन स्थापित करते हैं। शक्ति के बिना शिव-शव के समान हैं और शिव के बिना शक्ति अधूरी। प्रकृति और पुरुष के इसी सामन्जस्य के परिणाम स्वरूप होने वाली जीवोत्पत्ति की विशद् व्याख्या देवी पुराण (महाभागवत) शक्तिपीठांक के सत्रहवें अध्याय में कुल 33 श्लोकों में की गयी है। देवी पार्वती के पिता हिमालय के यह पूछने पर कि-

दु:खस्य कारणं देह: पञ्चभूतात्मक: शिवे
यतस्तद्विरहाद्देही न दु:खै: परिभूतये। 1।
सोऽयं संजायते मात: कथं देहो महेश्वरि।
यं प्राप्य सुकृतान कामान् कृत्व स्वर्गमवाट स्यति। 2।
क्षीणपुण्य: कथं जीवो जायते च पुनर्भुवि।
तद्ब्रूहि विस्तरेणणाशु यदि ते मटयनुग्रह: । 3।

अर्थात् यह पंचभूतात्मक देह ही दु:ख का कारण है, क्योंकि उससे विलग जीव दु:खों से प्रभावित नहीं होता है। माता! महेश्वरी जिस देह को प्राप्त कर यह जीव पुण्य कार्य करके स्वर्ग प्राप्त करता है, वह यह देह किस प्रकार उत्पन्न होती है? और यह जीव पुण्य के क्षीण होने पर पुन: पृथ्वी पर किस प्रकार उत्पन्न होता है। यदि आप मुझ पर कृपा रखती हैं तो उन बातों को शीघ्र ही विस्तार पूर्वक मुझे बताइये। जिज्ञासु की जिज्ञासा शांत करते हुए देवी पार्वती श्लोक संख्या चार से सैंतीस के मध्य जीव एवं उसकी देह संरचना प्रक्रिया को बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से विस्तार से व्याख्यायित करती हैं- 'पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन्हीं पञ्चमहाभूतों से यह देह निर्मित है, इसलिए यह पञ्चभौतिक कहा गया है। उन पाँचों में पृथ्वी तत्त्व तो प्रधान है और शेष चार की उसके साथ सहभागिता मात्र है। गिरिराज! वह यह पञ्चभौतिक देह भी चार प्रकार का कहा गया है, जिसे मुझसे समझ लीजिये- अण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज और जरायुज- ये उसके भेद है। महाराज उनमें पक्षी-सर्प आदि अण्डज हैं, मशक (मच्छर) आदि स्वेदज है। वृक्ष-झाड़ी आदि सुषुप्त चैतन्यवाले उद्भिज्ज हैं और मनुष्य-पशु आदि जरायुज है। शुक्र रज आदि से निर्मित देह को जरायुज समझना चाहिए। पुन: उस जरायुज को भी पुरुष-स्त्री तथा नपुंसक भेद से तीन प्रकार का जानना चाहिए। पर्वतराज! शुक्र की अधिकता से पुरुष, रज की अधिकता से स्त्री तथा दोनों की समानता से नपुंसक होते हैं। अपने कर्मों के वशीभूत जीव ओसकणों से संयुक्त होकर पृथ्वी पर गिरने पर धान्य (वनस्पति) के बीच पहुँचता है। वहाँ रहकर चिरकाल तक कर्मभोग करता है। पुन: जीवों के द्वारा उसका भोग किया जाता है। तदनन्तर पुरुष के देह

में गुह्येन्द्रियों में प्रविष्ट होकर वह वीर्य रूप हो जाता है। उसी कारण से वह जीव भी वीर्य में संनिविष्ट हो जाता है। महामते! तत्पश्चात् ऋतुकाल में स्त्री के साथ पुरुष का संयोग होने पर वीर्य के साथ-साथ जीव भी माता के गर्भ में पहुँच जाता है। राजन! रजोधर्म के चौथे दिन स्त्री ऋतुस्नान करके शुद्ध होती है, उसी दिन से लेकर सोलहवें दिन तक ऋतुकाल कहा गया है। पर्वतश्रेष्ठ! विषम दिनों में समागम करने से स्त्री और सम दिनों में समागम करने से पुरुष की उत्पत्ति होती है। पिताजी! ऋतुस्नान की हुई कामार्त-स्त्री जिसके मुख का दर्शन करती है उसी की मुखाकृति की संतान जन्म लेती है। अत: स्त्री को उस समय अपने पति का मुख देखना चाहिए। महामते! वह वीर्य स्त्री के योनि स्थित रज से मिलकर एक दिन में कलल (अवस्था विशेष) बन जाता है। वही कलल अत्यन्त सूक्ष्म झिल्ली से पूर्णतया आवृत्त होकर पाँच दिनों में बुलबुले के आकार का हो जाता है। अत्यन्त सूक्ष्म आकार की जो चमड़े की झिल्ली होती है, उसे जरायु कहा जाता है। चूँकि उसमें वीर्य तथा रज का योग होता है और उसी से गर्भ उत्पन्न होता है इसीलिए उसे 'जरायुज' कहा गया है। तत्पश्चात् सात रातों में वह मांस-पेशियों से युक्त हो जाता है और फिर एक पक्ष में वह जो पेशी होती है, उसमें रक्त प्रवाह होने लगता है। तत्पश्चात् पच्चीस रातों में देह के अवयव अंकुरित होने लगते हैं। महामते! एक महीने में क्रम से स्कन्ध (कन्धा) गर्दन, सिर, पीठ और पेट -ये पाँच प्रकार के अंग निर्मित हो जाते हैं। दूसरे महीने में हाथ और पैर हो जाते हैं तथा तीसरे महीने में अंगों की सभी सन्धियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। पुन: चौथे महीने में सभी अंगुलियाँ बन जाती हैं और उसी महीने में उसके भीतर जीवन की अभिव्यक्ति हो जाती है। तब माता के उदर में स्थित गर्भ चलने भी लग जाता है। पाँचवे महीने में नेत्र, कान और नाक का निर्माण होता है एवं उसी महीने में मुख, कमर, गुदा-शिश्न-लिंग आदि गुह्य अंग कानों में दोनों छिद्र भी बन जाते हैं। उसी तरह छठे महीने में मनुष्य की नाभि बन जाती है और सातवें महीने में केश, रोम आदि उग आते हैं। आठवें महीने में गर्भ में सभी अवयव स्पष्ट रूप से अलग-अलग बन जाते हैं। इस प्रकार पिताजी! जन्म के पश्चात् उगने वाले दाढ़ी, मूँछ और दाँत आदि को छोड़कर सभी अंग क्रम से निर्मित हो जाते हैं। नौवें महीने में जीव में पूर्ण रूप से चेतना शक्ति आ जाती है। वह उदर में स्थित रहकर माता के द्वारा ग्रहण किये भोजन के अनुसार वृद्धि को प्राप्त होता रहता है। वहाँ पर अपने जन्मान्तर के कर्मों के अनुसार घोर यातना प्राप्त करके वह जीवन खिन्न हो उठता है और पूर्व जन्म में अपने शरीर से किये गये कर्मों को याद कर अत्यन्त दु:खी हो जाता है। माता के गर्भ में इस प्रकार का कष्ट प्राप्त करके भी जीवन बार-बार पृथ्वी पर जन्म लेता है। गर्भावस्था में वह जीव यह सब सोचकर स्वयं से यह बात कहता है- मैंने अन्याय पूर्वक धन कमाया और उससे अपने कुटुम्ब का भरण-पोषण किया, किन्तु दुर्गति का नाश करने वाली भगवती दुर्गा की आराधना नहीं की। यदि अब गर्भ के दु:ख से मुझे छुटकारा मिल जाए तो मैं पुन: महेश्वरी दुर्गा को छोड़कर विषयों का सेवन नहीं करूँगा और सर्वदा समाहितचित्त होकर भक्ति पूर्वक उन्हीं की पूजा करूँगा। पुत्र-स्त्री आदि के मोह के वशीभूत होकर तथा सांसारिकता में अपने मन को आसक्त करके मैंने व्यर्थ में ही अनेक बार अपना अहित कर डाला। इस समय उसी के परिणामस्वरूप, मैं यह असहनीय गर्भ दु:ख भोग रहा हूँ। अब मैं पुन: सांसारिक विषयों का सेवन नहीं करूँगा। इस प्रकार अपने कर्मानुसार अनेक प्रकार से दु:खों का अनुभव करके वह जीव अपने अंगों में मेला तथा रक्त लपेटे हुए और झिल्ली से आवृत्त होकर प्रसव वायु के वशीभूत योनि के अस्थि-यंत्र से पिसता हुआ सा उसी प्रकार योनि मार्ग से बाहर निकलता है, जैसे पातकी जीव नरक से निकलता है।

देवीपुराण, शक्तिपीठांक -पृष्ठ 157, 158,159, 160

अंतश्चेतना भारतीय मनीषी ने पिता से किये गये पुत्री पार्वती के संवाद के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया है कि किस प्रकार जीव जन्म से पूर्व स्त्री की कोख में वीर्य रूप में प्रस्थापित होकर भ्रूण का स्वरूप धारण करता है। भ्रूण संरचना से लेकर प्रजनन तक की गूढ़ प्रक्रिया को बड़े ही विस्तार एवं वैज्ञानिक ढंग से समझाया गया है। कालक्रम के अनुसार चरणबद्ध ढंग से भ्रूण का विकास, उसके शिशु रूप की परिकल्पना और उसके विभिन्न अवयवों के विकास की समय-गणना को दर्शाते हुए, मनुष्य की सम्पूर्ण संरचना प्रक्रिया को बड़े ही वैज्ञानिक

पद्धति से व्याख्यायित किया गया है। पुत्री द्वारा अपने पिता को स्त्री कोख की सारी संरचना और स्त्री–पुरुष के सम्भोग के प्रतिफल के माध्यम से जीव की अवधारणा एवं उसके क्रमिक विकास जैसे गूढ़ विषय को स्पष्ट रूप से समझाना, पुत्री एवं पिता के रूढ़िवादी सम्बन्धों पर एक तमाचा है। भारतीय मनीषा की अन्तश्चेतना से उपजी देवी पुराण की इस व्याख्या के समक्ष वर्तमान युग की वैज्ञानिक प्रणालियाँ बौनी नजर आती हैं। चूँकि जीव को स्त्री अपने गर्भ में धारण करती है, इसलिए शिव की शक्ति स्त्रीरूपा माँ पार्वती के श्रीमुख से गर्भाधान की प्रक्रिया एवं स्त्री कोख में जीव संरचना के गूढ़ रहस्यों को व्याख्यायित कराने के पीछे भारतीय मनीषा का उद्देश्य भारतीय नारियों की ज्ञान परम्परा को दर्शाना एवं प्रजनन की पवित्रता को नारी की पूर्णता के संदर्भ में बनाये रखना है। पिता की सहमति से पार्वती के मुखर व्यक्तित्व में पिता द्वारा प्रदत्त अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता झलकती है। पिता के सम्मुख पुत्री द्वारा आन्तरिक सत्य की प्रस्तुति के माध्यम से जीव संरचना को व्याख्यायित कर देना, भारतीय मनीषा की अन्तश्चेतना में पैदा हुई, यह एक बेजोड़ एवं अद्वितीय मानव जन्म की वैज्ञानिक गाथा है।

जन्म के अवधी गीत

डॉ विद्या विन्दु सिंह

संस्कारों का जो सुचिंतित उल्लेख प्राचीन ग्रन्थों में भारतीय मनीषियों ने किया है, उनमें लोक-प्रचलित व्यवहारों का व्यवस्थित और शाास्त्रीय विवेचन प्राप्त होता है। पं. शिवसहाय चतुर्वेदी ने तो घर-घर होने वाले संस्कारों की समष्टि को ही पारिवारिक संस्कृति कहा है।

जन्म संस्कार के गीतों को सोहर कहते हैं। सोहर शब्द की व्युत्पत्ति शोभन शब्द से विद्वानों ने माना है। 'शोभन' शब्द ही परिवर्तित होते-होते 'शोभिला', 'सोहिलो', 'सोहद', 'सोहर' बन गया। 'सोहल' शब्द सुहावने का अर्थ व्यंजित करता है जो संस्कृत के 'शोभन' का अर्थ है। 'सोहर' शब्द की व्युत्पत्ति सुघर से भी विद्वानों ने मानी है, जिसका अर्थ सुन्दर होता है। सोहर को 'शोहिलो' भी कहते हैं। यह गीत सोहर छंद में गाया जाता है। गोस्वामी तुलसीदास ने रामलला नहछू में सोहर छंद का प्रयोग किया है। सोहर मंगल ध्वनि का प्रतीक माना जा चुका है। इसे गाने और सुनने से वैकुण्ठ और संतति लाभ दोनों ही सुफल मिलता है, ऐसा सोहर गीतों के अन्त में गाया जाता है।

सोहर गीतों का वर्ण्य विषय

सोहर गीतों में जीवन के विविध पक्षों को बड़ी मार्मिकता और विस्तार के साथ उकेरा गया है। प्रणय प्रसंग, संतानेशणा, पति के विदेश गमन पर पत्नी की विरह-दशा, सास-ननद की ईर्ष्या एवं कठोर व्यवहार से दु:खी नारी का चित्र, मायके की स्मृतियाँ, बन्ध्या कहे जाने का प्रताप और उससे मुक्ति पाने के लिए सूर्योपासना, व्रत-उपवास, दान-स्नान, स्तुति आदि के प्रयास, पौराणिक आख्यान आदि सोहर गीतों के वर्ण्य विषय हैं।

सुविधा की दृष्टि से सोहर गीतों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है- प्रसव पूर्व पीठिका, जन्मोत्सव के बाद की पीठिका, अन्य भावों तथा कथानकों के चित्र।

प्रसव पूर्व पीठिका में संतान प्राप्ति की अदम्य अभिलाषा, बन्ध्या स्त्री की उपेक्षा और उसकी असीम व्यथा, आत्महत्या का प्रयास, विभिन्न देवी-देवताओं की मनौती, वरदान की प्राप्ति, रति प्रसंग, गर्भाधान, दोहद, उसकी इच्छापूर्ति के लिए परिजनों का प्रयत्न, प्रसव पीड़ा की व्याकुलता, पति और परिवार की सहानुभूति की कामना, पति की असमर्थता पर पति के प्रति रोष, परिजनों का व्यवहार और प्रसव की तैयारी आदि का वर्णन होता है।

जन्मोत्सव के बाद की पीठिका में जन्म के उपरान्त धगरिन-नाइन को बुलाने जाना, धगरिन-नाइन के नखरे, नेग के लिए उनका रूठना-मनाना, नेग पाकर प्रसन्न होकर आशीर्वाद देना, नाई के हाथ रोचना भेजना, ननद का बधावा लेकर आना, नेगचार के लिए रूठना-मनाना, आशीष, जच्चा की कृपणता और चतुराई, नेग न देने के तरह-तरह के बहाने, अन्त में हार मानकर नेग देना, क्षमा मांगना, आशीर्वाद पाना आदि भावों का निरूपण अत्यन्त सहज ढंग से सोहर गीतों में मिलता है।

शैली की दृष्टि से भी सोहर गीतों को दो भागों में बाँटा जा सकता है- प्रबन्ध गीत और मुक्तक गीत।

प्रबन्ध गीत सोहर बहुत ही सरस, प्रवाहपूर्ण और मार्मिक हैं। इनमें लम्बे और छोटे कथानकों के माध्यम से विषय को प्रस्तुत किया जाता है। इनकी गायन शैली परम्परागत है। इन गीतों की लय में एकरूपता मिलती है, पर स्थानीय परिवर्तन से कुछ विविधता भी। इसमें प्रारम्भ की पंक्तियाँ दुहराई नहीं जातीं।

उलारा या उतारा (मुक्तक) गीतों में प्रसन्नता की अभिव्यक्ति हेतु छोटे-छोटे भावों को विभिन्न टेक, पदों और लयों के माध्यम से गाया जाता है। इसमें प्रारम्भ की टेक पंक्ति को बार-बार दुहराया जाता है। ये गीत तुकांत होते हैं। एक ही भाव को विभिन्न लोगों के संदर्भ में बार-बार कहा जाता है। इनकी अनेक लय और शैलियाँ हैं। इन्हें 'उलारा' या 'उतारा' भी कहते हैं। ये गीत आधुनिकता से अधिक प्रभावित होते हैं। फिल्मी धुनों पर भी कितने ही उलारा गीत रचे जा रहे हैं और लोकगीतों की धुनों पर अनेक फिल्मी गीत भी निर्मित हो रहे हैं।

ये उलारा गीत प्रबन्धात्मक सोहर गीत गाने के उपरान्त गाये जाते हैं। आधुनिक नारियाँ इन्हें गाना अधिक पसन्द करती हैं। इनमें प्रायः पादपूर्ति और पुनरावृत्ति अधिक होती है। बड़े सोहर गीतों जैसी मार्मिकता का इनमें प्रायः अभाव होता है। ये हल्के-फुल्के हास्य-भावना प्रधान ही अधिक होते हैं।

अन्य भावों, कथानकों के चित्रों में पौराणिक, ऐतिहासिक चरित्रों की कथा और लोकमंगल भाव की आकांक्षा के गीत मिलते हैं।

सोहर गीतों में राधा-कृष्ण, रुक्मिणी आदि के प्रणय-प्रसंग एवं आमोद-प्रमोद भी वर्णित हैं। एक गीत उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है-

बाउ बहै पुरवइया अलस हमरे लागै
हो मोरी बहिनी! अलख विलख गयों सोई
कन्हैया मोकाँ तजि गये।
एक हाथ लिहीं हैं डलियवा त एक हाथे बढ़नी,
रुक्मिनि हेलिनी भेलम धैके गईं कन्हैया के दरस काँ।
घोड़ा क बहारीं घोड़सरिया त हथिनी महावत,
हो अरे रुक्मिनी झारि बहारैं फुलवरिया कन्हैया जी कै बैठक।
झारि बहारि रुक्मिनि ठाढ़ि भईं कन्हैया निरीखैं
हेलिनि! तोहरी सुरति रानी रुक्मिनी, मैं सोवतै क तजि आयों।
तब तो निदिया कै मातलि कहबा न मान्यू,
हो मोरी रुक्मिनि! अब कैसे भयू है हेलिनियाँ त हमरे दरस कहैं।
हँक्रहु नगरा के कहँरा! बेगेहि चलि आवौ।
रानी जोगे डाँड़िया फनावौ हेलिनि पहुँचावौ।

शीतल पुरवाई के प्रवाह के कारण रुक्मिणी अस्त-व्यस्त गाढ़ी नींद में सो जाती है और कृष्ण इसे अपनी उपेक्षा समझते हैं। श्री कृष्ण रुक्मिणी से रूठकर चले जाते हैं। रुक्मिणी अपने रूठे साँवरिया को मनाने के लिए सफाई करने वाली का रूप धारण करके उनकी घुड़साल, हाथीशाला, फुलवारी झाड़ती- बुहारती हैं। श्रीकृष्ण पहचान लेते हैं और उन पर व्यंग्य करते हैं- तुम्हारी ही सूरत की रानी रुक्मिणी हैं। तब तो नींद में मस्त थी, मेरी बात नहीं मानी। रुक्मिणी! अब कैसे मुझसे मिलने के लिए सफाई के बहाने आयी हो? उपालम्भ का उत्तर प्रिया से न पाकर, उसके मुख-मण्डल पर पश्चाताप, भूल स्वीकृति, दुःख, अनुराग के भाव

देखकर वे कहारों को चन्दन की पालकी लाने का आदेश देते हैं। इस प्रकार प्रिया के मान की रक्षा भी करते हैं और महल पहुँचाने की आज्ञा देकर मिलन का आश्वासन और संकेत भी देते हैं।

संतान का महत्त्व जीवन में सर्वाधिक है। पितृ ऋण से निष्कृति के लिए, वंश परम्परा को आगे बढ़ाने के लिए व्यक्ति संतान को जन्म देता है। संतति के बिना जीवन का सारा सुख वैभव फीका लगता है। सोहर गीतों में इस पीड़ा को अत्यन्त सहज ढंग से उकेरा गया है। महाराज दशरथ को भी निरवंशी कहे जाने पर असह्य पीड़ा होती है–

भोर भये भिनुसरवा चिरैया एक बोलइ,
हो अरे राजा झपटि के खोले केंवरिया, हेलिनिया बहारै।
परिगै हेलिनियाँ क डीठि त राजा मुख ऊपर,
हो मोरे हेलवा! देखेऊँ निरबसिया
क मुँहवा त दिन कैसे बितिहैं।
चुप रह हेलिनि बाउरि, त केन मति मारइ,
हेलिनी! तीन भुवन के राजा कहति निरबसिया?
तूँ चुप रहु हेला दरिद्दर! त राजा के डरि से,
हो मोरे हेलवा! राजा के तीनि रनियवाँ तीनहुँ जनी बाँझिनि।
यतना सुनै राजा दसरथ, जियरा दुखित भये।
हो अरे राजा! गोडे-मूँड़े तानै चदरिया सोवैं धँवराहरि।
अरे-अरे राजा जी! कै चेरिया त हमरी लौड़िया,
हो अरे चेरिया! सीझलि रसोइया गै जुड़ाई त राजा नाहीं आये।
झझकि कै चढ़ैं अटरिया त राजा के जगावैं,
हो मोरे राजा! कौन विरोग तुहरे जियरा त सोवहु धँवराहरि।
पाँच पदारथ मोरे घरवाँ त छठयें नारायन,
हो मोरी रानी! जतिया कै पतरी हेलिनियाँ कहइ निरबसिया।
बाउर हया राजा बाउर केन बौरावें,
हो मोरे राजा! जौ विधि लिखा है लिलार, उहै भरि पाउब।
बाउरि हऊ रानी कौशल्या त केन बौरावै,
हो मौरी रानी! देहु मोरी बैसखिया मैं तप करै जाबौं।
एक वन गये हैं, दुसरै बन तिसरे वृंदहिवन,
हो अरे राम! ओहि रे वृंदहिवन के विचवाँ,
त राजा जी तप करैं।
बन से निसरैं बन तपसी त राजा से अरज करैं,
हो अरे राजा! कौन बिरोग तुहरे जियराँ
त बन बीचे तप करौ।
पाँच पदारथ मोरे घरे, छठवें नरायन,
हो मोरे तपसी! जतिया कै पतरी हेलिनिया कहै निरबसिया।
जाहु न राजा घर अपने त पूत तोहरे होइहैं।
हो अरे हरि सुनि लिहे तुहरी पुकार, जगत कै मालिक।
होत विहान पौ फाटत होरिला जनम लिये, राम जनम लिहे,
हो मोरे राजा! बाजै लागी अनंद बधैया, उठन लागै सोहर।
हकरहु नगरा कै पंडित हलिय बेगे, आवहु,
हो मोरे पंडित! खोलौ पोथिया पुरान तौ सुदिन बिचारौ।
भलि घरी राम जनम भये, भली रे नखत मा,
हो मोरे राजा! बरहा बरिस राम होइहैं त बन काँ सिधरिहैं।
मनवै दुखित राजा दसरथ सोवैं धँवराहरि,
हो अरे सखिया! मन के उछाहिल कौसिल्या त पटना लुटावैं।
बाउरि हयू रानी कौसिल्या त केन बौरावैं,
हो मोरी रानी! धीरे-धीरे पटना लुटावौ, रमैया बन जैहैं।
बाउर हया राजा दसरथ केन बौरावैं,
हो मोरे राजा! छूटा बाँझिनियाँ कै नाव भलेहि बन जैंहैं,
लौटि घर अइहैं।

प्रात:काल राजा दशरथ अपनी खिड़की खोलकर बाहर देखते हैं। झाड़ू लगाने वाली स्त्री बाहर झाड़ू लगा रही है। वह खिड़की खुलते ही महल की ओर देखने लगती है। राजा दशरथ पर दृष्टि पड़ते ही आशंकित होकर कह उठती है कि आज दिन कैसे बीतेगा, निरवंशी का मुख प्रात:काल ही देख लिया। पति कहता है कि 'तीनों लोक के राजा के बारे में ऐसा कहते तुझे शर्म नहीं आती।' 'शर्म कैसी? राजा के तीन रानियाँ हैं, तीनों ही बाँझ (बंध्या) हैं।' राजा को मर्मान्तक पीड़ा होती है। भोजन पड़े-पड़े ठंडा हो जाता है, पर वे भोजन करने नहीं जाते। रानी कौशल्या उनकी व्यथा पूछती हैं। वह करुण स्वरों में कह उठते हैं, वह सफाई करने वाली मुझे निरवंशी कहकर मेरा मुँह नहीं देखना चाहती। रानी समझाती हैं, पर वे कहते हैं- 'नहीं रानी! मैं तप करने जाऊँगा।' वह पुत्र के लिए वन को चल पड़ते हैं। घोर तप से प्रसन्न होकर वन के तपस्वी उनका दु:ख पूछते हैं। 'मुनिवर! झाड़ू लगाने वाली मेरी प्रजा मुझे निरवंशी कहती है।' मुनि उन्हें पुत्रवान होने का आशीष देते है। राम के गर्भ में आने और फिर जन्म लेने का उछाह अयोध्या भर में फैल जाता है। राजा दशरथ पंडित से राम के जन्म नक्षत्र का विचार करवाते हैं।

राम ने शुभ नक्षत्र घड़ी में जन्म लिया है,पर बारह वर्ष के होते ही वे वन चले जायेंगे। राजा दशरथ कौशल्या को समझाते हैं– 'अरी बावरी! राज्य धीरे–धीरे लुटा, राम को बारह वर्ष बीतते ही वन जाना है।' 'भले ही राम वन जायेंगे, मेरे राम लौटकर आएँगे तो। मेरा बाँझ (बंध्या) का नाम तो छूट गया।' महाराज दशरथ को प्रकृति भी संतानहीन होने का ताना देती है–

सोने के खरउवाँ राजा दसरथ, बेइली तर ठाढ़ भये,
हो अरे बेइली! कंचन यस तोर पात त फर काहें निरफल।
बोलिया त राजा भल बोल्या, त बोलहू न जान्या।
हो मोरे राजा! मचियहिं बैठी रानी कौसिल्या त वनहीं से पुछत्या।
मचियहिं बैठी रानी कौसिल्या त राजा अरज करैं,
रानी! काहै तोरा मनवाँ उदास त मुख से न बोला।
बाउर भया राजा दसरथ! त केन मति मारै हो,
हो मोरे राजा! बिनु रे बालक कुलहीन, जोगिनि बनि जइबै।
सोनवाँ क मोरे घर ढेरी लागै, रुपवा क ढेर लागे हो।
हो अरे रानी! बारह भुवन के अयोध्या दुनहू जने बेलसब।
सोनवा त मोरे लेखे धुरिया त रुपवा कताउर हो।
हे मोरे राजा! बारह भुवन कै अयोध्या त मोरे लेखे सूनी बाटै।
तू राजा होइ जाबा जोगिया त हम हौवै जोगिनि,
हो मोरे राजा। वृंदावन के मड़इया दूनौ जने सेइबै।
बन मा से निसरै एक तपसी त राजा से अरज करैं,
हो अरे राजा ! कौन संकट तुहरे परिगै कि अबहिन से तप करा।
काव कही मोरे तपसी कहत लाजि लागै हो,
हो मोरे तपसी बिनु रे बालक कुलहीन त अबहीं से तप करी।
झोरी से निकारै हैं भमुतिया त राजा के दीहे,
कौशल्या के दीहे हो,
हो अरे राजा! तोहरे त हौइहैं भगवान, दुनिया के मालिक।
आठहि मास जब बीतै त नव मास पूरन भये,
हो अरे ललना! होइगै नगरिया म सोर त राम जनम लिहे।

सोने के खड़ाऊँ पहने राजा दशरथ बेल (बल्लरी) से पूछते हैं– 'तुम्हारे पत्ते तो कंचन सदृश हैं, पर तुममें फल क्यों नहीं लगता?' वह कहती हैं– 'रानी कौशल्या से यही प्रश्न पूछ लीजिए।' राजा लौटकर कौशल्या को उदास देखते हैं, उदासी का कारण पूछते हैं– आज उन्होंने वह उदासी पढ़ ली, क्योंकि प्रकृति ने इंगित कर दिया था। 'राजन! जीवन तो व्यर्थ है तब तक, जब तक कि कोख में फल न लगे। मैं तो योगिनी संन्यासिनी बन जाऊँगी, बिना बालक के कुलहीन होकर जीना व्यर्थ है।' राजा हमारे पास सोने–चाँदी के ढेर हैं, बारह भुवन की अयोध्या का हम दोनों भोग करेंगे। रानी सोने–चाँदी के ढेर मेरे लिए धूल और कूड़ा–करकट सदृश्य हैं, बारह भुवनों की अयोध्या मेरी दृष्टि में सूनी और निर्जन है। आओ चलें, हम दोनों वृंदावन में कुटिया बनाकर तप करें। वन के तपस्वी उनके तप का कारण पूछते हैं। दशरथ सलज्ज भाव से अपनी व्यथा कहते हैं। तपस्वी विभूति अपनी झोली से निकालकर राजा रानी को देते हैं। तुम्हारे यहाँ तो दुनिया के स्वामी स्वयं ईश्वर ही जन्म लेंगे।

महारानी कौशल्या संतान के लिए व्याकुल हैं। उन्हें यह भी चिन्ता है कि कहीं मूल नक्षत्र में संतान का जन्म न हो–

मचियहिं बैठी कौसिल्या, सिंहासन राजा दसरथ
राजा चौदह कोस कै अवधपुर, अवध के बैलसै।
बोलिया त एक हम बोलित जौ राजा मानौ,
राजा कै लेहु दुसरा बिआह त हमरी बहिन संग।
अरे हाँ रे होइगै दुसरा बिआह त उनकी बहिन संग।
होइगै अवधपुर में सोर, दुनहु रानी बाँझिन।
बोलिया तौ एक हम बोलित, जो राज मानौ,
राजा कइ लेहु तिसरा विआह, जहाँ मोर केहू नाहीं।
हाँ रे होइगै तिसरा बिआह, जहाँ उनके केहू नाहीं।
अरे होइगै अयोधिया म सोर, तीनहु रानी बाँझिन।
हकरहु नग्र के केवटा बेगेहि चढ़ि आवउ,
केवटा! वन बीच खोदो मुरइया कौसिल्या रानी क औखदि।
कहँवा कै सिलि–सिलौटी त कहँवा के लोढ़ा हो,
कहँवा से आवैं ननदिया तौ पिसिहैं औखदि हो।
रानी कै सिल्हिया–सिलौटी, अवधपुर के लोढ़ा,
हो अरे दूरी से ननदी बोलावौ, रगरि पीसै औखधि।
एक घूँट पीवें कौसिल्या रानी, दुसरा सुमित्रा रानी,
हो अरे सिल धोइ पीयें रानी केकई, तीनहुँ गरभ सेनी।
तीनों रानी गर्भ जनावैं, दूध उतरा अँचरे हो।
होइ गै अजोध्या म सोर, समय आसरा क हो।
चार चौमुखा क बखरिया, कौसिल्या रानी भरमय,
सुरुजू मनावैं हो।
सुरुजू मूल नखत जिनि होय, भली घरी राम जनमैं हो।

गर्भ के भीतर बोलैं राम, जिनि मइया भरमौ हो,
जेठ मूल हम टारब, भली घरी जन्मब हो।
कौसिल्या के जन्मै हैं राम, सुमित्रा के लछिमन-सत्रुघन,
हो अरे रानी कैकई के भरत भुवाल, तीनहुँ घर सोहर।

रानी कौशल्या पुत्र न होने से निराश और चिंतित होकर राजा को दूसरे विवाह के लिए विवश करती हैं। चौदह कोस की अयोध्या नगरी का उत्तराधिकारी कोई नहीं। दूसरा विवाह अपनी छोटी बहन से कराती हैं। पुनः तीसरा विवाह कराती हैं वहाँ, जहाँ अपना कोई सम्बन्ध नहीं। कुछ ही दिन में शोर हो गया कि तीनों रानियाँ बाँझ (बंध्या) हैं। केवट को राजाज्ञा हुई, शीघ्र वन में जाओ, मूल (जड़ औषधि) खोदकर ले आओ। अयोध्या की सिल, सिलौटी और अयोध्या के ही लोढ़े (बाट) से दूर देश से आई ननद दवा पीसे। दवा एक घूँट कौशल्या ने पी और दो घूँट सुमित्रा ने, सिल धोकर रानी कैकेयी ने औषधि पी ली। तीनों रानियाँ गर्भवती हुईं। अयोध्या में शोर हो गया कि आसरे का समय आ गया है। माता कौशल्या को चिंता है कि कहीं राम मूल नक्षत्र में न जन्म लें। गर्भ से राम माता को समझाते हैं- 'माँ! भ्रम न करो, मैं अच्छी घड़ी में जन्म लूँगा। कौशल्या के राम हुए, सुमित्रा के लक्ष्मण, शत्रुघ्न। कैकेयी के भरत भुआल हुए। तीनों घरों में मंगल हुआ।

महाराज दशरथ शिव की आराधना करते हैं कि हमें अपने जैसा कल्याणकारी पुत्र दीजिए-

बैठे समाधी सिव संकर, राजा दसरथ तप करैं हो,
बरहा वरिस तप पूर भये, सिव जी नयन खोलैं हो।
माँगहु हे राजा दसरथ ! जौन मगन चाहो, कठिन तप कीन्हेउ हो,
अरे-अरे प्रभू सिव संकर ! जौ तूँ दयालु भया हो,
सिव जी! तुहरे समान पुतवा तो बर हम चाहित हो।
जाहु न राजा घर अपने, तो अपनी अजोधिया म हो,
राजा चइतहि कै तिथि नवमी, अवध म हम जनमब हो।

महाराजा दशरथ बारह वर्ष तक शिव को प्रसन्न करने के लिए तप करते हैं। भगवान शिव प्रसन्न होकर उनसे वर माँगने को कहते हैं। दशरथ जी वर माँगते हैं कि हमें आप जैसा पुत्र चाहिए। शिव जी उन्हें वर देते हैं कि मैं चैत्र महीने की नवमी तिथि को अयोध्या में आपके पुत्र रूप में जन्म लूँगा।

संतान का जन्म हो, पूरे परिवार को कुसुम के रंग से रंगकर वस्त्र पहनाने के साथ नारी मन की सहज लालसा है-

कउने बन *उपजी सुपरिया त कउने बन नरियर हो।*
ए हो कउने बन उपजी माँझिठिया, मैं चुँदरी रंगउबउँ हो।
झापसन फरलि सुपरिया, लटकि आये नरियर हो।
ए हो, बूँद-बूँद चुअत कुसुमियाँ माँजिठिया,
मैं चुँदरी रंगउबई हो।
बाबा बन उपजइ सुपरिया, ससुर बन नरियर हो।
ए हो, राजा बन चूवइ कुसुमियाँ मैं चुँदरी रंगउबइ हो।
आपनि रंगवै चुनरिया तौ स्वामी कै पगड़िया हो।
रामा बारे होरिल कै झँगोलिया, तौ तीनिउ जने पहिरब हो।
अपना क घोरब हरीरा, तौ स्वामी कै सोंठउरा हो।
रामा बारे होरिलवा क लडुवा तौ तीनिउ जने खाइब हो।
हम धन बइठब मचिया, राजा जी खटिया हो।
रामा घुमरि-घुमरि खेलै होरिला, दूनौ जने देखबइ हो।
सासू त बोलही के रहीं ननद उठि बोलइ हो,
भउजी कब तोरे भये हैं होरिलवा कुसुमियाँ रँगैबू हो।
एक बन गई है दूसरे बन तिसरे मइयरिया बन हो।
मइया कौन जनम मोरा दिह्यू पुरुश बोलिया बोलइ
घर से निसारइ हो,
जहँवा से बेटी आइउ लौटि वहीं जातिउ हो,
बेटी जौ तुहँका घँरा राखी, बहुअवा बाँझिन होइहैं हो।
तुहीं मोरी मइया से मइया तुही ठकुराइन हो,
मइया अपनी भँइसिया कै सरिया त हमकौ बतावउ हो।
जहँवा से आयू मोरी बेटी लौटि वहीं जातिउ हो,
बेटी सौ सरिया म तुहैं राखी भँइसिया बाँझिन होइहैं हो।
रोवति बिलपति तिरिया त बन बीच पहुँची हो,
अरे निसरिन आवौ बन बाघ त हमके तूँ खाइलेउ हो।
जहाँ से आई तूं रानी लौटि वहीं जातिउ हो,
रानी जौ तुहँके हम खाबै हमहूँ बाँझिनि होबै हो,
रोवति बिलपति तिरिया त बन पात रोइ उठे,
अब निसरि न आवौ नगिनियाँ त हमके तूँ डँसि लेउ हो।
जहँवा से रानी आइउ लौटि वहीं जातिउ हो,
रानीजै तुहँके हम डँसबै हमहूँ बाँझिनि होबै हो।
रोवति बिलपति तिरिया त गंगा तीरे पहुँची हो,

मैया दै देहु अपनी लहरिया त मँझधार बूड़ित हो।
किय तुहैं सासु ससुर दुख, किय नैहर दूरि बसै,
तिरिया किय तोरा हरि परदेस कौने दुख बूड़ौ हो।
नाहीं हमैं सासु ससुर दुख नाहीं नइहर दूरि बसै,
मइया नाहीं मोरा हरि परदेस, कोखिया दुख बूड़ौं हो।
जाहु न तिरिया घर अपने त अपने साजन घर हो,
तिरिया आजु के नवयें महिनवाँ होरिल तोहरे होइहै हो।
आजु के नवयें महिनवाँ, होरिल जब होइहैं हो,
मइया गहबरि पियरी रंगवैबै त तुँहके चढ़इबै हो।
गंगा जमुनवाँ के बिचवाँ तिरिया बैठी बिनवैं हो,
मइया देहु भगीरथ पूत, जगत जस गावइ हो।।
जे यहु मंगल गावै गाइ कै सुनावै हो,
रामा तरि बैकुण्ठे क जाय सुनइयो फल पावइ हो।

किस वन में सुपारी फलती है, किस वन में नारियल, किस वन में उपजी मँझीठ, मैं चुनरी रंगवाऊँगी। बाबा वन में सुपारी फलती है, ससुर वन में नारियल, राजा वन में उपजी मँझीठ, मैं चुनरी रंगवाऊँगी। अपनी रंगूगी चूनर, प्रिय की रंगूगी पाग। अपने लाल का रँगूगी झबला, तीनों पहनेंगे। अपने लिए बनाऊँगी हरीरा, प्रिय के लिए सोंठोरा, लालन के लिए लड्डू, तीनों खाएँगे। मैं बैठूँगी मचिया पर, मेरे प्रिय खटिया पर, घूम-घूमकर लालन खेलेंगे, हम दोनों देखेंगे। सास तो बोलीं नहीं ननद बोल उठीं- भाभी! कब तुम्हारे हुए नन्दलाल कुसुमी चूनर रंगाओगी? एक वन गई दूसरे वन, तीसरे में माँ का वन।

माँ! कौन जन्म मेरा दिया, पुरुष-नारी बोली बोलते हैं, घर से निकालते हैं। माँ कहती है- जहाँ से बेटी आई, वहीं लौट जाओ। बेटी! यदि तुम्हें घर में रक्खा, तो मेरी बहू बाँझ हो जायेगी। माँ! तुम्हीं मेरी माँ हो, तुम्हीं स्वामिनी हो, माँ! भैंसशाला में मुझे जगह दे दो। जहाँ से बेटी आई, वहीं लौट जाओ , बेटी! यदि तुम्हें शाला में रक्खूँ, भैंस बाँझ होगी। रोती विलाप करती नारी वन में पहुँची। हे वनबाघ! निकल आओ, मुझे खा लो। जहाँ से तुम आई, वहीं लौट जाओ। नारी! यदि तुम्हें मैं खा लूँ, बाघिन बाँझ होगी। रोती विलाप करती नारी वन में पहुँची, वनपात रो उठे। हे नागिन! निकल आओ, मुझे डँस लो। जहाँ से तुम आईं, वहीं लौट जाओ, नारी! यदि तुम्हें मैं खा लूँ तो मैं बाँझ हो जाऊँगी। रोती विलाप करती नारी गंगातट पहुँची, माँ गंगा! मुझे अपनी लहर दो, मैं मँझधार में डूब मरूँ। गंगा पूछती हैं- क्या तुम्हें सास-ससुर दु:ख देते हैं या मायका दूर है, नारी! क्या तुम्हारे पति परदेश में है, किस दु:ख से डूबना चाह रही? न मुझे सास-ससुर दु:ख है, न मायका दूर है, माँ! न मेरे पति परदेश में है, मैं कोख दु:ख से डूबना चाह रही। जाओ नारी! अपने पति के घर, आज के नवें महीने तुम्हें पुत्र होगा। आज के नवें महीने मुझे पुत्र होगा, माता! गाढ़ी पीली साड़ी रंगाऊँगी, तुम्हें चढ़ाऊँगी। गंगा-जमुना के बीच नारी बैठी विलख रही, माँ! भगीरथ जैसा पुत्र देना, जगत यश गाए। जो ये मंगल गाये, गाकर सुनाये, राम! उसका उद्धार हो, वह बैकुंठ जाए, सुनने वाले भी फल पावें।

माता कौशल्या भी संतान के लिए कठोर तप करती हैं, तमाम मनौतियाँ मानती हैं -

गंगा जमुनवाँ के बिचवाँ कौसिल्या रानी तप करैं
माता एक रै ललनवा के कारण जग अनिहार लागैं
जाहूँ न रानी कौसिल्या त अपने महल जाउँ
रानी! आजु के नवयें महिनवाँ राम तोहरे होइहैं हो।
आजु के नवयें महिनवाँ, राम जब होइहैं हो,
मइया गहबरि पियरी रंगवैबै त तुँहके चढ़इबै हो।
मइया सारी अजोधिया लुटइबै, कछु ना रखबैं।
मइया जुग जुग जिये मोरे राम, जगत जस गावइ हो।।

गंगा-जमुना के बीच रानी कौशल्या तप कर रहीं। माता एक पुत्र की कामना है,उसके बिना जग अंधेरा है। जाओ रानी! अपने पति के घर, अपनी अयोध्या, आज के नवें महीने तुम्हारे राम जन्म लेंगे। आज के नवें महीने राम जन्म लेंगे। माता गाढ़ी पीली साड़ी रंगाऊँगी, तुम्हें चढ़ाऊँगी, माँ! युग-युग जिये मेरे राम, जगत यश गाये।

नारी अपनी अजन्मी संतान से जन्म लेने की प्रार्थना करती है, उसे प्यार- दुलार और उस पर पूरा ध्यान देने का आश्वासन देती है-

गरजउ ऐ दयवा! गरजहु गरजि सुनावौ।
दयवा बरसउ जवा केरे खेत जवाहि जुड़वाओ।
जन्महु ए लालन! जन्महु मोहिं दुखिया घर।
लालन उजरी लगरिया बसावहु, हमहिं जुड़वावहु।
जनमब ए मइया! जनमब तोहिं सुखिया घर,

मइया टुटहे झिलंगवाँ सोवइबू, टुकारि गोहरैबू।
जन्महु ए लालन! जनमहु अपनी मैयरिया कोखि,
लालन! रतुली पलंगिया सोवडबै, बाबुल गोहरैबै।
छोड़ि दिह्यों मँगिया क सेन्हुर, नयन भर काजर,
पूता! छोड़ि दिह्यों हरि कै सेजरिया तुहीं प चित लायों।
दै लेहु मँगिया क सेन्हुर, नयन भरि काजर,
मइया सोइ लेहु बाबू की सेजरियाँ, मैं खेलि कूदि झइबौं,
अपने मइया बबैया कै दुलारी, त पिया कै पियारी,
ललना! दूरी खेलन जिनि जाया, हेरन हमरे के जइहैं।
एक घरी बीती मैं दूसर घरी, दुपहर होइगै,
ललना! भितरा से बरै मोर करेजवा, ललन नाहीं आवे।
घरा म से निसरीं है मइया त लरिकन से पूछैं,
लरिकौ कहूँ देख्या मोरा ललनवाँ, अवहिं नाहीं लौटे।
अपने बबैया क दुलारी, त मइया कै पियारी,
माई! हरि जी कै प्रान अधार हेरन कइसे आयू।
जइसे कोंहरवा क अउवाँ, त धधकि धधकि बरै।
पूता! वइसै माई क करेजवा त भभकि भभकि बरै।

(गरजो हे देव (मेघ)! गरजो, गरज कर सुनाओ। बरसो जौ के खेत में, जौ को शीतल करो। जन्मों हे पुत्र! जन्मों, मुझ दुखिया के घर। पुत्र! उजड़ी नगरी बसाओ, हमें शीतल करो। जन्मूगा माँ! जन्मूगा, आपके सुखी घर में। माँ! टूटे झिलंगे पर सुलाओगी, तू करके पुकारोगी। जन्मों हे पुत्र! जन्मों, अपनी माँ की कोख में। लाल! लाल पलंग पर सुलाऊँगी, बाबुल कह पुकारूँगी। छोड़ दिया माँग का सिन्दूर, नयन का काजल पुत्र! छोड़ दिया प्रिय की सेज, तुम्हीं पर चित्त लगाया। माँ! पहन लो माँग में सिन्दूर, नयन में काजल, माँ! सो लो मेरे पिता की सेज, मैं खेल-कूद आऊँगा। मैं अपने माँ-पिता की दुलारी, प्रिय की प्यारी हूँ, लालन! दूर खेलने मत जाना, खोजने कौन जायेगा? एक घड़ी बीती दूसरी घड़ी बीती, दोपहर हो गयी, मेरा भीतर ही भीतर कलेजा सुलगने लगा, पुत्र अभी नहीं आया। घर से निकली माँ, बच्चों से पूछ रही, बच्चों! कहीं देखा मेरे लाल को, अभी तक घर नहीं आया। अपने माँ की दुलारी, पिता की लाड़ली माँ! अपने प्रिय की प्राणाधार! मुझे खोजने क्यों आयी? माँ कहती है- जैसे कुम्हार का आँवा, धधक-धधककर भीतर ही जलता है, वैसे ही माँ का कलेजा पुत्र के दूर होने पर भभक-भभककर भीतर ही जलता है।

कुल संस्कारों की संख्या सोलह है। जिसमें सर्वप्रथम गर्भाधान का उल्लेख है।

गर्भाधान

गर्भाधान संस्कार में सूर्य पूजा का विशेष महत्त्व है। गर्भाधान के सोहर गीतों में सूर्य की प्रार्थना करने से, सूर्य की किरणों के स्पर्श से गर्भस्थापना के गीत मिलते हैं। ये गीत कुंती पुत्र कर्ण के आख्यान का पुनर्स्मरण तो कराते ही हैं, सूर्य किरण चिकित्सा की वैज्ञानिक पद्धति का प्रमाण भी प्रस्तुत करते हैं-

खिरकी बहुअवा नहानी सुरुज पइयाँ लागीं
झीना अँचर फहराने तौ गरभ जनाने।
पूत मोर बसहिं वृन्दावन, तुम धँवराहरि।
हो अरे बहुअरि! कौन चनिक चित लाइउ, त गरभ जनावै।
भैया मोर बसहिं वृन्दावन तुम धँवराहरि।।
भौजी कौन छयल चित लाइउ, त गरभ जनावै।
पूत तोर बसहि वृन्दावन हम धँवराहरि।।
सासू ! भँवरा भेलस धै कै आवैं, अँचरवा मोरा बेलसैं।
ननदी! भँवरा भेलस धै कै आवैं, अँचरवा मोरा बेलसैं।
अरे! अरे! छछनी बहुअवा! छछनपन मति करौ।
हो अरे बहुअरि! कौन छैल चित लाइउ, त गरभ जनावै।
सँझवहिं डोरी लगावैं अधिय राति बाझैं
सासू! आइ के चिन्हहु आपन पुतवा लछनवा मोहिं लगायू।
दूनौं कर जोरे ससुइया त बिनती बहुत करै,
बहुअरि चोरवा अलप सुकुवार, खुलेहि बन्द राख्यू,
ढीलेहि बन्ध बान्ह्यू।
वैसे त बन्हतेउँ खुलेहि बन्द औरौ ढीलेहिं बन्द,
हो मोरी सासू! अब तौ बान्हब पटिया लाई,
लछनवा मोहिं लगायू।
बान्हल पियवा अरज करैं औरो बिनती करैं,
धना! अबकी क बन्दि छोड़ावा,
तोर लरिका खेलैबों, तोर सौरी रखइबौं।
छूटल पियवा अड़पि बोले औरो तड़पि बोलैं
धना! जाबौं दखिनवा के देस,
सवतिया लै अइबौं, झगरवा मचइबौ।
समझउ ऐ राजा! उहै दिना, जौने दिना पटिया बान्ह्यों

हो मोरे राजा! आज तोहरी लाली-लाली अँखिया,
सवतिया सुनावै।
वृन्दावन से बँसवा कटइबै, त पलना सलइबै,
राजा! अँगना म ललना झुलइबै,
तुहैं बिसरइबै

खिड़की के पास बहू ने स्नान किया, सूर्य को प्रणाम किया। झीना आँचल फहराया, गर्भवती हो गयी। मेरा पुत्र वृन्दावन में है, तुम धवल गृह में, ओ बहू! किस पुरुष में चित्त लगाया, गर्भवती हो गयी? पुत्र तुम्हारे बसें वृन्दावन, मैं धवल गृह में, भौंरे के वेश में आकर मेरे आँचल में करते हैं विलास। अरे! अरे! छलछन्द वाली भाभी, छलछन्द न करो। अरे भाभी! किस छैला से मन लगाया, गर्भवती हो गयी? शाम को डोरी लगायी, आधी रात को पति फँस गया। सास जी! ननद जी! आकर पहचानो अपना पुत्र, अपना भाई, मुझे लांछित किया। दोनों हाथ जोड़ सास-ननद करें विनती- बहू! भाभी! चोर अति सुकुमार है। ढीले रखना बन्धन। वैसे तो रखती खुले बन्धन, पर अब तो बाँधूगी कसकर पाटी से, मुझे लांछन लगाया। बंधा पति विनती करे- प्रिये! अबकी बन्धन खोलो, तुम्हारा बच्चा खिलाऊँगा, तुम्हारे सौरगृह की रखवाली करूँगा। छूटा प्रिय तड़पकर बोला, जाऊँगा दक्षिण देश, तेरी सौत लाऊँगा। वह कहती है- सोचो प्रिय! वह क्षण जब पाटी से बँधे थे, आज तुम्हारी लाल-लाल आँखें सौत लाने की धमकी दे रही हैं। कोई बात नहीं, मैं वृन्दावन से बाँस कटवाऊँगी, उसका पालना बनवाऊँगी और उसमें अपने बच्चे को झुलाकर तुम्हें भूलने का प्रयास करूँगी।

गर्भवती शुभ स्वप्न के द्वारा अपने गर्भ की सूचना पाती है-

सोवति रह्यो अटरियाँ सपन एक देख्यौं हो,
हो मोरी सासू! सपने कै करत्यू बिचरवा, सपना बड़ा सुन्नर।
अमवा त देख्यौं घवदियन, पनवा ढेपारल
हो अरे सासू! बभना देख्यौं पोथिया बाँचत, दियना ढिउठी बरै।
चुप रहु ए बहुअरि! चुप रहु, दुस्मन न सुनै पावैं,
हो मोरी बहुवरि! तुहरे त होइहैं बलकवा, त कुल कै नायक।
अमवा त होय बलकवा, पनवा सोहाग तोरा,
हो मोरी बहुअरि बाभन त हवैं नारायन,
दियना लछिमी मैया।

सोयी थी अटारी पर स्वप्न देखा। सास जी! स्वप्न का करो विचार, स्वप्न बड़ा सुन्दर है। आम का देखा गुच्छा, पान को रचा हुआ, सास जी! पोथी बाँचता पंडित, दीवट पर दीप देखा। चुप रहो बहू रानी! चुप रहो, शत्रु न सुन लें, कोई कुचक्र न रचें। बहूरानी! तुम्हारे पुत्र होगा जो होगा कुल का नायक। आम तो बालक है, पान तुम्हारा सौभाग्य, पंडित स्वयं नारायण हैं और दीपक लक्ष्मी माँ।

सोहर गीतों में पति-पत्नी के बीच हास-परिहास के प्रसंग भी हैं।

मोरे आँगन म निबिया बावरी।
मैं तोसे पूछौं हे बारी धनियाँ!
मुँहवा तोर पीयर कैसे भये?
काहे के राजा दिवाने भये हो,
पीस्यों हरदिया छीटी परी। मोरे .....
मैं तोसे पूछौं हे बारी धनियाँ!
अँगना म ललनवा केकर खेलै?
काहे के राजा दिवाने भये हो,
सासू ननदिया दैके गईं। मोरे .....
तूँ तौ कमाया राजा रुपया से पैसा,
हमहूँ कमायन रे लालनवाँ,
काहें क राजा मोरे बात छिपावौं,
देवरा से नजरिया लड़ गयी। मोरे .....

मेरे आँगन में नीम बावरी है। पति विदेश से लौटकर आता है। पत्नी के मुख पर पीलापन देखकर कारण पूछता है। वह कहती है- हल्दी पीस रही थी छीटें पड़ गये हैं। पति आँगन में शिशु देखकर पूछता है कि यह पुत्र किसका है? पत्नी कहती है कि सास-ननद देकर गयी है। पुत्र का पिता कौन है? पूछने पर कहती है- क्या करूँ छोटे देवर से आँखें चार हो गई थीं। तुम तो परदेश में रूपया-पैसा कमा रहे थे, यहाँ मैंने भी पुत्र कमा लिया।

सतैसा पूजना

गर्भाधान संस्कार को अवध क्षेत्र में 'सतैसा पूजना' भी कहते हैं। गर्भवती स्त्री के लिए गर्भ-स्थापना का निर्णय हो जाने के पश्चात् से सातवें महीने तक सिन्दूर लगाना, शृंगार करना वर्जित

है। सातवें महीने में गोद पूजने और भरने की रस्म होती है, जिसमें गर्भवती के मायके से उपहार आते हैं। इसमें देवी की कृपा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए सबसे पहले देवी गीत गाया जाता है–

निबिया की डरियाँ मैया डारी हैं हिंडोलवा कि झूलि झूलि ना
मइया गावै लागीं गितिया कि झूलि-झूलि ना।
झूलत-झूलत मैया गई हैं पियासी के हेरै लागी ना।
मैया माली फुलवरिया कि हेरै लागी ना।
भीतर बाट्यू कि बहिरे मोरी मालिनि! कि बून एक ना
मालिनि पनिया पियउतिउ कि बून एक ना।
कइसै के पनिया पियावौं मोरी मइया! कि मोरी गोदी ना
सोवैं तोहरा बलकवा कि मोरी गोदी ना।
लेहू ना मालिन तुहूँ सोने क खटोलवा कि ओही पर ना
मालिन! लरिका सोवावा कि ओही पर ना।
एक हाथे लिहीं मालिन सोने के घइलवा कि एक हाथे ना
लिहीं रेशमी लेझुरिया कि एक हाथे ना
पनिया पीके माई भयीं संटुटवा कि देवै लागीं ना।
मइया मालिनि के असीसिया कि देवै लागीं ना।
बाढ़े मालिन! तोहरी बारी फुलवारी कि जुग जुग ना।
जीये तोहरा बालकवा कि जुग जुग ना।
जइसे जुड़वायू मैया मालिनि बिटियवा त वइसे हि ना
मइया सबै काँ जुड़वायूँ कि वैसे हि ना।

नीम की डाल पर झूला डाल, झूल-झूल कर माँ गाने लगीं। झूलते-झूलते माँ को प्यास लगी, ढूँढने लगीं माली फुलवारी। भीतर हो मालिन कि बाहर, एक बूँद पानी पिलाओ मुझे। कैसे पानी पिलाऊँ माँ! मेरी गोद में तुम्हारा दिया हुआ बालक। लो मालिन! सोने का खटोला लो, बालक सुलाओ, मुझे पानी पिलाओ। एक हाथ में मालिन ने लिया सोने का घड़ा, एक हाथ में रेशम की डोर, पानी भर कर माँ को पिलाया। पानी पीकर माँ हुई संतुष्ट, मालिन को देने लगीं आशीष- मालिन! बढ़े तुम्हारी बारी-फुलवारी, युग-युग जीवे तेरा लाल। जैसे माँ! आपने शीतल किया मालिन को, वैसे ही सभी को शीतल करना।

हर स्त्री को माँ बनने की प्रबल साध होती है। किन्तु यदि वह माँ नहीं बन पाती और बन्ध्या होने का ताना सुनना पड़ता है तो उसे जीवन व्यर्थ लगने लगता है। वह पति का ताना सुनकर, अत्यन्त दु:खी होकर अपने देवर से व्यथा कहती है। देवर उसे सूर्य आराधना का परामर्श देता है–

लौंगा-इलायची क बिरवा त, दोहरी सोपारी लागी,
रानी पिया मुड़वरिया लै के ठाढ़ि, उलटि नाहीं ताकैं।
कि पियवा! दहेज थोर पाया, कि हम सुरतिया क हीन हो,
कबसे ठाढ़ी मुड़वरियाँ, घुमरि नाहीं ताक्या हो।
धना! नाहीं पायौं थोर दहेज, न सुरतिया क हीन हो,
रानी! सुरतिया सुरुजवा क जोति, तकत नाहीं बनैं हो।
रानी! आजु मैं देख्यों सुअरिया, त देखतै घिनावन हो,
वकरे आगे-पीछे घूमत छौनवा त देखत सुहावन हो।
यतनी बचन सुनैं रनियाँ, त सुनहू न पावैं हो।
रानी जियरा म भये है विरोग त नयना से नीर ढुरै।
बहिरे से आवैं लहुरा देवरा, त भौजी से अरज करैं हो,
भौजी! कौन विरोग तोहरे जियरा, त मन म विरोग भरी हो।
तुहीं मोरे देवरा से देवरा, बिपतिया क नायक हो,
देवरा! एक रे संततिया के कारन, पुरुष तनवाँ मारैं हो।
लै लेहु हथवा म अच्छत, गेंडुवा जूड़ पानी हो,
भौजी! अँचरन सुरुजू मनावौ, संतति तोहरे होइहैं हो।
भोर होत पौ फाटत त सुरुजु मनावैं हो,
बहुअरि झीना आँचर फहराने, त गरभ जनावैं हो।

लौंग-इलायची से युक्त पान का बीड़ा लेकर पति के सिरहाने खड़ी रही, किन्तु वह पलटकर देखते भी नहीं। क्या मुझे दहेज कम मिला? या मैं असुन्दर हूँ? मेरी ओर देखते क्यों नहीं प्रिये! न दहेज कम हुआ, न तुम असुन्दर हो, तुम तो सूर्य की ज्योति सी हो, जिसकी ओर देखते नहीं बनता। प्रिये! मैंने एक सुअर देखा, जो लोगों की घृणा की पात्र है। किन्तु उसके आगे-पीछे, उसके बच्चे घूम रहे थे और वह सुन्दर लग रही थी। इतनी बात सुनते ही, सुना नहीं गया, मन दु:ख से भर गया, नेत्रों से गिरने लगे अश्रु। बाहर से आते छोटे देवर ने भाभी से पूछा-भाभी! आज मन में क्या पीड़ा है? क्यों नयनों से गिर रहे हैं अश्रु? देवर जी! आप मेरे हर सुख-दु:ख के साथी हैं। एक संतान के बिना, मेरे पति ने मुझे ताना दिया। भाभी! अक्षत और शीतल जल से सूर्य को अर्घ्य दो, आँचल से प्रणाम करो, तुम्हें संतान होगी। प्रात: पौ फटते ही सूर्य की पूजा की, प्रणाम किया, रानी का झीना आँचल फहराया और वह गर्भवती हो गयीं।

देवी सीता के मन में भी संतान की साध होती है, चौक पर पियरी पहनकर बैठने की चाह होती है। सीता श्रीराम से मिलने के लिए अभिसार करके उनके कक्ष में जाती हैं–

पलक उघारि राम चितवैं, एतनी भरमें हो,
सीता कवन जरूर तोहरे लागी, एतनी राति आइउ हो?
काहें लागि किह्यू सिंगार, काहैं लागि अभरन हो।
सीता काहें लागि चढ़िउ अँटरिया, जियरा मोरा भरमैं हो।
रउरे लागि किहेन सिंगार, रउरे लागि अभरन हो
राजा रउरे तीनि लोक के ठाकुर, भेंट करे आयन हो।
नइहर ना मोरे बिरना, न गोदिया म बालक हो
राजा! लाल–पियर नाहीं पहिर्‌यों, चौक नाहीं बैठेउँ हो
रामा सीता के ढुरै नयनवाँ, पटुका राम पोंछैं हो।।

राज–काज में अत्यधिक व्यस्त महाराज राम, सीता से मिलने भी नहीं आ पाते। सीता राम से मिलने के लिए अभिसार करती हैं। सोलह शृँगार करके राम के महल पहुँचती हैं। राम 'सीते! आज इतना शृँगार किसलिए? इतनी रात को तुम यहाँ कैसे?' सीता– आप तो तीनों लोकों के मालिक हैं, आपही के लिए यह शृँगार है, आपसे ही मिलने आयी हूँ। मेरे मायके में भाई नहीं और मेरी गोद भी सूनी है, मेरी आह कैसे मिटे? लाल–पीले वस्त्र पहनकर चौक पर बैठने की मेरी साध कैसे पूरी हो? कहकर सीता रो पड़ीं, राम उनके आँसू पोंछते हैं।

नारी की यह साध होती है कि वह भाई की लाई हुई शुभ पीली साड़ी पहनकर चौक पर बैठे–

एक साधि मन उपजै जो हरि पुरवैं।
हो मोरे राजा! हमरे नैहर लगै जाव, त पियरी लै आवहुं।
तुहरा त नैहर दूरि बसे, कोसवन के चलै,
हो मोरी रनियाँ! घर ही म पियरी रंगावा,
हो साधि मन पुरवह हो।
तुहरी त पियरी नित कै नित, उठि पहिरब,
हो नितै उठि पहिरब।
हो मोरे राजा! बिरना कै पियरी सगुन कै, चउक पर पहिरब,
बरहे बरिसवाँ भइया लौटे, मलिनि द्वारे ठाढ़ भये,
हो मोरी मालिन! केहि घर बाजति बधैया,
त केन घर मंगल?
तुहरी बहिनियाँ कै लाल भयै तोहरे भैन भये,
हो अरे राजा! वनहीं कै बाजति बधैया, वनही घर मंगल।
जौ मैं जनत्यों भैन भये, बहिनी कै लाल भये,
हो मोरी मालिन! बेचत्यों मैं सिर कै पगड़िया,
पियरी लै अवत्यों।
हकरहुं नग्र कै बजजा, बेगेहि चलि आवहु,
हो मोरे बजजा! बहिनी जोगे कपड़ा फरावौं, बहिनी पहिरावौं।
हकरहुं नग्र कै रंगरेज, हलिय बेगे आवहु,
हो मोरे रंगरेज! पंच रंग चुनरी रंगावउ, बहिनी पहिरावौं।
हो मोरे सोनरा! सोने रूपे गहना गढ़ावौ, भैंने पहिराऔ।
आगे–आगे आवइ घिव–गागरि, लडुआ महर–महर,
पियरी फहर–फहर
हो मोरी बहिनी! लीले बछेड़वा बीरन भैया,
त डंड़िया भौजी आवैं।
लेहु न सासू! होरिलवा, त ननदी! भतिजवा,
हो मोरी सासू! भेंटि लेउँ अपना मैं विरना,
औ अपनी भौजी भेटौं।
तुहीं मोरी बहुआ से बहुआ, त तुंही ठकुराइन,
मौरी बहुअरि! आजु रे सगुन कै राति, अँसुवा जिनि डारेउ।
तुहीं मौरी सासू से सासू, त पइयाँ तोहरी लागौं,
हो मोरी सासू। एकै कोखी कै बिरनवाँ,
अँसुइया कैसे मानै?
पहिरि ओढ़ि बहिनी ठाढ़ि भईं सुरुजू मनावैं,
सासू पैंया लागैं,
हो मोरी सासू। भरि मुख देहु असिसिया, नैहर मोरा बाढ़ै।
अमवा की नैंया भैया बौरो, त फूल ऐसन महकौ,
हो मोरे भैया! दुबिया की नैया छैलाउ,
मान मोरा राखेउ।

पहली चाह मन में उपजी, यदि विधि पूरा करें। हे मेरे प्रिय! मेरे मायके चले जाओ, पीली साड़ी ले आओ। तुम्हारा तो मायका दूर है, कौन कोसों चले? रानी! घर में ही पियरी रंगा लो, चाह पूरी कर लो। तुम्हारी तो पियरी नित्य की है, नित्य उठकर पहनूँगी। हे प्रिय! भाई की पियरी शकुन की है, पहनकर चौक पर बैठूँगी। बारह वर्ष पर भाई लौटा, मालिन के द्वार पर खड़ा हुआ। मालिन! किसके घर बधाई बज रही, किसके घर मंगल है? मालिन–तुम्हारी बहन के पुत्र हुआ, तुम्हारा भांजा हुआ। यदि मैं जानता कि मेरा

भांजा हुआ, बहन के पुत्र हुआ, मालिन! मैं अपने सिर की पाग बेंचकर पीली साड़ी लाता। नगर के बजाज! मेरी हाँक सुनो, शीघ्र आओ। ओ रंगरेज! पंचरंग चुनरी रंगों, मैं बहन को पहनाऊँगा। नगर के सुनारों! मेरी हाँक सुनो, शीघ्र आओ। सुनार! सोने-चाँदी के आभूषण गढ़ो, मैं बहन को, भांजे को पहनाऊँगा। आगे-आगे घी की गागर, सुगंधित लड्डू, चमकती पीली साड़ी आ रही, नये-नये घोड़े पर भाई, पालकी में भाभी आ रही। सास जी! लो बच्चे को सँभालो, ननद जी! लो भतीजा थामो। सास जी! मैं अपने भाई-भाभी को भेंट लूँ, मिल लूँ। सास- बहू! तू मेरी बहू है, कुलवंती है, आज शुभ शकुन की रात है, आँसू न गिराना। बहू- सास जी! आपके पाँव लगती हूँ, एक ही कोख से जन्मा भाई है, मिलने पर आँसू नहीं मानते। पहन- ओढ़कर बहन खड़ी हुई, सूर्य को प्रणाम किया, सास के पाँव लगी। हे सास जी! भर मुख आशीष दो, मेरा मायका बढ़े। भाई! आम की तरह मंजरित हो, फूल जैसा महको। भाई! हरी दूब की तरह फैलो, तुमने मेरा मान रखा।

हर माता-पिता की यह साध भी होती है कि उसके घर ऐसी संतान का जन्म हो, जिससे संसार को आनन्द मिले -

कुंअवा खोदाये कौन फल? हे मोरे साहब!
हो मोरी रानी! झोंकवन भरै पनिहार, तबै फल होइहैं।
पोखरा खोदाये कवन फल? हे मोरे साहब!
हो मेरी रानी! गउवा पियैं जुड़ पनियाँ, तबै फल होइहैं।
बगिया लगाये कवन फल? हे मोरे साहब?
हो मोरी रानी! राही बाटे अमवा जे खइहैं, तबै फल होइहैं।
तिरिया के जन्मे कौन फल? हे मोरे साहब!
हो मोरी रानी! पुतवा जनम जब लेइहैं, तबै फल होइहैं।
पुतवा के जन्मै कवन फल? हे मोरे साहब?
हो मोरी रानी! दुनिया अनंद जब होई, तबै फल होइहैं।

कुआँ खुदाने का क्या फल है, मेरे स्वामी! रानी! सभी लोग खूब जल भरें, तभी फल होगा। पोखर खुदवाने का क्या फल है? मेरे स्वामी! रानी! गायें जल पियें, तभी फल होगा। बाग लगाने का क्या फल है, मेरे स्वामी! रानी! राहगीर फल खायें, तभी फल होगा। स्त्री के जन्म का क्या सुफल है मेरे स्वामी! रानी ! वह पुत्र को जन्म दे, तभी फल होगा। पुत्र के जन्म का क्या फल है रानी! दुनिया को वह आनंद दे, तभी फल होगा।

सतैसा पूजने के अवसर पर 'सोहर' गीत गाये जाते हैं, जिसमें गर्भवती की अभिलाषाओं, इच्छाओं और उन्हें पूरा करने के लिए परिजनों द्वारा किये गये प्रयत्नों का वर्णन रहता है। गर्भ-काल की शारीरिक, मानसिक स्थितियों का वर्णन भी इन गीतों में मिलता है।

देवी भईं दयाल मोरे राजा, पूरन भई मोरि साधि मोरे राजा।
पहिला महीना जब से लागा, घूमै मोरा कपार मोरे राजा।
दूसरा महीना जब से लागा, धमकै मोरा कपार मोरे राजा।
तिसरा महीना जब से लागा, गोड़वा मोर घहराय मोरे राजा।
चौथा महीना जब से लागा, आम-इमली कै साधि मोरे राजा।
पचवाँ महीना जब से लागा, माँसु-मछरी चित लाग मोरे राजा।
छठवाँ महीना जब से लागा, नीबू-नारंगी कै साधि मोरे राजा।
सतवाँ महीना जब से लागा, मैके क खबर जनाव मोरे राजा।
अठवाँ महीना जब से लागा, भीर भये जिउ घबराय मोरे राजा।
नववाँ महीना जब से लागा, थर-थर काँपै परान मोरे राजा।।

देवी हुईं दयालु मेरे राजा! पूरी हुई है साध। पहला महीना जब से लगा, घूमने लगा मेरा सिर। दूसरा महीना जब से लगा, धमकने लगा मेरा सिर। तीसरा महीना जब से लगा, पाँव में मेरे पीड़ा। चौथा महीना जब से लगा, आम-इमली की चाह। पाँचवाँ महीना जब से लगा, माँस-मछली में चित्त लगा। छठवाँ महीना जब से लगा, नीबू-नारंगी की चाह। सातवाँ महीना जब से लगा, मायके को खबर करो मेरे राजा! आठवाँ महीना जब से लगा, भीड़ में मन घबराता, मेरे राजा! नवाँ महीना जब से लगा, भय से काँपे प्राण।

सोहर गीतों में गर्भवती की इच्छाओं, भावनाओं का आदर करके उसे प्रसन्न रखने का भाव व्यक्त हुआ है, जिससे वह प्रसन्न रहे और गर्भस्थ शिशु पर अच्छा प्रभाव पड़े। लोक-विश्वास है कि यदि गर्भवती स्त्री की कोई लालसा अधूरी रह गयी (खान-पान सम्बन्धी) तो आने वाले शिशु की लार टपकेगी। अत: उसकी प्रत्येक इच्छापूर्ति का प्रयास किया जाता है।

प्रसूति गृह की तैयारी

प्रसवकाल निकट आते ही आसन्न प्रसवा को चिन्ता होती है कि उसका प्रसव कहाँ होगा । एक गीत में बहू अपनी सास से

विनम्र स्वर में पूछती है कि कौन सा कक्ष लीपूँ-पोतूँ बता दीजिए। कन्या की अवज्ञा की मानसिकता का यह गीत एक उदाहरण है।

यहाँ 'बियाना' शब्द तिरस्कार बोधक है जो पशुओं के लिए प्रयुक्त होता है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी तिरस्कार हेतु इस शब्द का प्रयोग किया है- 'नतरु बाँझ भलि बादि बियानी'।

एक हाथे लिहीं बहुवरि गोबरा, त एक हाथे पनिया,
सासू ! जौन ओबरिया बतावा तौन हम लीपी।
सासू त बोलही के रहीं, ननद रानी बोलैं,
मैंया! भौजी त बिटिया बियैहैं, बतावा घर भुसउल।
बहिरे से आवैं सिरी साहेब मैया से अरज करैं,
मैया! तिरिया अलप सुकुवारि बतावा गज ओबरि।

बहू के एक हाथ में गोबर और दूसरे में पानी है। ननद को आशंका है कि गर्भस्थ शिशु कन्या है। वह अपनी माँ से कहती है - माँ! भाभी को भूसे का घर लीपने को कह दो। क्योंकि उन्हें बेटी ही होगी। भूसे का घर लीपने, स्वच्छ करने में गर्भवती को कष्ट होगा। इसलिए प्रसूता का पति आकर माँ से प्रार्थना करता है कि मेरी पत्नी अल्प वयस्का सुकुमारी है, उसे साफ-सुथरी हाथियों की चित्र सज्जा वाली कोठरी बताओ, जिसमें उसका प्रसव हो सके।

संतान की कुशल कामना के लिए मंदिर और गृह के आँगन में देवी पूजन किया जाता है। इस अवसर पर सोहर गीत और नृत्य होते हैं-

लटकि रहे फुंदना भवन में।
राजा दसरथ जी होम करत हैं, देवी के ऊँच भवन में।
रानी कौशल्या देई पूजन बैठीं, गोद लिए ललना भवन में।
राजा रामचन्द्र होम करत हैं, देवी के अँगना भवन में।
रानी सीतल देई पूजन बैठीं, गोद लिये ललना भवन में।

भवन में फुलवारी, रंगबिरंगे फुंदने लटक रहे हैं। राजा दशरथ देवी मंदिर के आँगन, अपने भवन में हवन कर रहे हैं। महारानी कौशल्या गोद में पुत्र लिये पूजन पर बैठी हैं। राजा रामचंद्र देवी के आँगन में, अपने भवन में हवन कर रहे हैं। महारानी सीता गोद में बालक लिये पूजन पर बैठी हैं।)

प्रसव पीड़ा

मातृत्व की गरिमा पाने के लिए माँ को असह्य पीड़ा झेलनी पड़ती है। उसकी पीड़ा गीतों में मुखर हुई है। वन में अकेली सीता की प्रसव पीड़ा और विवशता सोहर गीतों का मुख्य विषय है -

रामचंद्र रनियाँ गरभ सेनी, भुइयाँ परी लोटैं,
रामा पहर-पहर पीर आवै, त जग अन्हियार लागे।
एक घरी बीती दूसरी घरी, होरिला जनम लिहे,
सीता लकड़ी के किही हैं अँजोर, संतति मुख देखैं हो।
उमड़ी-घुमड़ि दयवा गरजै, त जग अन्हियार लागै,
चमकी है बिजुरी अकासे, ललन मुख देखैं हो।

रामचंद्र की रानी सीता गर्भ से हैं। भूमि पर पड़ी लोट रही हैं। घड़ी-घड़ी प्रसव पीड़ा होती है, संसार अंधेरा लगता है। एक घड़ी बीती-दूसरी बीती, पुत्र का जन्म हुआ। सीता गहन अँधेरे में अपने पुत्रों का मुख नहीं देख पातीं। वे लकड़ी जलाकर उसके प्रकाश में संतान का मुख देखती हैं। तब तक विद्युत चमकती है, उसके प्रकाश में सीता अपने नवजात शिशुओं का मुख देखती हैं।

प्रसव पीड़ा की व्याकुलता का अत्यन्त स्वाभाविक चित्र इन गीतों में मिलता है।

लीपलि पोतलि ओबरिया त जगर मगर करै,
हो मोरी बहिनी सुन्नरि भुइयाँ परी लोटैं त बेदना बियाकुल।

लिपी-पुती कोठरी जगमगा रही है। सुन्दरी भूमि पर पड़ी वेदना से व्याकुल होकर लोट रही हैं।

सीता की प्रसव पीड़ा के अनेकानेक सहज चित्र मिलते हैं-

बन बीच बैठीं मोरि सीता, चूवत ढुर-ढुर आँसु रे।
मोरी माया! ना कोऊ मोरे आगे ना कोऊ पाछे रे।
उमड़ि-घुमड़ि पीर आवइ, कमर मोरि टूटत हो।
मोरी माया, विधि कर बाँधी गठरिया, त कर-कर टूटत हो।
भोर होत पौ फाटत, होरिल मोरे जन्मेनि हो।
मोरे पूत! तारेउ दूनउ कुल डेहरी, अजोधिया नगरिया हो।
आवउ न बन की सखियाँ, बेगि चलि आवउ आँगन मोरे।
मोरी सखि! गावहु मंगलचार, ललन जी के जनमे रे।

सीता वन में बैठी हैं, नैनों से आँसू ढुरक रहे हैं। अरे माँ! न कोई मेरे आगे है न कोई मेरे पीछे है। उमड़-घुमड़कर प्रसव पीड़ा हो रही है। मेरी कमर टूटती जा रही है। अरे माँ! विधि की बाँधी हुई गठरी धीरे-धीरे टूटती है, खुलती है। भोर होते ही, पौ फटते ही पुत्र का जन्म हुआ। हे पुत्र! तुमने मेरे पिता और श्वसुर दोनों कुल की देहरी को तार दिया, उद्धार कर दिया। तुमने अयोध्या नगर का उद्धार कर दिया। हे वन की सखियाँ! आओ! मेरे आँगन में चली आओ। हे सखियाँ! मेरे लाल के जन्म पर मंगल गाओ।

प्रसव पीड़ा की अनुभूतियों के अनेक सहज चित्र सोहर गीतों में मिलते हैं। प्रसूता अपने परिजनों से स्नेह और सुरक्षा तथा सहयोग चाहती है। वह अपने प्रिय को उस पीड़ा के क्षण में अपने पास चाहती है। सास-ननद उसे समझाती हैं कि थोड़ा धीरज रखो, आनन्द का क्षण आने वाला है।

सासू मुख बेनिया डोलावैं, ननद मुख चूमैं,
रानी! छिन एक वेदना नेवारो, ललन तोहरे होइहैं।
आपनि मैया जे होतीं त पीर हरि लेतीं,
हो अरे मोरे हरि जी कै मैया निर्वेदनी त होरिला होरिला करैं।
बहिरे से आवैं सिरी साहेब धना अरज करैं,
राजा बैठो मोरी गोड़वरियाँ त वेदना नेवारौ।

सास प्रसूता के मुख पर पंखा झल रही है, ननद मुख चूम रही हैं, रानी! क्षण भर वेदना झेल लो, तुम्हें पुत्र होगा। अपनी माँ होती तो पीड़ा हर लेती, पति की माँ निर्दयी हैं। केवल लालन होगा कहकर वह समझा रही हैं। बाहर से पति आया। प्रसूता विनती करती है- प्रिय! मेरे पैताने बैठो और मेरी पीड़ा का हरण करो।

जीवन संगी ने सुख में साथ दिया था तो दु:ख में भी देना चाहिए। इसीलिए उनसे पीड़ा में साथ बैठने को कहती है। लेकिन पति सांत्वना देने के अतिरिक्त क्या कर सकता है। किन्तु उसकी सांत्वना ही उसे सम्बल देती है।

एक अन्य सोहर गीत में आसन्न प्रसवा पति को बुलाकर अपनी व्यथा कहना चाहती है। पासा खेलता हुआ पति यह समाचार सुनकर शीघ्रतापूर्वक पत्नी के पास आता है और उसकी पीड़ा के बारे में पूछता है। पत्नी व्याकुल होकर कहती है-

मूड़ मोर बहुत धमाकै और कड़िहर सालै,
हो मोरे राजा मर्‌यों करिहइयाँ की पीर त दाई बोलावा
तुम राजा बैठो गोड़वरियाँ त हम मुँड़वरियाँ,
हो मोरे राजा पहर-पहर पीर आवै दूनौ जने अँगइब।
छन्हियाँ जो होती छववत्यों, मरद बोलवत्यों,
रानी ! विधि कै बान्हीं गठरिया,
कलै-कल छूटै, छोड़ावैं परमेसर।

मेरे सिर में भयंकर पीड़ा हो रही है, कमर में शूल उठ रहा है। कमर की पीड़ा से मैं मरी जा रही हूँ। हे प्रिय! दाई बुला दो। हे प्रिय! तुम पैताने बैठो, मैं सिरहाने बैठूँ। एक-एक प्रहर पर पीर उठ रही है, दोनों मिलकर उसे झेलें। पति कहता है यदि छान-छप्पर छवाना होता तो लोगों को बुलाता, उनका सहयोग लेता, किन्तु यह तो विधि की बांधी हुई गठरी है, यह तो धीरे-धीरे खुलेगी, इसे ईश्वर ही खोलेंगे।

प्रसव पीड़ा के अवसर पर दान-पुण्य ऐसा लोक विश्वास है कि आसन्न प्रसवा के हाथ से अनाज तथा धेनु और अन्य वस्तुओं का दान करने से शीघ्र और सुरक्षित प्रसव होता है-

राम रमैया कै बिरवा, आँगन हमरे लहरै,
बहिनी घरिया-घरिया राम आवैं, दरस नहीं पावैं।
हकरहु नगरा कै अहिरा बेगे चलि आवहु,
अहिरा धेनु-धेनु गैया लै आवहु कौशल्या के छुआवहु।
हकरहु नगरा कै बनियाँ बेगि चलि आवहु,
बनिया लावहु पितांबरी कै धान रतन जड़ि लावहु।
ओदिन धोतिया राजा दसरथ थर-थर कँपें
राजा दसरथ मरत पियासि बाभन नाहीं आवैं।
अरे-अरे सतयुग के बभना! आवै देहु कलियुग।
बभना घरे-घरे मँगबा चुटुकिया, तौ पेटवा न भरिहैं।
मचियहिं बैठी कौसल्या त सुना राजा दसरथ!
राजा! बभना दुखित होइ जइहैं त राम के सरपिहैं,
राम दुख पइहैं।

राम रूपी पौधा हमारे आँगन में लहरा रहा है। घड़ी-घड़ी पर राम जन्म की संभावना होती है, कौशल्या रानी वेदना से व्याकुल हैं, पर राम का दर्शन नहीं हो पा रहा है। राम जन्म की प्रतीक्षा और उत्सुकता तथा प्रसन्नता में दान-पुण्य की कोई सीमा नहीं, कितना राजा दशरथ लुटा रहे हैं। अहीर को आदेश होता है कि धेनु गाय ले

आओ, कौशल्या से स्पर्श करा कर गोदान कराओ। वणिक को आदेश होता है कि पीतांबरी धान ले आओ, रत्नों से जड़वाकर उसका भी दान करना है। भीगी धोती में राजा दशरथ थर-थर काँप रहे, प्यास से बेहाल हैं, पर आमंत्रित ब्राह्मण आ ही नहीं रहे। बिना दान किये वे न तो पानी पी सकते हैं, न सूखे वस्त्र पहन सकते हैं। राजा दशरथ ब्राह्मण पर कुपित होकर शाप देते हैं-'अरे सतयुग के ब्राह्मण! कलयुग तो लगने दो, तुम घर-घर चुटकी (भीख) माँगोगे, फिर भी पेट नहीं भरेगा।' रानी कौशल्या उन्हें शांत करते हुए कहती हैं-'ऐसा मत कहो। ब्राह्मण दु:खी होंगे तो राम को श्राप देंगे, राम को दु:ख भोगना पड़ सकता है।'

जन्म संस्कार का उत्सव

शिशु को जन्म के बाद नहला-धुलाकर सूप में लिटाया जाता है। सूप में लिटाने का अर्थ है कि उसे सूप जैसा स्वभाव मिले, जो सार-सार को ग्रहण कर ले और थोथा सब उड़ा दे।

जन्म के बाद बच्चे को उछालते हैं जिससे वह भयमुक्त हो जाय, चौंके नहीं। बुआ थाली बजाती है और नेग लेती है। थाली बजाने का तेज शोर सुनकर शिशु शोर सुनने का अभ्यास पाता है और चौंकता नहीं, ऐसा लोक विश्वास है।

पहले मिट्टी के मटके को बीच से काटकर उसी में शिशु को स्नान कराया जाता था। यह शुद्धता के लिए तो होता ही था, शिशु को मिट्टी का संस्कार देने के लिए भी होता था।

बच्चे के जन्म लेते ही मंगल गीत गाये जाने लगते हैं। इन गीतों में पुरखों का नाम लेकर गाया जाता है कि अमुक-अमुक पुरखे मिट्टी जगा रहे हैं, धरती को धन्यवाद दे रहे हैं कि हमारे घर वंश वृद्धि हुई।

लोक जीवन में हर बच्चे का जन्म राम और कृष्ण के जन्म का उत्सव बन जाता है। राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के जन्म का उत्साह गीतों में छलक पड़ता है-

दुपहर जन्मे रामचंद्र, आधी राति लछिमन हो,
ललना भोर होत भरत भुवाल, महल उठै सोहर हो।
संझवे जोगयों हंसियवा, हंसिया नाहीं पावउँ हो,
राजा ! सोने के हंसुअवाँ नार छीनब, रामजी जनम लिहे हो।
संझहिन फोर्‌यों खपरवा-खपरवा न पावहुँ हो,
राजा ! सोने की चौकिया देहु, श्रीराम नहवावउँ हो।
सँझवइ जोगयों दियरिया, दियरिया नाहीं पावौं हो,
राजा ! हीरा अजोरे राम देखौ, राम बड़ा सुन्नर हो।
वनके हथवा म सोहै लाल, त लिलार पै मानिक हो।
संझवइ जोगयों कपड़वा, कपड़ा नाहीं पावौं हो,
राजा! पीला पितंबर ओढ़ावौं, राम बड़ा सुन्नर हो।
संझवे धर्‌यों आखतवा, आखत नाहीं पावौं हो,
रानी! मोतियन अंजुरी भरावौं, राम जी जनम लिहे हो।
जनमें हैं रघुकुल-नंदन, असुर-निकंदन, मुनि-मन रंजन हो
शंख, गदा और पदम, कर चक्र सुदर्सन हो
धनि-धनि कौसल्या रानी गोद, खिलावैं जग बंदन हो।

दोपहर में श्री रामचन्द्र जी ने जन्म लिया, आधी रात को लक्ष्मण ने जन्म लिया, भोर होते ही भरत-शत्रुघ्न ने जन्म लिया। महल में सोहर गाया जाने लगा। नाल काटने वाली दाई राजा दशरथ से कहती है-'शाम से ही मैंने हंसिया जतन से रख दी थी, अब मिल नहीं रही। हे राजा ! सोने की हंसिया दीजिए तो उससे राम का नाल काटूँ।' नहलाने वाली स्त्री कहती है-'नहलाने हेतु साँझ से मिट्टी का घड़ा फोड़कर रखा था, वह नहीं मिल रहा है। हे राजा! सोने की चौकी मँगवाइये। श्री राम को उस पर नहलाऊँ।' राम का दर्शन कराने वाली स्त्री कहती है- 'संध्या से ही दीपक सँभालकर रख लिया था, वह दीपक नहीं मिल रहा है। हे राजा! हीरे के प्रकाश में राम को देखिये, राम बहुत सुंदर हैं।'

उनके हाथ में लाल है, माथे पर माणिक्य है। 'वस्त्र पहनाने वाली कहती है- 'शाम से ही वस्त्र सँभालकर रख लिया था, पर वस्त्र नहीं मिल रहा है। हे राजा! पीतांबर दीजिए राम को ओढ़ा दूँ, राम बहुत सुंदर हैं।' दाई कहती है-'शाम से ही आखत सूप में रख लिया था, वह भी नहीं मिल रहा है। हे रानी! मोतियों से अंजुरी भराऊँगी, श्री राम जी ने जन्म लिया है। रघुकुल नंदन, असुर निकंदन, मुनि मन रंजन, शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी श्री विष्णु ने जन्म लिया है। धन्य हैं रानी कौशल्या जो जग वंदनीय राम को खिला रही हैं।'

बधावा या बधाई

जन्म संस्कार के अवसर पर बधाई के बाजे और गीतों की

गूँज सबको हर्ष विभोर कर देती है। पहले राम जन्म की बधाई गायी जाती है–

अवध म बाजै बधइया, बहुत निक लागै, बहुत छवि लागै,
अरे–अरे ललना? जन्में हैं दीनदयाल अवध छवि लागै।
सुरही क दुधवा मँगावौं, श्रीराम नहवावौं, प्रभु के नहवावौं,
हो अरे ललना? प्रेम पितम्बर लपटनियाँ, सिंहासन पौढ़ावौं।
राम कै घुड़िला–घुड़िला बरवा,
बहुत निक लागै, बहुत छवि लागै,
हो अरै ललना! कमर जड़ावरि करघनियाँ सिर, मुकुट विराजै।
राम के माथे तिलकवा, बहुत निक लागै, बहुत छवि लागै,
हो अरे ललना! दीन्हा है गुरु जी वशिष्ठ मुनि,
बहुत छवि लागै।
राम की अंखियाँ कजरवा, बहुत निक लागै, बहुत छवि लागै,
हो अरे ललना! दीन्हा है बुआ सुहागिन, त पतरी अंगुरियन।
राम के गोड़े पैजनियाँ बहुत निक लागै, बहुत छवि लागै,
ललना! छोटे गोड़े चलहिं बकंइया, देखत राजा दसरथ।।

अवध में बजी बधाई, बहुत भली लगी, बहुत सुन्दर लगी, जन्म लिया है राम लला ने, जो हैं दीनदयाल, अयोध्या सुन्दर लग रही। सुरभि गाय का दूध मँगाया, राम को नहलाया, प्रभु को नहलाया, प्रेम पीताम्बर में लिपटाया, सिंहासन पर उन्हें सुलाया। राम के घुँघराले बाल, बहुत सुन्दर लगे, कमर जड़ाऊ करधनी शोभित, सिर पर मुकुट बिराजे। राम माथे लगा तिलक, बहुत सुन्दर लगे, गुरू वशिष्ठ ने लगाया तिलक, राम की आँखों में रचा काजल, काजल रचाया बुआ सुहागिन ने, अपनी पतली अँगुलियों से। राम के पाँवों में पैजनियाँ बहुत भली लगे, घुटरुन चलते नन्हें पाँव से, राजा दशरथ देख रहे।

राम और कृष्ण के जन्म पर देवता, ऋषि और नदियाँ भी बधाई देने आयी हैं –

जन्में श्री रघुरैया अवधपुर बाजै बधैया।
राजा दशरथ घरे राम जनम लिहे,
नंद के जन्मे कन्हैया, अवधपुर बाजे बधैया।
राजा दशरथ तो सोना लुटावैं,
नंद लुटावैं गैया, अवधपुर बाजे बधैया।
ड्योढ़ी पै ब्रम्हा बेद उचारैं,
नारद बीन बजैया, अवधपुर बाजे बधैया।
गंगा आईं, जमुना आईं,
आई हैं सरजू मैया, अवधपुर बाजै बधैया।

राम–रघुराई ने अवधपुर में जन्म लिया, बधाई बज रही है। राजा दशरथ के घर राम ने जन्म लिया, नंद के यहाँ कृष्ण ने। राजा दशरथ ने सोना लुटाया, नंद जी ने गायें। ड्योढ़ी में खड़े होकर ब्रह्मा वेदोच्चार कर रहे हैं, नारद बीन बजा रहे हैं। आशीर्वाद देने गंगा आयीं, यमुना आयीं, सरयू माँ आयीं।

भाई के घर संतान के जन्म की सूचना पाकर बहन बधाई लेकर जाती है–

छोट मोट बिरवा कदम के पतवन झालरि हो
हो रामा तेहि तरां ठाढ़ी ननदिया त दयवा मनावें हो
अरे–अरे कारी बदरिया त आजु जिनि बरसहु हो
हो रामा! भौजी के भये नन्दलाल बधाव लेके जावे हो,
चाहे बदरी बरसउ चाहे आजु गरजउ हो,
बदरी चाहे भिजत घर जाहूँ बधाव लेके जावे हो
अरे अरे मोरी रमियाँ तुहीं मोरी सब केहू ,
रानी! आवत हई बहिनी हमारि मान भल राखिउ।

छोटा–मोटा कदम का पेड़ पत्ते घने हैं, उसी तले खड़ी ननद देवता मना रही। अरी काली बदली! आज मत बरसना, मेरी भाभी के हुआ है पुत्र, बधाई लेकर जा रही। चाहे बदली बरसो, चाहे आज गरजो बदली! चाहे भगते हुए ही जाऊँ आज मैं जाऊँगी। अरे–अरे रानी! तुम्हीं मेरी सब कुछ हो रानी! मेरी बहन आ रही है, उसका मान रखना।

बधावा लेकर बहन आई तो सम्पन्न बहन का अधिक आदर सत्कार हुआ, किन्तु निर्धन बहन की आशीर्वाद की हल्दी दूब अधिक सार्थक है। यह भाव सहज रूप से लोकगीतों में व्यक्त हुआ है–

सुखिया दुखिया दुइ रे बहिनियाँ, दूनों बधाव ले आयीं,
अहो राजा वीरन के।
सुखिया लै आयीं गोड़हरा गुजहरा,
दुखिया हरियरि दूब, अहो राजा वीरन के।
सुखिया तो बैठीं चढ़ि के पलंग पर,

दुखिया कवहिया के ठाढ़ि, अहो राजा वीरन के।
सुखिया त पायीं सेर भर मोती,
दुखिया सेर भर कोदौ, अहो राजा वीरन के।
सुखिया क लस्कर फसलैं रौंदी,
दुखिया कै कोदौ झरै लागे मोती, अहो राजा वीरन के।

सुखिया-दुखिया दो बहनें, दोनों बधावा ले आयीं। अहो राजा वीर के घर। सुखिया ले आयीं बच्चे के आभूषण, दुखिया शुभ हरी दूब, अहो राजा वीर के घर। सुखिया आदर से बैठी पलंग पर, दुखिया उपेक्षित खड़ी कोने में, अहो राजा वीर के घर। सुखिया को नेग मिला सेर भर मोती, दुखिया को सेर भर कोदो, सुखिया की लश्कर से फसल रौंद गयी, दुखिया के कोदो से झरने लगे मोती।

ननद के लिए तो यह अवसर नेग माँगने और हर्ष विह्वल होकर नाचने का दिन होता है-

बधैया आजु गमगम बाजै,ननदिया आजु छम छम नाचै।
चाहै ननदी नाचौ, चाहै ननदी गावौ, बिरनवाँ आजु तोरे घर नाहीं,
चाहे भौजी होवें चाहे ना होवैं, कंगनवाँ आजु हम तोरा लेबै।
कंगना उतारि भौजी अंगना म फैकैं
सवतिया! आज से न बोलइबै।
अपने हाथे पहिरावा, भउजी! करा पैलगना तब हम लेबै।
कंगना पहिरि ननदी अँगना में ठाढ़ी,
ललनवाँ तोरा जुग जुग जीये।
भतिजवा मोरा जुग जुग जीये।

बधाई आज गम गम बजे, ननद जी आज छम छम नाचें। चाहे ननद नाचो, चाहे गाओ, भाई तुम्हारे आज घर नहीं हैं। चाहे भाई आयें, चाहे न आयें, कंगन मैं आज लेकर रहूँगी। कंगन उतार भाभी आँगन में फेंके , सौत! अब फिर तुम्हें न बुलाऊँगी। भाभी! अपने हाथ से मुझे कंगन पहनाओ और झुककर मेरे पाँव लगिये, तब कंगन लूँगी। कंगन पहन ननद आँगन खड़ी है, लाल तेरा भाभी! भतीजा मेरा युग-युग जीवे।

पालना गीत

शिशु को पालने में झुलाने के मनोहारी चित्र सोहर गीतो में मिलते हैं-

बधैया बाजै आँगने में
राजा दसरथ रतन लुटावैं नहिं कोउ लाजत माँगने में।
आज मुदित भये लोग लुगाई, गावत नाचत आँगने में।
कौसल्या कैकेई सुमित्रा माता, हँसि-हँसि मंगल साजने में।
राम लक्ष्मण भरत, शत्रुघन, झूलत कंचन पालने में।

आँगन में बधाई बज रही है, राजा दशरथ रत्न लुटा रहे हैं। माँगने में आज कोई लज्जा नहीं है,लोग खुलकर दान और नेग माँग रहे हैं। नर-नारी सभी मुदित मन नाच रहे हैं। तीनों माताएँ मंगल साज रही हैं। चारों बालक कंचन पालने में झूल रहे हैं।

दूसरा पालना गीत है-

सिरी रामचन्द्र झूलें अजब पलना।
राजा दसरथ बिसाहें अजब पलना,
कौसल्या रानी झुलावैं झूलो ललना।
रानी कैकेयी लोरी गावें,
सुमित्रा रानी झुलावैं झूलो ललना।
राम लक्ष्मन भरत सत्रुघन,
चारिउ भइया झूलैं अजब पलना।

रामचंद्र पालने में झूल रहे हैं। अद्‌भुत पालना राजा दशरथ ने खरीदा है। कौशल्या रानी झुला रही हैं, कैकेई रानी लोरी गा रही हैं, सुमित्रा रानी झुला रही हैं। चारों भाई झूल रहे हैं।

जन्म का उछाह

संतान के जन्म से बड़ा हर्ष और क्या हो सकता है। उस खुशी में सब कुछ लुटा देने, शिशु पर न्योछावर कर देने का मन होता है-

ओबरी से बोलैं कौसिल्या, सुना हो राजा दसरथ!
जौ घरे राम जनमिहैं, त काव लुटइबा हो।
बाउरि भयू कौसिल्या! मैं सरबस लुटइबौं हो,
सेर सेर देबौं मैं सोनवाँ, पसेरियन चनियाँ हो।
नगर अजोधिया लुटइबौं, राम घराँ जनमैं हो।
एक घरी बीती, दूसर घरी, राम जनम लिहे हो,
बाजै लागीं आनन बधइया, उठन लागे सोहर हो।
मोरे पिछवरवाँ के बिप्र! बेगेहि चलि आवहु हो,

बिप्र! खोलहु पोथिया पुरान, त सगुन बिचारहु हो।
रोहिनी नखत राम जनमे, बहुत जस पइहैं हो।
बरहा बरिस राम होइहैं, त बन काँ सिधरिहैं हो।
यतना सुनत राजा दसरथ, भये बेदना बियाकुल हो,
राजा गोड़े-मूड़े ताने चदरिया, सोवहिं धँवराहरि हो।
सौरी से बोलैं रानी कौसिल्या, त छतिया दबाइ के हो,
राजा! छुटि गै बँझिनियाँ क नाव,
भलेहि बन जइहैं, लउटि फिर अइहैं हो।

अपने कक्ष से कौशल्या रानी- 'अरे राजा! यदि घर में राम ने जन्म ले लिया तो उस खुशी में क्या लुटाइयेगा?' दशरथ- 'अरे रानी! बावली हुई हो क्या? राम जन्म लेंगे तो मैं सर्वस्व लुटा दूँगा। सेर-सेर भर सोना, पाँच-पाँच सेर चाँदी दूँगा, सारी अयोध्या लुटा दूँगा, कुछ भी बचाऊँगा नहीं।'

एक घड़ी, फिर दूसरी घड़ी बीती, दोपहर हो गयी, राम ने जन्म लिया, आनंद बधाइयाँ बज उठीं, सोहर उठने लगे। कौशल्या रानी पिछवाड़े रहने वाले विप्र को शीघ्र निमंत्रण भेजती हैं। विप्र! पोथी खोलकर राम के जन्म की शुभ घड़ी विचारें। विप्र रोहिणी नक्षत्र में राम-जन्म हुआ है, बहुत यश पायेंगे, परंतु बारह वर्ष के होते ही ये वन को प्रस्थान करेंगे। राजा दशरथ शोक से विह्वल हो गये। सिर से पैर तक चादर तान कर शयनकक्ष में पड़े रहे। प्रसूतिगृह से रानी कौशल्या अपनी छाती दबाकर कहती हैं-

अरे राजन! चिंता क्यों करते हैं, मेरा 'बंध्या' का नाम तो छूट गया, भले ही वन को जायेंगे, लौटकर फिर राम आयेंगे तो।

नाल काटना

शिशु की नाल काटने के लिए धगरिन या दाई को मनुहार करके आदरपूर्वक बुलाया जाता है। पहले सरपत के नुकीले भाग से नाल काटा जाता था। फिर आग में तपा का हंसिया से काटा जाने लगा और अब नये ब्लेड से। धगरिन को मुँह माँगा नेग मिलता है-

ऊँच नगर पुर पाटन, आले बाँसे छाजन,
ललना रघुबर लिहे अवतार, अजोधिया अनंद भये हो।
धगरिन के परै हँकार, त बेगे चलि आवहु,
धगरिन तूँ तौ सरब गुन आगर, राम नार छीनहु।
नार छीनि धगरिन ठाढ़ भई, करै लागी ठनगन।
राजा! दै देहु नेग हमार, हुलसि घराँ जायी हो।
राजा दसरथ दिहे घोड़वा, कौसिल्या रानी पटोर हो,
रानी सुमित्रा दिहीं सोहरो सिंगार, तबौ न मानै धगरिन।
बिहँसि के बोलैं राजा दसरथ, अबौ जौ न मानहु हो।
लइ जाहु रमैया उठाइ, तोहरे घरे सोहर हो।
लै जाबै रमैया उठाइ, हमरे घर सोहर हो,
राजा अपनी मड़इया लुटइबौं, महल तुहरा सून होइहैं।

ऊँचा नगर है, श्रेष्ठ बाँसों की छाजन है। रघुवर ने लिया अवतार अयोध्या में आनंद हुआ। दाई को हाँक लगी, शीघ्र आओ। तुम तो सर्वगुण-आगार हो, राम का नाल काटो। नाल काट दाई खड़ी हुई, करने लगी ठनगन। राजा! दीजिए हमारा नेग, हुलसित हो घर जाऊँ। राजा दशरथ ने घोड़ा दिया, कौशल्या रानी ने वस्त्र। रानी सुमित्रा ने सोलह शृँगार दिया, तब भी दाई नहीं मान रही। विहँस कर बोले राजा दशरथ- अब भी तुम यदि नहीं मानती, तो ले जाओ राम को उठा, तुम्हारे घर सोहर हो। ले जाऊँ राम को उठा, मेरे घर सोहर हो। राजा! अपनी मड़ैया लुटा दूँगी, महल आपका सूना होगा।

बुलावा और स्वागत-सत्कार

नाउनि घर-घर बुलावा देती है। परिवार और गोत्र की स्त्रियाँ मंगल गाने आती हैं। महारानी कौशल्या भी बुलावा भेजती हैं-

जब रघुनंदन भुइयाँ लोटें, अवरू से लोटें हो।
ललना हथवा म दुई-दुई लाल, मानिक लिलार बरै हो।
चिठिया लिखिय रानी कौसिल्या, कैकेयी, सुमित्रा हाथे दिहीं
बहिनी मोरे घरे जन्में हैं राम, देखन कहँ आवहु हो।
चनन की डँड़िया केकई रानी, पालकी सुमित्रा रानी हो,
ललना झालर लागल ओहार त देखत सोहावन हो।
अँगना बहारति चेरिया त बाबा कै पोसलि हो।
सखिया! मोरी रतनारी पलंगिया, त झारि के बिछावहु हो।
तुहरे उठाये नाहीं उठबै, बइठाये न बैठबै हो,
बहिनी! राम के देत्यू देखाई, बिहँसि घराँ जाइत हो।

जब रघुनन्दन भूमि पर लोटें, हाथों में दो-दो लाल (रत्न) माणिक्य सा प्रकाशित भाल। पत्र लिखकर रानी कौशल्या ने दिया कैकेयी, सुमित्रा रानी के हाथ। बहन! मेरे घर जन्म लिये राम,

आकर देखें। चन्दन की डाँड़ी में कैकेयी, पालकी में सुमित्रा जी। झालर लगे हुए परदे, देखने में सुशोभित। आँगन बुहारती दासी! बाबा की पालिता! सखि! मेरी लाल पलंग झाड़कर बिछा दो। बहन कौशल्या! हम आपके उठाने-बैठाने से नहीं उठेंगे-बैठेंगे,(हमारा घर है।) बहन! राम को दिखा दो, हम विहँसते हुए अपने घर जायें।

नेगचार

संतान के जन्म की प्रसन्नता में मुँहमाँगा नेग दिया जाता है-

राम जनम सुनि नेगी, सबै आइ जुटि गये हो।
ललना दसरथ घरहिं उछाह, अनंद अवध भये हो,
विप्र उचारत बेद, सुजस बंदी गावत हो।
ललना जाचक ठाढ़ दुआर सो अरज सुनावत हो।
आजु उदय भये भागि, तिनहु पुर आनंद हो।
ललना आजु लेहु मन भावत, जो रुचि मन बसे हो।
केहू लेत हाथी, घोड़ा त केऊ सुखपाल लेत हो।
ललना केहू लेत रतन पदारथ, दसरथ लुटावत हो।

राम जन्म सुन नेग के इच्छुक आकर हुए एकत्र। दशरथ जी के घर उल्लास, आनन्द अवधपुर। विप्र उचारें वेद, सुयश बन्दी गाते। याचक खड़े हैं द्वार मनचाहा हैं माँगते। आज उदय हुए भाग्य, तीनों पुर में आनन्द। आज लो जो मन भाता हो, जो रुचि हो मन में बसी। कोई ले रहा हाथी, घोड़ा, कोई लेता सुखपाल। कोई लेता रत्न पदार्थ, दशरथ जी रहे लुटा।

श्रीराम के जन्म पर सभी नेग माँग रहे हैं और मनवांछित नेग पा रहे हैं-

श्री राम जी क जनम भये चैत राम नवमी।
धगरिन तो नेग मागै, नार की कटौनी,
कौसिल्या रानी क हार मागै नाच की नचौनी।
श्रीराम जी क जनम भये चैत राम नवमी।
नाउनि तो नेग मागैं बुकवा की मिजौनी,
कैकेयी रानी क कंगन मागै नेहछू धरौनी।
श्रीराम जी क जनम भये चैत राम नवमी।
पंडित तो नेग मागैं, सायत विचरौनी,
दशरथ जी क धेनु मागैं नाँव की धरौनी।
श्रीराम जी क जनम भये चैत राम नवमी।
गोतिनि तो नेग मागैं मंगल की गवौनी,
सुमित्रा रानी क हार मागैं, नाच की नचौनी।
श्रीराम जी क जनम भये चैत राम नवमी।

श्री राम का जन्म चैत्र महीने की नवमी को हुआ। दाई नाल काटने का नेग माँग रही। नाचने में नेग स्वरूप कौशल्या का हार माँग रही। नाइन नेग माँग रही उबटन लगाने का, कैकेयी का कंगन माँग रही नेहछू करने का। पंडित नेग माँग रहे, शुभ समय विचारने का। दशरथ की धेनु माँग रहे नामकरण के लिए। गोत्र की स्त्रियाँ मंगल गाने का नेग मांग रही, सुमित्रा रानी का हार माँग रही नृत्य करने के लिए।

नेग के लिए ठनगन और नेग न देने के लिए तमाम बहानों के सहज चित्र हास-परिहास का वातावरण प्रस्तुत करते हैं-

मोती महलों में जच्चा अकेली खड़ी,
राजा सुनते नहीं, संइया सुनते नहीं।
उनकी अम्मा का झगड़ा कौन देखेगा?
चुप रहु रानी! तूँ चुप रहु, आउब हम,
वन्है कंगन हम पहिराउब, मनाउब हम।

मोतियों के महल में, प्रसूता खड़ी। राजा बोलते नहीं, सुनते नहीं, उनकी माँ का झगड़ा कौन देखे? प्रिय रानी! चुप रहो, हम आयेंगे, उन्हें कंगन पहनायेंगे, उन्हें मना लेंगे।

नन्हा-मुन्ना बच्चा कै जनम होइ गवा।
आज मोरे घरवाँ अँजोर होइ गवा।
सासू जी आयीं देवता मनावन,
वनके आगे पियरी कै सहारा होइ गवा।

इसी प्रकार सबके लिए

नन्हें-मुन्ने बच्चे का जन्म हो गया। आज मेरे घर में उजाला हो गया। सासू जी आयीं देवता मनाने। उनको एक पीली साड़ी का सहारा हो गया।

खेलैं लालन अंगनवाँ ढुनुन-मुनुन।
खेलि ल्या घुनघुनवा ललन मेरा।
खेलत-खेलत गये बाबा के अगवाँ,
जिया हो लालना! मोर नऊवां बढ़ाया।

खेलत-खेलत गये आजी के अगवाँ,
जिया हो लालना! मौके मचिया बैठाया।
खेलत-खेलत गये बाबू के अगवाँ,
जिया हो लालना! मोर बंस बढ़ाया।
खेलत-खेलत गये चाचा के अगवाँ,
जिया हो लालना! मोर कुलवा बढ़ाया।

खेल रहा बच्चा आँगन में ढुनुन-मुनुन। खेल लो घुनघुना, ओ मेरे लाल! खेलते-खेलते बाबा के पास गये, जियो मेरे लाल! मेरा नाम बढ़ाना। खेलते-खेलते दादी के पास गए, जियो मेरे लाल! मुझे मचिया पर बैठाया (अर्थात् आराम दिया)। खेलते-खेलते पिता के पास गए, जियो मेरे लाल! मेरा वंश बढ़ाया। खेलते-खेलते चाचा के पास गए, जियो मेरे लाल! मेरे कुल को बढ़ाया।

ननद भाभी की नेग माँगने और न देने के बहानों की नोक-झोंक चलती है। अन्त में भाभी हार मानती है-

भैया किरिया भौजी बेसरि हम लेबै,
जौ ननदी बेसरि तूँ लबू,
भैया किरिया जंगल जाइ होवेबै।
जो भौजी जंगल जाइ होवैबू,
भैया किरिया जंगल खोदि बहैबे।
जो ननदी जंगल खोदि बहैबू,
भैया किरिया जमुना पार होवैबे।
जो भौजी जमुना पार होवइबू,
भैया किरिया जमुना में नाव चलैबे,
जो ननदी जमुना नाव चलैबू,
भैया किरिया नैहर जाइ होवैबे,
जो भौजी नैहर जाइ होवैबू,
भैया किरिया नैहर में धूम मचैबै,
तूँ जीती मैं हारि गई ननदी,
भैया किरिया ननदी बेसरि पहिरेबे।

भाई की सौगन्ध भाभी! नाक की बेसर मैं लूँगी। यदि ननद! तुम बेसर लोगी, भाई की सौगन्ध जंगल जाकर बच्चा जनूँगी। यदि भाभी! जंगल जा बच्चा जनोगी, भाई की सौगन्ध जंगल खोद फेंकुगी। यदि ननद जी! जंगल खोद डालेंगी, भाई की सौगन्ध यमुना पार बच्चा जनूँगी। यदि भाभी! यमुना पर बच्चा जनोगी, भाई की सौगन्ध यमुना में नाव चलाऊँगी। यदि ननद जी! यमुना में नाव चलाएँगी, भाई की सौगन्ध मायके जाकर बच्चा जनूँगी। यदि भाभी! मायके जाकर जनोगी, भाई की सौगन्ध मायके में धूम मचाऊँगी। ननद जी! तुम जीतीं मैं हार गई, भाई की सौगन्ध तुम्हें बेसर पहनाऊँगी।

तप का सुफल

संतान स्वस्थ और सुन्दर है, इसका श्रेय व्रत-उपवास, दान-तप आदि को दिया जाता है-

देसवा बखानो अजोधिया, जहाँ पे राजा दसरथ हो।
कोखिया बखानौ कोसिल्या रानी, जहाँ राम जनमें हो।
मिलहु न सखिया सहेलरि, चलहु अजोधिया,
उहवाँ जनमें है सिरी राम, रमैयाजी के देखै हो।
मैं तोंहसे पूछौं कोसिल्या रानी, कैकेई, सुमित्रा रानी हो
रानी कौन-कौन बरत राखिउ, रमइया फल पाइउ हो।
भूखलि रह्यों एकादसिया, दुअसिया के पारन हो,
सखिया विधि कै भूख्यों ऐतवार, रमइया फल पायन हो।

उस देश अयोध्या का बखान करूँ, जहाँ पर राजा दशरथ हैं। उस रानी कौशल्या की कोख का बखान करूँ, जहाँ राम ने जन्म लिया है। हे सखियाँ! सहेलियाँ! आकर मिलो, मिलकर अयोध्या चलें। वहाँ श्री राम ने जन्म लिया है। हे रानी कौशल्या! रानी कैकेई! रानी सुमित्रा! आपने कौन-कौन से व्रत किये,जिससे आपको ऐसे जैसे पुत्रों का फल मिला। माताएँ उत्तर देती हैं कि हमने एकादशी का व्रत किया, द्वादशी को प्रण किया और विधिपूर्वक रविवार का व्रत किया, हमें राम जैसे पुत्रों का फल मिला

रोचना

संतान के जन्म पर परिजनों सम्बन्धियों के यहाँ रोचना (टीका या तिलक) लेकर नाई जाता है। माथे पर तिलक लगाकर वह दर्पण दिखाता है और मनचाहा नेग प्राप्त करता है।

सीता द्वारा वन से लवकुश के जन्म पर अयोध्या रोचना भेजने के मार्मिक गीत मिलते हैं। जेठ-बैसाख की धूप तप रही है भूतल धूल। राम सीता को घर से निकालते हैं, जो पूरे गर्भ से हैं।

ढाक का पेड़ पत्ते घने हैं, उसी के नीचे खड़ी सीता के नयनों से आसूँ चू रहे। वन से निकली वन तपस्विनी, सीता को समझाती हैं- सीता ! कौन-सा वियोग तुम्हारे जी में है कि नयनों से आँसू चू रहे। कौन देगा आग और पानी, बेल का काँटा? हे तपस्विनी माँ! कौन मेरी सौर रखायेगा, रात विपत्ति की।

मैं दूँगी आग और पानी, बेल का कांटा, मैं तुम्हारी रखाऊँगी सौर, रात सुख की होगी। हुआ विहान, पौ फटी, लव-कुश का जन्म हुआ। ऋषि-मुनि बंसी बजा रहे हैं, वन तपस्विनी मंगल गा रही हैं। सीता नाई को बुलाती हैं-

होत विहान पौ फाटत, होरिला जनम लिहे,
लव-कुस जनम लिहे।
रिखि-मुनि मुरली बजावैं, बनतपसिन गावैं मंगल,
हकरहुँ नगरा के नउवा, बेगेहिं चलि आवहु,
हो मोरे नउवा! रगि-रगि पीसहु हरदिया, रोचन पहुँचावौं,
पहिला रोचन राजा दसरथ, दुसरा कोसिल्या रानी,
नउवा! तिसरा रोचन लछिमन देवरा, रमैया न जनायौ।
राजा दसरथ दिहे हथिया, कौसिल्या रानी अभरन,
हो अरे लछिमन देवरा जे फाड़े कै कटरिया,
रहँसि नउवा घर चलें।
पहिरि ओढ़ि नउवा ठाढ़ भये, सुरुजू मनावै
हो अरे सुरुजू! बाढ़ै राजा दसरथ बेइलिया,
जहाँ पै मोरा आदर, जहाँ पै मोरा ठनगन।
छोटेहि घाट के पोखरवा, त राम दतुइन करैं,
हो अरे भैया! भहर-भहर करै माथ, रोचन कहाँ पायो?
हमरी ही भौजी सितला रानी, बसहिं बृन्दाबन,
हो मौरे भैया! वनहीं कै भये दुइ लाल, रोचन वहीं पायौं।
हाथ के दतुइनि गिरिगै, गेडुवा ढुरकि गे।
हो अरे रामा टुपुकि-टुपुकि चुवै आँसू, पटुकवन पोछैं।
अरे! अरे! लछिमन भैया! तूँ हमैं न बताया,
हो मोरे भैया! नउवा के देत्यों टोंडरवा, नउनि नाक बेसरि।

नगर के नाई को हाँक दो, शीघ्र चले आओ। नाई! रगड़-रगड़कर के हल्दी पीसो, रोचन पहुँचाओ। पहला रोचन राजा दशरथ को, दूसरा कौशल्या रानी को, तीसरा रोचन लक्ष्मण देवर को, राम को न सूचित करना। राजा दशरथ ने हाथी दिया, रानी कौशल्या ने आभूषण, देवर लक्ष्मण ने कमर की कटार। प्रसन्न नाई घर को चला। पहन-ओढ़कर नाई खड़ा हुआ, सूरज से विनती की। सूर्य देव ! बढ़े राजा दशरथ की बेल जहाँ मेरा आदर, जहाँ मेरा ठनगन छोटे घाट की पुष्करिणी, राम दातून कर रहे, भाई लक्ष्मण! तुम्हारा भाल देदीप्यमान, रोचना कहाँ से मिला? मेरी भाभी सीता देवी, बसती हैं वृन्दावन, भाई! उन्हीं के दो पुत्र हुए, रोचन वहीं से मिला। हाथ की दातून गिर गई, जल ढरक गया। राम के टपटप चूने लगे आँसू, उत्तरीय में पोंछने लगे। अरे-अरे भाई लक्ष्मण! तुमने मुझे नहीं बताया, नाई को देता धोड़ा, आभूषण, नाइन को नाकबेसर।

ओबरी बइठी रानी कौसिल्या त सासू से अरज करैं हो,
सासू कवन-कवन व्रत किहू पुतर फल पाइउ हो।
होत भोरहरे नहायौं सुरुज पइयाँ लाग्यों,
बहुअरि विधि से भूख्यों एतवार, पुतर फल पायउँ हो।
मचिया बइठी सासू, कौसिल्या अरज करैं,
सासू! मोरे नइहर खबर जनावो, मइया अनंद होय।
हँकरउ नगरा के नउवा! बेगेहि चलि आवहु,
नउवा जाहु कौसिल्या के नइहर, रोचन पहुँचावो हो।
एक बन गये हैं दूसरे बन औरो तीसरे बन हो,
ललना भेंट भई कुइयाँ पनिहार त नउवा से पूछइ हो।
कहँवा के हो तूँ नउवा, त कहंवहिं जाब्या हो,
नउवा! केकरे भये नंदलाल, रोचन पहुँचावहुँ हो।
अयोध्या के हम नउवा, कोसलपुर जाबै हो,
रानी कौसिल्या के भये नंदलाल, रोचन पहुँचावहुँ हो।
मचिया बैठीं बड़ी रानी त चेरिया अरज करै हो,
रानी कौसिल्या के भये नंदलाल, रोचन नउवा लावइ हो।
झूँठी तुही चेरिया लौड़िया त हम न पतियाई हो,
चेरिया मोरी धिया गइलीं बुढ़ाइ, रोचन कैसे आवै हो।
झूठ तोरी बोलि बचनिया त हम न पतियाइब हो,
चेरिया मोरी धिया जनमैं कै बाँझि, रोचन कहाँ आवइ हो?
एतना बचन नउवा सुने त डेहरी भीतर गये हो,
नउवा नइ-नइ करैं सलाम त रोचन जनावइ हो।
रानी उठी हैं लहँगा फहराय, लुटावै लागीं अभरन हो।
सभवाँ बैठे बड़े राजा और सिरी साहेब हो,
राजा दै देहु हथिया से घोड़ा, रोचन नउवा लावै हो।
राजा दै देहु पाँचौ जोड़ बस्तर, रहँसि नउवा लौटै हो।

कक्ष में बैठी रानी कौशल्या सास से प्रार्थना करें। 'सास जी! आपने कौन-कौन-सा व्रत किया, पौत्र का फल मिला।' सास- 'हे बहू! भोर होते ही स्नान किया, सूर्य को प्रणाम किया, विधिपूर्वक रविवार का व्रत रखा, जिससे पौत्र का फल मिला। मचिया पर राजा दशरथ की माँ बैठी हैं। रानी कौशल्या- 'हे सास जी! मेरे मायके में शुभ संदेश दीजिए, मेरी माँ आनंदित हो जायेंगी।' सास- अरे नगर के नाई! तुम शीघ्र चले आओ। मेरी बहू कौशल्या के मायके रोचना पहुँचा आओ। नाई रोचना ले चला। एक वन, दूसरा वन पार करके तीसरे वन में पहुँचा। कुएँ की पनिहारिन ने नाई से पूछा- तुम कहाँ के नाई हो? कहाँ जाओगे? किसके पुत्र हुआ? कहाँ रोचना पहुँचाने जा रहे? नाई- हम अयोध्या के नाई हैं, कोसलपुर जाना है। रानी कौशल्या के पुत्र हुआ है, उनके मायके रोचना पहुँचाना है। मचिया पर बड़ी रानी (कौशल्या की माताजी) बैठी हैं, दासी उनसे निवेदन करती है। महारानी अरे दासी! तुम झूठी हो। मुझे विश्वास नहीं हो रहा। मेरी बेटी कौशल्या तो वृद्धा है, उसके घर से रोचना कहाँ? मेरी पुत्री तो जन्म से ही बंध्या है, उसके यहाँ से रोचना कहाँ? नाई देहरी के भीतर आकर झुक-झुककर प्रणाम करके रोचने का संदेश सुनाता है। महारानी जी! भगवान सूर्य दयालु हुए हैं, अयोध्या में रघुकुल नंदन का जन्म हो गया है। रानी हर्ष विभोर हो उठीं, लहँगा फहराते हुए उत्साह से उठ पड़ीं, अपने आभूषण लुटाने लगीं। सभा में बैठे हुए कौशल नरेश से रानी कहती हैं- 'महाराज! नाई को घोड़ा दीजिए। यह हमारी बेटी के पुत्रजन्म का रोचना लेकर आया है। हे महाराज! इसे पाँचों जोड़ा वस्त्र दीजिए, जिससे नाई प्रसन्न होकर वापस लौटे।'

छठी संस्कार

शिशु के जन्म के छठे दिन प्रथम बार बच्चे को काजल लगाया जाता है।

बुआ ताजा काजल बनाकर शिशु के आँख में लगाती है और मनचाहा नेग पाती है। दीवाल पर बुआ स्वस्तिक चिह्न बनाकर सजाती है, जिसे सतिया धराना या छठिया धराना कहते हैं। सोहर गीतों में इसका बार-बार उल्लेख होता है-

ननदी जे आई छठिया धरन को,
अँखियाँ कजरा रचन को, नेगा माँगन को।

ननद जी आयी हैं, स्वस्तिक सजाने को, आँख में काजल आँजने को और नेग माँगने को।

रात भर बच्चे के साथ कोई न कोई दुष्टात्माओं से रक्षा हेतु जागरण करता है। इसलिए इस दिन रात भर दीपक जलाया जाता है। छठी का दीपक शिशु को देखने नहीं दिया जाता, देखने पर नेत्र दोष का भय होता है।

छठी का प्रसिद्ध गीत हरिण के वध और हरिणी की पीड़ा का है-

छापक पेड़ छिउलिया त पतवन गहबर,
हो अरे रामा तेहि तराँ ठाढ़ी हरिनियाँ त मन मा विरोग भरी।
चरतइ चरत हरिनवाँ त हरिनी से पूछइ हो।
हिरनी! किय तोर चरहा झुराने कि पानी बिनु मुरझउ हो?
हो मोरी हरिनी ! किय तुहरा बन भये खाँखर,
मन मा विरोग भरी।
नाहिं मोर ताल झुराने न चारा मोरा थोर भये,
हो मोरे हरिना! नाही मोरा बन भये
खाँखर न पानी बिनु मुरझउं हो।
भागउ ए हरिना! भागौ जियरा बचावहु हो,
हो मोरे हरिना ! आजु रमैया जी के छठिया, तुहें मारि डरिहें।
जाहु न हरिनी! अपने घर हमें नाहीं भावौ,
हो मोरी हरिनी! परबै रमैया जी की बरही
तरन तरि जाबै।
कर जोरि बिनवै हरिनिया, सुनहु हो बहेलिया!
हो मोरे भैया! हमही के मारि गिरावा, हरिना जिनि मारहु हो।
हरिनी के मांस गुमसाइन और भकसाइन,
हो मोरी हरिनी! हरिना के मांस सुमाँस, हरिना हम मारब।
एतना वचन हरिनी सुनी, त सुनहू न पावै,
हो मोरी हरिनी! पछवाँ उलटि जब चितवै,
हरिना मोर जूझि गये।
कर जोरि विनवे हरिनिया, सुना हो रानी कौसिल्या!
हो मोरी रानी! मासु त सीझिउ जेवनरवाँ
खलरिया हमरी बकसउ।
पेड़वा से टँगबै खलरिया, त मन समुझैबै,
हो मोरी रानी! देखबै हरिन के खलरिया,

जनुक हरिना जीयत हो।
जाहु-जाहु हरिनी! घर अपने त अपने वशन्दहिबन,
हो मोरी हरिनी! खलरी के खँझड़ी मढ़ैबै, रमैया हमरा खेलिहैं।
जब-जब बाजइ खँजड़िया, सबद सुनि अनकइ,
हो मोरी हरिनी ठाढ़ी ढकुलिया के तरवाँ,
हिरन के बिसूरइ।

छतनार पेड़ पलाश का घने पत्तों वाला है। उसी की छाँह खड़ी हरिणी मन अति अनमनी। क्या तेरा ताल सूखा या चारा हुआ कम? ओ मेरी हिरणी ! क्या तेरा वन उजड़ा? तू क्यों हुई अनमनी? मेरा ताल सूखा नहीं, ना ही चारा कम हुआ, ओ मेरे हिरण! नाही मेरा वन उजड़ा, मेरे मन में वियोग है। भागो मेरे हिरणी! भागो प्राण बचाओ, आज राम जी की छठी है, तुम मारे जाओगे। जाओ हिरणी अपने घर जाओ, मुझे नहीं भाती हो, ओ मेरी हरिणी ! पड़ूँगा राम जी की छठी में तो मेरा उद्धार हो जाएगा। हाथ जोड़े विनती करती हरिणी, सुनो शिकारी! अरे भाई! मुझे मार डालो, मेरे हिरण को मत मारो। हिरण का माँस नहीं खाने योग्य होता। ओ हिरणी! हिरण का मांस सुमांस, हिरण हम मारेंगे। इतनी बात सुना हरिणी ने, सुन नहीं सकी, पीछे उलट कर देखा, हिरण जूझ मरा। हाथ जोड़ कर विनती करती है हिरणी, रानी कौशल्या से, ओ रानी! माँस तो रसोई में पकाना, खाल मुझे दे दो। पेड़ से टागूँगी खाल, संभालूँगी मन को। ओ रानी! हवा संग हिलेगी खाल, समझूँगी मेरा हिरण जीवित है। जाओ हिरणी! अपने घर, अपने वृन्दावन, ओ हिरणी! खाल से मढ़ाऊँगी खँझड़ी, राम मेरे खेंलेगे। जब-जब खँझड़ी बजती, हिरणी कान उटेरती, हरिणी ढाक के पेड़ तले खड़ी, हरिण के लिए रोती।

बरही संस्कार

बरही का उत्सव जन्म के बारह दिन पर किया जाता है। इसमें प्रसूता और शिशु को स्नान कराकर शुद्ध करते हैं। प्रसूत गृह और घर-आँगन को लीप-पोत कर स्वच्छ किया जाता है। इसी दिन गाने वालियों, धगरिन (नाल काटने वाली और शिशु को प्रथम स्नान कराने वाली स्त्री), नाइन (प्रसूता और शिशु को तेल, उबटन से मालिश करके स्नान कराने वाली तथा नाखून काटकर महावर रचने वाली स्त्री) को मनचाहा नेगचार दिया जाता है। परिजन, नाते-रिश्तेदार प्रीतिभोज में शामिल होकर शिशु और प्रसूता को उपहार तथा आशीर्वाद देते हैं।

कन्या का महत्त्व

अधिकांश सोहर गीतों में पुत्र जन्म के उछाह का वर्णन है। कन्या के जन्म के सोहर कम हैं। राजा हिमांचल की कन्या पार्वती के जन्म का सोहर है-

राजा हिमांचल के जनमी हैं कन्या धगरिन छीनति नार।

इसी प्रकार मंदोदरी की पुत्री के रूप में सीता के जन्म के सोहर मिलते हैं। सीता को जन्म के बाद घड़े में बंद करके धरती में गाड़ दिया जाता है। कन्या की इस उपेक्षा से वह धरती परती हो जाती है। वहाँ बादल रूष्ट हो जाते हैं और सूखा पड़ जाता है। हल की नोक से सीता का जन्म होता है और वह धरती फिर से हरी-भरी हो जाती है-

संझवै से व्याकुल मंदोदरी सारी राति तलफैं हो,
अरे भोर होत जनमी है कन्या, त सीता सुलच्छिनि हो।
अरे! अरे! नारद मुनि आवो, साइत विचारौ हो
नारद! मोरे घरे जनमी भवानी, त भागि विचारौ हो
भली ही घरी जनमी कन्या, त सुभ लच्छन वाली हो।
रावन! तोरा कुल करिहैं नास, पानी देवै केहु न रही हो।
अरे! अरे! लंकापति रावन! तुम मानौ वचनियाँ हो।
रावन! कन्या क कर देहु त्याग, त यही म भलाई हो।
यतना वचन नारद बोले, त भै अकासवानी हो।
रावन! तोरे घरे फूली फुलवरिया, तूँ कोम्हिलाइ जाबा हो।
इतनी बचन सुनै रावन, सुनहु न पावै हो।
रावण गगरी में धइ कै कन्या, जनकपुर गाड़ि आवै हो।
जौने दिन गाड़े हैं कन्या, धरती झुराइ गयी हो।
नाहीं बरसै पानी एक बूँन, तो बादर सपन भये हो।
परिगै जनकपुर झूरा तो, परजा तलफै हो।
राजा जनक दरबार तो, पंडित विचारि बोलैं हो।
रानी सुन्हइला जौ हर जोतैं, तो इंदर किरपा करैं हो।
आधि कि रतियाँ रानी सुन्हइला, हर जोतैं निहवस्तर हो।
दया लागे इंद्र भगवान, तो पानी बरसावैं हो।
लागै है हरवा के फरवा, त सीता का जनम भये हो।
सिया जी के गोदिया उठाय, त राजा-रानी घर लाये हो।

संध्या से ही मंदोदरी प्रसव पीड़ा से व्याकुल हुई, रात भर

कष्ट में रही, भोर होते ही कन्या का जन्म हुआ। हे नारद जी! शुभ घड़ी का विचार करिए, देवी भवानी ने घर में जन्म लिया है। नारद जी शुभ घड़ी में, शुभ लक्षणा कन्या ने जन्म लिया, किंतु हे रावण! इसका जन्म तुम्हारे नाश का कारण होगा।

तुम्हारे कुल में कोई पानी देने वाला भी नहीं बचेगा। आकाशवाणी भी हुई- हे रावण! तुम्हारे घर फुलवारी लगी है, पर तुम अब कुम्हला जाओगे। आकाशवाणी सुनकर रावण नारद से उपाय पूछते हैं।

नारद जी- इस कन्या का त्याग ही कर देना आपके लिए उचित होगा। रावण घड़े में कन्या को रखकर जनकपुर की धरती में गड़वा देते हैं। जिस दिन से जनकपुर में कन्या को धरती में गाड़ा गया, धरती सूख गयी। पानी की एक बूँद भी नहीं बरसी। बादल स्वप्न हो गये, प्रजा त्राहि-त्राहि करने लगी। ज्योतिषियों ने कहा- यदि राजा जनक की महारानी 'सुन्हइला देवी' हल चलायें, इंद्र प्रसन्न होंगे और वर्शा होगी। अर्द्धरात्रि में महारानी निर्वस्त्र होकर हल चलाने लगीं, इंद्र देवता ने प्रसन्न होकर जल बरसाया। हल का फाल लगा, सीता का जन्म हुआ। सीता को गोद में लेकर राजा-रानी घर आये।

मोरि चन्द्रबदनि ऐसी रनियाँ, पीर मड़राय रही हो।
बहिरे से सासू आईं, यहर-वहर करै लागीं,
टहर-टुहुर करै लागीं हो,
बहुअरि! कहाँ बाटै सोठिया औ गुड़ा,
मैं छोट-बड़ा हम बाँघि देबौं रे।
तुहीं मोरी सासू से सासू, तुहिन ठकुराइनि हो।
सासू सैंया खेलैहैं नन्द लाल, निसरि के हम बाँधि लेबै हो।
बहिरे से जेठानि आईं, यहर-वहर करै लागीं,
टहर-टुहुर करै लागीं हो।
छोटकी कहाँ बाटै सिल्हिया और लोढ़वा,
मैं अरर-दरर पीसि देबौं।
तुहीं मोरी बहिनी से बहिनी, तुहिन ठकुराइन हो।
दीदी! सैंया खेलैहैं नन्दलाल, निसरि कै हम पीसि लेबै हो।
बहिरे से देवरानि आईं, यहर-वहर करै लागीं,
टहर-टुहुर करै लागीं हो।
बड़कौ! कहाँ बाटी तोरी सैंतनिया,
मैं सटर-फटर सैंति देबौं ना।
तुहीं मोरी छोटकौ से छोटकौ, तुहिन ठकुराइन हो,
छोटका! सैंया खेलैहैं नन्दलाल,
निसरि क हम सैंति लैबौं हो।

मेरी चन्द्र बदनी रानी है, पीर मंडरा रही है। बाहर से सास आयीं, कुछ इधर-इधर करने लगी। बहू ! कहाँ हैं सोंठ और गुड़, मैं छोटा-बड़ा लड्डू बना दूँगी। ओ मेरी सास जी! तुम मेरी सास हो, बड़ी हो।

मेरे पति बच्चे को सँभालेंगे, मैं निकलकर बना लूँगी। जेठानी आयीं, इधर-उधर करने लगीं। छोटी! कहाँ है सिलबट्टा? मैं मोटा महीन मेवा पीस दूँगी। जिठानी जी! तुम मेरी बहन हो, बड़ी हो, मेरे पति बच्चे को सँभालेंगे, मैं निकलकर पीस लूँगी। देवरानी आयीं, इधर-उधर करने लगीं। दीदी ! कहाँ है आपका पोंछा, मैं उल्टी सीधी रसोई पोंछ दूँगी। तुम मेरी देवरानी हो, छोटी हो, मेरे पति बच्चे को सँभालेंगे, मैं निकलकर पोत लूँगी।

बहिनी! बोलय लागीं रतन चिरइया,
होरिल बड़ा सुन्नर, बबुल बड़ा सुन्नर हो।
बहिरे से ससुरु आवैं, अंगना में ठाढ़ भये,
बहुअरि कौन किह्यू ब्रत, दान, बबुल बड़ सुन्नर।
भूखलि रह्यौं एकादसिया, दुवसिया के पारन।
हो ससुरू! विधि कै भूख्यों एतवार, बबुल बड़ सुन्नर।
बहिरे से सासु आवैं बहुअरि से पूछनि लागीं,
बहुअरि कौन किह्यू तपदान, बबुल बड़ सुन्नर।...
नदिया के तीरे-तीरे तुलसी लगायौं, औ नहवायों।
सासू! भूखल बभना जेवायों, होरिल बड़ा सुन्नर।
बहिरे से जेव आवैं, आँगन में ठाढ़ भये,
भयहु! कौन-कौन फल खायू, होरिल बड़ा सुन्नर हो।
अमवा त खायौ घवदियन, हमली, कपसवन,
हो जेठऊ! छिलि-छिलि खायो नारंगियाँ,
होरिल बड़ा सुन्नर हो।
बहिरै से ननदी आवै, अँगने में ठाढ़ि भईं हो,
भौजी! कौन छैल चित लायू, होरिल बड़ सुन्नर हो।
नहाइ धोइ भयों ठाढ़ि, त सुरुजू मनायों हो,
ननदी! पड़ी ननदोइया की परछैयाँ, होरिल बड़ा सुन्नर।

बहन! रत्न चिड़िया बोलने लगी, बच्चा बहुत सुन्दर है। बाहर से ससुर जी आये, आँगन में खड़े हुए।

बहू! कौन-कौन-सा व्रत, दान किया, बच्चा बहुत सुन्दर है। भूखी रही एकादशी, द्वादशी को पारण किया, ससुर जी! विधिपूर्वक इतवार व्रत किया, बच्चा बहुत सुन्दर है। बाहर से सास आयीं, बहू से पूछने लगीं- बहू! कौन-सा तप दान किया, बच्चा बहुत सुन्दर है। नदी के तीर-तीर तुलसी लगाया, नहलाया, सास जी! भूखे को भोजन कराया, बच्चा बहुत सुन्दर है। बाहर से जेठ आये, आँगन में खड़े हुए,अनुज वधू! कौन-कौन-सा फल खाया, बच्चा बहुत सुन्दर है। गुच्छे-गुच्छे आम खाया, गुच्छे-गुच्छे इमली, जेठ जी! छील-छील नारंगी खाया, बच्चा बहुत सुन्दर है। बाहर से ननद आयीं, भाभी से पूछने लगीं, भाभी! किस रसिक से मन लगाया? बच्चा बहुत सुन्दर है। नहा-धोकर खड़ी हुई, सूर्य से विनती की, ननद जी! ननदोई जी की परछाईं पड़ी, बच्चा बहुत सुन्दर है।

सौंठ-गुरा कै लड्डू मोरी मैया घर से आया है।
वहमाँ से एक लड्डू मोरी सासू ने चुरावा है।
अब भी पूछेन तब भी पूछेन, कभी न बताया है।
वह माँ से एक लड्डू मोरे देवरा ने चोराया है।
अब भी पूछेन तब भी पूछेन, कभी न बतावा है।
हाथौ बान्हा गौड़ौ बान्हा, कुअंना में लटकाया है।
उसमें से एक लड्डू मोरी ननदी ने चुराया है।
अब भी पूछेन तब भी पूछेन, कभी न बताया है।
हाथौ बान्हा गौड़ौ बान्हा, पीपर में लटकाया है।
उसमें से एक लड्डू मोरे राजा ने चुराया है।
अब भी पूछेन तब भी पूछेन, कभी न बताया है।
हाथौ बान्हा गौड़ौ बान्हा, कोठरी में करियावा है।
बन्द किया अंग्रेजी ताला, डण्डा चार लगावा है।

सोंठ गुड़ का लड्डू मेरी माँ के घर से आया। एक लड्डू सास ने चुराया। अब भी पूछा तब भी पूछा कभी न बताया है। एक लड्डू मेरे देवर ने चुराया। हाथ-पाँव बाँधा, कुआँ में लटकाया। एक लड्डू ननद ने चुराया, हाथ-पैर बाँधा, पीपल में लटकाया। एक लड्डू मेरे पति ने चुराया, हाथ-पैर बाँधा, कोठरी में बन्द किया। बन्द किया अंग्रेजी ताला, डंडा चार लगाया है।

बधाई गीत और सोहर गाने के बाद अन्त में आशीर्वाद दिया जाता है-

ऐसे मगन दिन रहे हमेसा।
सरिया म बाढ़ै गइया भैंसिया,कोठवा पै धान पुरान हमेसा।
बंसवाँ की नैया तूँ बाढ़ा मोरे ललना,
दुबिया यस छैलाव हमेसा।

ऐसे ही आनंद का दिन सदा रहे। गोशाला में बढ़ें गायें-भैंसें, कोठे पर धान पुराना सदा रहे। बाँस की तरह बढ़ो मेरे लाल! दूब सा तुम्हारा यश फैले। ऐसे ही आनंद का दिन सदा रहे।

लाल मोरे खेलैं अंगनैया छमेछम बाजे पैजनियाँ
द्वारे पै लाल जी कै बाबा खुसी भये,
औ महले आजी रनियवां छमे छम बाजै पैजनियाँ।
द्वारे पै लाल जी के बाबू खुसी भये,
औ महले मैया रनियवां छमेछम बाजे पैजनियाँ।
द्वारे पै लालजी के चाचा खुसी भये,
औ महले चाची रनियवां छमेछम बाजे पैजनियाँ।
द्वारे पै लाल जी कै फूफा खुसी भये,
औ महले फुवा रनियवां छमेछम बाजे पैजनियाँ।
द्वारे पै लाल जी कै नाना खुसी भये,
औ महले नानी रनियवां छमेछम बाजे पैजनियाँ ।
द्वारे पै लाल जी के मामा खुसी भये,
औ महले मामी रनियवां छमेछम बाजे पैजनियाँ।
द्वारे पै लाल जी के मौसा खुसी भये,
औ महले मौसी रनियवां छमेछम बाजै पैजनियाँ।

लाल मेरा आँगन में खेल रहा छम-छम बाज रही पैजनियाँ। द्वार पर लाल जी के बाबा खुश हैं, महल में दादी रानी, द्वार पर लाल जी के पिता खुश हुए, महल में माता रानी, इसी प्रकार सभी सम्बन्धी।

सीता ठाढ़ि जंगल पछितायँ, लवकुस बन मा भये।
जौ बन होते ससुरु राजा दसरथ,
देते अजोधिया लुटाय, लवकुस बन मा भये।
जौ बन होती सासु कौसिल्या,
देतीं मोहरिया लुटाइ, लवकुस बन मा भये।

जौ बन होते देवर राजा लछिमन,
देते बँसुरिया बजाय, लवकुस बन मा भये।

सीता वन में खड़ी पछता रही हैं, लव-कुश वन में हुए। यदि वन में मेरे ससुर राजा दशरथ होते तो अयोध्या का राज-पाट लुटा देते। लव-कुश वन में हुए। यदि वन में सास रानी कौशल्या होतीं,तो मोहरें लुटा देती। यदि वन में मेरे देवर लक्ष्मण होते, तो वंशी बजा देते, लव-कुश वन में हुए।

श्रीकृष्ण के जन्म का हर्ष ब्रजभूमि में फैल जाता है-

आज गोकुल में नंदलाल पैदा भए।
वसुदेव जी की आँखों के तारे भये,
मातु देवकी के दिलदार पैदा भये।
नन्द बाबा की आँखों के तारे भये,
मातु देवकी के दिलदार पैदा भये।
गोपी ग्वालों की आँखों के तारे भये,
बृजवासिन के दिलदार पैदा भये।

आज गोकुल में नन्दलाल उत्पन्न हुए। वसुदेव बाबा की आँखों के तारे, देवकी माँ के दिलदार ने जन्म लिया। नन्द बाबा की आँखों के तारे, यशोदा माँ के दुलारे ने गोपियों-गोपों के दिलदार ने जन्म लिया।

नामकरण

खोलैं गरग मुनि पोथिया त नावँ धरावैं हो,
राजा! राम और लछिमन की जोड़ी,जगत जस पइहैं हो।
राजा! भरत सत्रुघन दोनों भाई ,त भगत कहइहैं हो।

खोलें गर्ग मुनि पोथी,नाम बतायें। राजा! राम-लक्ष्मण की जोड़ी,जगत में यश पायेगी। राजा! भरत-शत्रुघ्न की जोड़ी, भक्त कही जायेगी।

अन्नप्राशन

सवाहि महिनवाँ क भै राम चारिउ भइया,
त ओठ चटावन हो।
रामा सोने के कटोरवाँ म खीर,त गुरु जी खियावैं हो।
राजा दसरथ मोहर लुटावैं, कौसल्या रानी अभरन हो।

सवा महीने के हुए राम चारों भाई, तो हुआ अन्नप्राशन। राम को सोने के कटोरे में खीर, गुरू जी खिला रहे। राजा दसरथ लुटा रहे मुहरें, रानी कौशल्या आभूषण लुटा रहीं। मंगल गीत गाने वाली स्त्रियों की विदाई होती है। उन्हें नेगचार और न्योछावर मिलता है। इसी दिन ढोलक पूजी जाती है, जिसमें ढोलक से बार-बार हर संस्कार के अवसर पर आने का आमंत्रण दिया जाता है-

ढोलक रानी मोरे नेवते आइउ,
ढोलक रानी मोरे नित उठि आइउ।
भये म आवउ छठ्ठी म आइउ,
ढोलक रानी मोरे बरही म आइउ।
मुड़नी म आइउ छेदन म आइउ,
ढोलक रानी तू चढ़ावन म आइउ।
जनेउ म आवउ बियाहे म आइउ,
ढोलक रानी तूँ गवने म आइउ।
नाती में आइउ पनाती म आइउ,
ढोलक रानी तूँ छनातिन म आइउ।

ढोलक रानी मेरे निमंत्रण पर आना। ढोलक रानी हमारे घर नित्य आना। जन्म में आना, छठी में आना। ढोलक रानी मेरे घर बरही में आना। मुण्डन में आना, कर्णभेद (छेदन) में आना। ढोलक रानी अन्नप्राशन में आना। जनेऊ (यज्ञोपवीत) में आना, विवाह में आना। ढोलक रानी तुम गवने (द्विरागमन) में आना हमारे नाती-पोतों के घर आना, पड़पोतों (प्रपौत्रों)के घर आना। ढोलक रानी हमारे घर नित्य आना।

इस प्रकार सोलह संस्कारों में से प्रथम संस्कार जन्म संस्कार के लोकगीतों की मंगल ध्वनियों से पूरा होता है।

अवधी संस्कार गीत

डॉ. अंशुबाला मिश्र

लोक जीवन में व्याप्त विभिन्न परम्पराओं एवं रीति-रिवाजों के पालन की परिपाटी बहुत प्राचीन है। यही रीति-रिवाज एवं परम्पराएँ भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। लोक-जीवन प्रकृति की क्रोड़ में बसता है, इसलिए प्रकृति में प्रतिफलित होने वाली प्रत्येक घटनाओं का प्रत्यक्ष प्रभाव लोक जीवन में देखा जा सकता है। प्रकृति की इस हलचल में मानव जीवन से लेकर वनस्पतियों तक प्रत्येक गतिविधियाँ प्रभावित होती हैं। बीज प्रस्फुटन से लेकर लहलहाते एवं फूलों-फलों से लदे वृक्षों, कलकल करती-बहती हुई सरिताओं, कोयल की कूक, पक्षियों का कलरव सब कुछ लोक जीवन का अविभाज्य अंग है। इसी प्रकार मनुष्य के जन्म से लेकर उसकी मृत्यु तक की जीवन यात्रा में पड़ने वाले विभिन्न पड़ावों को लोक जीवन अपनी शैली में व्याख्यायित करता है। लोक-जीवन में प्रत्येक संस्कारों के अपने अलग-अगल महत्त्व हैं और प्रत्येक संस्कार को सम्पन्न करने की अलग-अगल उम्र एवं परिस्थितियों का निर्धारण है। किसी संस्कार के परिपालन में उल्लास है, तो किसी में अवसाद। किंतु मृत्यु को छोड़कर सारे संस्कार उल्लास पूर्ण खुशियाँ बिखेरने वाले हैं। इनकी कुल संख्या सोलह मानी गई है। स्त्री के सोलह श्रृंगारों की तरह मानव जीवन के सोलह संस्कार लोक-जीवन के आभूषण हैं।

मानव के पृथ्वी पर आने के संकेत मात्र से प्रारम्भ होने वाले जन्म के संस्कार की खुशी एवं उसके आयोजन की समयावधि सबसे अधिक होती है। शिशु के गर्भ में आते ही घर में जन्म की परिकल्पना बलवती होने लगती है, फिर जन्मोत्सव की रूपरेखा अमूर्त रूप से मानव मन में अपना ताना-बाना बुनने लगती है, और फिर आरम्भ हो जाता है लोक परम्पराओं का क्रियान्वयन। घर की बुजुर्ग महिला के टोटके, शुभ-अशुभ की व्याख्या और व्यवहार रूप में लोक रीतियों के अनुसार बुरी छायाओं से बचाव के लिए अनुष्ठान

एवं अन्य प्रयोजन का दौर शुरू हो जाता है। जन्मोत्सव के पहले ही जन्म के गीत गाना शुरू हो जाता है। प्रत्येक प्रांत एवं क्षेत्र में इन गीतों के अपने अलग-अलग प्रसंग होते हैं। अवध प्रांत में प्रत्येक अजन्मा-जन्मा बालक राम होता है, और ब्रज में प्रत्येक नवजात कृष्ण। लोकमान्यता बच्चे का भविष्य राम-कृष्ण सा यशस्वी रूप में कल्पित करती है, और उसी को आधार मानकर अपनी कल्पना को अभिव्यक्ति देती है।

अवध प्रांत में पुत्र जन्म के प्रत्येक लोक गीतों में पुत्र राम, माता कौशल्या और पिता दशरथ की प्रतिमूर्ति से कल्पित किये गये हैं। पिता तो दशरथ हो सकते हैं, परन्तु माता कैकेयी नहीं हो सकती, क्योंकि संस्कार गीतों के माध्यम से बालक में मानव जीवन के शुभ संस्कार प्रत्यारोपित किये जाते हैं, अत: इस शुभ कार्य में ईर्ष्यालु माँ कैकेयी का कोई स्थान नहीं है। पृथ्वी पर जन्म लेने वाले और जन्म ले चुके शिशु की माँ कौशल्या सी ममतामयी और पति परायण होनी चाहिए, न कि कैकेयी सी कठोर एवं ईर्ष्यालु। इन्हीं लोक कल्याणकारी अवधारणाओं को धारण किये हुए अवध प्रांत के जन्म के संस्कार गीत (सोहर) बहुत ही मर्मस्पर्शी, संवेदनशील एवं आदर्शपूर्ण होते हैं। इन संस्कार गीतों में कल्पना के साथ-साथ भावना है, उल्लास है, स्वरालाप है, ममता के आँसू हैं और विद्यमान हैं जीवन की अनंत आकांक्षाएँ। शिशु जन्म के साथ गाँव के आँगन में मधुर कंठ से सोहर गाती महिलाएँ ममता के प्रवाह को अलौकिक वेग प्रदान करती सी नजर आती हैं। कहीं प्रसव पीड़ा की आह है तो लाल को दुलारती-पुचकारती लोरी और कहीं बधावा के शुभ स्वरों की गूँज है। अवधी के एक लोकगीत (सोहर) में रानी कौशल्या सरयू मैया के तट पर खड़ी होकर पुत्र कामना की मन्नत मानती है, और राजा दशरथ से पुत्र जन्म की खुशी में धन-दौलत की बात कहती है-

नदिया किनारे कौसिल्या रानी सरजू मनावईं हो
सरजू जउ हमरे राम जनमिहई त घटवा बंधउबईं हो।
जाउ तेवइया (स्त्री) घर आपन मोहि नाहि भावइ हो
तेवइ आजु के नवयें महिनवा होरिल तोहरे जनमइ हो।
भीतरा से निसरी कौसिल्या रानी सुनहु राजा दसरथ हो
राजा जउ हमरे राम जनमिहई त का तू लुटउबेउ हो।
सोनवा लुटउबइ अढ़इयन रूपवा पसेरियन हो
रानी सगरिउ अजोधिया लुटउबइ रामजी के जनमत हो।
आठ महीना के भीतत नवये के लागत हो
अब बाजइ लागी अनधन बधैया गाबईं सखी सोहर हो।

हे सरयू मैया! जब मेरे घर राम का जन्म होगा, तो मैं आपका पक्का घाट बनवाऊँगी। रानी कौशल्या की बात सुनकर, उनकी पीड़ा जानकर, नदी उन्हें घर जाने को कहती है। चूँकि प्रकृति सदैव से मनुष्य की सहचरी रही है, इसलिए मनुष्य अपने सुख-दु:ख उससे बाँटता रहा है। यहाँ नदी से कौशल्या माता अपना दु:ख कह रही हैं और नदी (पावन सरयू) उनके दु:ख दूर करने और नवें माह में पुत्र होने का आशीर्वाद भी देती है। महल के भीतर से कौशल्या, दशरथ से पूछती हैं कि- हे राजा! जब राम का जन्म होगा तो तुम क्या-क्या लुटाओगे, अर्थात् शिशु जन्म पर दान-पुण्य करने की अनादि काल से परम्परा रही है। इसी परम्परा का निर्वाह इस सोहर में भी अभिव्यक्त है। राजा दशरथ कहते हैं कि हे रानी! सोना अढ़इया के अनुपात में (ढाई किलो) चाँदी पसेरी भर (पाँच किलो) लुटाऊँगा। यहाँ तक की राम जन्म पर मैं सारी अयोध्या का राजपाट न्यौछावर कर दूँगा। नवें माह में पुत्र के जन्म लेते ही बधाईयाँ बजने लगीं और सखियाँ जन्म के गीत (सोहर) गाने लगीं।

बाग-बगीचे की शोभा मधुमास में है और मधुमास की महत्ता कोयल की मधुर कूक से है। मायके में कितने ही भाई-भतीजे हो, परन्तु स्त्री को माँ के बिना मायका निरर्थक लगता है। इसी प्रकार पलंग पर कितना ही मूल्यवान, सुखदायी बिस्तर बिछा हो, किंतु पिया के बिना वह सेज व्यर्थ है। इसी तरह स्त्री भले ही अपने दोनों हाथों से भाई और भतीजे को गोदी में बैठाकर दुलार करे, परन्तु एक स्वयं की संतान के बिना उसका जीवन रूपी घर-आँगन सूना रहता है। अवधी के एक लोकगीत में इसी यथार्थ को उद्घाटित किया गया है-

एक सौ अमवा लगायऊँ सवा सौ जामुन हो
रामा तबहूँ न बगिया सोहावन एक रे कोईल बिनु।
नैहर में पाँच भइया त सात भतीजा बारे हो
रामा तबहुँ न नैहर सोहावन एक रे मयरिया बिनु।
एक कोरा लिहालों मैं भइया, दूसर कोरा भतीजा हो
रामा तबहुँ न गोदिया सोहावन अपने होरिल बिनु
अपने ललन बिनु।

पलंग पर सेजिया डसउलें त फूल बिछड़ले
रामा तबहूँ न सेजिया सोहावन एक रे बलम बिनु।

इसी प्रकार से एक अन्य सोहर गीत में कुआँ की सार्थकता पनिहारिन के पानी भरने से, बाग-बगीचे की सार्थकता राहगीर के फल खाने से, पोखर की सार्थकता गायों के पानी पीने से और स्त्री जन्म की सार्थकता कुल को सम्वर्द्धित करने वाले वंश को आगे बढ़ाने वाले पुत्र के जन्म से सार्थक होना बताया गया है, जिससे उसका जीवन आनंदित हो उठता है-

कुअवाँ खोदाए कवन फल हे मोरे साहेब
झोंकवन भरैं पनिहारिन तबै फल होइहैं।
बगिया लगाए कवन फल हे मोरे साहेब
रहिया-बटोहिया अमवा जे खेहैं तबै फल होइहैं।
पोखरा खोदाए कवन फल हे साहेब
गौआ पियें जूड़ पानी तबै फल होइहैं।
तिरिया जनमे कवन फल हे मोरे साहेब
पुतवा जनम जब लेइहैं तबै फल होइहैं।
पुतवा के जनमे कवन फल हे मोरे साहेब
दुनिया अनंद जब होइहैं, कुल जब बाढ़ई तबै फल होइहैं।

पुत्र जन्म के समय संस्कारों के निर्वहन करने वालों को नेग देने की परम्परा है। नाईन का, ननद का, देवर का, जेठ का एवं गुरू का नेग। सभी सम्बन्धियों को रिश्तों के अनुरूप दिया जाने वाला नेग एक पारम्परिक उपहार है। स्त्री को प्रसव पीड़ा के समय ढाँढस दिलाने वाली दाई से लेकर, माई (माँ) तक का अपना कर्त्तव्य होता है। वनवास के समय लव-कुश के जन्म के समय में उपस्थित परिस्थितियों में सीता के संशय एवं व्यथा कथा में वनदेवी उनकी सहचरी एवं दाई के रूप में उनका दु:ख बाँटती है। संस्कारों के अनुरूप पुत्र जन्म रोचन (पिसी हल्दी का लेप) लगाया जाता है और शुभ के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त होता है। सीता पहला रोचन गुरू को देने की बात करती हैं। रोचन मिलते ही पुत्र-जन्म का संदेश प्राप्त होता है। गुरूजी (वशिष्ठ मुनि) राम-लक्ष्मण के साथ सीता को मनाने वन में जाते हैं। सीता जी गुरू की आज्ञा व आग्रह पर दस कदम चलकर धरती के अंदर समा जाने को तैयार हैं, परन्तु अयोध्या वापस जाने को सहमत नहीं है। इस प्रसंग को दर्शाता अवधी का यह लोकगीत बहुत ही मर्मस्पर्शी है-

छापक पेड़ छिउलिया त पतवन घन बन हो
रामा सेहिं तर ठाढ़ी सिया रानी बहुतइ विपति में परीं।
के मोरी जागइ रइनिया त के दुख बाँटइ हो
रामा के देइहीं सोने क चेरुउवा त के मोरी धगरिनि हो।
चुप रहु हो सीता चुप रहु चुप रहु हे सीता हो
सीता हम तोहरी जागब रइनिया हमही दुख बाँटव हो
हम देबइ सोने क चेरूउवा हमहीं तोहरी धगरिनि हो।
जउ पूत होतेउ अजोधिया राजा दसरथ घर हो
राजा सगरिउ अजोधिया लुटउते कौसिल्या रानी अभरन हो।
जउ पूत होतेउ बनहीं में बनही फल खायेउ हो
बेटा कुस रे ओढन कुस दासन
कुसही वन खेलेउ हो।
नग्र ही नग्र के नउवा बेगिहि चला आवउ हो
नउवा सिलि धोई पीसहु हरदिया रोचन पहुँचावहु हो।
पहिला रोचन दिहउ गुरुजी दूसर राजा दसरथ हो
नउवा तीसरा रोचन देवरा लछिमन त राम जिनि बतायेउ हो।
छोटे कदम के रे डाल त राम दतुइन तोरैं
लछिमन भर-भर होइ तोहरा माथ रोचन कहाँ पायेउ हो।
भइया भौजी हमारी सीतारानी दूनउ कुल राखही हो
भइया भौजी के भये नंदलाल रोचन सिर भभकइ हो।
अगिले के घोड़वा बशिष्ठ मुनि पीछे राजा रामचन्द्र हो
अब अलरे बछेड़वा देवरा लछिमन त सीता
के मनावइ चले हो।
तोहरा कहा गुरूजी करबइ परग दस चलबइ हो
गुरूजी फाटत धरती समाबइ अजोधिया न जाबइ हो।

संदर्भ

1. कविता-कौमुदी, तीसरा भाग-ग्रामगीत, सम्पादक : रामनरेश त्रिपाठी
2. हिन्दी प्रदेश के लोकगीत : डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय
3. पूर्वांचल के लोकगीत : बी.एल. द्विवेदी

भोजपुरी गीतों में जन्म

डॉ. आद्याप्रसाद द्विवेदी

साधारण शब्दों में संस्कार का अर्थ शुद्धि और परिष्कार से है, जिससे मनुष्य का जीवन दैहिक और भौतिक रूप से सुव्यवस्थित हो सके। जन्म से मनुष्य पूर्णत: असंस्कारित होता है, संस्कारों के द्वारा वह परिष्कृत होकर मणि की भाँति दैदित्यमान हो जाता है। संस्कार शब्द कुअं धातु में 'घ' प्रत्यय को यो से व्युत्पन्न होता है? जिसका अर्थ पवित्रता अथवा शुद्धता से है। हिन्दू समाज में संस्कारों का प्रचलन अत्यंत प्राचीन काल से माना जाता है। इन संस्कारों की संख्या भी कई बताई गई है। किन्तु हिन्दू धर्मशास्त्रकारों ने षोडश संस्कारों का उल्लेख किया है तथा प्रत्येक व्यक्ति के लिये इनका सम्पादन आवश्यक बताया है। भोजपुरी लोकगीतों में इन षोडश संस्कारों में से केवल छ: संस्कारों का ही उल्लेख विशेष रूप से पाया जाता है। इन संस्कारों की संख्या इस प्रकार है- पुत्र जन्म, मुंडन, यज्ञोपवीत, विवाह, गवना और मृत्यु संस्कार।

भोजपुरी संस्कार गीत आनुष्ठानिक गीत भी कहलाता है, जिसके अर्न्तगत विभिन्न संस्कारों से सम्बन्धित गीत और धार्मिक गीत भी आ जाते हैं। इन संस्कारों में विशेष महत्ता पुत्र के जन्म संस्कार का होता है। भोजपुरी लोकजीवन में स्त्री का महत्त्व उसके पुत्रवती होने पर ही बढ़ता है। यदि कोई स्त्री बंध्या है, तो परिवार और समाज में उसकी कद्र नहीं होती है। माता का स्थान नारी जीवन में सबसे महत्त्वपूर्ण एवं प्रतिष्ठित है। मातृत्व में ही नारी की पूर्णता है। नारी का हृदय कोमल भावनाओं से भरा हुआ है और संतान होने के पश्चात् अपने हृदय का सारा प्रेम वह उस पर उड़ेल देती है। संतान की लालसा स्त्रियों में बड़ी प्रबल होती है-

गंगा गहवर पिअरी चढ़इवैं, होरिल जब होइहें हो।
गंगा देउ भगीरथ पूत, जगत जस गावइ हो।।

हिन्दू स्त्री का लक्ष्य कितना ऊँचा है। पुत्र के जनम के पहले ही उसका आदर्श स्थिर कर रखना यह हिन्दू गृहस्थ की एक सुन्दर छटा है। गृहिणी पद पर समादृत होने के लिये भी उसे संतानवती होने की आवश्यकता है। नि:संतान गृहिणी कितनी भी कुशल क्यों न हो, उसे लोग आदर की दृष्टि ने नहीं देखते हैं। एक भोजपुरी लोकगीत में चित्र है, जिसमें रानी खिड़की पर बैठी हुई है, उससे राजा कहते हैं कि हमारे कोई संतान नहीं है, इसलिये हम जोगी होंगे। तब रानी महल के पिछवाड़े रहने वाले बढ़ई से कहती है कि वह एक लकड़ी का पुतला गढ़कर ला दे, जिससे वह अपना मन बहलाये–

मोरे पिछवरवाँ बढ़इया बेगि ही चलि आवहु हो,
बढ़ई गढ़िदेउ कांठ क बलकवा,
मैं जिअरा जुड़ाउँ, मन समुझावहुँ हो
कांठे क बालक गढ़ दिहलें, अगने धरि दिहलें हो
बाबुल मोरे अंगने रोइ न सुनावौं, मैं बाझिनि कहाउँ रे
दैव गढ़ल जो मैं होतउ तो रोइ सुनउतउँ हो
रानी बढ़ई को गढ़ल होरिलवा रोवन नहि जानइ हो।।

इस गीत में संतानविहीन माँ का कैसा करुणापूर्ण दृश्य है, नि:संतान होना नारी जीवन में सबसे बड़ा कलंक है। बंध्या का सभी तिरस्कार करते हैं, प्रकृति भी उसे ग्रहण करने से संकोच करती है। यहाँ तक कि पृथ्वी जिसने सबको धारण किया है, वह भी कहती है–

बाँझिनि कहुँका जो हम राखि लेइब,
हमहूं तोइब असर हो।

संतान–सुख से वंचित भारतीय नारी का हृदय ग्लानि से भरा रहता है। इस अभिश्राप से उबरने के लिये वह कठोर तपस्या करती है, उसकी तपस्या जब तक फलवती नहीं होती, सृष्टि का सरा सौन्दर्य बेमतलब होता है। भोजपुरी के एक सोहर गीत में एक अभागिन नारी का चित्र किस करुणापूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया है। यमुना में जल विहार करती स्त्रियों की दृष्टि उनके उल्लास से उदासीन रोती हुई एक स्त्री पर पड़ती है। उसके दु:ख का कारण पूछा जाता है, क्या सास–ससुर ने तुझे दु:ख दिया है या नइहर की याद सता रही है। कहीं तुम्हारा पति तुम्हें अकेला छोड़कर परदेस तो नहीं चला गया है। किस दु:ख से तू रो रही है? अभागिन स्त्री सहज सहानुभूति पाकर अपनी व्यथा बतलाती है– 'न मेरे सास–ससुर ने कष्ट दिया है, न मेरा नइहर दूर है और न प्रियतम विदेश गया है। उदास कोख–सूनी गोद मेरी एक मात्र व्यथा है–

चलहुं न सखिया सहेलरि जमुना नहायहुं हो।
सखिया यमुना के विमल नीर कलस भरिला वहुं हो।।
केहू सखी जल भरे केहू सखी मुँहवा धोवलि हो।।
आहो केइ सखी बढ़ नहाई तिरिया एक रोवेली हो।
की तोहे सास–ससुर दु:ख देले, नइहर दूर बाड़े हो।
बहिनी किया तोर कन्त विदेश कवन दु:ख रोवेलू हो,
ना मोरे सासु–ससुर दु:ख देले, ना नइहर दूर बाड़े हो।
नहि मोरे कन्त विदेसे, कोखी के दु:ख रोइली हो।

सोहर में आगे जमुना में स्नान करने वाली स्त्रियाँ कहती हैं–

सास–ससुर नहीं मनलू, ननद ना दुलारेलु हो
ससुर अलोत देइ ना चललू, बाझिनि होइ गइलू नु रे।

दारूण अभिश्राप से उबरने के लिये बहू अपने आचरण को बदलने की प्रतिज्ञा करती है कि सास–ससुर का आदर करूँगी, ससुर को अपेक्षित सम्मान दूँगी, ननद को नेह–छोह से नहला दूँगी–

सास–ससुर अब मानबि, ननदी दुलारबि नु रे
ललना ससुर अलोत देइ चलबि, बाझिनि रहि गइली नु रे।।

सोहर गीत संतान के अभाव, संभावना और उपलब्धि उल्लास को व्यंजित करते हैं। घर–आँगन में ही नहीं, सम्बन्धियों के घर भी कोई स्त्री जब अंत:सत्वा होती है, तभी से संभावना और उल्लास का प्रतीक सोहर गीत के माध्यम से आँगन गूँजने लगता है। संभावना की अगुवानी सोहर गीत द्वारा की जाती है। सोहर शब्द की उत्पत्ति 'शोभन' से माना जाता है। कुछ लोग इसकी व्युत्पत्ति प्रसूतिका गृह से भी मानते हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामलला नहछू से सोहर के लिए 'सोहिलो' शब्द का प्रयोग किया है तथा भगवान राम के जन्म के समय इन गीतों को गाने का उल्लेख किया है–

जब स्त्री गर्भ धारण कर लेती है तो उस समय भी एक संस्कार सम्पन्न होता है, जिसे गर्भाधान संस्कार कहते हैं। इस अवसर पर भी सोहर गीत गाए जाते हैं, जिनमें सुन्दर पुत्र की प्राप्ति के लिये देवी-देवताओं से आराधना की जाती है कि हमें सुन्दर सा, अच्छा सा पुत्र दें, ताकि हमारा वंश आगे बढ़ सके। सोहर गाने के कई तरीके हैं। उसमें अक्सर बहू सास से कुछ कहती है या फिर सासु माँ देवताओं से आराधना करती हैं कि हमारे यहाँ पुत्र की प्राप्ति हो। सोहर गीतों में ऐसा आनंद प्राप्त होता है कि अपने ही द्वारा अपनी आकृति को जन्म देकर, स्त्री उस दारुण प्रसव की पीड़ा भूल जाती है। सोहर ऐसे गीत हैं जब इसके स्वर कानों में पड़ते है तो वह अत्यंत सुखदायी और मार्मिक लगते हैं। एक सोहर गीत का नमूना देखें-

मचिया जे बइठेली सासु त बहुआ से पूछेली हो
मोरी बहुआ कवन तय कइलू, कवन देव पुजलू हो
मोरी सासु सुरज देव पूजलों, सुरज जल देहलों
त होरिलवा भइले सुन्दर हो।।
मचिया बइठलि उत ननदी, बहुआ से पूछेली हो
आहो भउजी कवन-कवन फल खइलू,
होरिलवा बड़ सुन्नर हो
खइलों मैं अमवा-इमालिया भरूरू घवद केरवा नु हो।
आहो फोरि-फोरि खइलो नरियरवा, होरिलवा भइले सुन्नर हो।

अंत:सत्वा स्त्री के नेम-व्रत और स्वाभाविक भोजन-रूचि का इस सोहर में संकेत है। माताओं का अनुभव है, अन्त:सत्वा काल में खान-पान की रूचि बदल जाती है। इस दशा विशेष को लक्ष्य पर भी कई सोहर गीत गाये जाते हैं। पुत्रोत्पत्ति के बाद गाये जाने वाले सोहर में पुत्र की सर्वांगीण उन्नति की कामना-प्रार्थना का सहज संकेत मिलता है। यह स्वाभाविक है कि जैसे दीये बिना मंदिर और सिंदूर बिना मांग सूनी लगती है, वैसे ही पुत्र बिना गोद सूनी लगती है। मगर गोद का उल्लास यदि देश की सेवा में नियोजित न हुआ तो कोख बदनाम हो जाती है-

सून लागे दिया बिनु मंदिल, माँगे सेंदुर बिनु हो।
ललना ओइसन सून तिरिया गोद से एक बालक बिनु हो।
सून लागे महल अटरिया, अवरू खेत धरतिया नु हो।
ललना नाहीं नीक लागे सुख भोग हो एक संतति बिनु हो।

× × × ×

देहु-देहु सखिया असीस ललन मुँहवा चूमहू हो।
रामा गोदिया में लेइ लपटावहु हियरा जुड़ावहु हो
भारत माता के होइहें सेवकवा त मोर पूत हो।
रामा अस पूत जुग-जुग जीयस त इहे हम असीसत हो।।

एक सोहर है, जिसमें गर्भधारण के समय बहू भोर में सपना देखती है और अपनी सासु माँ से उस सपने का जिक्र करती है, क्योंकि आज भी भोर में देखे हुये सपने की बातों में सच्चाई की मान्यता मिली हुई। यह सोहर पूर्वी उत्तरप्रदेश के गाँवों में बहुत गाया जाता है-

सूतल रहलीं अटरिया, सपन एक देखेली हों।
सासु सपन देखीलें बड़, अजगुत सपन बड़ सुन्दर हो
धनवाँ त देखीलें टुडाँरल, मनवा ढेमारल हो
बड़वर गज हाथी ठाड़ दुअरवा चढ़ल राजा दसरथ हो।
धनवा त हवे तोरे धनवाँ औ मनवो संतति तोर हो।
बड़वर गज हाथी ठाड़ दुअरवा चढ़ल परमेश्वर हो।

पुत्र जन्म के समय गरीब-अमीर सभी के घर अत्यंत उत्साह और आनंद का वातावरण रहता है। जब किसी के घर पुत्र जन्म लेता है तब घर-गाँव की स्त्रियाँ एकत्रित होकर सोहर गीत गाती हैं। उस अवसर मिठाई, पान, इलायची, सोना-चाँदी जैसी जिसकी सामर्थ्य हो उसी के अनुरूप वस्तुएँ न्यौछावर की जाती हैं। एक सोहर गीत देखें-

आधि राति गइलों पहर राति, होरिणा जनम लिहवे हो
बाजो लागल अनंद बधावा, महल उठे सोहर हो।
सासु जी कहेली बहुअरि ननद गाल चूमेली हो
अवर ललना जेकर बाटीं बिदुअता से हो दुलरावेले हो
जहु घरे नउवा जनायहु त सोनवा लुटाइब हो।
धगड़िन जाहु घरे लक्ष्मी जन्महिं अवध रंग चूनर हो।

सोहर गीत का क्रम जन्म के दिन से लेकर लगातार बारह दिन तक गाया जाता है। सम्पन्न हो या विपन्न, पुत्र जन्म के अवसर पर सभी के मन में उल्लास भरा रहता है। इसके विपरीत पुत्री के जन्म के समय परिवार में शोक का वातावरण छा जाता है, क्योंकि इस क्षेत्र की निर्धनता के कारण पुत्री के लिये योग्य वर ढूँढना और दान-दहेज के लिये धन की व्यवस्था बड़ी विकट

समस्या रहती है। एक लोकगीत की निम्न दो पंक्तियों में पुत्री के जन्म से स्वयं उसकी माता बहुत दु:खी है और उसके साथ-साथ उसके पति और बेटों का मन भी उदास हो जाता है-

जाहि दिन बेटी तोहरो जनमवाँ,
सोनवाँ संकल पीले आजु तो,
आरे का तोहरा बाबा हो,
सोनवाँ कल पेले बेटों के बदन मलीन।

भोजपुरी अंचल में गरीबी ज्यादा है, दूसरे शादी के लिये तिलक-दहेज की समस्या जटिल है, जिसके कारण इस क्षेत्र में कन्या को अशुभ माना जाता है। वर की तलाश में पिता जब थक जाता है और बेटी बाढ़ की तरह बढ़ने लगती है, तब माता का हृदय दु:ख से तड़पने लगता है। जैसे बेटी को जनम देकर उसने भारी अपराध कर दिया हो। उसकी पीड़ा इतनी तीव्र होती है कि उसका उन्मथित चित्त हाहाकार कर उठता है। वह सोचने लगती है कि यदि मेरी कोख से बेटी का जन्म होगा, यह बात अगर मैं पहले जान गई होती तो मिर्च पीसकर पी जाती, जिसकी कटु उष्णता से मेरी कोख से जन्म लेने वाली पुत्री बाहर आने से पहले ही समाप्त हो गई होती। एक भोजपुरी लोकगीत में बेटी को लक्ष्य कर माँ कहती है- तेरे जन्मते ही घर में भादों की अंधेरी रात उतर आयी। सास, ननद प्रसूति-गृह में दीया तक नहीं जलायी और पति देव भी विमुख होकर कुबोल बोलने लगे हैं। आँगन में ऐसी उदासी उतर आयी है कि लगता है, देवता कहीं अन्यत्र चले गये हैं। बेटी जब तक तेरा विवाह नहीं हो जाता, तेरे बाप का बोझ नहीं उतरेगा और उनके व्यवहार की रूखाई बनी रहेगी। भगवान न करें किसी को भी बेटी न हो-

जाहि दिन बेटी तोहरो जनम भइले, भइलें भदउवाँ के रात हे
सासु ननद घरे दिअरो न बारेलीं, उहो प्रभु बोले ले कुबोल
जाहि दिन बेटी हो तोहरो विआह होइहें,
बाबा के हिरदया जुड़ाइ ए
धन-धन बेटी हो तोहरो जनम भइलें,
देवतन लिहवें बसोढ़ ए।।

× × × ×

जाहु हम जनितीं कि घिआ कोखि जनमि हें,
विहितो हम मरिचि झरार ए।
मरिचि के झारे-झुरे घिया मरि जइती,
छुति जइते गरेहआ संताप ए।।

एक ओर यह ग्लानि है, दूसरी ओर बेटी का जन्म न हो तो घर-आँगन सूना-सूना लगता है। माँ की साध तड़पती रहती है- तोहरे बिनु सून अँगनवां ए बेटी।

भोजपुरी समाज में पुत्री का जन्म आनंद नहीं, बल्कि विषाद का अवसर माना जाता है। अत: उसके जन्म पर सोहर के गीत नहीं गाये जाते और न कोई उत्सव मनाया जाता है। पुत्री को जन्म देने के कारण माता तिरस्कार दृष्टि से देखी जाती है और उसके साथ सम्मानोचित व्यवहार भी नहीं किया जाता है। हालाँकि आज के समय में अब इस प्रकार की मानसिकता में तेजी से परिवर्तन हो रहा है।

पुत्र जन्म के अवसर पर गाये जाने वाले सोहर गीतों में कुछ ऐसे भी गीत हैं, जिनमें पुत्र जन्म का उछाह और धन सम्पत्ति लुटाने का वर्णन नहीं है, अपितु उसमें सामन्त वर्ग के प्रति शोषित वर्ग का आक्रोश व्यंजित हुआ। अवधी और भोजपुरी क्षेत्र का बहुप्रचलित सोहर गीत देखें-

छापक पेड़ छिउलिया त पतवन गहवर।
अरे रामा तेहितर ठाढ़ि हरिनियाँ त मन अति अनमनि हो।।
चरतइ चरत हरिनवाँ त हरिनी से पूछइ हो।
हरिनी की तोर चरहा झुरान कि पानी बिनु मुरझई हो।।
नाहीं मोर चरहा झुरान न पानी बिनु मुरझई हो।
हरिना आजु राजाजी के छट्टी तुमहिं मारि डरिहैं हो।।
मचिये बैठे कौसिल्ला रानी, हरिनी अरज करइ हो।
रानी मसुवा त सिझहीं रसोइया खलरिया हमें देतिऊँ हो।।
पेड़वा से टंगवे खलरिया त मन समुझाइब हो।
रानी हेरि फेरि देखबइ खलरिया जनुक हरिना जिअतइ हो।।
जाहु हरिनी घर अपने खलरिया नाहीं देइब हो।
हरिनी खंजरी के खजड़ी मेढ़ाइब त राम मोर खेलिहइ हो।।
जब-जब बाजइ खंजड़िया सबद सुनि अनकइ हो।
हरिनी ठाढ़ि ढकुलिया के नीचे हरिन क बिसुरइ हो।।

ढाक (पलाश) एक छोटा सा घने पत्तों वाला पेड़ है, जो खूब लहलहा रहा है। उसके नीचे हिरणी खड़ी है। उसका मन बहुत बेचैन है। घास चरते हुये हिरण ने हिरणी से पूछा कि हे हिरणी! तू उदास क्यों है, क्या तेरा चारागाह सूख गया है या तेरा मन पानी के अभाव में मुरझा गया है? हिरणी ने कहा– हे प्रियतम! न मेरा चारागाह सूखा है और न पानी की ही कमी है। बात यह है कि आज राजा के पुत्र की छट्ठी है। आज तुम मारे जाओगे। हिरण मार डाला गया। मचिया पर कौशल्या रानी बैठी हुई हैं और नीचे हिरणी उनसे विनती कर रही है। वह कहती है– हे रानी! तुम्हारी रसोई में मेरे हिरण का मांस तो सिझाया जा रहा है। उसकी खाल आप मुझे दे ही दो, मैं उसे पेड़ पर टागूँती और अपने मनको समझाऊँगी। हे रानी! घूम–फिरकर मैं उस खाल को देखती और मन को समझाती कि मेरा हिरण अभी जिन्दा ही है। इस प्रार्थना पर भी निर्मम कौशल्या को जरा भी दया नहीं आई। उन्होंने कहा– हे हिरणी! तुम अपने घर वापस जाओ। मैं तुमको खाल वापस नहीं दूँगी। इस खाल से मैं खंजड़ी बनवाऊँगी और उससे मेरे राम खेलेंगे। जब खजड़ी बजती है, तब–तब हिरणी उसके शब्द सुनकर अँहकती है और ढाक के पेड़ के नीचे खड़ी होकर अपने प्रीतम हिरण को याद करती है।

इस गीत में करुणा फूटकर बह निकली है। गीत को सुनते ही कितनी तीखी टीस हृदय में उत्पन्न हो जाती है। यह वही जान सकता है, जिसने इस गीत को गाते हुये कभी सुना हो। समाज के इस निर्मम आचरण पर गौर करें। एक ओर हिरणी की विरह–वेदना युक्त कातर प्रार्थना और दूसरी ओर कौशल्या का अपने आनन्दोत्साह में विभोर हो हृदय की कठोरता दिखलाना, कितना कलापूर्ण चित्रण है। सत्ता के मद में अंधी बनी कौशल्या का स्वार्थ इतना प्रबल है कि हिरणी की दु:ख वेदनापूर्ण प्रार्थनाओं को अनसुनी करके वह हिरण की खाल से राम के लिये खंजड़ी मढ़वाती हैं और हिरणी के सुहाग वैभव को राम के खेल का साधन बनाने में अपना गौरव समझती है। लोकगीत की रचयिता ने कितने मर्म की बात कही है। सत्ता मनुष्य को किस प्रकार कठोर, निर्दय और स्वार्थी बना देती है। ध्यातव्य है कि इस लोकगीत में कौशल्या सामन्त वर्ग की प्रतीक है और हिरणी निरीह शोषित प्रजाजन की प्रतीक है।

इसी तरह का भोजपुरी में एक और बहुत लम्बा सोहर गीत है, जिसमें सीता जी को दूसरी बार के वनगमन का चित्र प्रस्तुत किया गया है। श्रीरामचन्द्र जी झूठे लांछन के आधार पर अयोध्या से बाहर करके वन में भेज देते हैं। इस बीच सीता जी को आसन्न प्रसव है, फिर भी राम निर्मम बने हुये हैं। पूरे गीत में करुण रस का चरम है। गीत में न रुदन है, न आह और न वेदना प्रदर्शन। केवल सीधे साधे सात्विक और नि:स्वार्थ प्रेम के टीस भर दो–चार शब्द है, वे ही सीता के प्रति संसार भर की करुणा जाग्रत कर देने के लिये पर्याप्त सिद्ध होते हैं। देखिये इन पंक्तियों में भरा भाव जो सीता के प्रति के हृदय में कितनी बड़ी सहानूभति उत्पन्न कर देते हैं–

हिय भरि देखितों नजर भरि रोइलें हो
भाभी के दीहिले संदेसवा, काहें अस कठोर भइलो हो।।

फिर

तीसरे रोचन देवरा लछुमन, पपिअवा न जनइहउ हो।

यहाँ सोहर गीत की सीता ने राम को कपटपूर्ण आचरण पर पपिअवा (पापी) शब्द से सम्बोधित करती है।

भोजपुरी के सोहरों में प्राय: संतान के लिये स्त्री–पुरुष की आंतरिक लालसा और तड़प तथा उसके लिये की गई साधना और देव–पूजन, गर्भवती जननी की आकुल तड़प, पीड़ा, पुत्रोत्पत्ति, जन्म, उल्लास सम्बन्धियों और पूर्वजनों, परिजनों का परस्पर बधाईयों के साथ बधावा माँगना और देना आदि आनन्दोत्सव के वर्णन मिलते हैं। कुछ सोहरों में गृहस्थ–जीवन के मनोहर चित्रों के साथ श्रृँगार–हास्य और मर्म स्पर्शी करूण रस का भी पुट पाया जाता है। इन गीतों में ननद भौजाई के हास–परिहास तथा व्यंग्य, सास–बहू के बीच सद्भाव या दुर्भाव, पति–पत्नी के प्रेममय विनोद तथा समाज और पारिवारिक जीवन के अन्य आचार–व्यवहार, प्रसूता के पथ्य–अपथ्य, खान–पान, आहार–विहार, मातृत्व के अभिमान और उमंग, अनुरागमय आमंत्रणों, मनुहारों तथा विविध कथोपकथनों और विवरणों का उल्लेख मिलता है। कभी सोहर में छोटे–छोटे कथानकों की कल्पना कर ली जाती है, जिससे उसकी रोचकता और बढ़ जाती है। सोहर गीतों में प्राचीन आख्यानों के चरित्रों का समावेश कर लेना सामान्य बात है। ऐसे चरित्रों में

राम-लक्ष्मण, सीता, कृष्ण-राधा, कौशल्या, देवकी, नन्द, दशरथ, वसुदेव-रूक्मिणी, शिव-पार्वती आदि प्रसिद्ध पौराणिक चरित्रों का समावेश प्रायः मिलता है। सोहरों में पति को नन्द, वसुदेव और दशरथ के रूप में तथा नन्दलाला, गोपाल या रामलला को पुत्र के रूप में चित्रित करने की परिपाटी है। यशोदा और कौशल्या को माँ के रूप में दिखाया जाता है।

इन सोहरों को पढ़ने और सुनने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पुत्र जन्म से सम्बन्धित यह गीत विधा भोजपुरी और अवधी के क्षेत्र में कितनी लोकप्रिय है। इनका वर्ण्य-विषय सामाजिक और पौराणिक संदर्भों से जुड़ा हुआ है। इसके साथ ही भोजपुरी समाज का एक सजीव चित्र इन गीतों के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत हो जाता है।

भोजपुरी क्षेत्र में और कदाचित पूरे भारत में संस्कार के साथ गीत का विधान जुड़ा रहता है। प्रत्येक संस्कार के गीत का छंद शृँगार गान-शैली बदलती रहती है। गीतों के माध्यम से पूरे वातावरण में विशिष्ट गत्वरता आ जाती है और मांगल्य की वर्षा से घर-आँगन, खेत-खलिहान, सीवन-मकान समृद्ध हो उठते हैं। यद्यपि यह भी है कि भोजपुरी लोकगीतों पर फिल्मी राग-रंग चढ़ने लगा है, पर विश्वास है कि भोजपुरी लोकगीत की समृद्धि को फिल्मी राग उजाड़ नहीं सकता। भोजपुरी गीतों का खोइंछा कभी खाली नहीं होगा। यह मांगल्य-आपूरित खोइंछा है, जो सदा महकता रहेगा।

ब्रज के सौभर गीत

सर्वोत्तम त्रिवेदी 'लघु'

मनुष्य ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति है। अचर की बात छोड़ें, चर सृष्टि में भी पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, कीड़े-मकोड़े आदि से इतर, मुक्त बहुविधि चलित, हस्तपाद और अनंत सम्भावनाओं से पूर्ण, विचारयुक्त, क्रियाशील मस्तिष्क से युक्त होने के कारण मनुष्य सर्वोत्तम कृति है। मानव (स्त्री-पुरुष) की संतति को आगे बढ़ाने का कठिन किन्तु श्रेष्ठ कर्तव्य, प्रकृति ने मातृत्व युक्त नारी के जिम्मे रखा है। बालक-बालिका के जन्म के बाद के कुछ समय (दिनों) को सौभर का समय और उस स्थिति को सौभर कहा गया है। ब्रज में इस शुभ अवधि और स्थिति में सुन्दर, जच्चा-बच्चा आदि गीत गाने की परम्परा है।

सुमिर साहिब कौ नाम, जिनने तोय जनम दियौ

इस गीत में बालक के जन्म लेने पर उसे भूतकाल से वर्तमान में आने का कारण बताकर, जीवन का लक्ष्य निरूपित किया गया है और इसके लिये जीवन में व्यवहार करने का तरीका बताया गया है। घर की बड़ी-बूढ़ी और बहन-बेटियाँ गाती हैं-

सुमिर साहिब कौ नाम, जिनने तोय जनम दियौ।
अन्ध कोप दस मास गर्भ में राख लियौ।।
जब पूज दस मास साहिब कोल करौ।
साहिब मेरी बंदी छुड़ाय मैं तेरौ भजन करूँ।।

आयौ मुट्ठी बाँध, हाथ पसार दियौ।
एक पानी की बूँद, मनखा जनम दियौ।।

हरभेजी गुर्जर ने आगे बताया –

जा घर दीपक होय अंधेरे न रहियो।
जा घर कन्या होय, अछूता ना रहिये।
जा घर भैया होय, अकेलो ना चलिये।
जा घर घोड़ी होय, तो पैदल ना चलिये।
घर कुलवंती नार, भोजन कर चलिये।
जा घर गौरस होय, तो सूखौ न खइये
देख बिरानी नार, मन ना डुलाइयो।
चलिये चलनी चाल, ऊ बर्वा चालिये।
हो देख हरीलौ खेत, मन ना डुलाइयो।
जो मन रहौ ना जाय, बहना कह बतराइयो।
बाजे तबल निशान, ता दिन तेरौ जन्म भयौ।
सेवा में शालिग्राम, तो बोलौ भाई हरे हरे।।

ब्रज में बालक के जन्म पर काँसे की थाली बजाने की परम्परा है। बालक–बालिका के जन्म पर, उसे नहला–धुला स्वच्छ कर, माँ (जच्चा) के पास लिटा कर उक्त गीत गाया जाता है। श्रीमती गीताजी ने बताया है कि बाद में यह गीत गाते हैं–

ए तू ना डर रे बालक, तू ना कर रे शंक्या

इस गीत में बालक/ बालिका को अपने कुल के देवी–देवता एवं पूर्व में हुए कच्चे–पक्के जीवित–अजीवित पूर्वजों के आशीर्वाद होने का विश्वास दिलाते हैं, और अन्य देवी–देवता, धरती माता, परमपिता के शुभ आशीर्वाद की कामना करते हुए, उनकी कृपा से सानंद रहने की आशा बँधाते हुए, शंका करने की आवश्यकता न होना प्रतिपादित करते हैं–

ए तू ना डर रे बालक, तू ना कर रे शंक्या।
धरती माता सेज, अंबर वारे दीवान,
करै तू काहे की शंक्या?
गणेश जी महाराज से दीवान, करै तू काहे की शंक्या?
चामुंडा देवी दिवान, करै तू काहे..
भैरौ बाबा दिवान, करै.....
हनुमान जी दीवान, करै.....
कच्चे–पक्के सब दीवान, करै .....
बाबा पड़बाबा दीवान, करै....
भोले नाथ दीवान, करै....
कृष्ण कन्हैया दीवान, करै....

बालक जन्म के समय महिलाओं को समय कम ही होता है, किन्तु बड़े परिवारों में एकाध गीत बधाई का गाया जाता है–

लाला कौ जनम सुनाई, यसोदा मैया दे दो बधाई।
टीका भी दे दो मैया, नथनी भी दे दो,
दोनों दे दो गढ़ाई ।। जसोदा..
कुंडल भी दे दो मैया, नकबेसर भी दे दो।
दोनों में नग दो जड़ाई।। जसोदा..
हरवा भी दे दो मैया, पैंडल भी दे दो।
मंगलसूत्र बनाई।। जसोदा...
कड़ूला भी दे दो मइया, अनंत भी दे दो।
आरमलेट जड़ाई।। जसोदा..
गूंठी भी दे दो मइया, गोर भी दे देओ।
पक्की तपी तपाई।। जसोदा...
चुटकी कड़ूला दोनों हूं सोने के,
पाजेब देओ बनवाई।। जसोदा मैया...

सामान्य तथा पाँचवें या छटे दिन सौभर निकालते हैं। सौभर निकालने का अर्थ है– जच्चा को भी गर्म जल से नहला कर स्वच्छ करते हैं। सौभर भी एक प्रकार का सूतक ही है। इन दिनों जच्चा– बच्चा को छूते नहीं हैं। जो महिला इनको छूती है, वह स्नान करती है। मड़रा पूजते हैं। देहरी पर पौंछा लगाते हैं। पास में पट्टा रखते हैं। जच्चा पट्टे पर सातिया माँड़ती है। जच्चा को उसका देवर, पल्ला पकड़कर लिवा लाता है। छोटा देवर या ननद बच्चे के पास रहते हैं। जच्चा देहरी सातिये पर जल छिड़कती है। पाँच बताशे, सीरा (हलवा) चामर भोग लगाते हैं। देवर–ननद को नेग मिलता है। अब जच्चा देहरी पार कर बाहर आने लगती है। इस समय गीत गाये जाते हैं, देखें–

ननद भावज पानी कूँ चालीं, रस्सा में बंध आई बँधनी।
जो भाभी तुम्हारे होयगौ ललना, हमकूँ गढ़ाऔ नथ दुलनी।।

नौ- दस मास गरभ में राखे, होरिल सबद सुनाए।
दौड़े-दौड़े नंदुल आई, भाभी हमकूँ गढ़ा दओ नाथ दुलनी।।
भैया बोले-
अपनी बहन कूँ नथ दुलनी गढ़ा देऊँ
और उढ़ाय देऊँ चुननी।
भाभी बोली-
सुनिये री मेरी दौर जिठानी, नंद ए उढ़ाय देओ चुनरी।।

उपर्युक्त गीत में बाल जन्म से पूर्व ही नेग पक्का करने की बात है। मडरा पूजने से ही सारे नेगचार प्रारम्भ हो जाते हैं। ननद तो इससे पहले भी सातिये माड़ती है। किंतु कृष्ण का जन्म तो जेल में हुआ। वहाँ नेगचार कैसे होंगे- देखें-

सिरी कृष्ण ने जनम लियौ मामा की जेलों में।
ह्या नांय दाई, ह्याँ नांय सासुल।
ललना कौन जनावै रे मामा की जेलों में।।
चरुए कौन चढ़ावै रे मामा की जेलों में ।।...
ह्याँ नांय नंदुल, ह्याँ नांय देवर।
सातिये कौन लगावै रे मामा की जेलों में।।
पलना कौन सदावै रे मामा की जेलों में।। सिरी....
ह्याँ नांय जेठानी, ह्याँ नांय छोटी।
पलका कौन बिछावै रे मामा की जेलों में।।
दिवला कौन जरावै रे मामा की जेलों में।। सिरी....
ह्याँ नांय ससुरा, ह्याँ नांय पंडित।
थैली कौन लुटावै रे मामा ... ।
नाम ए कौन धरावै रे मामा .... । सिरी..
ह्याँ नायँ नाईन, ह्याँ नायँ सखियाँ।
नगरै कौन बुलावै रे मामा ..... ।
मंगल कौन गवावै रे मामा..... । सिरी...

छठवें दिन छटी की पूजा होती है। कहीं पंडित तो कहीं घर की बड़ी-बूढ़ी ही यह रस्म कर लेते हैं। विधना पूजन कर प्रार्थना करते हैं कि अच्छा भाग्य लिखें। कागज कलम रखते हैं। दीपक जलाते हैं। यह संध्या को करते हैं। इस दिन भी 'सुमिर साहिब को नाम...' गाते हैं।

एक बार ऐसा हुआ कि पूरासन कुँए पर पानी भरने गई और वहीं बालक का जन्म हो गया। अब क्या हो? देखें-

हुए पड़े री नंदलाल कुँए पै।
दाई आवै हुलर जनावै, माँगे अपनौ नेग कुँए पै?
सासुल आवै चरुए चढ़ावै, माँगे अपनौ नेग कुँए पै?

चरुए चढ़ाने में, कोरे कुल्ले में चावल भरकर द्वार के सामने ढुलाते हैं। कहीं दोनों ओर ढुलाते हैं। कहीं खीर या दूध चावल ही।

नंदुल आवै सातिये धरावै। माँगै.....
देवर आवै पल्लौ सदावै । माँगे....
जिठानी आवै पलंग बिछावै। माँगे.....
देवरानी आवै बिजली जुड़ावौ। माँगे.....
बाबा आवै थैली लुटावै। माँगे.....
पंडित आवै नाम धरावै। माँगे.....
सखियाँ आवै मंगल गावै। माँगे..... हुए पड़े री.... ।

कहीं तो ऐसा होता है कि जच्चा चाहती है कि सारे नेग प्रसन्नता से भरपूर चुकाये जायें, जैसे-

दाई आवै ललन जनावै, माँगे अपनौ नेग।।
नेग दी दो साजना, झगड़ा न डालना।

खुशी का ये शुभ दिन, खुशी से निकालना। इस गीत में वह आगे सभी ननद-देवर, जेठ-जिठानी पंडित-सासुल, सखियों के लिये खूब नेग देने का आग्रह कर उक्त गीत को बढ़ाती है। किन्तु लोक-गीत समय के प्रवाह के साथ नया रूप धारण कर लेते हैं।

दाई आवै ललन जनावै, माँगै अपनो नेग।
नेग की बिटियाँ यों उठ बोली,
पिया गए परदेस जेबर ले गए तारी।।
देवर आवै तारे दिखावै,
माँगे अपनौ नेग। नेग की बिरियाँ....तारी।।

सासुल के चरुए चढ़ाने, जिठानी के पलंग बिछाने, ननद के सातिये धराने, जेठ के बालक को पलना झुलाने आदि के समय भी जच्चा ने यही कह दिया। शायद यह धन की तंगी के कारण उत्साह हीनता हो या सच ही ऐसा होने से कहा गया हो।

एक समझदार, चतुर या पीहर का पक्ष धर जच्चा ऐसा गाते मिली-

घर में अकेली पिया, घर ना लुटाऊँगी।
दाई की बटकी अपनी दादी ए बुला लूँगी।।
सासू आवैगी पिया लाए बगदा दउंगी।
सासू की बटकी अपनी मैयाए बुला लूँगी।।
जिठानी आवै पिया बगदा दउंगी।
पलंग बिछावे अपनी भाभी ए बुला लउंगी।।
नन्द जो आवै पिया वाय बगदा दउंगी।
सातिया धरावे अपने बहनाए बुला लउंगी।।
देवर जो आवै पिया वाए बगदा दउंगी।
तारे दिखावे अपने भैया ऐ बुला लउंगी।।
दौरानी आवे पिया वाए बगदा दउंगी।
पल्लौ पकराई अपनी चाचीऐ बुला लउंगी।।
ससुरा जो आवै पिया वाए बगदा दउंगी।
पलना झुलाई अपने चाचा ऐ बुला लउंगी।।

ब्रज में कहीं कुआँ पूजते हैं, कहीं जैसे कि मथुरा में जमुना पूजते हैं। कुछ जो सौभर निकालते समय सूरज पूजती हैं, वे भी परात में जल रखकर, एक तरह से कुआँ ही पूजती हैं। इस दिन भी जच्चा-बच्चा के गीत गाये जाते हैं। देखें बानगी-

ओढ़ दुशाला निकली कुआँ पूजै, नव-नवले दिल मेरिये।।
जच्चा की सासुल आवै, जच्चा कै चरुआ चढ़ावै।
ससुरा नेग में थैली लुटावै, नव नवले दिल मेरिये।।
जच्चा की नंदुल आवै, जच्चा के सतिये धरावै।
नंदोई नेग में थैली लुटावै, नव नवले दिल मेरिये।।

ऐसे ही पंडित के नाम रखने हेतु देवरानी के दिवला जराने हेतु, जिठानी के पलंग बिछाने हेतु, देवर के पल्ला साधने हेतु आने पर क्रमशः पति के, देवर के, जेठ के और ससुर के थैली लुटाने का वर्णन करते हुए यह गीत आगे बढ़ा है। बच्चा सम्बन्धित गीत देखें-

गोरे गोरे गाल हैं, घूँघर बारे वाले हैं।
तार कसी कौ झबला पहनें, कितनौ सुंदर लाल है।।
गोर... घूँघर.... भाल पै टीका,
आँख में काजर, कितनौ सुंदर लाल है।।
गोर... घूँघर.... हाथ में नजरा, पैर में नजरा,
कितनौ सुंदर लाल है।।
गोर... घूँघर.... कमर पै रेशम सजौ पोतरा,
कितनौ सुंदर लाल है।।

× × ×

हुए पड़े नंदलाल कुँए पर।
कौन सम्हारे मेरे सिर की गगरिया,
कौन सम्हारे नंदलाल कुँए पर?
ससुर सम्हारे सिर की गगरिया,
सास सम्हारे नंदलाल कुँए पर।।

ऐसे ही जेठ, देवर, ननदोई का नाम लेकर यह जच्चा गीत आगे बढ़ता है।

चौक में मत सोवे प्यारी जच्चा,
आज चंदा ग्रहन पड़ैगौ।
पहलै तो टीका पै पड़ैगौ,
लौटकै पलके पै पड़ैगौ।।

ऐसे ही इसमें नथुली, हार, पैंडल आदि गहनों से यह गीत आगे बढ़ाया जाता है।

बंदर ले गया रे फरूआ, कैसे सपरी?
लल्ले के बाबा गये छुड़ाने, बंदर घुड़की मारै।
घुड़की की तौ घुड़की मारै, दिखा-दिखा कर फाडै।।

इस गीत में आगे ऐसे ही अन्य रिश्तेदारों को याद किया गया है।

बज्जिका गीतों में जन्म

डॉ. ब्रजनन्दन वर्मा

भारतीय लोक मानस की अभिव्यक्ति के अनुसार जीवन में सोलह संस्कारों का प्रावधान है। मैं यहाँ पर गर्भधारण संस्कार से सम्बन्धित गीतों की चर्चा कर रहा हूँ। किसी भी महिला द्वारा गर्भधारण करते ही इस संस्कार का प्रारम्भ हो जाता है। इसके नहीं होने पर लोग भिन्न-भिन्न देवी-देवताओं को पूजते हैं, सन्तान के लिए वन्दना करते हैं, मन्नत माँगते हैं, क्योंकि भारतीय समाज में किसी भी स्त्री का जीवन तभी सफल माना जाता है, जब उसको बच्चा हो जाता है। बच्चे का जन्म होते ही उसका जीवन पूर्ण हो जाता है। समाज में उसकी सम्मानजनक स्थिति भी हो जाती है। कहा जाता है कि जिस बगीचे में आम, इमली, कटहल, अमरूद इत्यादि विभिन्न फलों का पेड़ रहता है, उस बगीचे में अगर चन्दन का वृक्ष नहीं रहता है, तो उस बगीचे को पूर्ण नहीं कहा जा सकता है। उसी प्रकार किसी भी घर में अगर भाई हो, भतीजा हो, भतीजी हो और माँ नहीं होती है, तो उस घर को घर नहीं कहा जा सकता है। माँ के बिना सब सूना लगता है।

किसी भी नि:सन्तान दम्पत्ति की समाज में सम्मानजनक स्थिति तब तक नहीं होती, जब तक सन्तान कोख से नहीं होती। सामाजिक परम्परा के अनुसार पुत्रहीन पति-पत्नी को पुत्र प्राप्ति के लिए सावन मास में 'गंगा सेवन' अर्थात् गंगा के किनारे एक झोपड़ी बनाकर एक माह तक निवास करना पड़ता है और प्रतिदिन प्रात:काल वह गंगा में स्नान कर माँ गंगा से प्रार्थना करते हैं। वह दम्पत्ति माँ गंगा से पुत्र रत्न के लिए आराधना करते हैं। इसमें हरिवंश की कथा भी सुनने का प्रावधान हमारे प्राचीन धर्म शास्त्रों में मिलती है। प्रतिदिन अपने आराध्य देव की आराधना करते हैं। इस प्रकार की कई परम्पराएँ हमारे समाज में सदियों से चली आ रही हैं। कुछ लोग कहते हैं कि कमला नदी में स्नान करने से पुत्र रत्न की प्राप्ति होती है.. आदि-आदि। कई तरह के रीति-रिवाज हमारे समाज में फैले हुए हैं। लोग उस रीति-रिवाज का पालन भी करते हैं।

जिस घर में बहू को सन्तान नहीं होती, उस घर में पति, सास, ससुर, ननद गोतनी आदि से विभिन्न प्रकार की उलाहना भी सुनने को मिलती है। घर में उस बहू का काफी अनादर होता है। लोक परम्परा के अनुसार जब औरत गंगा सेवन या हरिवंश की कथा सुन लेती है, तो उसे निश्चित रूप से पुत्ररत्न की प्राप्ति हो जाती है। ऐसी मान्यताएँ हमारे समाज में व्याप्त हैं। उस घर का भी महत्त्व काफी बढ़ जाता है और उस दम्पत्ति का भी मान-सम्मान घर में अधिक होने लगता है। इन्हीं सब सन्दर्भों के गीत बज्जिकाँचल की महिलाएँ बड़े ही प्यार से गाती हैं-

जब घर की बहू पहली बार गर्भ धारण करती है, तो घर में पुत्रोत्सव का वातावरण बन जाता है। महिलाएँ घर में सोहर गाने लगती हैं।

पहिल मास बितलई मन हासित भेलई है।
ललना पुछबई दिन-सुदिनमा तऽ कहिला नहाएव है।
दोसर मास बितलई रूप सब बदलल है।
ललना मुँह पीअराएल आगम जानल है।।
तीसर मास बितलई चित फरिआएल है।
ललना रह-रह होए उपान्त मन चावराएल है।
चउठ मास बितलई संइआ से बिनती को है।
ललना बनल रसोइआ नऽ मन भावे है।
पाँच मास बितलई सभे साँच मानल है।
ललना सुतलो में से जिआ सोहाबन लोग है।
छओ माँस बितलई ननदिआ हँसी के बोलल है।
ललना दहिना बदन पर आगम होइला जनम लेत है।
सात मास बितलई, संइआ से बिनती को है।
ललना सुतबई सेणिआ अकेले बेनिआ डोलावल है।
आठ मास बितलई देहिआ तऽ भारी भेलई है।
ललना सासु आ ननदि सऽ बेनिआ डोलावल है।
वओ मास बितलई ननदिआ सऽ बेनिआ डोलावल है।
ललना कब देव होरिला कि सोहर गाएब है।
दस मास बितलई, दसरथ घर मंगल है
ललना जनम लेलन सिरीराम, सब सुख दासक है।

अर्थात् - जैसे ही प्रथम माह गुजरा तो मन प्रसन्न हो गया। सासु अच्छा दिन पूछने लगी कि कब स्नान करेंगी। दूसरा माह जब बीता तो सब रूप में परिवर्तन हो गया। मुँह पीला दिखने लगा और आने की सूचना मिल गई। तीसरा माह बीतते ही चित्त फरियाने लगा और कभी-कभी उपांत (कम) होने लगा तथा मन भी घबराने लगा।

चौथा माह बीतते ही पत्नी अपने पति से कहने लगी कि बना हुआ भोजन मुझे अच्छा नहीं लगता है। पाँचवां महीना जब बीता तो सभी लोग इस बात को सच मानने लगे और नींद भी गहरी आने लगी। उसे बार-बार आलस आने लगा। छठा माह जब बीता तो ननद हँसकर बोली, दाहिने तरफ का आगम हो रहा है, लड़का जन्म लेगा। सातवाँ महीना जब बीता तो अपने पति से बोली- मैं बिछावन पर अकेले सोऊँगी। आप मुझे पंखा झलो। आठ माह जब बीता तो शरीर भारी होने लगा। सास और ननद दोनों मिलकर पंखा झलने लगी। नवां माह जब बीता तो ननद हँस कर बोली- भाभी कब तुम बेटे को जन्म दोगी? जो हम सब मिलकर सोहर गाएँगे। दसवाँ महीना जब बीता तो राजा दशरथ के घर में मंगल गीत होने लगा। श्रीराम का जन्म हुआ। सभी महिलाएँ सोहर गाने लगीं।

प्रस्तुत गीत में एक बाँझ (नि:सन्तान) स्त्री का चित्रण किया गया है। जिस प्रकार बगीचे में अनेक फलों का पेड़ हो और चन्दन का पेड़ नहीं हो, तो वह बगीचा अच्छा नहीं लगता। ठीक उसी प्रकार घर में अगर भाई-भतीजा, जाउत-जइजी, सब हों अगर एक पुत्र नहीं हो तो कुछ भी अच्छा नहीं लगता। ससुराल और नइहर दोनों ही अच्छे नहीं लगते हैं। पुत्र प्राप्ति के लिए गंगा सेवन और हरिवंश की कथा सुनने का प्रावधान है। इस तरह की मान्यता को बज्जिका लोकगीतों में देखे -

आमगाछ आओरो इमली गाछ, बगिआ में रोपल है।
ललना तइओ नऽ सोमे बगिचा एकहि चनन बिनु है।
नहिरा में भरलहई भाई-भाईआ ओर भतीजानु है।
ललना तइओ नऽ, नहिरा एकहि मोई बिनु है।
ससुरा में भाल हए जाउत आ ओर जइधीनु है।
ललना तइओ न भावे ससुरा एक ही होरिल बिनु है।
नित उठी गंगा नहइती, सूरज गोर लगती नु है।
ललना हरिवंश सुनती कथा, तऽ देइब एगो पुत्र देतन है।

अर्थात्- आम और इमली का पेड़ बगीचे में लगा हुआ है।

फिर भी एक चन्दन का पेड़ नहीं होने से उसकी उतनी शोभा नहीं है। नइहर में तो भाई-भतीजा सभी हैं। फिर भी एक माँ के नहीं रहने से मुझे थोड़ा भी अच्छा नहीं लगता। ससुराल में सास-ससुर, जाउत-जइजी सभी हैं, फिर भी एक पुत्र के बिना मुझे वह भी अच्छा नहीं लगता है। रोज सुबह उठकर गंगा में स्नान करती और सूरज भगवान से प्रार्थना करती, हरिवंश की कथा भी सुनती और सोचती परमात्मा मुझे भी एक पुत्र दे देते तो मेरा भी कल्याण हो जाता।

पति ने पत्नी के रहने के लिए एक छोटा सा सुन्दर घर बनवा दिया। स्वयं नौकरी पर जाने के लिए तैयार हुआ और कहा- जब तुम्हें पुत्ररत्न की प्राप्ति हो जायेगी, तो मैं घर आऊँगा।

बन गेलई कोठा आ कोठीआ सब बंगला छबाएल है।
ललना जब धनि बेटा जनमिहे, तबे घरे आएव है।
एतना बचन रानी सुनली, नऽ पुरा सुने पइलीन है।
ललना गोरे-मुरे तानलिन चदीआ, सुतलीन घरे है।
दुअरा से आएल देओरा, भऊनी मुँह देखल है।
ललना के लाज केसब बतिआ कहे में लाज लागल है।

अर्थात्- कोठा और कोठरी सभी बन गये हैं। बंगला भी छबा दिया गया। पति ने कहा- जब पत्नी पुत्ररत्न को जन्म देगी, तब मैं घर आऊँगा। इस प्रकार का वचन सुनकर पत्नी सिर से लेकर पैर तक चादर तानकर सो गयी। इसी बीच उनका देवर घर में आया और भाभी का मुँह देखा तो भाभी उससे अपनी लाज की बात नहीं कह पाती है।

पुत्र जन्म में भाभी अपनी ननद को विभिन्न प्रकार के आभूषण देती है, लेकिन ननद आभूषण लेने को तैयार नहीं है। इसी भाव को इन गीतों में देखें-

ननद नेग मांगले, हमसे फुलझरिआ रे।
अपना ननदिआ के कंगना हम देवई।
ओहू कंगनमा में मोतिआ लगबई।
लइओ ननदिआ, नऽ कंगना लेबे रे।
अपना ननदिआ के कनफूल हम देबई।
ओहू कनफूल में हीरा लगबई।
तइओ ननदिओ नऽ कनफूल लेबे रे।

अर्थात्- ननद नेग में हमसे कर्णफूल माँगती है। मैं अपनी ननद को कंगन दूँगी, उसमें मोती जड़वा दूँगी, तो भी ननद कंगन नहीं ले रही है। अपनी ननद को कर्णफूल बनवा दूँगी। उसमें हीरा जड़वा दूँगी। फिर भी ननद कर्णफूल नहीं ले रही है।

पुत्ररत्न की प्राप्ति पर गोतनी हंसिया की चोरी कर लेती है, फिर नया हंसिया गढ़ाकर लाया जाता है। पत्नी अपने पति से सास-ननद और गोतनी को बुलाने को कहती है। वह अपनी गोतनी को अधिक महत्त्व देती है, क्योंकि उसे विश्वास है कि गोतनी से तो परस्पर लेन-देन है। वह भी उसके साथ वैसा ही व्यवहार करेगी, लेकिन गोतनी के व्यवहार से उसे काफी दुःख होता है। उसकी ओर से उसका दिल हट जाता है। दिल पर आघात पहुँचना स्वभाविक बात है-

भोरबे में बउआ जनम लेलई अन्हार से इजोर भेलई है।
ललना गोतनी जी हंसुआ चोंरबलीन, नार कइसे काटब है।
ललना सोने-चानी हंसुआ गढ़ाएव नार कटबाएब है।
सासुजी के भेजबई नउनिआ, ननदी के बरई निआनु है।
संइआ गोतनी के रउए बोला लाऊ, गोतनी पइच पालट है।
सासुजी अइलीन गबइत अंगना ननदिआ बजबइत है।
संइआ गोतिनी अइलीन उदास, गोतिनी पंइचे-पालट है।
सासुजी के देबइन करू तोल, ननदिआ के तीसी तेल है।
संइआ गोतिनी के देवई चमेली तेल,
गोतिनी पइंच-पालट है।
सासुजी के देवई धान के भात, ननदी के कोदो के भात है।
संइआ गोतिनी के देवई बासमती, गोतिनी पंइच-पालट है।
सासु जी लुटाबलीन अनधन ननदी लुटा बेले अधानानु है।
संइआ गोतिनी लुटाबले कंकारिआ से अब चिता फाटल है।

अर्थात्- सुबह पुत्र का जन्म हुआ, उसके बाद अन्धेरे से प्रकाश हो गया। गोतिनी ने हंसिया चुरा ली, अब नाल कैसे कटेगी? सोना और चाँदी के हँसिया गढ़ा लूँगी और नाल कटवा लूँगी। सासुजी को बुलाने के लिए नौकरानी भेज दूँगी। ननद को बुलाने के लिए बढ़ई की पत्नी को भेज दूँगी। पति को बुलाने के लिए गोतिनी को भेज दूँगी। यह तो लेन-देन का सवाल है। सासु जी गीत गाते हुए आयी और ननदी बजाते हुए आयी। गोतिनी उदास मन से आयी, यह तो लेन-देन का सवाल है। सासुजी को सरसों तेल दूँगी। ननद को तीसी का तेल दूँगी तथा गोतिनी को चमेली का तेल दूँगी। यह सब लेन-देन का सवाल है। सासुजी को धान का भात दूँगी और ननद को जौ का भात दूँगी तथा

गोतिनी को बांसमती चावल का भात दूँगी। यह सब लेन-देन का सवाल है। सासुजी अन-धन लुटा रही हैं, ननद अकेला पैसा लुटा रही है। गोतिनी तो कंकड़ लुटा रही है, जिसके कारण उससे मेरा चित्त फट गया है।

जन्म के छः दिनों के बाद बज्जिकांचल में छठिहार (छठी) की रस्म होती है, उस दिन औरतें गीत गाती हैं-

हरिला जनम लेलओ, नेग लेबओ भउजी।
अंगूठी मुनरिआ नऽ, हम लेबओ भउजी।।
जुड़ावदार कंगना हम लेबओ भउजी।।
बाली आ कनफूल नऽ, हम लेबओ भउजी।
कामदार नथिआ हम लेबओ भउजी।
बाजू आ टीका नऽ हम लबओ भउजी।
पंजेनिआ पांओं के, हम लेबओ भउजी।
रेसम के सरिआ नऽ हम लेबओ भउजी।
जयपुरिआ चुनरी इनाम लेबओ भउजी।

अर्थात्- पुत्र ने जन्म लिया है, इसलिए इनाम (नेग) माँग रही हूँ। भाभी से कहती है- अंगूठी और मुनरी नहीं लूँगी। मैं चूड़ा बदारा कंगन लूँगी। बाली और कर्णफूल मैं नहीं लूँगी। मैं कामदार नथनी लूँगी। बाजूबन्द और टीका मैं नहीं लूँगी। मैं पाँव की पायल लूँगी। रेशम की साड़ी मैं नहीं लूँगी। मैं जयपुर की चुन्दरी इनाम में लूँगी, भाभी।

पुत्र जन्म की सूचना पाकर मायके से पियरी और ससुराल से सौभाग्य सूचक सिन्दूर आता है, अर्थात् पियरी और सिन्दूर किसी भी सुहागन स्त्री के लिए सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है-

कहमा से आबले पिअरी पिअरिआ लागल गजमोती है।
ललना कहमा से आबलै सिन्होरा, सिन्होरा भाल सेनुर है।
नइहरा से आबले पिअरी, पिअरिआ लागल गजमोती है।
ललना ससुरा से आबले सिन्होरा, सिन्होरा भाल सेनुर है।
कहमा से धरबई पिअरिआ, पिअरिआ लागल गजमोती है।
ललना कहमा में धरबई सिन्होरा, सिन्होरा भाल सेनुर है।
कोठी कान्हा करवई पिअरिया, पिअरिया लागल गजमोती है।
ललना झांपि में घरबई सिन्होरा, सिन्होरा भाल सेनुर है।

अर्थात्- कहाँ से पीला वस्त्र गजमोती लगा हुआ आता है और कहाँ से सिन्होरा भरा सेन्दूर आता है? मायके से पीला वस्त्र और ससुराल से सिन्होरा भरा सिन्दूर आता है। कहाँ पर पीली साड़ी रखेंगे और कहाँ पर सिन्होरा रखेंगे? काठी के कान्हाँ पर पीली साड़ी और गजमोती लगा हुआ पीला वस्त्र रखेंगे और झाँपी बाँस का बना हुआ ढक्कनदार पिटारी में सिन्दूर से भरा सिन्होरा रखूँगी।

आँख रेजाई का एक विधान होता है, जिसमें ननद बच्चे की आँख में काजल लगाती है। उस समय महिलाएँ गाती हैं।

सोना के कजरौटा में काजर हम सेकब है।
भउजी तू कबूललऽ कंगनमा-कंगनमा न पाएल है।
सभा बइठलन अघन बाबा, कि तूहे हत्ऽ अघन बाबा है।
ललना तोहो पुतोहिआ कबूललन कंगनमा बऽ मिलल है।
सोइरी बइठलन अघन पुतोहिआ कि तुहे हत अघन पुतोह।
ललना देइ दहू हाथ के कँगनमा, बेटी हम्मर पाहुन है।

अर्थात्- ननद कहती है कि मैं सोने के कजरौटा में काजल बनाऊँगी। भाभी, तुमने कँगन देने का वादा किया था, लेकिन आज तक मुझे नहीं मिला है। यह शिकायत लेकर बाबा के पास जाती है और कहती है- आपकी बहू ने कंगन स्वीकार लिये, लेकिन वह आज तक मुझे नहीं मिले। फिर यह शिकायत लेकर दादी के पास जाती है और कहती है- तुम कंगन दे दो, बेटी मेरी इस घर की कुटुम्ब है।

पुत्र जन्म के अवसर पर पुत्र की माँ और वधू की सास को प्रसन्नता अधिक रहती है। उसका चित्र देखें इन गीतों में-

बेटा जनम मनभावल, मंगल हम गाएब है।
ललना जुगे-जुगे जीए हम्मर लाल निरीब सुख पाएब है।
बहूजी के कोरिवआ भालई, उमरी मन हम्मर गेल है।
ललना लेई के ललनमा के गोद, हँसी के खेलारब है।
बाजल दूरा रसन चउकी गाबले सखी सम मंगल है।
ललना गंगा में लहर हिलोरे, ललन के लोभाएल है।
भेलई सूसज देओ के साथ तऽ कोरिवआ सुफल भेल है।
ललना देखी के सुरतिआ, हम्मर नएब जुराएल है।

अर्थात्- सास कहती है- पुत्र का जन्म घर में अति

आनन्ददायक है। इस शुभ अवसर पर मैं मंगल गीत गाऊँगी। मेरा पोता युग-युग तक जीवित रहे और उसे देखकर मैं सुख पाती रहूँ। मेरी बहू की कोख भर गई है। उसको पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ है। मेरा मन भी खुशी से उत्साहित है। मैं अपने पोते को गोद में लेकर खूब खिलाऊँगी। दरवाजे पर विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्र बज रहे हैं। प्रतिदिन मंगल गान गाए जा रहे हैं। मेरे मनरूपी गंगा में भी हिलोरे उठ रही हैं। मैं अपने पोते को खिलौना देकर मोहित कर लूँगी। जब सूर्य भगवान की प्रार्थना हुई, तब उसकी कोख सफल हो गयी। तभी तो पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ। अब मैं अपने पुत्र का मुख देखकर अपनी आँखों को सन्तुष्ट करूँगी।

पुत्र के होनहार होने के लक्षण दिखाई पड़ने पर, माता का पुत्र के लिए अन्य स्त्रियों से आशीर्वाद माँगना-

जेही घर भेलई ललनमा तऽ घन-घन-घन है।
रामा घन-घन कुल परिवार तऽ घन-घन लोग सग है।
बाँस के जरीआ में उपजतो बाँस,
अंडी के जरिआ अंडी जामल है।
रामा देव कोखिआ जनमल देओता,
तऽ देस के काम आवे है।
होनहार बिरवा के चिकन पतिओ, चिकन भल लागल है।
रामा लरीका होए लघुमनमा तऽ निररिव के मन खुसभेला है।
दहु-दहु सखिआ आसीस, ललन मुँह चमहू है।
होतई भारत माई के सेवक, तऽ हम्मर पूत होतई है।
रामा इहो पूत जीए सओ साल, तऽ इहे हम आसीम देम है।

अर्थात्- भारत माता कहती हैं कि जिस घर में पुत्र का जन्म होता है वह घर धन्य है, वह परिवार और कुल दोनों धन्य है। वहाँ के सभी लोग धन्यवाद के पात्र हैं। बाँस की जड़ से बाँस और रेड़ के पेड़ से रेड़ ही पैदा होता है। ठीक उसी प्रकार से देवी सती-साध्वी स्त्री की कोख से देवता के समान सुन्दर-सुशील बालक का जन्म हुआ है। जिस तरह से होनहार पेड़ का पत्ता पहले से ही चिकना निकलता है। उसी प्रकार इस होनहार बालक के सुन्दर लक्षण को देखकर मन अति प्रसन्न है।

माता कहती हैं कि हे सखी! तुम लोग आशीर्वाद दो और पुत्र का मुँह चूमो, इसे गोद में लेकर प्यार करो और अपने हृदय को शान्त करो। मेरा पुत्र भारत माता का सेवक बनेगा। तब सखियाँ कहती हैं- यह लड़का अनेक गुणों से सम्पन्न युगों-युगों तक जीता रहे, यही हम लोग आशीर्वाद देते हैं।

सम्पूर्ण बज्जिकांचल क्षेत्र में जन्मोत्सव के अवसर पर घर की महिलाएँ खुशी मनाती हैं। एक-दूसरे का मुँह मीठा करती हैं, एक साथ बैठकर गीत गाती हैं। यह परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। जब से इस सृष्टि का निर्माण हुआ है। पुत्ररत्न जिस घर में प्राप्त होता है, उस घर का वातावरण काफी आनन्ददायक हो जाता है। घर के सभी लोगों में उत्साह उत्पन्न हो जाता है।

छत्तीसगढ़ी सोहर गीत

प्रो. अश्विनी केशरवानी

हिन्दुओं का सामाजिक जीवन जन्म से लेकर मृत्यु तक काव्यमय होता है। शायद ही ऐसा कोई घर हो, जहाँ कोई गीत नहीं गाये जाते हो। हिन्दुओं में सोलह संस्कार होते हैं और प्रत्येक संस्कार में गीत गाने की परंपरा है। छत्तीसगढ़ में प्रत्येक अवसर पर गीत गाये जाते हैं। महिलाओं के प्रसूति पूर्व और बाद में गाये जाने वाले गीतो को सोहर गीत कहते हैं। सोभर (प्रसूति गृह) हो, चाहे शुभघरी हो, शुभ घर का सूचक हो, यह जीवन का वह अवसर है- जब हमारा प्रथम परिचय लोकगीतों से होता है। यहीं से हम जीवन को पुष्ट, सबल और समर्थ बनाते हैं। ऐसी मान्यता है कि जिस घर में सोहर नहीं गायी जाती- वह घर नोहर है, शून्य है, वहाँ अंधेरा है। ये सोहर गीत रति, औत्सुक्य और श्रम की रचना है, जिसे महिलाएँ मिलकर ढोलक बजाकर गाती हैं। एक महिला ढोलक बजाती है और दूसरी लोटे को सिक्के से बजाती है। सोहर गीत के अंत में परिवार के लोग परिस्थिति के अनुसार खाने की वस्तु परोसते हैं। देखिये एक सोहर गीत –

लौंग मरीच एके बिरछा घनोची तरी जामे हो, रामा
पाने फूलेन कई भोगिया अंगन मोरे सोवे हो, रामा।। 1।।
सासू मोरे सोयें अटरिया, ननदी कुठरिया
राजा सैंया मोरे सोये हैं रंगमहलिया
जगाये नहीं जागें, बोलाये नहीं बोले हो।।2।।
रामा सासु के दाबे अंगुरिया ननदी छिंगुरिया हो

रामा राजा सैंया के दाबे पिंडुलिया
जगाये नहीं जागे बोलाये नहीं बोले हो।।3।।
रामा घेरी आये कारी बदुरिया घुमड़ी जल बरसें हो
बरसन लागे बड़ेन बड़े बूंद साहेब उठि आवें
राजन उठि आबें हो।।4।।
एक पग डारे उसरिया दूसर मझोटिया हो
रामा तीसर पग डारे पलंगवा, पलेग काहे डोले हो।।5।।
रामा कि तुम चोर चंडलवा कि राजा के पहुरवा हो
रामा इतना रात समइया मोहे काहे जगाये हो।।6।।
नहिं रानी चोर चंडलवा न राजा के पहुरवा हो
रामा हम हैं ननदी जी के भइया, त तुम ही जगायेन हो।।7।।
एक घरी लागे जगावत दूसर मनावत हो
रामा जब कि जुरै है सनेह, मुरैला पापी बोले हो।।8।।
रामा रह रे तैं राजा के मुरेलना तोही मरिवाइहौं
तोही बंधवाइहौं।।9।।
काहे रानी मोहि मरवाइहौं काहे बंधवइहौं हो
रामा ऐसे सगुन विचार ललन तोरे होइहें हो।।10।।

इस छत्तीसगढ़ी गीत में औत्सुक्य, हर्ष और आवेग की सुंदर व्यंजना हुई है और मनोभिलाषा का बड़ा सुंदर समर्थन देखने को मिलता है। घनौछी के नीचे थौने की वर्तुलाकार भूमि में जहाँ प्रतिदिन जल से भरा घड़ा रखा रहता है, सरस जीवन की आर्द्रता लेकर तीक्ष्ण सुगंधि का एक बीज अंकुर ले फूट पड़ा है। ये लौंग और मिर्च के दो पौधे घनौची की नमी पाकर सहसा पीक उठे। एक से दो के दर्शन हुए। उद्दीपन का यह रूप कितना सुंदर है। उद्दीपन की इस भूमिका में पत्नी के घर पति आ गया है। वह प्रसन्न होकर कह उठती है कि मेरी जीवन लतिका के पत्रपुष्प के भोगी प्रियतम आज आ गये हैं और मेरे घर के आँगन में सोये हैं। पास ही अटारी में सास सो रही है। इधर कोठी में ननद सो रही है और मेरे प्रियतम स्वामी अपने रंगमहल में सो रहे हैं। श्रम से थके होने के कारण वे पलंग पर सोते ही गहरी नींद में चले गये हैं। जगाने पर भी वे नहीं जागते, बुलाने पर भी वे नहीं बोलते। प्रियतमा ने बाहर आकर सास के पैर दबाकर सेवा की, ननद के पैर दबाकर सेवा की। जगाने की मंसा से पति के पैरों को दबाकर पति की सेवा की, परन्तु वे गहरी नींद में सो गये हैं, जगाने पर भी नहीं जागते, बुलाने पर भी नहीं बोलते। हताश होकर पत्नी वापस अपने स्थान पर लौट आई। वर्षा ऋतु का आषाढ़ गगन पर छा गया और अकस्मात् काले बादलों की घटा घिर आई और बादल उमड़ने-घुमड़ने लगे। चढ़ती रात में बड़ी-बड़ी बूंदें टप-टप गिरने लगीं। आँगन से उठकर अब तो प्रियतम को भीतर आना पड़ा। प्रियतम ने एक पैर बाहर की ओरसी में रखा, दूसरा पैर भीतर के कमरे में और तीसरा पैर अपनी प्रियतमा के पलंग पर रखा कि पलंग हिल उठा। सभ्रम चकित हो पत्नी ने प्रश्न किया कि तुम कौन हो? चोर हो कि चंडाल हो या राजा के प्रहरी हो, जो इतनी रात यहाँ आकर मुझे जगा रहे हो? राजा ने अपनी रानी को सम्बोधित कर बड़ी स्थिरता से कहा-न हम चोर-चंडाल हैं, न राजा के प्रहरी हैं, हम तो तुम्हारी प्यारी ननद के भाई हैं, अर्थात् तुम्हारे पति हैं और तुम्हें जगाने के लिए यहाँ आये हैं। प्रेमगुण जाग उठा। एक घड़ी नायिका को जगाने में लगी, मनाने में एक घड़ी, अर्थात् एक घड़ी नायिका का मान दूर करने में लग गयी। मिलन की इस घड़ी में अचानक सबेरा हो गया और मोर के पौरुष स्वर बोल उठे। नायिका ने नायक की अभी-अभी लगी निद्रा भंग हो जाने की आशंका से मोर को डांटा, पापी तू ऐसे समय बोल रहा है, जब दम्पति सुख की नींद सो रहे हैं। मैं तेरे इस अत्याचार पर तुझे मरवाऊँगी और तुझे रस्सी से बंधवाऊँगी। मोर ने प्रेम की भीख मांगकर निवेदन किया कि ऐ रानी! तुम मुझे क्यों मरवाओगी और रस्सी से क्यों बंधवाओगी। प्रात:काल बोलना तो मेरा स्वभाव है, यह तो बड़ा शकुन और समय पर तुम्हारे पुत्र उत्पन्न होने की शुभ सूचना है।

छत्तीसगढ़ में जन्म संस्कार के समय आचारों का लंबा अनुष्ठान होता है। गर्भाधान से नौ माह तक की सम्पूर्ण अवधि जन्म संस्कार के अंतर्गत आती है। गर्भाधान के सातवें माह में 'कुसली' और नौवें माह में 'सधौरी' संस्कार होता है। इसे 'पुंसवन संस्कार' भी कहा जाता है। गर्भवती महिला को सात प्रकार की रोटियाँ खिलायी जाती हैं, बाद में अन्य कौटुम्बिक स्त्रियाँ खाती हैं। इस दिन गर्भवती महिला के मायके से भेंट आती है। इसमें वस्त्राभूषण और खाने-पीने की चीजें होती हैं। इसे मायके की सधौरी कहते हैं। कौटुम्बिक स्त्रियाँ सात प्रकार की रोटियाँ क्रमश: खुरमी, पपची, लाडू, पिड़िया, सोंहारी, कुसमी और करी के लाडू के साथ वस्त्राभूषण भेंट देने जाती हैं। गर्भवती महिला के खाने के बाद बची रोटियों को अन्य कौटुम्बिक स्त्रियाँ खाकर अपनी साध पूरी होने की कामना करती हैं। इस अवसर पर सोहर गीत गायी

जाती है, जिसमें गर्भिणी की दशा का वर्णन होता है। गीत का आशय यह है कि पति-पत्नी को मना रहा है कि दूध, मधु और पीपर पी लो। पत्नी कहती है- वह कड़वा है। पति कहता है कि सोने का कटोरा उठाकर दूध, मधु और पीपर पी लो, नहीं तो वह दूसरा विवाह कर लेगा। देखिये गीत की बानगी -

मेहला मां ठाढ़ि बलमजी,
अपन रनिया मनावत हो।
रानी पी लो मधु-पीपर,
होरिल बर दूध आहै हो।

महल में खड़े बालम, अपनी रानी को मना रहे हैं, रानी मधु पीपर पी लो।

कइसे पियऊँ करूरायर अऊ झर कायर हो
कपूर बरन मोर दांत पीपर कइसे पियब हो।

कड़वा और कसेला कैसे पिऊँ, कपूर समान मेरे उज्ज्वल दाँत हैं, पीपर कैसे पिऊँ।

मधु पीपर नइ पीबे
त कर लेहूं दूसर बिहाव
ओहिच पीहै पीपर हो।

यह तू मधु पीपर नहीं पियेगी तो मैं दूसरा विवाह कर लूँगा, और वह मधु पीपर पी लेती है।

पीपर के झार पहर भर
मधु के दुइ पहर हो
सऊती के झार जनम भर
सेजरी बंटोतिन हो।

पीपर की झार पहर भर रहेगी, मधु की दो पहर। परन्तु सौत की झार जनम भर रहेगी, वह सेज बंटायेगी।

कंचन कटोरा उठावब
पीलेहूं मधु पीपर हो।

पति के आग्रह पर पत्नी सोने का कटोरा उठाकर मधु-पीपर पी लेती है। इस प्रकार नौ माह के बाद पुत्र उत्पन्न होता है। पुत्र के जन्म लेने के तीन दिन बाद जच्चा (माता) को पीने के लिए कुछ औषधियाँ मिलाकर पानी औटाकर दिया जाता है, उसे 'कांके पानी' कहा जाता है। इसे पीने के लिए गाँव की स्त्रियाँ भी आती हैं। इस पानी को मिट्टी के घड़े में औटाया जाता है, जिस पर अइपन के निशान लगा दिये जाते हैं। इस क्रिया को प्राय: ननद करती है, जिसके लिए उन्हें 'नेग' मिलता है। इसे 'कांके मढ़ाने' की क्रिया कहते हैं। जच्चा को जो पौष्टिक मिष्ठान्न खिलाया जाता है, उसे 'बोसहा' कहा जाता है। इस क्रिया के छठवें दिन ग्रह सूचि और स्नातक संस्कार होता है। इसके पहले पुत्र जन्म के तीन दिन बाद मायके से नाई और पौनी पसारी लोग बधाई लेकर आते हैं। इसमें एक लम्बा बाँस, एक लोटा तथा कपड़े आदि होते हैं। इसके बदले उन्हें नेग मिलता है। परिवार के लोग इस दिन 'संवार' अर्थात् बाल बनवाकर शुद्ध होते हैं। इसे 'छट्ठी' कहते हैं। इस दिन जच्चा और बच्चा स्नान करते हैं। सारा घर लीप-पोतकर साफ किया जाता है। अब दूसरे लोग जच्चा-बच्चा के पास आ सकते हैं। इसी प्रकार 12 वें दिन 'बरही' संस्कार होता है। इस दिन संध्या परिवार की स्त्रियाँ 'कांके पानी' के घड़े को लेकर तालाब जाकर विसर्जन करती हैं।

सोहर गीत में जच्चा अपनी ननद, जेठ- जेठानी और सास-ससुर से सहायता माँगती है। परन्तु उनकी उपेक्षा भाव को देखकर यह सोचकर आत्म संतोष कर लेती है कि उसके माता-पिता औा भाई-बहन अभी हैं। उनके रहते उन्हें चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। सोहर गीत की बानगी देखिये -

ननदी बोलयेंव उहू नइ आइस
ननदी हो हमार का करि लेहव।
बहिनी बलाके कांके मढ़ई बो न
हम छबीली सबे के काम पड़बो न।।
ननदोई बोलायेंव उहू नइ आइस
ननदोई हो हमार का करि लेहव।
भांटो बला के नरियर फोरा लेबो न
हम छबीली सबे के काम पड़बो न।।
जेठानी बोलायेंव उहू नइ आइस
जेठानी हो हमार का करि लेहव।
भौजी बलाके सोहर गवाबो न
हम छबीली सबे के काम पड़बो न।।
जेठ बोलायेंव उहू नइ आइस

जेठ हो हमार का करि लेहव।
भाई बलाके बन्दुक छुटबई लेबो न
हम छबीली सबे के काम पड़बो न।।
ससुर बोलायेंव उहू नइ आइस
ससुर हो हमार का करि लेहव।
बापे बलाके नाम धरइ लेबो न
हम छबीली सबे के काम पड़बो न।।
सासे बोलायेंव उहू नइ आइस
सासे हो हमार का करि लेहव।
दाई बलाके ढुठू बधवाइबो न
हम छबीली सबे के काम पड़बो न।।

इस बधावा गीत में ननद और भाभी का वार्तालाप चित्रित है। बधाई बज रही है। भाभी को भय है कि कहीं ननद के कानों तक इसकी भनक न पड़ जाये। इधर ननद के मन में बड़ा उल्लास है। डोली में चढ़कर काजल आंजने जाने के लिए और थाली भर मोहरों का नेग पाने के लिए वह आतुर है। पर भाभी ननद को निराश नहीं करती। वह सब कुछ दे सकती है, पर अपनी संतान नहीं जो उसकी गोद का श्रृंगार है। देखिये एक बानगी–

भाभी– *धिरे-धिरे बाजथे मोर अनंद बधइया*
बजे अनंद बधइया हो
मेरो तो ननदी झन सुने हो
अहो ललना, मोरो तो नंनदी झन सुनै हो।
बहिनी– *हमरो भाई के होय हवै लाले*
हम काजर आंजे ल जाबोन हो
सैंया चढ़े घोड़वा
हम चढ़बो डोलवा
थारी भर मोहर पाबो हो।
भाभी– *दिल चाहे तुम्हार मांगो*
मांगो हो ननदिया,
कपड़ा ओढ़ना मत मांग बाई
मोर पेटी के सिंगार
लहंगा देहूं अउ देहंव चुनरिया।
मांगों-मांगों हो ननदिया
बस बच्चा मत मांग बाई
मोर गोदी के सिंगार।
भाई ल देहूं, भतीज देहंव
देहंव धक्का लार
बरतन भड़वा मत मांग बाई
मोर चौका के सिंगार
लोटा देहंव-देहंव खड़ाकार।

इस गीत में देवकी और यशोदा के वार्तालाप का चित्रण करते हुए देवकी की व्यथा और यशोदा की नारी सुलभ करुणा का चित्रण किया गया है। देवकी अपने सात पुत्रों को खो चुकी है। आठवें पुत्र को खोने का डर उसे सताये जा रहा है। अचानक यशोदा से उनकी भेंट हो जाती है। यशोदा उन्हें आश्वासन देती हैं कि वह अपना गर्भ देकर उसके पुत्र की रक्षा करेगी। यह गीत पुत्र की निर्विघ्न प्राप्ति की कामना से ओत-प्रोत है।

पहली गनेश पद घावों
मैं चरन गनावों
ललना विघन मरन जन नायक
सोहर के पद लगावत हौं।
एक घन अंगिया के पातर
दूसर हे गरभवती ओ
ललना अंगना में रेंगत लजाय
सास ल बलावन लागे हो
सास मोर सूते हे अटरिया
ननद मोर ओसरिया में ओ
ललना सैंया मोर सूते हे महल में
मैं कैसे जगावंव वो
झपकि के चढ़ों में अटरिया
खिरकी के लागू लेके ओ
ललना छोटका देवर निरमोहिला
बंसी ल बजावत हवै हो
न मन गुने रानी देवकी
मन म बिचारन लागे ओ
ललना ऐही गरभ मैं कैसे
बचइ लेत्यौं ओ
सात पुत्र राम हर दिये

सबो ल कंस हर ले लिस ओ
ललना आठे गरभ अवतारे
मैं कैसे बचइ लेत्यौं ओ
घर ले निकरे जसोदा रानी
मेर सुभ दिन सावन ओ
ललना चलत हवै जमुना असनाने
सात सखी आगू सात सखी पीछू ओ
सोने के घइला मूड़ म लिये
रेसम सूत गुड़री हे ओ
ललना चलत हे जमुना पानी।
सात सखी आगू, सात सखी पीछू ओ
कोनो सखी हाथ पांव छुए
कोनो सखी मुंह धोवै ओ,
कोनो जमुना पार देखै
देवकी रोवत हवै ओ
घेरि-घेरि देखै रानी जसोदा।
मन में बिचारन लागे ओ
कैसे के नहकों जमुना पारे
देवकी ल समझा आतेंव ओ
न तो दिखे घाट घठौना
नइ दिखे नाव डोंगा ओ
ललना कइसे नहकों जमुना पारे
जमुना बैरिन भरे हावय ओ
भिरे कछोरा मुड़ उघरा
जसोदा जमुना घँसिगे ओ
ललना चलत हवय देवकी के पासे
जमुना ल नहकि के ओ
मत रो तैं मत रो देवकी
मैं तोला समझावत हौं ओ
ललना कैसे विपत तोला होए
काहे दुख रोवत होवस हो
कोन तोर सखा पुर में बसे
तोर कोन घर दुरिहा है ओ
ललना कोन तोर सइयां गए परदेसे।
तै काहे दुख रोवत हवस ओ
न तो मोर सखा पुर में बसै
न तो मोर घर दुरिहा ओ
न तो मोर सैंया गए परदेसे।
गरभ के दुख ल रोवत हवौं वो
सात पुत्र राम हर दिये
सबेल कंस हर लिस ओ
ललना आठे गरभ अवतारे
मैं कइसे बचइलेबौं ओ
चुप रह तै चुप रह देवकी
मैं तोला समझावत हवौं ओ
मोरे गरभ तोला देहौं
तोर ला बचाइ लेहौं ओ।
नून अऊ तेल के उधारी
पैसा कउड़ी के लेनी देनी ओ
बहिनी कोख के उधारी कैसे होही।
मैं कैसे धीरज धरौं ओ
एक मोर सखी हे चंदा
दूसर सूरज भाई ओ
ललना, साखी हे चंदा भाई
सुन ले देवकी रानी ओ
ऐसे करार कैसे बांधौं
धीरज धरौं ओ
ललना देवकी जपै रामनामे
तुही ए गरभ ल उबारव ओ
पहिली महिना देवकी ल होगे
दूसर महिना होवे ओ
ललना तिसर महिना देवकी ल होगे
तब मन सकुचावय हो
चार महिना देवकी ल होगे
तब गरभ जान परय हो
ललना पियर मुंह डुलडुल दिखे
तब आठौ अंग पिवरा दिखे ओ
पांच महिना देवकी ल होगे
तब सास ह पुछन लागे ओ
देवकी ह पेंट अवतारे

दुख सुख बतावन लागे ओ
छठे महिना देवकी ल होगे
तब ननद हँस के कहय ओ
होतिस भतीजा अवतारे
तब सुमंगल गात्यों ओ
सात महिना देवकी ल होगे
तब सास परिखन लागे हो
ज्यों नी अंग मोर फरकत हे
बेटवा के लच्छन हवै वो
आठ महिना देवकी ल होगे
तब आठों अंग भरि गए ओ
कैसे के लुगरा सम्हारौं
दरद व्याकुल करे हो
नव दस महिना देवकी ल होगे
तब सुइन ल बला देवै ओ
ललना उठिगे पसुरी-पसुरी के पीरा
दरद में बियाकुल भये हो
भादों के रतिहा निसि अंधेरिया
पानी बरसन लागे ओ
ललना बादर म बिजुरी चमके
गरजना करन लागे ओ।

'छत्तीसगढ़ी लोकजीवन और लोक साहित्य का अध्ययन' में डॉ. शकुन्तला वर्मा ने लिखा है-छत्तीसगढ़ी लोकगीत में गर्भवती स्त्री के चित्रण में जब माधुर्य, शील और विवशता हम पाते हैं तो लगता है कि सरस्वती की वाणी जन-जन के कंठ से फूट पड़ी है। प्रस्तुत गीत में गर्भ के लक्षण के अतिरिक्त सास-ननद के मनोभावों, उल्लास और उमंग का चित्रण देखने को मिलता है। गर्भधारण से पुत्र जन्म तक की अवस्था की बानगी इस गीत में प्रस्तुत है -

पहिली महीना जब लागे, अंग फरियाये हो ललना
अंग पियर मुँह ढुरढुर, गरभ के लच्छन हो।
दूसर महीना जब लागे, सासे गम पाइय हो ललना
जेठानी गोड़ पछियाय, जीव मतलाये हो।
तीसर महीना जब लागे सास पुलकाये हो ललना
होहें बंस अंजोर मोतिन माल लुटौहौं हो।
चौथे महीना जब लागे, ननद मुसकाये हो ललना
होहैं लाल कन्हैया, पंचलड़ पावब हो।
पांच महीना जब लागे, बहुरिया माटी खाये हो ललना
पान बीरा न सुहाय, सिट्ठा मुख लागे हो।
छै महीना जब लागे, पिया के पग लागे हो ललना
आवों न सेजिया तोहार, अंग मोर भारी हो।
सात महीना जब लागै, सासू कर जोरैंव हो ललना
न अब भीतर अमांव, दारुण दुख होवै हो।
आठ महीना जब लागै, आठौ अंग भरि आए हो ललना
कस पहिरै पट चीर, न संभरै संभारै हो।
नौ महीना जब लागै, सासू सोवै अंगना हो ललना
पीरा कब उठ जाय, पैकहिन बुलवावै हो।
दस महीना जब लागै, जन्में लाल कन्हैया हो ललना
बाजत है आनंद बधैया, सखिमन मंगल गावै हो।

कहीं सास-ननद के प्रति बहू की खीज व्यक्त की जाती है और अपने मायके वालों के प्रति अनुराग और कहीं सोहर के पदों में दार्शनिकता भी झलकती है। जीव निर्गुण ब्रह्म का अंश है, पर माया या प्रकृति के संयोग से वह सगुण रूप धारण कर लेता है। इस जगत में आने के बाद वह 'हरि' को भूल जाता है, उस हरि को जिसने उसे जीवन दिया है और इसीलिए दु:ख और विषाद के उस कोलाहलमय जगत में वह अपने को नितांत अकेला अनुभव करता है। यह लोकगीत में सहज विशेषता बनकर उभरी है -

कहां ले आए तुम हो
कहां चले जाथ हो ललना
कहां लै परे हो आय ?
कहां तो बस के रहि हो ?
निर्गुन ले हम आये हो माइ
सगुनाती म समायेन हो।
ललना ठाड़े भए हरि के नाम
सो माया म भुलायेन हो।
ठाड़े हवै ललना बिसरि गये
हरि नाम कहूं से नहिं बोलैं हो
जैसे ठाड़े तरुवर के मैदान
अकेली तन डोलै हो।

बच्चा जन्म लेता है तो हर्ष होता ही है, पर यदि कहीं दुर्भाग्य से बच्चा मृत हुआ या जन्म के बाद उसकी मृत्यु हो जाती है तो उस समय वेदना और दुख से माँ का हृदय चीत्कार उठता है –

टैड़न टेंड़ी-टेंड़ी भाजी लगायेंव
भाजी टोरन नहिं पायेंव
दस महीना तोला ओद्र म राखेंव
स करन नहिं पायेंव।

अर्थात् कुएँ से पानी खींच-खींचकर मैंने भाजी लगायी थी, किंतु ठीक वक्त पर मैं भाजी तोड़ नहीं पायी। इसी प्रकार दस माह तक मैंने तुमको अपने कोख में रखा, लेकिन 'यश' नहीं ले पायी। प्रतीकात्मक ढंग से यह उपमा अनुपम है। थोड़े दिनों बाद दु:खी माता और अन्य परिजनों को भी सब्र हो जाता है। यह सोचकर कि इस दैवीय वज्रपात के आगे अपना कोई वश नहीं होता। कम से कम किसी प्रकार के कलंक या लज्जा की बात यहाँ नहीं उठती।

किंतु यदि नारी 'बंध्या' हुई तो उसके माथे पर कलंक का टीका लग जाता है। स्वयं तो वह वेदना पाती ही है, किंतु उसको सबका उपहास का पात्र भी बनना पड़ता है। वह सबकी दृष्टि में हेय बन जाती है। उसे अपने पति से भी सहानुभूति नहीं मिलती। उसकी छाया से भी स्त्रियाँ दूर भागती हैं। कहा जाता है कि ऐसी बंध्या को बाघिन या सर्पिणी भी खाने को तैयार नहीं होती और गंगा मैया उसे अपनी गोद में लेने से इंकार कर देती हैं, इस भय से कि उसके स्पर्श से कहीं वह भी बंध्या नहीं हो जायें। बंध्यत्व नारी जीवन का बहुत बड़ा अभिशाप है। एक व्यक्ति अपनी बंध्या पत्नी से कहता है कि तुम्हारा सौंदर्य और शारीरिक गठन तो अनुपम है, फिर क्या कारण है कि तुम बंध्या हो। देखिये गीत की एक बानगी–

तिल बरन तोर तिलरी दिखत हो
गहूं बरन तोरे मांगे हो।
गोमची बरन तोते देह दिखत हो
कैसे के परे हस बांझ ओ।

बेचारी स्त्री स्वयं संतप्त है, ग्लानि से डूबी हुई वह भला क्या जवाब दे –

ऊँचे घर के नीच डेहरिया
चौखट लगे कपाट हो
चारों खूर म हीरा लगे जड़े हो
बिन धनि के अंधियार हो।

इतना वैभव सचमुच व्यर्थ है, जब मुझमें स्त्रीत्व (धनि) ही नहीं है। कभी रोते हुए वह ईश्वर से कहती है कि हे नाथ! तुम्हारा संसार इतना विशाल है, पर हीरा-मोती शायद बहुत दूर है, जिन्हें आसानी से खोजा नहीं जा सकता। इस हीरे को बाजार जाकर खरीदा नहीं जा सकता। (यहाँ हीरा-मोती का आशय 'संतान' से है और जो भाग्यशाली होता है, वह चाहे गरीब ही क्यों न हो, उसे संतान सुख आसानी से मिल जाता है।) देखिये एक गीत–

तत्पर के तमुआ बनैव आहे साहेब
हीरा मुक्ते हैं बड़े दूर
चारों खूंट लहैड़त फिरेंव साहेब
नइ मिले सिरजनहार हो।
हाट गयेल हीरा नइ मिलें साहेब
कोड़िन मोल बिचावत हो।
मन भौंरा हो गंइया
तोला नींद नइ तो आवे।

इन जन्म गीतों में विषय वैविध्य है। मन के सुख-दु:ख, करुणा-विषाद या उल्लास की स्थिति का चित्रण इनमें हो सकता है।

डॉ. भालचंद्र राव तैलंग ने 'छत्तीसगढ़ी, हलबी, भतरी बोलियों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन' पुस्तक में जन्म गीतों में स्त्रियों के विविध पक्षों को अभिव्यक्त करने गीतों को संग्रहित किया है। पुंसवन संस्कार यानी सधौरी के समय गाये जाने वाले गीत में गर्भवती स्त्री के मनोभावों को देखा जा सकता है –

भंवरा तो चलहिं विदेस त कहाँ-कहाँ नेवतेब हो
रामा एक हम नेवतब नैहर दूसरे ससुर घर हो रामा
एक नहिं नेवतउं बीरन भैया वोही हावै गुस्सा हो
लानहुं पंडित बलाई त लगन विचारइ हो ललना।
बहुवा को लाना बलाई कहाँ-कहाँ नेवतब हो
बहुवा को पूछौ बलाई कहां-कहां नेवतब हो

एकै नेवतौ ससुर जी के गोत्र ससुर जी के नैहर
ललना एके झन नेवतौ बीरन भैया वोही के बिरोध हावे हो।
कांवर तो आइहै मचामच पिंवरी दहादह हो
रामा मेघ डमरू सिरछत्र त पहुंचे बीरन भैया हो।
कांउरि तो मढ़ावैं आंगन बीच पिंऊरी सासु आगे हो
रामा घोड़ा के बांधै घोड़सार त पहुंचे बीरन भैया हो।
बलावै नगर के पंडित बेगेन चलि आवौ हो
ललना पूछो प्रभु जी के गोत्र हमहूं सुनाउव हो
बबा उनके हावें राजा दशरथ मैया कौशिल्या रानी हो
रामा सातों भैया गोपी कान्हा बहिनी रानी पदुमिनी हो।
बतावौ नग्न के पंडित हंकरि बेगि आवौ हो
रामा पूछहुं दुलहिन के गोत्र तो हमहुं सुनाउव हो
बाबा उनके हावैं गंडरिया मैया हाट बेचनिन हो
रामा सातों भइया किंदरि बजावै बहिनी रानी नग्न नाचनि हो।

अर्थात् भंवरा विदेश जा रहा है, किस-किस को इस अवसर पर निमंत्रण देना है। गर्भिणी कहती है-एक तो हम नैहर को निमंत्रण देंगे और दूसरे ससुराल के लोगों को देंगे, परन्तु अपने भैया को निमंत्रण नहीं दूँगी। वही मुझ पर गुस्सा है। पंडित को बुला लावो। पुंसवन संस्कार का शुभ मुहूर्त निकलवायें। बहू को बुलाकर पूछो, कहाँ- कहाँ निमंत्रण देना है। बहू उत्तर देती है-ससुर जी के सारे सगोत्री लोगों को निमंत्रण दो और ससुर जी के ननिहाल के सभी लोगों को भी निमंत्रण दो, लेकिन मेरे बीरन भैया को निमंत्रण नहीं देना, क्योंकि मेरा उसी से विरोध है। इसी समय डमरू के समान सिर पर छत्र धारण किये हुए बीरन भैया भोज्य पदार्थों के साथ पीले वस्त्रों से भरी कांवर लेकर आ खड़े हुए। बीरन भैया भोज्य पदार्थों से लदी कांवर आँगन के बीच में और पीले वस्त्रों का ढेर उसकी सास के आगे रख दिया, साथ ही अपने घोड़े को घुड़सार में बाँध दिया।

चौक पूरने और मांगलिक कार्य करने के लिए नगर के पंडित बुलवाये गये। सभी पंडित शीघ्र आ गये। कार्य प्रारंभ हुआ। पंडित जी ने कहा- प्रभु जी का गोत्र बताओ तो हम भी गोत्र का उच्चारण करें। उत्तर मिला कि उनके पिता साक्षात् राजा दशरथ और माता कौशल्या रानी हैं। सातों भाई गोपी-कृष्ण और बहन पद्मनी हैं। पंडित जी ने कहा- दुलहिन देवी का गोत्र बतलाओ। उत्तर मिला कि उनके पिता गड़रिया और माता हाट में बेचने वाली है, उनकी बहन शहर में नाचने वाली और भाई बाजा बजाने वाले हैं।

गर्भ धारण से सातवें महीने में साध पुजाये जाते हैं। इस अवसर पर गर्भवती स्त्री का भाई पुंसवन संस्कार के अवसर पर पीले वस्त्र और भोज्य पदार्थ अपने बहन को देते हैं। 'बाबा मोर गइन बजाज घर जोड़वा ले आइन मोर पियरी रंगावें बीरन लैके आवें' भौंरों को बुलाकर निमंत्रण देने की प्रथा अन्य ग्राम गीतों में भी पायी जाती है। बहन के भाई का रूठना और भाई का बहन के पास यथासमय नेग लेकर आ जाना लोक गीतों में गाया जाता है।

गर्भवती स्त्री को गर्भ धारण करने और माँ बनने के रोमांच के साथ अनेक प्रकार के दु:ख उन्हें सताती है। इसी भाव से भरा एक गीत पेश है -

चन्दन पालुकी कइसे चढ़िहां अपने ससुर बिना हो
ललना, निहुर के पैंयां कइसे परिहां अपने ससुर बिना हो।
जंघिया जोरी के कइसे बइठिहां अपने जेठानी बिना हो
ललना, ताते रसोइया कइसे रंधिहां अपने देवर बिना हो।
नयन काजल कइसे अंजिहां त अपने होरिला बिना हो
ललना, एंड़िया माहुर कइसे देहां त अपने सइयां बिना हो
बइयां उझालि के कइसे रेंगिहां त अपने ननद बिना हो।
आमे के होइतें में कोइलिया आमे बिच रहतेंव हो
ललना, मोरे प्रभु जातीन अमरैया मधुर बोली सुनातेंव हो
बने के होतें में मिरगा बने बन रहितेंव हो
ललना, मोरे प्रभु जातिन हो शिकार खेले चरन भर रहितेंव हो
जल के होइतें मैं मछुरी जलेन जले रहिते हो
ललना, मोरे प्रभु जातीन सनान गोड़ेन गोड़े छुइतें हो।

गर्भवती स्त्री गर्भभार से क्लांत और शांत होकर एकांत में कहती है कि मैं अपने ससुर के न रहते हुए चंदन पालकी में कैसे चढ़ूँगी और झुककर कैसे उनके पैर पड़ूँगी। अपनी जेठानी के न रहते हुए दोनों जंघाओं को जोड़कर कैसे बैठूँगी। अपने देवर के बिना गरम-गरम रसोई कैसे बनाऊँगी। अपने नवजात शिशु के बिना अपने नेत्रों में काजल कैसे आंजूँगी। अपने स्वामी के बिना ऐड़ी में महावर कैसी लगाऊँगी। अपनी ननद के बिना बांहें उछालकर कैसे चलूँगी। काश, मैं आम के पेड़ में आश्रय लेने वाली कोयल होती तो आम के बगीचे में रहती और जब मेरे प्रभु अमराई में आते तो मैं उन्हें अपनी बोली सुनाती। यदि मैं वन में रहने वाली मृगणी

होती तो वन ही वन में रहती और जब मेरे स्वामी मृगया (शिकार) के लिए आते तो उनके चरण पकड़कर रह जाती। यदि मैं जल की मछली होती तो जल में रहती और जब मेरे प्रभु स्नान करने जलाशय में आते, तो मैं उनके पैरों को बार-बार छूती।

जो मेरे भैया न होइतीस दुखेन हर लेइतीस
कलेस मिटाइतीस हो ललना
प्रभुजी के भैया निरवेदना बंदूक लई बैठे फटक्का लेई बैठे हो।
जो मोरे भैया न होइतीस दुख हर लेइतीस
कलेस मिटाइतीस हो ललना
प्रभुजी के मैहा निर्मोही सखीन लेइ बैठे गावें गीत सोहर हो।
जो मोरे बबन होइतीस दुखेन हर लेइतीस
कलेस मिटाइतीस हो ललना
प्रभुजी के बबा निर्मोही पंडित लेइ बैठे पतरा लेइ बैठे हो।
घूमरि-घूमरि पीरा आवें मैं कौन से बतावां हो
बहिनी मोरे हाइतीस दुखेन हरिलेइतीस
पीरा हरि लेइतीस हो ललना
प्रभुजी की बहिनी निरबेदनी,
काजल लेइ बैठे थरिया लेइ बैठे हो।

अर्थात् जो मेरे भाई होते तो मेरे सभी दु:खों को हर लेते, पर यहाँ मेरे पति के भाई (देवर) तो इतने सहानुभूति शून्य हैं कि उन्हें मेरे गर्भभार के कष्ट की तनिक भी चिंता नहीं है। वे आने वाले आनंद को लेकर इस तैयारी में बैठे हैं कि जैसे ही मेरे प्रसव से पुत्र होगा, त्यों ही आनंद से बंदूक चलायेंगे और फटाके चलायेंगे। जो मेरी माँ यहाँ होती तो मेरे दु:खों को हर लेती, पर यहाँ तो मेरे पति की माता (सास) इतनी निर्मोही हैं कि पुत्रसुख की आशा लिए अपनी सभी सखियों को लेकर बैठी हैं कि जैसे ही मेरा पुत्र होगा, त्यों ही सभी सोहर गीत (बधाई) गाना आरंभ कर देंगी। जो मेरे बाबा होते तो मेरे दु:खों को हर लेते, परन्तु यहाँ तो मेरे पति के बाबा पुत्ररत्न की अभिलाशा लिए पंडित को पंचांग लेकर बैठाये हुए हैं कि कब पुत्ररत्न हो और कब उसका शुभ लग्न देखें। मेरी दशा को कोई नहीं समझता। मुझे रह-रहकर पीड़ा हो रही है। मैं किसको बताऊँ, सभी आनंद अवसर की प्रतीक्षा में उत्सुक बैठे हैं। मेरी इस व्यथा पर कोई सहानुभूति नहीं दिखाता। अरे! यदि मेरी बहन होती तो मेरे सारे दु:ख दूर कर देती, पर मेरे पति की बहन (ननद) इतनी निर्मोहिनी है कि वो मेरे पुत्र के होते ही उसकी नजर उतारने के लिए काजल लगाने के लिए तैयार बैठी है।

सोहर गीत में प्रसव वेदना को व्यक्त करने के लिए भी गीत गाये जाते हैं। गर्भिणी प्रसव वेदना से पीड़ित होती है, लेकिन उसकी सुध लेने वाला कोई नहीं होता। सभी आनंद में मग्न रहते हैं।

सासु सूते हैं गजओबरी ननद खेले कठपुतरी हो
तुम प्रभु खेली पटसार, खभर मोरे कौन करे हो
देवर को कहिहौं मैं लछिमन देवर, छोटका देवर मोरे हो
बाबू जाई बलाइला तुम्हारे भैया खभर मोरे कौन करे हो
एक हाथ धरे मुरलिया धाइन चले जावहिं हो
भैया भौजी बहुत खभर तुमहिं बुलावत हो
भैया हवय हो खेलत उसारे पटसार मुनिन संग बात जोइही हो
मुनि तो आये हो बलाय, जाइ हम का करबो हो
छप्पर होइतीस हम छाई फेंकवातेंव हो ललना
ये गजगहील मोटरिया आइ हम का करव हो
ओतका का सुने भइया उनके भौजी मेर जावहिं हो
इतका ल सुने भौजी उनके सासु मेर जावहिं हो
सासु मरत हे पांजर कई पीरा, पंजरा मोरे सार दे हो
हँसि-हँसि बांधे मोटरिया, बहुत सुख लागे परम सुख लागहिं हो
ललना, ये गजगहिल मोटरिया छोरिन बड़ दु:ख भये हो
मोरे भैया होइतीन मोरे पीरा पाइतिन
प्रभु के भइया निरवेदना त होरिल करें हो
सासु उनके जाई पाछू ठाढ़े होवे हो,
ललना ये गजगहिल मोटरिया झलरिया भुंइयां लूरि परे हो।

अर्थात् सास ऊँची कोठरी में सो रही है। ननद कठपुतलियों का खेल-खेल रही है। ऐसे में मेरी सुध लेने वाला कोई नहीं है। मैं देवर से कहूँगी-ऐ मेरे लक्ष्मण के समान छोटे देवर! तुम जाकर अपने बड़े भैया को बुला लाओ। तुम्हारे अलावा मेरा और कौन सुध लेने वाला है। देवर हाथ में मुरली रखे खेलते-खेलते दौड़ते जाकर भाई से कहता है कि भैया, भौजी तुमको बड़ी व्याकुल होकर बुला रही है। भाई हैं पर उसार में खेल रहे हैं। मुनियों से कष्ट निवारण हेतु बात करते हैं। कहते हैं कि इससे ज्यादा हम क्या कर सकते हैं। छप्पर होता तो हम छा देते, लेकिन यह तो गुरू पोटली है, इस हेतु हम क्या कर सकते हैं। पति की निराशा भरी वाणी सुनकर भौजी के पास जाकर अपना दु:खड़ा रोती है। वह भी कहती है कि वह तो बड़ी गुरू की पोटली है। भौजी के इन शब्दों को सुनकर

वह अपनी सास के पास जाकर कहती है कि मैं इस पेट की पीड़ा से मर रही हूँ, मेरे पेट में तेल लगाकर सार दो। सास बड़े व्यंग्य से बोलती है कि इस पोटली को तुमने हँस-हँसकर बाँधा था, उस समय तो तुम्हें सुख मिल रहा था, अब क्यों इस भारी पोटली को छोड़ने में कष्ट हो रहा है। ससुराल में किसी से सहायता न पाकर गर्भिणी बेचारी अपने भाई को याद करते हुए कहती है कि मेरे भाई यदि यहाँ होते तो मेरी अवश्य सहायता करते। मगर मेरे पति के भाई भतीजे की आस में खुशी से होरिल-होरिल कर रहे हैं। प्रसव पीड़ा बढ़ने लगी। प्रसूतिगृह में सास-बहू के पीछे खड़ी हो गई और शीघ्र मोटरी की झालर से नवजात शिशु जमीन पर आ गिरा।

भिथिया लिपाय चौक चंदन अउर उरेरे हो ललना
अति गरबैतिन ननदिया अजहूं घर न आवे हो
के भौजी पठवे तो नउबा के भौजी बाह्मन हो
के भौजी पठवे बिरनवा गरब मोरे उटके हो
सासु बर पठवें नउवा, ननद बर बाह्मन हो
जेठानी बर तुहीं प्रभु जइहौ, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु बर पठोबे डंड़िया, ननदी बर डोलना हो
ललना, जेठानी बर चंदन पालकिया, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु मोरे आवें ये बिहना, ननदी मोर मंझनिया हो
ललना, जेठानी मोर आवें आधी रात, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु बर हेरें तिलक तेल, ननदी बर अरसी के हो
ललना, जेठानी बर अतरफुलेल, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु बर हेरें चुनरी, ननदी पर पियरी हो
ललना, जेठानी बर लहर पटोर, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु बर हेरें कांके, ननदी बर ढूंढियन हो
ललना, जेठानी बर मोतीचूर के लड्डू, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु मोरे तो गईन बिहना, ननदी मंझनियान हो
ललना, जेठानी मोरे गई आधीरात, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु मोरे गइन भभरत, ननद मोरे हांसत हो
ललना, जेठानी भोरे गये मंहमोर, जेठानी मोर गोतनिन हो
सासु देइन एक रूपया, ननद एक मोहर हो
ललना, जेठानी के कुछू नइ जाना, जेठानी मोर गोतनिन हो।

अर्थात् पुंसवन संस्कार (सधौरी) के अवसर पर पूरे घर को लीप-पोतकर चौक बनाया गया है। सब सामान तैयार हो गया है, लेकिन मेरी घमंडी ननद अभी तक नहीं आयी है। उन्हें बुलाने के लिए नाऊ, ब्राह्मण या बीरन भाई को भेज दें। सास को बुलाने के लिए नाऊ को भेजा, ननद को बुलाने के लिए ब्राह्मण है, परन्तु जेठानी को बुलाने के लिए तो मेरे स्वामी! तुम्हीं को जाना पड़ेगा, क्योंकि जेठानी मेरे प्रिय गोत्र की है। सास को बुलाने के लिए डंडिया भेजी जा रही है, ननद को बुलाने के लिए डोला भेजा जा रहा है, पर जेठानी को बुलाने के लिए चंदन पालकी भेजी जा रही है, क्योंकि जेठानी मेरे गोत्र की है। सास मेरी सुबह आ गयी, ननद दोपहर को, लेकिन जेठानी आधी रात को ही आ गयी थी, क्योंकि जेठानी मेरे गोत्र की है। सास के शृँगार के लिए तिल का तेल, ननद के लिए अलसी का तेल, लेकिन जेठानी के लिए इत्र फुलेल निकाला गया है, क्योंकि जेठानी मेरे गोत्र की है। सास को पहनने के लिए चुनरी, ननद को पियरी, लेकिन जेठानी को रंगीन साड़ी दी गयी है, क्योंकि जेठानी मेरे गोत्र की है। सास को खाने के लिए कांके, ननद को सोंठ के लड्डू और जेठानी के लिए मोतीचूर के लड्डू दिया गया है, क्योंकि जेठानी मेरे गोत्र की है। मेरी सास तो सबेरे गई, ननद दोपहर को और जेठानी आधी रात को गई, क्योंकि जेठानी मेरे गोत्र की है। मेरी सास बड़बड़ाती हुई गई, ननद हँसती हुई गई, लेकिन मेरी जेठानी ईर्ष्या से मुँह मोड़ती हुई गई। सास जाते समय एक रूपया दी, ननद एक मोहर, लेकिन जेठानी ने कुछ नहीं दिया। इस गीत में सास, ननद, देवरानी और जेठानी के चरित्र का चित्रण सुंदर ढंग से किया गया है।

मचियहिं बैठे सासु उनके बहुवा का समझावै
बहुवा मनावै हो
ललना, उठा बहुवा! पिया मधु पीपर होरिला दूध आइहैं हो
सासु! का बोलौं सासु मोर, मैं पइयां लागौ
सासु! कपूरे बरन मोरे दांत, कमल फूल जिभिया,
नइ पियौं मधु पीपर हो
चंवराहिं बैठे ससुर उनके बहुवा का समुझावै
बहुवा मनावै हो
ललना, उठा बहुवा! पिया मधु पीपर होरिला दूध आइहैं हो
ससुर का बोलौं ससुर मोरे, मैं पइंया लागौ हो

ससुर! कपूरे बरन मोरे दांत, कमल फूल जिभिया,
नइ पियौं मधु पीपर हो
मचियहिं बैठे देवर उनके भाभी समुझावैं भाभी मनावैं हो
ललना, उठा भाभी! पिया मधु पीपर होरिला दूध आइहैं हो
देवर का बोलौं देवर ! मोरे, मैं पइंया लागौं हो
बाबू! कपूरे बरन मोरे दांत, कमल फूल जिभिया,
नइ पियौं मधु पीपर हो
पलंग में बड़के धनी उनके प्यारी समुझावै प्यारी मनावैं हो
ललना, उठा प्यारी! पिया मधु पीपर होरिला दूध आइहैं हो
प्रभुजी! का बोलौं प्रभु! मोरे मैं पइंया लागौं हो
प्रभुजी! कपूरे बरन मोरे दांत, कमल फूल जिभिया,
नइ पियौं मधु पीपर हो
कनिहा का देइहौं दुई लात, गालेन दुई चटकन हो
ललना, करि लानिहौ दूसर बिहाव, होरिल पोसी लेहौं हो
अओ! अओ! आर परोसिन! तुइंन मोरे मैया,
तुमीच मोरे बहिनिया हो
बहिनी, प्रभुजी का देइहौं समुझाय मैं पीहां मधु पीपर हो
सोंठ के झार घरी भर, पीपर भर हो ललना
सौत के झार जनम भर मैं पीहां मधु पीपर हो।

पास में रखी लकड़ी की चौकी पर बैठकर सास, बहू को समझा रही है कि बहू! उठो, मधु पीपर पीयो। इसे पीने से होरिल यानी नवजात शिशु को पिलाने के लिए स्तनों में दूध भर आयेगा। नवप्रसूता अपनी सास से कहती है कि सासु जी, मैं तुम्हारे पैर पड़ती हूँ, इतनी कड़वी और तेज दवा मुझे मत पिलाओ। दवा की तीक्ष्णता और झार को मेरी जीभ सहन नहीं कर सकेगी। मेरे सुंदर कपूर के समान स्वच्छ और धवल दाँत, कमल फूल के समान मेरी जिह्वा इस कड़वी दवा को ग्रहण करने में असमर्थ है और उनकी सुंदरता नष्ट हो जाने का मुझे भय है। सास के समझाने पर भी जब बहू ने मधु पीपर नहीं पिया तो बगल में बैठे ससुर ने भी उन्हें समझाकर मधु पीपर पीने की बात कही। लेकिन बहू ने उन्हें भी वही जवाब दिया, जो सास को दी थी। मचिया पर बैठे देवर ने भी अपनी भाभी से मधु पीपर पीने की विनती की, लेकिन भाभी का वही रटा-रटाया जवाब था। अब उन्हें समझाने की बारी पति की थी। उन्होंने समझाते हुए कहा कि उठो प्यारी! मधु पीपर पी लो, इससे होरिल के लिए दूध आ जायेगा। तब उन्होंने पति से कहा- मैं प्रभु जी से विनती करती हूँ, पैर पड़ती हूँ। मैं मधु पीपर नहीं पियूँगी। मेरे दाँत कपूर के समान स्वच्छ और सफेद है, जीभ भी कमल फूल के समान कोमल है। इससे आहत होकर पति गुस्से में कहने लगा कि कमर में दो लात मारूँगा, गालों में चांटा लगाऊँगा, मैं दूसरा ब्याह कर बच्चे को पाल लूँगा। पति के कठोर वचन सुनकर वह अपने पड़ोसन को बुलाकर कहती है, तुम मुझ पर बहन और माता के समान स्नेह रखती हो। तुम्ही मेरे पति को समझाओ। आगे वह कहती है कि सोंठ की झार (तीखापन) एक घड़ी दु:ख देगी। मधु पीपर की झार एक पहर दु:ख देगा, मगर सौत की झार जीवन भर दु:ख देगी, मैं किसी तरह मधु पीपर पी लूँगी। बच्चा होने के बाद जच्चा को मधु पीपर और सोंठ आदि कुछ दवाएँ दी जाती हैं, जिससे स्तनों में दूध भर जाता है। इस गीत में प्रसूता के सुकुमार्य और सौंदर्य अभिमान का रूप दृष्टव्य है।

श्री प्यारेलाल गुप्त ने 'प्राचीन छत्तीसगढ़' में रामायणकाल के एक प्रसंग का उल्लेख करते हुए लिखा है- रानी कौशल्या बंध्या जीवन से दु:खी रहती हैं। राजा दशरथ ब्राह्मण बुलाकर अनुष्ठान कराते हैं, जिससे उन्हें पुत्ररत्न की प्राप्ति होती है। जब बच्चे के बारे में बताया जाता है कि 12 वर्ष की आयु में उन्हें वनवास जाना पड़ सकता है। लेकिन रानी बच्चे के जन्म से इतनी खुश रहती है कि बच्चे के वनवास जाने से होने वाला दु:ख उन्हें महसूस नहीं होता। देखिये गीत -

बारा बछर के होइहंय त रामचंद्र बन ल जइहंय हो।
ललना, धरिहंय जोगिया के भेस, कंदमूल खइहंय हो।
भल भय राम जनम लिहे, भलय बन जइहंय हो।
ललना, मोर छुटि गय बंझुली के नांव, बहुरि घर अइहंय हो।

इसी प्रकार सोहर गीतों में दोहद भाव के गीत अधिक मात्रा में मिलते हैं। आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार गर्भ धारण करने के बाद स्त्रियों को अनेक प्रकार की चीजें खाने की इच्छा होने लगती है, इसे दोहद कहते हैं। इसे पूरा करना परिवार वालों का कर्त्तव्य माना जाता है। एक गीत में श्रीकृष्ण रानी रूक्मिणी से पूछते हैं -

हँसि-हँसि पूछय सिरी कृष्ण सुना रही रानी रूकमनी हो
ललना, कउन-कउन के साध कहा रानी हमसन हो।

रानी रूक्मिणी को अबूझ फल खाने की इच्छा होती है। अबूझ फल शायद अनिच्छा का द्योतक है। एक अन्य गीत में वह नारंगी फल खाने की इच्छा करती हैं, जो उनके मायके के बगीचे में है। श्रीकृष्ण नारंगी फल लेने उनके मायके जाते हैं, लेकिन फल तोड़ते श्रीकृष्ण पकड़े जाते हैं। तब वह दौड़कर मायके जाती है और अपने पति के दोषी नहीं होने और उन्हें छोड़ने की बात कहती है-

भैया चोर का ढीला बधना बंधिया, पंजर ओकर पातर हो
बहिन ल कहिन बहिनी, सुना दीदी मोर हो
कहूं फल फरतिस कांवर-कांवर भेजितेंव हो
दीदी नहीं फरे हे नारंगी कइसे साध पुरवंय हो।

एक अन्य गीत में, भाभी को पुत्र जन्म पर सबसे पहले बधाई देकर नेग लेने वाली ननद के आने की चिंता सताती है-

आंखि के अंजौनी लेइ लेहय
नाके नथनी, लेहिहय गर के हार।
बजनिया के कइहय हार बजनिया बड़ भइया
भइया धीरे-धीरे बाजय बधाई।
ननदी झन सुनय, ननद रानी सुनिहय,
आंखि आंजय अइहय,
ललना लेइ लेहय गर के हार।

वास्तव में सोहर गीत गर्भाधान के निश्चय होने के बाद से गाया जाने वाना लोकगीत है। इसमें खुशी, बधाई, आशीष, बंध्या जीवन की वेदना, गर्भिणी स्त्री की मनोदशा, विभिन्न प्रकार के रस्मों-रिवाजों का चित्रण और ननद के द्वारा पुरस्कार पाने सम्बंधी गीत की प्रचुरता रहती है।

छत्तीसगढ़ी जन्म गीत

उर्मिला शुक्ल

संस्कारों का महत्त्व प्रत्येक समाज और जाति में होता है, क्योंकि ये जीवन के विकास से जुड़ते हैं। भारतीय संस्कृति में संस्कारों का महत्त्व कुछ अधिक है। कारण धर्म भारत का प्राण रहा है, और संस्कार धर्म के ही अंग हैं। लोक गीतों का संस्कारों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। गीतों के बिना कोई संस्कार सम्पन्न ही नहीं होता। शास्त्रों में संस्कारों की संख्या सोलह बताई गयी है। जन्म के पूर्व से लेकर मृत्यु तक संस्कारों का विधान मिलता है।

भारतीय लोकगीतों में संस्कार गीतों का विशेष स्थान है, और संस्कार गीतों में जन्म संस्कार से जुड़े गीतों का। कारण शायद जीवन के प्रति मानव का मोह ही है, तभी तो जन्म संस्कार गीतों में बहुलता और विविधता दोनों ही मिलती है। कवित्त्व की दृष्टि से भी ये गीत महत्त्वपूर्ण हैं। यह बात विभिन्न अनुष्ठानों के समय गाये जाने वाले अनौपचारिक गीतों के अतिरिक्त अन्य सभी गीतों पर लागू होती है, जिनमें रसात्मकता और लयात्मकता होती है। जन्म के समय गाये जाने वाले गीत सोहर कहलाते हैं। इन गीतों में आनंद और उत्साह होता है– 'बाजे अनंद बधाये उठन लगे सोहर हो'। यह आनंद पुत्र जन्म से जुड़ा है। सच तो ये है कि सोहर का सम्बन्ध ही पुत्र जन्म से है। भारत के अधिकांश क्षेत्रों में लड़की के जन्म पर उत्सव नहीं मनाया जाता, इसलिए सोहर गीतों में पुत्र जन्म का आनंद झलकता है। सोहर को हिन्दी साहित्य में भी स्थान मिला है। तुलसीदास जी ने 'राम लला नहछू' में सोहर छंद का प्रयोग किया है। मेरा मानना है कि लोक में यह गीत पहले से रहा होगा। तुलसीदास जी ने इसका नामकरण करके परिष्कार किया और साहित्यिक छंद में परिणत किया। इसी आधार पर इसे सोहर कहा जाने लगा। मगर तुलसीदास कृत सोहर से लोक में गाये जाने वाले सोहर भिन्न हैं। खास कर मात्राओं के मामले में। लोक गीतों के सोहर में मात्राओं का कोई अनुशासन नहीं है। लोक में सोहरों की रचना स्त्रियों ने की

होगी, तभी तो इनकी प्रकृति इतनी कोमल होती है। स्त्री सुलभ भावनाओं का चित्रण सोहर की प्रमुख विशेषता है। इसे जन्म संस्कार से जुड़े संस्कारों यथा छठी 'बरसा' मुंडन और कनछेदन पर गाया जाता है।

छत्तीसगढ़ की संस्कृति श्रमजीवी संस्कृति है। यहाँ लड़के और लड़की में वैसा भेदभाव भी नहीं है, जैसा अन्य प्रदेशों में है। इसीलिये यहाँ सोहर गाने का चलन उन्हीं समाजों में है, जिनका सम्बन्ध उत्तर प्रदेश से रहा है, और अब वे यहाँ के निवासी हो चुके हैं। इसलिए छत्तीसगढ़ में सोहर सवर्ण जातियों में ही गाया जाता है। ये महिलाओं के द्वारा गाये जाने वाला सामूहिक गीत हैं। इसमें वाद्य यंत्र रूप में ढोलक, झाँझ, मंजीरे के साथ-साथ थाली, कटोरी और चम्मच का उपयोग भी होता है।

इस अंचल में गाये जाने वाले सोहर दो प्रकार के होते हैं- पहला कथा प्रधान सोहर जिनमें राम और कृष्ण के जन्म का वर्णन होता है और दूसरे प्रकार के सोहर में ननद भाभी की नोक-झोंक का वर्णन होता है। सोहर गायन का प्रारम्भ कथा प्रधान सोहर से ही होता है। इसका एक उदाहरण देखिये-

विघन हरन गन नायक, सोहर सुख गाववथंव
साती धनि अँगिया के पातर, देवकी गरभ म रहय ओ
बहिनी विघन हरण गन नायक..... ।
साते सखी आघु चलय, साते सखी पाछु बहिनी
बीच म जसोमती रानी चलत है
जुमना पानी भरन चलय हो
कोनो हला कोने बहटलोहिया बहिनी मोर
कोनो सखी बोहे माटी के घईला
चलत हे जमुना पनिया भरन बर ओ बहिनी ।
सोन के गुड़री रूपे घईला
दसोमती बोहे हवय वो बहिनी
जाय जमुना तीर ठाड़ होवय हो मोर बहिनी।
दसोमत बोलेन लागय हो ओ बहिनी
कोनो सखी हाथ गौड़ धोवय, कोनो मंजन करय ओ
कोनो सखी देखे जमुना पार देवकी रोवत रही ओ
बिघन.....
दसोमत रानी मन म गुनय अउ सोचन लागय ओ बहिनी
कइसे माय नहँकव जमुना धार, जमुना त बैरिन होगे ओ
इहाँ कोनो नाव नइये, कोनो घाट के घटोइया नईये ओ
अउ नई त दिखे खेवइया मय कइसे
नहँकव जमुना पर ओ बहिनी...
भिरे कछोरा मुड़ उघरा, दसोमती जमुना म धँसगे ओ
बहिनी तँउरत पहुँचिस वो पार देवकी ल समझाय बर ओ
बिघन हरन .....
दसोमत रानी मन म गुनय अउ सोचन लागय ओ बहिनी
कइसे माय नहँकव जमुना धार,
कोनो घाट के घटोइया नईये ओ
अउ नई त दिखे खेवइया मय
कइसे नहँकव जमुना पर ओ बहिनी ..
भिरे कछोरा मुड़ उघरा, दसोमती जमुना म धँसगे ओ
बहिनी तंउरत पहुँचिस वो पार देवकी ल समझाया बर ओ
बिघन हरन...
का तोला सासे गारी देवय, ननद संग दुरमत भये ओ
का तोर सैंया भये परदेसिया,
तेखर दुख रोवत हस ओ बहिनी
न मोला सास गारी देवय, नहीं ननद संग दुरमत भये ओ
बहिनी न सैंया गये परदेश कोखे के दुख माय रोथव ओ
बिघन.....
सात बेटवा राम दिये मोला, सबे ल कंस हर लिये बहिनी
आठवा गरभ मोल लागे, माय कइसे भरोसा करव ओ
बहिनी तब मुख बोलय जसोमती रानी,
तय सुनले देवकी बहिनी ओ
मय अपनों ल लेहों बचाय,
मय तोरो ल लेहों बचाय ओ, बिघन....
चुप-चुप देवकी मय काम करि अईहव ओ
बहिनी अपन लड़का मय तोला देवत हंव ओ
तब बोलय देवकी रानी तोर जीव जड़ हावय ओ
नून अउ तेल के उधारी होथे, अउ पइसा के उधारी होथे ओ

बहिनी मोर कोख के उधारी नइ होवय
कइसे के भरोसा करों ओ

इस सोहर में कृष्ण जन्म से पूर्व यशोदा और देवकी के मिलन और यशोदा का देवकी को वचन देना कि वह अपने बच्चे के साथ-साथ उसके बच्चे को भी बचा लेगी, जो प्रसिद्ध कथा से अलग है। इसके साथ ही इसमें छत्तीसगढ़ की संस्कृति में यशोदा और देवकी को ढाला गया है, उनका नदी स्नान वहाँ से पानी भरना आदि वर्णन है।

दूसरे प्रकार के सोहर में ननद-भाभी के बीच होने वाली नोक-झोंक का वर्णन मिलता है। पुत्र जन्म पर ननद को नेग देने का रिवाज है और नेग देना भाभी को अखरता है, इसलिये वह बहाने बनाती है। नेग के लिये ननद की जिद और भाभी की आनाकानी, ससुराल वालों की नाराजगी की परवाह न करते हुए, मायके वालों से सारे अनुष्ठान करवाने का वर्णन भी मिलता है। इस सोहर में भाभी बेटे के जन्म पर धीरे-धीरे बाजा बजाने को कहती है। उसे डर है कि कहीं ननद सुन न ले और नेग न माँगने लगे। उधर ननद उल्लास में भरी है, वह भतीजे के होने का इंतजार कर रही है-

धीरे-धीरे बाजे मोर आनंद बधइया
बाजे आनंद बधइया ओ
मोर तो ननदी झन सुनय ओ
अहो ललना मोर तो ननदी झन सुनय ओ
हमरो भाई के होय हवे ललना
हमू काजर आँजे ला जाबो न ओ
संइया चढ़े घोड़वा, हमु चड़बो डोलिया
भर मोहर पाबो ओ
माँगो-माँगो ओ ननदिया
जो मन चाहे तुम्हार
कपड़ा अउ ओढ़ना झन माँग ओ बाई
मोर पेटी के सिंगार
लहंगा देहुँ अउ देहुँ चूरी पाट
माँगों माँगों ओ ननदिया
लड़का झन माँग बाई
ओ मोर गोदी के सिंगार
भइया ल देहुँ भतीजा ल देहुँ
देहुँ छक्का चार
बरतन भड़वा झन माँग ओ बाई
मोर चउका के सिंगार
लोटा देहुँ खड़ाकार
गहना झन माँग ओ
मोर अंग सिंगार

इस गीत में भाभी-ननद से नेग माँगने को तो कह रही है, साथ ही वह कह रही है कि कपड़ा, ओढ़ना मत माँगना, वो मेरे तन का शृँगार है। हाँ, मैं तुम्हें लहँगा दे सकती हूँ, काँच की चूड़ी भी दे दूँगी। बरतन मत माँगना वो मेरी रसोई का शृँगार है, लोटा दे दूँगी, इस तरह वो ननद को बेकार की चीजें ही नेग में देना चाहती है।

ननदी बलायेव वोहू नइ आइस
ननदी हो हमार का करि लेहव
बहिनी बलाके काँके मढ़ाबोन
ननदोई बलयेन वोहू नइ आइन
ननदोई हो हमार का कर लेहव
भांटो बलाके नरियर फोरा लेबोन
जेठानी बलायेन वोहू नइ आइन
जेठानी हो हमार का करि लेहव
भौजी बलाके सोहर गवाबोन

इस तरह इस सोहर में बताया गया है कि ससुराल के लोगों के बिना भी काम चल सकता है। छत्तीसगढ़ में बारसे का उतना महत्त्व नहीं होता, जितना छठी का होता है। इस दिन सभी मेहमान को काँके पिलाया जाता है। चाय की तरह दिखाई देने वाला लाल रंग का यह पेय एक जड़ी से बनाया जाता है। यह परम्परा है, छठी के दिन यह पेय अनिवार्य रूप से पिलाया जाता है। छत्तीसगढ़ के कुछ समाजों में छठी के दिन ही बच्चे के बाल भी मुड़ा दिये जाते हैं। इन समाजों में मुंडन संस्कार चलन में नहीं है।

कुछ सोहरों में जच्चा की गर्भावस्था का वर्णन मिलता है। इनमें गर्भ में लड़के के लक्षणों का वर्णन मिलता है–

पहिली महीना जब लागिस अंग फरियाइस
अंग पियर मुँह दूबर गरभ के लच्छन हो
दूसर महीना जब लागिस सास गम पाइस
जेवनी गोउ बिछलाय जिया मचलाये हो
तीसर महीना जब लागिस ननद मुस्काईस
होहे लाल कन्हैया पंच लर पायब हो
चौथा महीना जब लागिस सास पुलकाइस
होही कुल रखवारे मोतियन लूटइहों हो

इसी तरह लड़के की कामना में किये गये व्रत, पूजा पाठ का वर्णन भी मिलता है–

रहेंव मय कतेय उपास जोरेंव दुनो हाथ हो
ललना लड़का ल पयेव मय आज मोर मन हुलास हो
सुरहिन गइया के गोबर मँगायेव खूँट धारे अँगना लिपायेव हो
....ललना आज जागिस मोर भाग हो

छत्तीसगढ़ आदिवासी बहुल क्षेत्र है और इस समाज में वैदिक संस्कारों का चलन नहीं है। इसीलिए नामकरन, मुंडन, कर्ण छेदन इनकी अपनी अलग अवधारणाये हैं। इन संस्कारों का चलन सवर्ण समाज में ही है। अतएव जन्म संस्कार से जुड़े गीतों में सोहर ही प्रमुख हैं, जिन्हें यहाँ सोहर गीत कहा जाता है।

बुन्देली जन्म गीत

अर्पणा बादल

मनुस्मृति में कहा गया है कि जन्म से मनुष्य पशु पैदा होता है, परन्तु जब वह संस्कार का आभूषण धारण करता है, तभी उसे मनुष्य की संज्ञा प्राप्त होती है। इस सम्बन्ध में एक श्लोक द्रष्टव्य है-

जन्मना जायते शुद्रः संस्कारो द्विज उच्चते।

तात्पर्य है कि मनुष्य को मनुष्यता प्राप्त करने के लिये अच्छे संस्कारों की आवश्यकता होती है, और हमारे देश में प्राचीन काल से ही ऋषि-मुनियों ने जन्म के पूर्व से लेकर मृत्यु उपरान्त तक संस्कार की विधियों का सृजन किया है।

एक ओर जहाँ शिक्षित वर्ग मंत्रबद्ध परम्परा का निर्वहन करता है, वहीं लोक मानस अपने हृदय के सुख-दुःख, आनंद, विरह, मिलन, प्रेम और घृणा तथा करुणा की धारा से अभिभूत होकर अपने भावों को अपने शब्दों में बाँधकर लोकगीतों के माध्यम से व्यक्त करता है।

अनिष्ट की आशंका के लिये वह अपने श्रद्धा और विश्वास में बँधे देवी-देवताओं का स्मरण कर जीवन की मंगल कामना करता है, वहीं मनोवांछित उपलब्धि प्राप्त होने पर झूम कर गा उठता है, और वह जो कुछ गाता है, अनायास ही लोक गीतों की सृष्टि कर लेता है।

जन्म से ही जहाँ उसका जीवन आरम्भ होता है, वहाँ जन्म के पूर्व ही माँ के हृदय में मातृत्व जाग जाता है। पिता का वात्सल्य फूट पड़ता है, वहाँ सामाजिक सम्बन्ध ननद-भौजाई भी अपनी आनंद की अभिव्यक्ति करने लगती हैं। यदि हम लोक गीतों को जन्म संस्कार से जोड़कर आरम्भ करें, तो यह जन्म के पूर्व से ही नवागत की तैयारी के, उसके मंगल की कामना, नवप्रसूता के स्वास्थ्य की हिदायतों व रक्षा के लिये देवी-देवताओं की मनौती के गीत गाये जाने लगते हैं।

बुन्देली लोकगीतों का स्वाभाविक सृजन यहाँ की प्रकृति, परिवेश व जनमानस की संवेदनाओं के आधार पर हुआ है।

जन्म संस्कारों के अवसरों पर गाये जाने वाले गीतों में संचत, सोहरे, बधायें, सरिया, कुआँ पूजन, झूला गीत, पासनी, मुंडन आदि के गीत शामिल किये जा सकते हैं।

संचत या अठमासी

संचत शब्द संतति का ही अपभ्रंश रूप है। मातृत्व स्त्री जीवन की सार्थकता है। इसलिये स्त्री के मातृत्व रूप को भव्य और कल्याणकारी माना गया है।

गर्भविधान की अवस्था में बुन्देलखण्ड में सातवें, आठवें व नवे माह में ओली भरने का रिवाज है। इस अवधि में गर्भवती नारी के लिये विभिन्न प्रकार के पकवान बनाये जाते हैं। संचत गीत गाये जाते हैं। इस अवसर पर आस-पड़ोस की स्त्रियाँ एकत्र होकर मांगलिक गीत गाती हैं। इन गीतों में प्रमुख रूप से गर्भवती स्त्री को इस प्रकार की शक्ति दी जाती है कि इस समय वह विशेष सावधानी का आचरण करे और प्रसव वेदना को आनंद के साथ सहज रूप से सह ले। इस सन्दर्भ में बुन्देलखण्ड में जो गीत गाये जाते हैं तथा ओली भरने का जो नेग होता है, उसे 'आगन्ने' का नेग कहते हैं। वैदिक संस्कृति में इस संस्कार को 'पुंसवन' अथवा 'सीमन्तोन्नयन' कहा जाता है। इस अवसर पर बुन्देलखण्ड में अनेक प्रकार के गीत प्रचलित हैं, जो गर्भवती स्त्री को सावधानी बरतने, खुश रहने व अपना ध्यान रखने और उसकी कुशलता से सम्बन्धित है, यथा-

सुकुमारी धना दौजी की भरी
पैंया तुमारे हो रहे भारी
झमक चढ़ौ न अटारी
सुकुमारी धना दौजी की भरी
कह दो पिया से जाये बजरिया
ल्यावे सौंठ गुर की परिया
सुकुमारी धना दौजी की भरी।
मास गये फिंहके घर लालन
फूटें झिरे सूखे तालन
सुकुमारी धना दौजी की भरी।।

उपर्युक्त गीत में गर्भवती स्त्री को सम्भल कर चलने, अटारी पर सावधनी से चढ़ने की सीख दी है, ताकि किसी प्रकार का अनिष्ट न हो सके। साथ ही इस गीत में उसके स्वास्थ्य की रक्षा के लिये आवश्यक वस्तुएँ बाजार से लाने को कही गई हैं। गोद भरने के अवसर पर गर्भवती महिला सोलह श्रृंगार कर दुल्हन की तरह शर्मीली, सजीले मनोभावों के साथ परिवारजनों के मध्य चौक में बैठती है। उसे मखाने व नारियल के गोले की माला उसकी ननद पहनाती है, फिर उसके ऊपर भीगे हुये चने को उड़ेला जाता है, उसे मिठाई खिलाई जाती है। परिवार और आस-पड़ोस की महिलाएँ बारी-बारी से टीका लगाकर उसकी मेवे, मिठाई व फल से गोद भराई करते हैं। महिलाओं द्वारा मंगल गीत गाये जाते हैं। देवर द्वारा उसके कान में बाँसुरी बजाई जाती है। सास द्वारा उसके कान में कोई अच्छी बात या मंत्र का उच्चारण किया जाता है। अन्य महिलाओं द्वारा मंगल गीत गाये जाते हैं-

होन लगी गोद भराई, लालन के आवन की
सुरहन गऊ के गोबर मंगाये
दिगधर भुअन लिपाई-लालन के...
चन्दन चौकी बैठकर दीनी
मोतियन चौक पुराई, लालन के...
हीरा मोतियन के हरवा पहिनाये
रेशम धोती बहुरिया पेराई, लालन के....
नरियल बतेसा सेव मोसम्बी
सात बरन की मिठाई मंगाई, लालन के...
मोहरे दो मोहरे ससुर लुटाबे
अंगना होन लगी है नचाई, लालन के...

आठमासी गोद भराई का उद्देश्य बच्चे के जन्म के पूर्व से

ही आगत का स्वागत करना, खुशियाँ मनाना व गर्भवती महिला को हर्ष पूर्ण वातावरण प्रदान करना होता है, ताकि वह शारीरिक व मानसिक रूप से सुदृढ़ बने।

चरुआ

जब नवशिशु का आगमन हो जाता है, तब स्त्री (जच्चा) को चरुआ का पानी पिलाया जाता है। चरुआ या चढ़वा का अर्थ है - कोरे मिट्टी के मटके के ऊपर हल्दी चावल से टीका कर उस पर गोबर लगाकर दूब चिपकाई जाती है, फिर उसमें पानी भरकर जड़ी-बूटियाँ (जायफल, अजवाइन, पीपरा) आदि डाली जाती हैं। इस पानी को चूल्हा जलाकर उबाला जाता है, फिर ठण्डा होने पर इस पानी को जच्चा को पिलाया जाता है, और इस रस्म को घर की कोई बुजुर्ग महिला करती है, और इस अवसर पर महिलाओं द्वारा ढोलक की थाप पर 'सोहर' गाये जाते हैं। सोहर शब्द संस्कृत के 'सूतिगृह और प्राकृत 'सुरहर' से बना है। जन्म के समय का आनंद इन गीतों की मूल प्रेरणा है। संसार में पुत्र जन्म से बढ़कर दूसरा कोई आनंद दायक समय नहीं होता।

चढ़वा का दस्तूर सास मांगती है, अर्थात् नेग में अपनी बहू से कुछ उपहार माँगती है। इसी तरह ननद, देवरानी, जिठानी भी नेग माँगती हैं। इन गीतों में हँसी-मजाक का पुट ज्यादा होता है, ताकि महिला की प्रसव पीड़ा कम हो जाये और मन नवजात शिशु की ओर लग जाये। एक गीत-

तारो लगाये कुची ले गये बलम बम्बई खाँ चले गये।
आई सास रानी चढ़आ चढ़ाई
चढ़आ चढ़ाई नेग माँगे, बलम बम्बई....
लरका तुमाये गये हैं परदेश में
मोय कछु नई दे गये, बलम बम्बई...
आई जिठानी लड्डू बनाई,
लड्डू बनाई नेग माँगे, बलम बम्बई...
देवरा तुमाये जिठनी गये हैं परदेशन...
मोय कछू नई दे गये, बलम बम्बई...
आई देवरानी भोजन बनाई
भोजन बनाई नेग मांगे, बलम बम्बई...
जेठ तुमाये छोटी गये हैं परदेशन,
मोय कछु नई दे गये -बलम बम्बई...
ननदी आई काजर आंजी
काजर अंजाई नेग मांगे, बलम बम्बई...
वीरन तुमाये बिन्ना गये हैं परदेशन
मोय कछु नई दे गये, बलम बम्बई...
देवर आये गगरी उतारी,
गागर उतराई नेग मांगे, बलम बम्बई...
भैया तुमाय लाला गये हैं परदेशन,
मोय कछु नई दे गये, बलम बम्बई...
संग की सखियाँ सब जुरआई
सोबर गबाई नेग मांगे, बलम बम्बई...
घर के घरैया गये हैं कमाउन
चार दिना की कै गये, बलम बम्बई...

बुन्देलखण्ड के इस 'सोहर' गीत में जच्चा अर्थात् बच्चे को जन्म देने वाली महिला कहती है कि सास, जेठानी, देवरानी, ननद, देवर, पड़ोसन आप सबको मैं क्या नेग दूँ, बच्चे के पिता तो तिजोरी में ताला लगाकर चाबी अपने साथ लेकर बम्बई चले गये हैं और मुझे कुछ भी नहीं दे गये हैं। उनके आने पर ही इस नेग को दिया जाएगा। बुन्देलखण्ड के गाँव में आज भी महिलाएँ ढोलक, मंजीरे की थाप पर इन गीतों का आनंद उठाती हैं, तथा लोक संस्कार को जीवित रखे हुए हैं।

दस्टोन

शिशु जन्म के सातवें या दसवें दिन चौक या दस्टोन की रस्म होती हैं, जिसमें कच्चा खाना बनाया जाता है। कढ़ी, चावल, बरा, दाल, रोटी, पापड़ आदि बनाया जाता है, और उसे जच्चा को खिलवाया जाता है। सारे सगे-सम्बन्धियों को बुलाया जाता है। माँ बच्चे को गोद में लेकर चौक में बैठती है। चौक से तात्पर्य है- जमीन गोबर से लीपकर आटा, हल्दी, कुमकुम से चौक पूरना, उसके ऊपर पटा रखकर बाजू में घी का कलश रखकर, पटे पर जच्चा शिशु को गोद में लेकर बैठती है। इस अवसर पर गाया जाने वाला गीत-

आज दिन सोने को महाराज
सोने को सब दिन सोने की रात
सोने के कलस घराओ महाराज
आज दिन सोने...

गइआ का गोबर मंगाओ बारी सजनी
ढिंग दे अंगन लिपाओ महाराज
आज दिन सोने को महाराज
ढिग गोबर लिपाओ बारी सजनी
मोतिन चौक पुराओ महाराज
आज दिन सोने को महाराज
मोतिन चौक पुराओ बारी सजनी
चंदन पटरी उराओ महाराज
आज दिन सोने को महाराज
चंदन पटरी उराओ बारी सजनी
इमरत अरघ दुआओ महाराज
आज दिन सोने को महाराज
इमरत अरघ दुआर औ बारी सजनी
जसुदै चौक ल्याओ महाराज
आज दिन सोने को महाराज
चौके ल्याकै पूजा कराओ लालन कठे लगाओ महाराज
आज दिन सोने को महाराज

बधायें

चौक या दस्टोन के अवसर पर ही बच्चे की बुआ बच्चे के लिये वस्त्र, आभूषण, लड्डू, बताशे, फल आदि व अपनी भाभी के लिये वस्त्र लाती है, इसे बधावा कहा जाता है। बुआयें मिलकर बधावे के साथ ढोल-बाजा लेकर घर आती हैं और इस अवसर पर महिलाएँ विशेष प्रकार का नृत्य करती हैं, यह नृत्य बधावा कहलाता है। बुन्देलखण्ड में बधावा नृत्य के समय न्यौछावर भी की जाती है, जिसे वहाँ उपस्थित बजाने वाले व अन्य मिलकर बाँट लेते हैं। इस अवसर पर महिलाएँ गीत गाती हैं-

ननदी मोरी आज छम-छम नाचे
ननदी मोरी सूते कपड़ा न लइयो
रेशम को है मोरे रिवाज
ननद मोरी पीतर के जेवर न लइयो
सोने को है मोरे रिवाज
ननद लोहे को पलना न लइयो
चंदन को है मोरे रिवाज
ननदी मोरी ढपला बजाऊत न अइयो।
शहनाई को है मोरे रिवाज
ननदी मोरी रसगुल्ला न लइयो
बताशा को है मोरे रिवाज।

काजर अंजारे

इस अवसर पर जो चौक पर दीया जलाया जाता है, ननद उसके ऊपर काँसे का बर्तन रखकर काजल बनाती है, फिर उसे बच्चे को लगाती है, जिसका भी नेग भाभी को देना पड़ता है, इस अवसर पर गाया जाने वाला गीत -

निकरो भौजी रानी अंगना
लेओ लालन की बधाई।
काजर अंजाई भौजी लेहो कंगना
रूपइया लेओ काजर अंजाई।
न दैहो ननद बैया कंगना।
जे कंगना मोरे ससुरा की कमाई,
न देहौ ननद बैया कंगना।
अठन्नी ले लो ननदी काजर की अंजाई
चवन्नी ले लो ननदी, काजर की अंजाई।
कंगना तो भौजी फिर मिल जेहै,
जुग-जुग जिये मोरे भाई भौजाई।
दुबारा आहौ भौजी तोरे अंगना
लेओ लालन की बधाई।

इस तरह ननद-भौजाई का हास-परिहास बुन्देलखण्डी गीतों में भरा पड़ा है, पर अंत में ननद बिना किसी मोह के भाई व भौजी के भलाई का ही आशीर्वाद देती है। परम्परानुसार जो बधावा लेकर आते हैं, उनका मान-सम्मान होता है, भोजन करवाया जाता है और जाते समय श्रद्धानुसार विदाई में उपहार दिया जाता है।

कुआँ पूजन

शिशु जन्म के लगभग एक माह पश्चात् कुआँ पूजन किया जाता है। कुआँ पूजन के दिन से प्रसूता को घर से बाहर निकलने की छूट मिल जाती है। इस दिन घर व बाहर की पाँच या सात सुहागिनें उसके साथ पानी भरने कुएँ पर जाती है। प्रसूता के पुत्र होने पर कुएँ की जगत पर गोलाकार सात बार लीपती हैं और पुत्री

होने पर पाँच बार, फिर उस पर चौक पूरती हैं- हल्दी, गुड़ व चावल से पूजा करती हैं। प्रसूता अपने स्तन से पाँच, सात बूँदे कुएँ में दूध निचोड़ती एवं प्रार्थना करती है, जैसे आप भरे पूरे हैं। वैसे मेरे ये स्तन भी बच्चे के लिये दूध से भरे-पूरे हों। इसके बाद कुएँ से पानी भरती हैं। इस समय कुआँ पूजन के गीत गाये जाते हैं। इस अवसर पर पानी लेकर जब अपने घर जाती हैं, तो रिवाज है कि देवर गगरी उतारता व नेग माँगता है, घर के अन्य पुरुष नहीं जाते। प्रसूता अपनी गगरी देवर से उतारने का आग्रह करती है, देवर उनसे अपना नेग माँगता है, यह रस्म बड़ी रसिक होती है, तब महिलाएँ गाती हैं-

बुलाये दइयो लाला खाँ सैया।
गगरी उतारें आयें।
जब लाला मोरी गगरी उतारें,
सो देतौ नेग तुमायें।
गगरी तुमारी जबई उतारें,
जब देहौ मुहरै हजार।
हजार मुहरै लाला कुछ नाहीं
सोने की हमेल देऊँ गढ़वाये
तुम वीरन राजा बुन्देला के
काहै खाँ मन भरमाये।
बातन में भौजी हम न आवी।....
ऐसेन में ठाड़ी रेहौं बोझ उठाये।....
परसाल ब्याव करवा दें तुमारे,
अब काहे खाँ शरमाये।.....
हमें चाने प्रेम तुमारी,
तुम हम खाँ दये हम पाये।....
बुलाये दइयो लाला खाँ सैया,
गगरी उतारै आये।

झूला

बुन्देलखण्ड में बच्चे की बुआ पहली बार बच्चे को झूले में लिटाती है, तब उसे उसका नेग दिया जाता है। यहाँ का प्रसिद्ध लोरी या झूला गीत है-

सोजा-सोजा बारे वीर, वीर की बलैयों लें गई जमुना के तीरे
सोजा-सोजा बारे वीर....
काहे से बाँधों पालना, काहे की बाँधी डोर,
को जो झूला झूलन बैठो, कैसे टूटी डोर।
सोजा-सोजा बारे वीर.....
आम से बाँधों पालना, पीपर से बाँधी डोर,
मोरो कनैया झूलना बैठो, टूट परी लम डोर।
सोजा-सोजा बारे वीर....
ताती-ताती खीर बनाई, ओई मैं डारो दूध,
दो कौर खाने भैया मोरा, जुड़ा जाये जी।
सोजा-सोजा बारे वीर...
ताती-ताती खिचड़ी बनाई, ओई में डारो घी,
दो कौर खाले भैया मोरो जुड़ा जाये जी।
सोजा-सोजा बारे वीर...
को जो सोबे कौन सोवाबे, कौन लेत बलईयाँ
कनैया सोबे सखियाँ सुवाबे, मैया लेत बलईयाँ
सोजा-सोजा बारे वीर..

नामकरण

यह रस्म आदिकाल से प्रचलित है। परम्परानुसार नामकरण बच्चों को संस्कारवान बनाता है। नाम के अनुरूप बच्चे में सद्विचार, सद्गुणों के संस्कार आते हैं। इस रस्म में बुन्देलखण्ड में गाया जाने वाला गीत -

आज अवध में पंडित आये,
दशरथ सुत के नाम धराये।
माथे तिलक देत रघुवर के
रामलला नाम धराये।
लखन, भरत, शत्रुघन नाम धराये।
देवी-देवता सबई हरसाये।
नर-नारी उठ सज आये।
आज ललन के नाम धराये।
दुआरे-दुआरे बंधे बंधन वारे।
कौसल्या दसरथ के सुत कहाये।
आज अवध के पंडित आये।

नामकरण की प्राचीन परम्परा है। आज भी यह रस्म बरकरार है, अब यह रस्म उत्सवों में बदल गयी है।

पासनी और मुण्डन

बुन्देलखण्ड में बच्चा जब अपने मामा के घर जाता है तो वहाँ उसका अन्नप्राशन संस्कार किया जाता है, जिसे पासनी कहा जाता है। सामान्यत: पासनी छह माह के बाद कभी भी की जा सकती है। बुन्देलखण्ड में जनमानस में यह विश्वास है कि मामा के घर पासनी होने पर बच्चा कभी भूखा नहीं रहता है।

पासनी के बाद मुण्डन संस्कार होता है। बुन्देलखण्ड में चूड़ाकरण संस्कार को मुण्डन कहते हैं। प्राय: एक वर्ष होने के पूर्व ही बच्चे का मुण्डन कर दिया जाता है। कभी-कभी देवी देवताओं के स्थान पर ले जाकर (विशेष मनौती होने पर) या फिर घर पर ही बुलऊआ देकर नाऊ को बुलाकर मुण्डन करवाया जाता है। आस-पड़ोस की महिलाएँ गाना बजाना करती हैं, बताशे बँटवाये जाते हैं। यहाँ विशेषत: एक वर्ष के पूर्व अथवा तीसरे वर्ष की आयु में मुण्डन संस्कार अवश्य करवा दिया जाता है। मुण्डन के पूर्व बच्चे के सिर के बालों को झालर कहते हैं। मुण्डन होने के पश्चात् बच्चे की झालर को आटे की लोई में लपेटकर किसी नदी में सिराया जाता है। पासनी मुण्डन के अवसर पर विशेष तौर पर सोहरें ही गाये जाते हैं, किन्तु कभी-कभी मुण्डन के विशेष गीत भी सुने जाते हैं-

ललन की झालर उतराई,
भौजी ले हो मैं सोनो को कंगना।
आओ ननद बैया बैठो अंगना,
तोय हाथन पैहराहाँ मैं कंकना
कहना सिराई लालन की झालर
कौना ले गई ककना।
बेतवा नदिया सिराई लालन की झालर,
ननद बैया लै गई ककना।
कौना उतारी लाला की झालर,
कौना दये ककना।
गाँव के नाई ने झालर उतारी,
जुग-जुग जिये मोरे भैया भौजइया,
जुग-जुग जिये भौजी व ललना।

पट्टी पूजन

बालक-बालिका जब चलने-फिरने लगते हैं, बोलने लगते हैं, तब विद्यालय भेजने के पूर्व पट्टी पूजन की परम्परा है, जिसका उद्देश्य बच्चे में पढ़ाई के प्रति रूचि जाग्रत करना है।

पठन चले रिसी घर रघुराई
अल्पायु विद्या सब पाई
छोटी-छोटी पइयाँ ठुमक चले रघुराई,
मातु कौशल्या बलिहारी लेवे छबि मन में समाई
दशरथ गोद रघु आन बिराजे मनई-मनई मुसकाई
पढ़न चले रिसी घर रघुराई
अल्पकाल बुद्धि सब पाई
ललना खाँ पट्टी मंगाई स्कूल जावे खों।
हरदी कुमकुम से पट्टिका पूजई ज्ञान जात जराई।
पढ़न चले रिसी घर रघुराई
अल्पकाल बुद्धि सज पाई।

कनछेदन

बाल्यकाल में बालक-बालिकाओं के कान में स्वर्ण या चाँदी तथा ताँबे की तारनुमा बाली से छिद्र किया जाता है, तथा बालिकाओं के नाक में नथ पहनाई जाती है। बुन्देलखण्ड में यह संस्कार बड़ी धूमधाम से होता है। आस-पड़ोस की महिलाओं को बुलाकर वसंत पंचमी, दशहरा या किसी अच्छे दिन पर यह संस्कार करवाया जाता है। यहाँ ऐसा माना जाता है कि अगर बच्चा बहुत जिद्दी है, उसे बहुत गुस्सा आता है तो कनछेदन से उसके जिद्दीपन व गुस्से में कमी आती है। बालिकाओं में कनछेदन व नाक में छेदन का प्रमुख उद्देश्य सुन्दरता बढ़ाना होता है। साथ ही विवाह होने के पूर्व यहाँ लड़कियों की नाक छिदी होना आवश्यक होता है। यह रस्म उत्सव के रूप में सम्पन्न होता है। महिलाओं को बताशे बाँटे जाते हैं, तब महिलाएँ यह मंगल गीत सुखद जीवन की कामना करते हुये गाती हैं-

रूई फोहा से कान लला के
मखमल से हाथ लमैंयो।
छिदना हौले होले करियो
तनकई ने लला रूलैयो।

मखमल से हाथ लगैयो।।
सोने की सूजी अतर में डूबी।
खुशबू सुधा बहलैयो।
मखमल से हाथ लगैंयो।।

जनेऊ संस्कार

बुन्देलखण्ड में पासनी, मुण्डन, कनछेदन संस्कारों के बाद लड़के का यज्ञोपवीत संस्कार करवाया जाता है, जिसे बरुआ भी कहते हैं। यज्ञोपवीत में सभी रीति-रिवाज विवाह के समान होते हैं, बस बारात नहीं जाती। यह संस्कार विशेष रूप से ब्राह्मणों में किया जाता है। लगभग सात से ग्यारह वर्ष की उम्र में होता है। आजकल यह संस्कार विवाह के समय एक दिन पूर्व ही किया जाने लगा है। बरूआ के अवसर पर आस-पड़ोस की महिलाएँ रिश्तेदार सभी सीधे का सामान लेकर आती हैं (आटा, दाल, चावल व पैसा)। लड़के के कानों में गायत्री मंत्र फूँका जाता है और वैरागी का वेश धारण करवाया जाता है, पैर में खड़ाऊँ पहनाई जाती है, पंडित के कर्म-धर्म निभाने की शिक्षा दी जाती है। लड़का वैरागी बन कर जब घर से जाने लगता है, तो सभी उसे दान देते है, जिसमें दाल, चावल, आटा, दान-दक्षिणा आदि दी जाती है। फिर बहिनें व भाभियाँ मिलकर उसे मनाती हैं कि तुम वैराग्य मत धारण करो। बहिन (शादी-शुदा) कहती है कि हम तुम्हारी शादी करवायेंगे, तुम घर छोड़कर वैराग्य मत धारण करो, इस तरह यह संस्कार बड़े ही रोचक ढंग से सम्पन्न होता है। और यह संस्कार वर्तमान में मात्र एक रस्म बनकर रह गयी है। महिलाएँ यह गीत गाती है-

वीरन राजा कमण्डल लै,
घर से निकरन न दैहौं।
काशी के लोग बड़े अविश्वासी
काशी नगरी जान न देहौं।
माथे हौं खोरे काढ़ो राजा वीरन,
चंदन तिलक लगान न देहौं।
वैजयंती माला गरे में डारो।
तुलसी के माला पहिरन न देहौं।
हाथों में घड़ियाँ बाँधो राजा वीरन,
कमंडल हाथन में लेन न देहौं।
घर लौट आओ वीरन हमारे
काशी नगरी जान न देहौं
इतई पाठ शाला पढ़न जइयो
काशी पढ़न जान न देहौं।

यह गीत बतलाता है कि वेदशास्त्रों को पढ़ने तुम बाहर न जाकर इसी घर में रहकर शास्त्रों का ज्ञान लो और मन, वचन कर्म में जनेऊ धारण करके नियमों का पालन करो। अपने माता-पिता की सेवा करते हुये गृहस्थ जीवन का पालन करो।

आज भी बुन्देलखण्ड के गाँव-गाँव में यह संस्कार किये जाते हैं। आज जरूरत है इन गीतों को सहेजने की, इनका मनन चिंतन करने की, ताकि समाज में व्याप्त विकृति दूर हो सके।

बुन्देली जन्म गीत

डॉ. रामस्वरूप ढेंगुला

बुन्देलखण्ड के दतिया अंचल में पुत्र जन्म के अवसर पर सोहरे या सोहले आदि नामों से प्रचलित बधाई गीत, जिन्हें हम मंगल गीत भी कहते हैं, गाये जाने की परम्परा है। गीतों के अन्त में इन शब्दों के उच्चारण आते भी हैं, उदाहरण–

बाजै लागी अनंद बधाइयां गावइ सखि सोहर ।

जो यह मंगल गावइ गाइ सुनावह ।
सो बैकुंडे जाइ सुनइया फल पावइ ।।

रामचरित मानस में तुलसीदास ने दशरथ के पुत्रों के जन्म के उत्सव के प्रसंग में वर्णन करते हुये लिखा है–

बृन्द–बृन्द मिलि चलीं लोगाई। सहज सिंगार किए उठि धाई ।
कनक कलस मंगल भरि थारा। गावत पैठहिं भूप दुआरा ।।

× × ×

गृह–गृह बाज बधाव सुभ प्रकटे सुषमा कंद ।
हरषवंत सब जंह तंह नगर नारि नर बृन्द ।।

पुत्र के जन्म के प्रसंग में आये इन दोहों में मंगल द्रव्य, मंगल बधाव अर्थात् मंगल उत्सव का उल्लेख किया गया है। लोकसंस्कृति की तमाम मान्य परम्पराओं ने तुलसीकृत रामचरितमानस से किसी न किसी रूप में प्रेरणा अवश्य ली है। बुन्देली अंचल के दतिया, झांसी, समथर आदि क्षेत्रों में जन्म सम्बन्धी गीत, सोहरे आदि रामजन्म एवं कृष्ण जन्म प्रसंग से लोकगायन के प्रत्येक स्वरूप में जुड़े दिखाई देते हैं। वैसे सामान्य रूप में गाँवों में पुत्री जन्म को कष्ट-पीड़ा के रूप में देखा जाता है। परन्तु इन सभी आलोच्य भागों में जानकी जन्म उत्सव, जानकी नौवीं एवं राधा जन्म उत्सव, राधा जन्म अष्टमी मनाये जाने की प्रथा है।[1]

हिन्दी भाषा की प्रत्येक उपबोली में जैसे बुन्देली, मैथली, भोजपुरी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी आदि में जन्म गीत सोहरे गायन की परम्परा है और विभिन्न बोलियों में प्रचलित इन गीतों में राम और कृष्ण भी आते हैं। गीतों के बोल भी अपने अर्थ में काफी मेल खाते हैं। माना जाता है कि सोहर गीतों की जनक महिलाएँ ही हैं, महिलाओं में पुत्र जन्म की खुशी असीमित होती है।

भांड़ परम्परा के बधाई गीत

दतिया जनपद में भांड़ लोग किसी के यहाँ पुत्र जन्म की सूचना मिलने पर स्वयं से जन्म बधाई गीत गाने के लिये जाते हैं, इनके यह गीत मौखिक परम्परा में जीवित हैं। समय के अनुरूप अब वर्तमान में इनमें फिल्मी धुनें भी शामिल हो गई हैं, यह लोक की घड़ी का बदलाव है। उदाहरण-

जसोदा के भये हैं कुँअर कनईया
हर-हर गुबरा मंगाईयो यशोदा रानी
ढिक दर लिपईयो यशोदा रानी
मुतियन चौक पुराईयो, यशोदा रानी
यशोदा के भये हैं कुँअर कनईया
कंचन कलश कुँअरिया लाई
बंदन बारे मलिनिया लाई
बाई तुमने खबर कहां पाई
यशोदा के भये हैं कुंअर कनईया
ग्यारह जोड़ी नगाड़े बजत हैं
सोलह सै शहनाई ।

× × ×

जन्म राम अबध चलो सजनी
राजा दशरथ ने मुहरें बक्षी
बची मुहर एक गजानन इनमें
राजा दशरथ ने कंगना बक्षी
बचो कंगना एक कौशल्या के हाथ में
राजा दशरथ ने चुनरी बक्षी
बची साड़ी एक कौशिल्या के हाथ में
जन्मे राम अबध चलो सजनी
राजा दशरथ ने घुड़ला बक्षी
बचो घुड़ला एक रावत रथ में
राजा दशरथ ने जेबर बक्षी
बचो हीरा एक कौशिल्या की नथ में
जन्मे राम अबध चलो सजनी

× × ×

अरे दौड़ी- दौड़ी आई ननदी, आई बड़ी भोर
राधा तेरा कान्हा मचाये बड़ा शोर
सावन का महीना, पवन करे शोर
जियरा झूमे ऐसे, जैसे बन में नाचे मोर
बोल राधा तूने ये क्या किया
अपने किशन को अपने किशन को जनम दे दिया।

× × ×

भोला नई माने, नई माने मचल रये नचवे को
अरे ननदी नई माने-नई माने, मचल रई कंगना को
मैं तो दाई बुला के हारी
वो माने न बात हमारी
वो तो ललना लगी है जनवाने
मचल रई कंगना को
मैं तो सासो बुला के हारी
न माने बात हमारी
वो तो चरुआ लगी है रखवाने

दतिया जनपद में इन गायक भांड़ों को, जो मुस्लिम समाज के हैं, प्रेम से 'तिबारी' उपनाम से पुकारा जाता है। बताया गया है कि दतिया के अंतिम बुन्देला शासक गोविन्दसिंह से उन्हें यह

उपनाम दिया था। हिन्दू समाज के पारिवारिक संस्कारों के उत्सवों के अवसरों पर मंगल गीत गाये जाने की मौखिक परम्परा को ये तिबारी व हिजड़े समुदाय के लोग ही दतिया जनपद में जीवित रखे हुये हैं।[2]

जनपद के अन्य जन्म गीत

दतिया जनपद के गाँव और शहर में पुत्र जन्म के अवसर पर इसी भाव के सोहर या बधाई गीत गाये जाते हैं, उदाहरण–

कैकेयी फूली सुमित्रा फूली यह सुख पाय कें
महलों में कौशिल्या फूली रामचन्द्र जाय कें
गंगा फूली यमुना फूली यह सुख पाय कें
अयोध्या में सरयू फूली राम को नहलाय कें
आज की बधाई दशरथ राय कें।

× × ×

घर नन्दजी के खुशी है अपार कान्हाजी ने जन्म लियो
कौन लायौ माखन मिश्री को जो मुतियन के थाल
को जो गुह लाई फूलों का हार
ग्वाल लाये माखन मिश्री गोपी मुतियन के थाल
मालिन गुह लाई फूलों का हार,
ओ कान्हाजी ने जनम लियो।

भारतीय स्वतन्त्रता के लिये किये गये जनसंघर्ष में गाँधी और नेहरू के योगदान की भी चर्चा इन सोहर गीतों में दिखाई देती है और आधुनिकता की छाप के साथ फिल्मी धुनों का असर भी स्पष्ट परिलक्षित होता है, उदाहरण–

घर में लालन भये बड़ी दिल में खुशी
बोलो आवे तुम्हारी मम्मी उनको क्या दोगे, क्या दोगे जी
उन्हें दे देना हाथ में माला, बोलो जयरामजी।
बोलो आवे तुम्हारी भाभी उन्हें क्या दोगे, क्या दोगे जी
उन्हें दे देना हाथ में गीता, बोलो जयकृष्ण, जयकृष्ण जी।
बोले आवे तुम्हारी बहुआ, उन्हें क्या दोगे, क्या दोगे जी
उन्हें दे देना हाथ में झन्डा, बोलो जय नेहरू, जय नेहरू जी।
बोलो आवै तुम्हारी बहना, उन्हें क्या दोगे, क्या दोगे जी
उन्हें दे देना हाथ में टोपी, बोलो जय गांधी, जय गांधी जी।[3]

ओरछा बुन्देलखण्ड की राजधानी थी, लोकप्रचलन की तमाम प्रेरणायें ओरछा के क्षेत्रों से ही प्रदेश के अन्य भागों में फैली थीं। ओरछा का राम राजा मंदिर मध्यकालीन स्थान है, रामजन्म सम्बन्धी लोकप्रवृत्तियाँ दतिया सहित बुन्देलखण्ड के भागों में यहीं से सदैव प्रेरणा पातीं रहीं थीं। उल्लेखनीय है कि ग्रामीण लोकगायक आज भी नवीन–नवीन गीतों का सृजन कर ग्राम्य लोकधुनों के गीत बनाती रहती हैं। झाँसी की कई लोकगायक दल, ओरछा के रामराजा मंदिर में बधाई के जन्मगीत, वहाँ गाने जाती ही रहती हैं। इनके बोल प्राय: इस प्रकार रहते हैं–

अबध में भये सलोने राजा

इस प्रकार का लोकगायन अब धार्मिक आस्था की आड़ में व्यवसायिक स्वरूप में ढल कर सामने आ रहा है और आज का लोकगायक गाँव की चौपाल की अपेक्षा, शहर के मंचों पर फिल्मी धुनों की नकल कर पैसे बनाने के फेर में अधिक पड़ गया है। गाँव का आनन्द ऐसे गायकों के लिये अब केवल लीक पीटने की तरह रह गया है। परन्तु लोकप्रवृत्ति के इस बदलाव को आलोचित कर नकारा नहीं जा सकता है। समय के पन्नों की इबारत को हमें अब बांचने की आदत डालनी ही होगी।

जानकी एवं राधा सम्बन्धी बधाई गीत

दतिया जनपद की परम्परा में लड़की के जन्म पर सोहरे या बधाई गीत गाये जाने का प्रचलन नहीं है। आमरूप में बुन्देलखण्डी समाज में लड़की के बड़े होने पर, उसे कटु उलाहने की परम्परा में कोसते हुये सम्बोधित करने का रिवाज है। जैसे लड़की से कहा जाता है–

आओ तुमाई घिची मसक दें।
तुम पर हुलकी क्यों नहीं पर जात।
तुम तो पूरी लंका हो ।

आदि–आदि, ऐसी अनेक कहावतें हैं। इतिहास काल के समाज में दो लड़कियाँ होने पर प्राय: सम्पन्न और ताकतवर लोग लड़के के जन्म की प्रबल आकांक्षा के चलते दूसरी शादी भी कर लेते थे। परन्तु इन परम्पराओं के बीच दतिया जनपद में पूरी आस्था और विश्वास के साथ जानकी जन्म उत्सव व राधा जन्म उत्सव मनाया जाता है और बधाई गीत गाये जाते हैं। जानकी जन्म बधाई

उत्सव, वैशाख शुक्ल नवमीं (मई मास) में मनाया जाता है। इस पुनीत अवसर पर बधाई गीत गाये जाते हैं, उदाहरण–

चौक पुरावो री हेली सोहिले गाइये।
जनम लख्यौ है री हेली ब्याह मनाइये।।
जा दिन सीता जनम भयो।
ता दिन ते सबही लोगनि के मन को शूल गयो।
अध्वर आदि अवनि ते उपजी दिवि दुन्दभी बजाये।
बरषत कुसुम अपार शब्द जय ब्योम विमाननि छाये।।
जनकसुता दीपक कुल मराड़न सकल सिरोमनि नारी।
रावन मृत्यु मुकुति अमरनगन अभय दान भय हारी।।
सुन्दर शील सुहाग भाग की महिमा कहत न आवै।
परम उदार राम की प्यारी पदरज नाभौ पावै।।[4]

राधा जन्म बधाई उत्सव, भादों मास में शुक्ल अष्टमी (सितम्बर मास) में मनाया जाता है। माना जाता है कि राधावल्लभीय सम्प्रदाय के महाप्रभु हितहरिवंशजी महाराज (1502–1552) को राधाजी ने मंत्र दिया था। इस विचार दृष्टि से राधाजी हितहरिवंशजी की गुरू हुईं, इसी कारण इस सम्प्रदाय के मानने वाले राधाजी का जन्म उत्सव मनाते हैं। यह प्रथा बुन्देलखण्ड के दतिया सहित झाँसी, सागर आदि में भी प्रचलित है।

दतिया जनपद के तिगेलिया स्थित राधावल्लभ मंदिर में राधा जन्म उत्सव की वाणियों का हस्तलिखित ग्रन्थ उपलब्ध है। राधा जन्म उत्सव समारोह में बधाई गीत सामूहिक गायन (जिसे समाज गायन कहा जाता है) के माध्यम से विभिन्न लोकवाद्यों की धुनों के साथ प्रस्तुत किये जाते हैं, उदाहरण –

चलो वृषभान गोप के द्वार, जनम लियो मोहन हित श्याम।
आनन्द निज सुकुमा गावति सवति।
मुदित मिल मंगल उच्च मधुर धुनि–धार।
जै श्री हित हरिवंश दुग्ध– दधि छिरकत मध्य हरिद्रागार।

प्रकट्यो सब ब्रज के श्रृँगार।
कीरत कूरव औतरी कन्या सुन्दरता को सार।
नख–शिख रूप कहा लौ बरलौ, कोटि मदन बलिहार।
परमानन्द ब्रजभान नन्दिनी, जोरि नन्द कुमार।[5]

इन जन्मोत्सव बधाई गीतों के साथ, जिन्हें हम सोहर कहते हैं, दतिया जनपद के लोकसंगीत की आत्मा बसती है, देवभक्ति बसती है, आनन्द का उत्सर्ग बसता है। लोक काल की तिथि का मुहताज नहीं होता है, इसलिये वह इतिहास का अंग होकर भी उससे एक कदम आगे होता है। लोकगीत तो निर्बाध गति से जनसामान्य के मन के बीच बसता रहता है। जन्म उत्सव गाँव के घर–आँगन का श्रृँगार होते हैं, छोटे शहरों कस्बों में भी ये परम्परायें अभी चल रही हैं, बड़े महानगरों में यह जाकर स्टेज की दुनिया के कब्जे में रूप बदल कर दिखाई देते हैं। पर इनके अस्तित्व की न कभी अनदेखी की जा सकती है और न इनके अस्तित्व को कभी नकारा जा सकता है।

संदर्भ

1. तुलसीकृत, रामचरित मानस, (गोरखपुर, 1938) पृ० 203–204,।
2. तिबारी, ढोलक मास्टर, पुत्र धन्नू नक्काज, शायनी मुहल्ला दतिया।
3. बड़ैरा बाली चाची से संकलित, कुंजनपुरा दतिया।
4. विनोद मिश्र, दतिया के सौजन्य से।
5. हरिमोहन मिश्र, दतिया के सौजन्य से।

जन्म के बुन्देली प्रतीक

पं. गुणसागर 'सत्यार्थी'

बुन्देलखण्ड अंचल में सोलह संस्कार विख्यात है। बीज दोष और गर्भदोष के निवारणार्थ तथा 'ब्राह्मीय देह' करने के लिए यहाँ की अगड़ी जातियों में जो कर्म किये जाते हैं, उन्हें 'संस्कार' कहते हैं। मनुस्मृति में तो मात्र बारह संस्कार बताए गए हैं। जबकि महर्षि वेद व्यास जी ने सोलह संस्कारों की बात कही है। कहीं-कहीं तो मात्र दस संस्कार भी प्रचलित हैं। परन्तु गौतम ऋषि के अनुसार संस्कार चालीस कहे गए हैं और इनमें आठ आत्मीय गुण मिलाकर इनकी संख्या अड़तालीस हो जाती है। इन संस्कारों में तीन संस्कार जन्म से पहले सम्पन्न किए जाने का विधान है। ये हैं- गर्भाधान संस्कार, पुंसवन संस्कार और सीमंत संस्कार। बुन्देलखण्ड के लोक जीवन में सोलह संस्कार कदाचित इसलिए प्रचलित हुए कि श्री व्यास जी महाराज का सम्बन्ध बुन्देल भूमि से है। कहा गया है- 'यथा वेदे तथा लोके' अत: यहाँ के लोक जीवन में व्यास जी का शास्त्रमत पाया जाना सहज स्वाभाविक है।

पहला संस्कार गर्भाधान का है। यह संस्कार स्त्री का है। स्त्री के प्रथम रजोदर्शन के समय यह संस्कार सम्पन्न होता रहा है। इसमें गणेश, नक्षत्र...आदि का पूजन, पुण्याह वाचन, मातृका पूजन, नन्दी मुख श्राद्ध ...आदि आठ अंगों का विधान है। परन्तु वर्तमान में बाल विवाह की प्रथा समाज ने समाप्त कर दी, इसलिए देश-काल-परिस्थितियों के प्रभाव में यह पहला संस्कार अब विलुप्त हो चुका है। दूसरा संस्कार है- 'पुंसवन संस्कार'। गर्भ रहने पर यह दूसरे से आठवें महीने के मध्य कुल रीत अनुसार होता है । यह गर्भस्थ शिशु का संस्कार है, स्त्री का नहीं। इसमें स्त्री के केश विशेष प्रकार से बाँधे जाते हैं और उनमें सोमलता या वट वृक्ष की जड़ का चूर्ण लगाया

जाता है। इसका उद्देश्य है कि पुत्र का ही जन्म हो। परन्तु वर्तमान में तो बेटा-बेटी एक समान माने जाते हैं। अत: पुत्र जन्म की ही भाँति पुत्री का जन्म भी उतना ही पुनीत माने जाने लगा है जितना कि पुत्र जन्म का रहा। इसलिए इस संस्कार का भी चलन बुन्देलखण्ड के लोक जीवन से अब लोप हो चुका है।

तीसरा संस्कार है- सीमंत या सीमान्तोनयन। इसमें कुशा से स्त्री की माँग सिंदूर से सँवारी जाती है। कहीं-कहीं जंघा पर जल पूर्ण घट भी रखा जाता है। इस शास्त्र सम्मत संस्कार को बुन्देलखण्ड में आगन्नों, सादें और चौक नाम से लोक जीवन में आज भी देखा जाता है। इस अवसर पर यहाँ गर्भवती स्त्री की गोद भरी जाती है। पीहर से भेंट स्वरूप नाना प्रकार की सामग्री आती है। नाते-रिश्तेदारों को नेवता देकर सादर आमंत्रित किया जाता है। इतना ही नहीं, पास-पड़ोस और गाँव-मुहल्ले में बुलौवा दिया जाता है। महिलाएँ ढोलक बताजे हुए समवेत स्वरों में गा उठती हैं-

कोंना के अँगना जिमिरिया लहर-लहर करै हो।
कोंना की नार गरब से ललन-ललन करै हो।
ससुरा के अँगना जिमिरिया लहर-लहर करै हो।
राँमा की नार गरब से ललन-ललन करै हो।
कोंना के अँगना जिमिरिया लहर-लहर करै हो।
जेठा के अँगना जिमिरिया लहर-लहर करै हो।.....

इसी प्रकार क्रम से जेठ, ननदोई, देवर आदि परिजनों के नामोल्लेख के साथ गीत आगे बढ़ता चला जाता है। यह संस्कार बुन्देलखण्ड अंचल के जन-जीवन में आज विशेष पर्व जैसा वातावरण उपस्थित कर देता है। आँगन में मांगलिक चौक पूर कर पटा बिछया जाता है। गर्भवती स्त्री को उस पटे पर बैठाकर उसकी गोद भरी जाती है। आज जन्म से पहले का यह पहला संस्कार है, जिसे न केवल मनुष्य अपितु प्रकृति भी उसी उत्साह से सम्पन्न करती है। महाकवि ने अपनी अमर रचना मेघदूतम् में इसका संकेत देते हुए लिखा है -

गर्भाधानक्षणपरियान्नूनमाबद्धमाला:
सेविष्यन्ते नयनसुभगं खे भवन्तं बलाका:। - पूर्व मेघ-9

जिसे लेखक ने अपने बुन्देली पद्यानुवाद में इस प्रकार से अनूदित किया-

सादें-चौक मनाबे की भर आस,
बगुलिन पाँतें ऊँची उड़त अकास।
आसमान में उड़तन भलीं दिखायँ,
सेवा कों बे पाँतें तुमतन आयँ।

अर्थात् प्रकृति में पशु-पक्षी भी इस उत्सव को अपने अनुसार सम्पन्न करते हैं।

तब इस प्रथम संस्कार पर गाए जाने वाले लोक गीतों की कल्पना आज के अभिजात्य साहित्य से टक्कर लेने वाली हो तो आश्चर्य क्या? परिवार हरा-भरा रहे, वंश-बेल आगे बढ़े। यह मनोभाव इन बुन्देलीखण्डी लोकगीतों में प्रतीकों के रूप में सहज व्यक्त होते हैं। जिमिरिया नाम की यह स्थानीय झाड़ी है जो सदाबहार हरी-भरी लहराने वाली है। नवागन्तुक शिशु-जन्म आँगन में इस सदाबहार झाड़ी की तरह लहर-लहर कर हँसता खेलता रहे और वंश बेल को समृद्ध करे। दूर्वादल का प्रतीक केवड़े की भीनी सुगन्ध को इन लोकगीतों में अनूठे ढंग से पिरो दिया गया है-

अँगना में हरी-हरी दूबा, हरी-हरी दूबा,
घिनोंचिन केवरौ री महाराज।
पैले-पहर कौ सपनों सुनों मोरी सास जू महाराज।
चंदा-सूरज दोई भइया आँगन बिच ऊरियो जू महाराज।
दूजे पहर कौ सपनों सूनों मोरी सास जू महाराज।
गंगा-जमुन दोई बेंने आँगन बिच बै रई जू महाराज।
तीजे पहर कौ सपनों सूनों मोरी सास जू महाराज।
राम-लखन दोई भइया आँगन बिच खेल रये जू महाराज।
होय परे री मोरे ललना ओली बिच खेल रये महाराज।
नोंबद बाजें बधइँयाँ, आँगन बिच धूम जू महाराज।
अँगना में हरी-हरी.....

निश्चत ही लोक मन की सुखद कल्पनाएँ स्वप्नों का सहारा लेकर फूट पड़ती हैं। ज्योतिष शास्त्र में स्वप्न में देखने के काल पर विचार किया गया है। प्रथम प्रहर में देखे स्वप्न का फल

क्या है? अथवा तीसरे प्रहर के स्वप्न का फल का क्या और कैसा होता है.....आदि बातों पर भी लोक मन का अटूट विश्वास इन लोक गीतों में फुट पड़ा है। लोक जानता है कि चौथे प्रहर में देखा हुआ स्वप्न सच हुआ करता है। पुत्र हो अथवा पुत्री, शिशु जन्म को लोक ने मांगलिक ही माना है। यदि पुत्र है तो वह सूर्य-चन्द्र समान कुल रूपी आँगन को आलोक से भर देने वाला हो और यदि पुत्री हुई तो वह भी गंगा-यमुना के समान कुल-आँगन की पावनता को सुरक्षित रखती हुई सुख-समृद्धि भरने वाली अवश्य है। अर्थात् लोक मन ने लड़का-लड़की को भेद दृष्टि से कभी भी नहीं देखा। उसके लिए तो दोनों ही समान हैं, राम-लक्ष्मण की तरह पूज्य।

मात्र इतना ही नहीं, गर्भवती स्त्री को सदैव प्रसन्नचित और तनाव रहित रहने की आवश्यकता पर आज का वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं चिकित्सा जोर दे रहा है। जबकि इस सच्चाई को बुन्देलखण्ड के लोक ने बहुत पहले स्वीकार कर लिया था। इसीलिए अनादिकाल से जन्म के पहले के संस्कार आगन्नों, सादें, चौक के समय गाए जाने वाले लोक गीतों में भरपूर हास-परिहास, तकरार आदि के माध्यम से गर्भवती को प्रसन्न चित रखने वाली अभिव्यक्ति है। तभी तो इन लोक गीतों में श्लील और अश्लील, कु-वचन और गालियाँ, लांछन बोधक शब्दों में कडुवाहट नहीं, अपितु केवल लोक मंगल और मिठास छलक पड़ा है। इस अवसर पर सास, जेठानी, ननद, देवर... आदि सभी के प्रति लोकगीतों में अपशब्द-लांछन आदि से हास-परिहास की प्रमुखता है। देखिए आगन्ने में गर्भवती के पीहर से आने वाली सामग्री को लेकर गाया जाने वाला एक गीत-

सोंठा के लडुआ मोरे मायके सें आए,
उनमें सें दो मोरी सास नें चुराए।
हाँत पकर कें उनें कुठरिया भीतर कर दड़यो
भीतर करकें तारौ-साँकर जड़ दइयो,
सोंठा के लडुआ मोरे मायके सें आए,
उनमें सें दो मोरी ननद नें चुराए।
हाँत पकरकें उनें कुठरिया भीतर कर दइयो,
भीतर करकें तारौ-साँकर जड़ दइयो।।...

आगन्ने में जब स्त्रियों का समूह ऐसे गीत गाता है तो गर्भवती स्त्री सुनकर मन ही मन प्रसन्न होती है। हास-परिहास के वातावरण में वह पूरी तरह तनाव रहित हो जाती है, क्योंकि वह जानती है कि यह लांछन वास्तविक सच्चाई नहीं, अपितु परिहास है, ऐसे हास-परिहास के वातावरण में गर्भवती के नौ मास कब और कैसे व्यतीत हो गए? पता नहीं चला और एक दिन प्रसूति हो गई। सोहरे-बधाईयों के लोक गीत गूँज उठे-

आज दिन सोंने कौ महाराज।
सोंने कौ सब दिन सोंने की रात,
कंचन-कलस धराऔ महाराज।
गइया कौ गोबर ल्याऔ बारी सजनी,
ढिकधर आँगन लिपाऔ महाराज।
ढिकधर आँगन लिपाऔ बारी सजनी,
मुंतियन चौक पुराऔ महाराज।
मुंतियन चौक पुराऔ बारी सजनी,
कंचन-कलस धराऔ महाराज।
कंचन-कलस धराऔ बारी सजनी,
जगमग जोत जगाऔ महाराज।
जगमग दियल जगाऔ बारी सजनी,
चंदन चौकी डराऔ महाराज।
बैठीं कौसिल्या रानी चौकी पै,
सो अमृत अरघ दिवाऔ महाराज।.....

सुनकर लोग आश्चर्य कर सकते हैं कि विपन्न कहा जाने वाला बुन्देलखण्ड का अंचल है। वहाँ पर सोने के कलश, मोतियों द्वारा पूरे गए चौक, अमृत का अर्ध्य भला कैसे सम्भव है? परन्तु लोक मन तो प्रतीकों में अपनी अभिव्यक्ति दिया करता है। सोने से उसका आशय है- स्वर्ण, सुवर्ण प्रतीक रूप में समृद्धि से, प्रकाशवान आभा से, ज्योति से, पवित्रता से। कलश से प्रतीक है पूर्णता और मांगल्य का। मुतियन चौक, मुक्ता का प्रतीक है शीतलता और कांति का। गाय का गोबर-गाय देव माता है सुख-समृद्धि की दैवी शक्ति है, गोबर प्रतीक है लक्ष्मी का (करीषिणी-श्री सूक्त में वेद में देवी लक्ष्मी का विशेषण बनकर आया है) चंदन-चौकी है सुगन्धित, सुरभि। और चौकी है आधार। जगमग

ज्योति-शुभ्र प्रकाश जो दु:खों के तिमिर को दूर करता है। अमृत अर्थात् मृत्यु-भय को दूर करने वाला पवित्र जल। इस प्रकार के प्रतीकार्थ हैं बुन्देलखण्ड के लोकगीतों के। मृत्यु जो शाश्वत है, उसका भय जन्म से ही नहीं, यहाँ के लोक जीवन में हैं, इसीलिए यहाँ के सोलह संस्कारों में मृत्यु का कोई संस्कार भी प्रचलित नहीं हुआ है। सोलह संस्कारों में सर्वाधिक संस्कार जन्म के पूर्व से जन्म के उपरान्त तक पाए जाते हैं। जिनमें जाति-कर्म का संस्कार जिसे यहाँ 'नरा छिनाई' का संस्कार कहते हैं। देश काल परिस्थितियों से अब प्रसूति अस्पताल में होने लगी, तो यह संस्कार भी ओझल हो गया। चरुआ, कुआँ पूजन, मुंडन, कनछेदन, पाटी पूजन.... आदि संस्कार जन्म से सम्बन्धित हैं, उसके बाद ही वैवाहिक संस्कार सम्पन्न कर सोलह संस्कारों को सम्पन्न किया जाता है। प्रत्येक संस्कार के पारम्परिक लोकगीत यहाँ युगों से गूँज रहे हैं। यद्यपि आज इन लोकगीतों में प्रदूषण भी आ चला है जो एक चिंता का विषय है। बुन्देली लोक जीवन के संस्कार, लोकगीत स्वयं में सब कुछ हैं।

बुन्देली जन्म संस्कार

वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक'

विश्व में भारतीय संस्कृति का अपना विशिष्ट स्थान और महत्त्व रहा है और हमेशा रहेगा भी। एकता में अनेकता का आदर्श भी भारतीय संस्कृति का प्रमुख नारा रहा है जीवन का निर्माण और विकास भी भाषा, साहित्य, संस्कृति, संस्कार और सभ्यता के द्वारा ही होता है। हम इन्हीं के माध्यम से एक-दूसरे को जानते समझते हैं। मानव जीवन में संस्कारों का विशेष महत्त्व है। स्वर्गीय आचार्य श्री राम शर्मा के मतानुसार- 'भारतीय तत्त्वत्ताओं ने मनुष्य की अन्त:भूमि को श्रेष्ठता की दिशा में विकसित करने के लिए कुछ ऐसे सूक्ष्म उपचारों का भी आविष्कार किया है, जिनका प्रभाव शरीर तथा मन पर ही नहीं, सूक्ष्म अत:करण पर भी पड़ता है और उसके प्रभाव से मनुष्य को गुण, कर्म, स्वभाव की दृष्टि से समुन्नत स्तर की ओर उठने-बढ़ने में सहायता मिलती है। इस आध्यात्मिक उपचार का ही नाम संस्कार है।'

'संस्कार' की इस परिभाषा की व्याख्या से ही मानव को जन्म से मृत्यु तक के संस्कारों को जानने-समझने की प्रेरणा मिलती है। भारतीय जीवन सुसंचालित संस्कारों के द्वारा ही होता है, आगे बढ़ता है। विद्वान ऋषि-मुनियों ने सोलह संस्कार निर्धारित किये हैं, जिनमें होकर मानव जीवन जन्म से मृत्यु तक संचलित है।

जन्म संस्कार गर्भाधान संस्कार के नाम से भी जाना जाता है, जो शिशु के जन्म से ही प्रारम्भ यानी माँ के गर्भ में आने के साथ ही शुरू हो जाता है। जन्म संस्कार के दो प्रकार हैं-

वे, जो शिशु जन्म-जन्मान्तर से अपने साथ लेकर आता है। वे, जो अपने माता-पिता से वंश-परम्परा के माध्यम से प्राप्त करता है।

संस्कार अच्छे-बुरे दोनों ही हो सकते हैं। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि बच्चों को शुरू से ही ऐसा परिवेश दिया जाये, जिसमें उन्हें अच्छे संस्कार विकसित करने का सुअवसर निरन्तर मिलता रहे। माता-पिता को विशेषत: यह ध्यान में रखना होगा कि उनकी संतान दुर्गुणी संस्कार वाले वातावरण के पास ही न भटक सके। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर ही महर्षि पाणिनी ने संस्कार के तीन पर्याय बताए थे- उत्कर्ष, समवाय का संघात तथा आभूषण।

इसलिये यह भी कहा और माना जाता है कि भोज्य पदार्थ की अनुभूति की छाँव को संस्कार कहते हैं। संस्कार मानव देह के सम्पूर्ण विकास में बड़ा सहयोग देते हैं। चूंकि जन्म-मरण के बीच सोलह संस्कार होते हैं, किन्तु हम यहाँ सिर्फ जन्म यानी गर्भस्थ संस्कार के विषय में ही विशेष चर्चा करना चाहते हैं। वैसे तो कुल संस्कार सोलह बताए गए हैं, जिन्हें कई विद्वानों ने परिमार्जित करने के उद्देश्य से 10, 12, 16 और 13 आदि वर्गों में विभाजित किया है। मान्यता अधिकांशत: तेरह को मिली है। ये निम्न दो प्रकार के हैं - गर्भस्थ संस्कार (Premeter) और जन्मस्थ संस्कार (Postneter)।

गर्भस्थ या जन्म यह संस्कार विवाहित स्त्री के रजस्वला होने के चौथे दिन के बाद स्नान कर रजरोग रहित होने अर्थात् पाँचवे दिन से सोलहवें दिन के बीच गर्भधारण से आरम्भ होता है। इस अवस्था में माँ के पेट में रहने वाला शिशु विशेष रूप से पालित-पोषित होता है। पंडित या पुरोहित द्वारा विधि-विधान से इसे संचालित किया जाता है। पूजा-पाठ के साथ महिलाएँ इस गीत का मधुर स्वर में गायन करती हैं-

मोये उठी घुमड़ रसपीर, इतै मोरौ कोऊ नैइयां रे,
मोरे भौतउ प्यारे राजा! सास खों बुला दइयो रे।
धना हो तो गुनों की पूरी बचन की सांची
मतारी मोरी ने आवे रे।
तुमने बोले हैं बोल कुबोल, करेजे में हन गए रे।
मोये उठी घुमड़ रसपीर, इतै मोरौ कोउ नैइयां रे।
मोरे भौतई प्यारे राजा, जिठानी बुला दइयो रे।
धना होता गुनों की पूरी, वचन की सांची।
भौजी मोरी नै आवे रे।
मोय उठी घुमड़ रसपीर, इतै मोरो कोउ नैइयां र।
मोरे भौतउ प्यारे राजा, ननदिया बुलाय दइयो रे।
धना होतौ गुनन की पूरी, वचन की सांची,
बैना मोरी ने आते रे।
तुमने बोले हैं बोल कुबोल, करेजे में हन गए रे।।
गैले घटिया के पटिया मसक पीर खालियो रे।
धना लैले राम के नाम, ललन तुमरें हो जै हें रे।।
मोय उठी घुमड़ रसपीर इतै मौरो को उनइयां रे।।

इस गीत का भावार्थ है कि परिवार में छोटे भाई की पत्नी अपनी प्रसव पीड़ा के समय अपने पति से कह रही है कि मुझे पेट में बहुत जोर का दर्द हो रहा है। मेरे प्रिय पति! आप मेरी सासू माँ को बुला दें। पति उत्तर देता है- मेरी माँ के साथ तुम्हारा बोल चाल, व्यवहार आदि अच्छा नहीं है, जिससे उन्हें अपने करेजे में चोट लगी है। वे नहीं आयेंगी। फिर पत्नी निहोरे करती हुई कहती है कि मेरी जिठानी, ननद को ही बुलवा दीजिये। पति इस पर भी व्यंग्य करता हुआ कहता है कि तुम्हारा मेरी भौजी और बहिन से भी व्यवहार, बोल-चाल आदि ठीक नहीं है। इससे कोई नहीं आना चाहता। तुम तो रास्ते के पटियों पर पलंग बिछा लेना और प्रसव की पीड़ा को बरदाश्त कर लेना। भगवान राम का नाम लेकर रो लेना और दु:ख-दर्द को झूल जाना। तुम्हें पुत्र प्राप्त हो जाएगा।

इसी प्रकार पुत्र जन्म पूर्व ही बुन्देलखण्ड में गर्भवती नारी को होने वाली प्रसव पीड़ा सम्बन्धित यह गीत भी प्राय: स्त्रियाँ गाती हैं-

हो रई कमर रस पीरा, इतै मोरी कोऊ नइया रे महाराज,
उठो मोरे राजा, सासू खों बुला दो,
पीरा मोरी बेई हरें महाराज!
तुमने घोई नइया उनकी धुतिया,
मताई मोरी न आहें महाराज!
उठो राजा! मोरी जिठानी बुलाय दो,
पीरा मोरी बेई हरें महाराज
तुमने परीं नइयां झपर कें उनकी पइयां,
भौजाई मोरी ने आहें महाराज!
उठो राजा! ननदिया बुलाय देव,

पीरा मोरी बेई हरें महाराज!
तुमने बोले हैं बोल कुबोल,
बहिन मोरी ने आयें महाराज।
लेलो प्रभु के नाम ललन हो जेहैं रे।।

पंक्तियों का भावार्थ यह है कि गर्भवती स्त्री कह रही है कि उसे कमर में दर्द बड़ी जोरों से हो रहा है। हे महाराज! (पति) यहाँ मेरा कोई नहीं है। कृपया उठिए! अपनी माँ यानी मेरी सासू जी को बुला दीजिये। हे महाराज! मेरी पीड़ा को वे ही दूर करेंगी। पति उत्तर देता हुआ कहता है कि तुमने पहिनने हेतु उन्हें धोती धोकर नहीं दी है। माँ नहीं आएँगी। मेरी जिठानी को ही बुला दीजिये। उत्तर में पति कहता है कि तुमने मेरी भाभी के चरण स्पर्श दौड़कर नहीं किए, वे नहीं आयेंगी। जब वह अपनी ननद को बुलाने का अनुरोध करती हैं, तो पति उत्तर देता है कि तुमने मेरी बहिन से बोल-चाल, व्यवहार ठीक नहीं किया, सो मेरी बहिन भी नहीं आयेगी। तुम तो बस, प्रभु (भगवान) का नाम जपो, तुम्हें सन्तान जल्दी हो जायेगी। खुशियाँ घर में आ जायेंगी।

गर्भाधान यानी जन्म पूर्व का यह बुन्देली गीत भी अवलोकनीय है-

हमें पीरा भई राजा पीरा भई,
मोरे ललन भये महलों में।
चलो-चलो रही मोरी अम्मा,
हँड़िया धराव अंगना में।।
ऐसौ मूरख अज्ञानी राजा, कछु नईं जानत राजा,
हमखों लजायें राजा, काँ लौं समझाँय राजा,
हँड़िया ने कहौ राजा, चरुआ कहौ अंगना में
चलौ-चलौ री भौजी मोरी,
लुड़िया धराऔ अंगना में।
ऐसे मूरख अज्ञानी राजा, कुछ नई जानत राजा,
हम खों लजायें राजा, काँ लों समझाय राजा,
लुड़िया न कहौ राजा, लडुआ कहो अंगना में।।
चलो-चलो बहु मोरी, चलो बहु मोरी,
हप्पा बनाव अंगना में।
ऐसे मूरख अज्ञानी राजा, कछु नई जानी राजा,
हमखों लजा यें राजा, काँ लों समझांय राजा,
हप्पा न कऔ राजा, भत्ता कहौ राजा अंगना में।
चलो-चलो बैन मोरी,
लिखना लिखाव अंगना में।
ऐसे मूरख अज्ञानी राजा, कछु नई जाने राजा,
हम खों लजायें राजा, काँ लों समझाय राजा,
लिखना न कऔ राजा, सतिया कहौ अंगना में।।

इस बुन्देली गीत के अनुसार प्रसव हो जाने पर पत्नी अपने पति से कहती है कि मुझे बहुत जोरों से जब प्रसव पीड़ा हुई, तब पुत्र की प्राप्ति इस महल में हुई। इसलिए हे मोरे राजा (प्रियतम)! आज मेरी सासूजी से कहें कि आँगन में चलें, क्योंकि पानी गरम करने हेतु चूल्हे पर हँड़िया चढ़ानी है, किन्तु मेरे राजा (पति) इतने मूर्ख यानी अज्ञानी हैं कि उन्हें यह भी पता नहीं कि आँगन के चूल्हे पर हंड़िया नहीं चरुआ रखा जाता है। मुझे तो लाज आती है। पति भौजी के पास जाकर कहता है कि आँगन में चलो वहाँ लुड़िया रखनी है, जबकि उन्हें लुड़िया नहीं, लडुआ कहना चाहिए था। मेरे पति ऐसे अज्ञानी हैं कि वे उबले चावल को हप्पा कहते हैं, जबकि उन्हें हप्पा की जगह भात कहना चाहिए था। माँ, भौजी, बहू आदि के बाद मेरा पति मेरी ननद के पास जाकर कहता है कि आँगन में चलो, आपको वहाँ कुछ लिखना है जबकि मेरी ननद को आँगन में आकर सातिया बनाना था।

इस तरह जन्म अथवा गर्भाधान संस्कार के अनुसार किसी नारी को संतान की प्राप्ति होने पर सर्वमान्य सोलह संस्कारों में प्रथम संस्कार गर्भाधान या जन्म संस्कार है। इस संस्कार के अन्तर्गत माता-पिता, परिवार, रिश्तेदार आदि मिलकर खुशी से फूले नहीं समाते और अनेक आयोजन कर अपनी प्रसन्नता जाहिर करते हैं। जन्म से मृत्यु तक विभाजित हुए ये संस्कार भारतीय जीवन को निरन्तर खुशियाँ प्रदान करते हैं। इन खुशियों को परिवार और समाज विविध लोकगीतों, नृत्यों, सामाजिक, धार्मिक परम्पराओं के माध्यम से प्रकट करता है। जन्मस्थ संस्कार की शुरुआत स्त्री के गर्भ में आये शिशु के साथ ही हो जाती है। इसी कारण इसे हम पहले काफी कुछ कह आए हैं। इसी से जुड़ा हुआ पुंसवन संस्कार है, जो शिशु के गर्भाधान से लेकर उसकी शैशव अवधि यानी उसकी छः वर्ष की आयु तक माना जाता है।

इस अवधि में स्त्री के गर्भ में पल रही संतान की जानकारी हो जाने के बाद पारिवारिक परम्परा के अनुसार चौथे, छठे, आठवें माह में इस संस्कार को विभिन्न आयोजनों जैसे- आगन्नो, सोहर, साधें, कुआँ पूजन, वारकड़ो, झालर-मुण्डन, लोरी आदि से सम्बन्धित गारी, गीत-गायन के कार्यक्रम महिलाओं द्वारा सम्पन्न कराया जाता है। इन सब प्रकार के आयोजनों के अलग-अलग गीत प्रचलित हैं, जिनमें से कुछ के बारे में संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

आगन्नो

कौना के अंगना जिमरिया लहर-लहर करें हो,
कौना की नार गरब से ललन-ललन करें हो।
सुसरा के अंगना जिमरिया लहर-लहर करें हो,
रामा की नार गरब से ललन-ललन करे हो,
कौना के अंगना जिमरिया लहर-लहर करें हो,
ननदेऊ के अंगना जिमरिया लहर-लहर करें हो।।

भावार्थ यह है कि किसके आँगन में जिमरिया का वृक्ष लहरा रहा है? और किसकी स्त्री गर्भधारण किये हुए है? तथा बच्चे की रट लगा रही है? वह कह रही है कि मेरे ससुर जी के आँगन में जिमरिया का वृक्ष है, जो लहरा रहा है। रामजी की स्त्री गर्भवती है, जो बच्चे की रट लगाए हुए है और उसके ननदोई के आँगन में जिमरिया का वृक्ष लहरा रहा है।

साधें

साध का अर्थ होता है मनोकामना या इच्छा। तदानुसार यह ऐसी रीति होती है, जिसमें गर्भवती स्त्री के मायके वाले निश्चित तिथि पर वस्त्राभूषण, मिठाई, फल-फूल, पान आदि की भेंट-उपहार लेकर गर्भवती स्त्री के ससुराल में पहुँचते हैं। इसके पीछे उद्देश्य यह होता है कि गर्भवती स्त्री की सभी इच्छाओं की पूर्ति हो गई। उसके मन में कोई साध नहीं रह गई। परम्परानुसार पर्व एवं उत्सव के दिन पति-पत्नी को चौक पूर आसन पर बिठाया जाता है और गर्भवती स्त्री के आँचल (ओली) में बताशे, मिठाई, मेवा, फल-फूल डाले जाते हैं। बुलावे पर आई महिलायें संचत गीत गाती हैं, हास्य-व्यंग्य, नोंक-झोंक के साथ गायन-वादन कर अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करती हैं। कुछ ऐसे भी गीत गाए जाते हैं, जिनमें नखरे, ताने भरे बोल होते हैं। कुछ गीत ऐसे भी रहते हैं, जिनमें गर्भवती स्त्री के नौ मासीय जीवन की विशेष घटनाओं या स्थितियों का चित्रण होता है। गर्भ के शिशु के बारे में सुन्दर, स्वस्थ्य और चिरायु होने की कामनायें की गई होती हैं। कुछ लोगों का मानना है कि जन्म लेने वाली संतान पुत्र ही हो, ऐसी शुभकामनाओं के कारण ही इस संस्कार को पुंसवन संस्कार कहा गया है। इस संस्कार के दौरान गर्भ की अवस्था में पल रहे शिशु के जन्म पूर्व गायन-वादन इसलिए किया जाता है कि परिवार का परिवेश सुखद आनन्दमय बना रहे, जिससे शिशु/सन्तान के संस्कार सुन्दर-सलौने हों तथा भावी सन्तान सुयोग्य, सुन्दर और सद्व्यवहार से सम्पन्न हो।

इस तरह जन्म पूर्व और जन्म के बाद सन्तान के सुख-समृद्धि की कामना करते अनेकानेक लोकगीतों का गायन-वादन महिलायें सामूहिक रूप से प्रस्तुत करती हैं और नृत्य भी करती हैं -

अंगना में बैठी बारी भौजी, हार नीले गोरई महाराज!
माय से आगईं बारी बइयां, हँसई हँस बोल रईं महाराज,
जो भौजी हुइंये भतीजे, जौ हार मोय दय दियो महाराज,
जो विन्तु हुइंये भतीजे, हार तम लै लिइयो महाराज।
मोरा भये भुनसारे, लाल नौनें हो गये महाराज।
धीरे-धीरे बरजे बधइयां, तो धीरे सोक सोहरे महाराज।
जो सुन लेहें बारी बइयां, हार मोरो ले लें हैं महाराज,
माय से आगई बारी बइयां, ननद हँसई हँस बोल रईं महाराज।
अण्डा-धतुरे की जड़ें खोद मंगईयो महाराज!
सिल लोड़न बंटवाइयो, सिल लोड़न महाराज।।
कटोरो छानियो महाराज।
बारी बइयां खोंदे इयों पिलाय।
हार मोरो नच जै है महाराज।।

भौजी आँगन में बैठी हार गूँथ रही है। इसी समय बइया (ननद) आ जाती है। वह भौजी से कहती है कि भाभी! अगर भतीजा होता है, तो ये हार मैं ले लूँगी। भाभी कहती है कि तुम्हारी बात सही होगी तो ये हार मैं तुम्हें दे दूँगी। ननद खुश हो जाती है। सुबह पुत्र हो जाता है। आँगन में धीरे-धीरे नौ तरह के वाद्य यंत्रों से युक्त बधाई बज रही है। सहेलियाँ सोहर गीत धीरे-धीरे गा रही

हैं। स्त्री अपने पति से कहती है- अगर ननद बाई सुन लेंगी तो हार देना पड़ेगा। इस कारण तुम अण्डा-धतूरे का बीज लेके आओ और सिलबट्टा पर पिसवाओ। कटोरा में छान कर ननद बाई को दे दो, जिसे वह पीकर मर जायेगी और मेरा हार बच जाएगा।

पुत्र जन्म के बाद परिवार की खास ननद, देवरानी, जिठानी मिलकर बुलावे में आईं महिलाओं सहित जो जन्म गीत गाती है, वह यहाँ अवलोकनीय है-

सोहर गीत

भोर भए नंदलाल जू, शुभ घड़ी आ जइयो ननदी!
रेशम को कपड़ो ने लइयो री ननदी,
मखमल को मोरे रिवाज री!
शुभ घड़ी आ जइयो ननदी! भोर भये नन्दलाल जू
चाँदी जेवर ने लइयो री ननदी!
सूपे के मोरे रिवाज री।
शुभ घड़ी आ जइयो भोर भये नन्दलाल जू!
लडुआ बसेता की आशा ने करियो,
शुभ घड़ी आ जइयो ननदी।

अर्थात् भाभी ननद के पास संदेश भिजवाती है कि सुबह मुझे पुत्र पैदा हुआ है। आप शुभ घड़ी में आ जाना। ननदजी! मेरे यहाँ रेशमी कपड़ों की परम्परा नहीं है। इसलिए मखमल के वस्त्र लाना। चाँदी के गहने हमारे यहाँ कोई नहीं पहनता। इसलिए सोने के जेवर लेकर शुभ घड़ी में आ जाना।

इसी प्रकार यह गीत भी पुत्र जन्म के शुभ अवसर पर महिलायें गाया करती हैं।

अवध में जन्मे राम सलोना,
माता कौशल्या की कूंख जुड़ानी,
दशरथ जू के नैना, माता कौशल्या के लाल कहाये,
दशरथ जू के छौना,
बंदनवार बंदे हैं द्वारें
कलश धरे चारौऊ कोना।
राई नोन उतारें कौशल्या,
नजर लगे ने टोना।

इस सोहर का भावार्थ है- अवध में राम जी ने जन्म लिआ है। दशरथ जी को बहुत सुख हुआ है। माता कौशल्या की पीड़ा कम हुई। रामजी माता के लाल, दशरथ जी के पुत्र कहाए। पुत्र जन्म की खुशी में महलों में बंदनवार बाँधे गए हैं तथा चारों कोनों पर कलश रखे गये हैं। माता अपने लाल की नजर राई-नोन से उतार रही हैं। कलश पर दीये रखे गए हैं।

सन्तान की प्राप्ति होना ही जन्म संस्कार है, जिसकी शुरुआत माँ के गर्भ में बच्चे के आने के साथ यानी गर्भाधान से हो जाती है। सन्तान के आते ही अनेकानेक शुभ और धार्मिक परम्परागत प्रसन्नता व्यक्त करने हेतु आनन्दोत्सव रीति-रिवाज, नाच-गाना, प्रसविनी स्त्री के प्रसव के समय ही नरा काटने की क्रिया, जिसे बसोरन या नर्स के द्वारा सम्पन्न किया जाता है। बारकड़ों, जो जन्म के कुछ दिनों बाद जच्चा-बच्चा को सुन्दर स्वस्थ परिवेश में घर से बाहर लाने का उत्सव माना जाता है। दस्टोन, पुंसवन और सीमंतोन्नयन, कुआँ पूजन, झालर, मुंडन, बधैया आदि कुल अड़तालीस संस्कार कर्म जन्म संस्कार से जुड़े हुए हैं। हिन्दू धर्म के अनेक विद्वान ऋषियों ने कुल सोलह संस्कारों को मान्यता दी है। आगे कुछ और प्रमुख संस्कारों, जो जन्म संस्कार से जुड़े हैं, उनकी चर्चा कर रहे हैं।

पुंसवन संस्कार

यह संस्कार विवाहित स्त्री के गर्भ में पल रही सन्तान की जानकारी हो जाने के बाद पारिवारिक परम्परा के अनुसार चौथे, छठे या आठवें माह के बाद सम्पन्न किया जाता है। यह एक प्रकार की रीति, परम्परा या रस्म है, जिसमें गर्भवती स्त्री के मायके से बहुत सा सामान-वस्त्र, फल-फूल, मेवा-मिठाई आदि आता है। परम्परा के अनुसार एक निश्चित तिथि के शुभ अवसर पर चौक पूर कर व आसन पर बिठाकर पति-पत्नी को तिलक, टीका लगाते हैं। उपस्थित बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ शिक्षा देती हैं कि तुम लोगों को आने वाली सन्तान की देख-रेख, पालन-पोषण आदि इस तरह से करना है कि सन्तान का शारीरिक और मानसिक विकास भली प्रकार हो। गर्भिणी स्त्री के आँचल यानी झोली में बताशे मेवा, फूल, मिठाई आदि डाले जाते हैं। महिलायें सुन्दर संचत गीत गाती हैं। हास्य-व्यंग्य कर खुशी जाहिर करती हैं। बुलावे पर आई सभी महिलाओं को मिठाई, बताशे, आदि बाँटे

जाते हैं। कुछ ऐसे भी संस्कार गीत होते हैं, जिनमें गर्भवती स्त्री की नौ मासीय स्थितियों का चित्रण होता है और गर्भ में पल रहे शिशु के स्वस्थ-सुन्दर, बलिष्ठ, मनमोहक देह, चेहरा होने की शुभकामनायें आदि के भावों की अभिव्यक्ति होती है। यह भी कहा और माना जाता है कि अधिकांश मातायें पुत्र पाने की आकांक्षा रखती हैं, जिसके लिए ही ये शुभकामनायें दी जाती हैं। ऐसी शुभकामना की जाने के कारण ही इस संस्कार को पुंसवन संस्कार नाम दिया गया है। गर्भावस्था में प्रसविनी के पेट में पल रहे शिशु के जन्म के पूर्व गायन-वादन, हास्य-व्यंग्य, मनोरंजक नोक-झोंक आदि कर्म इसलिए किए और कराये जाते हैं, जिससे परिवार का परिवेश सुन्दर, सलोना, सुखद और हँसने-हँसाने का रहे ताकि, जो संतान जन्में वह सुसंस्कारित और सुयोग्य हो। यहाँ यह सोहर गीत सुपठनीय है-

पालना पीतल कौ मंगवा दो जेमें झूलें मोरे ललना,
ससुरा हमारे बड़े शौकिया, पालना ल्याय वे मोल।
सासू हमारी जनम जरैलू, पलना धर दव टोर हो।।
पालना पीतल कौ मंगवा दो, जेमें झूलें ललणा मोरे,
जेठा हमारे बड़े शौकिया, पालना ल्याये मोल,
जिठानी हमारी बड़ी बिजित्तर, पलना धर दव टोर।
पालना पीतल कौ मंगवा दो.....

यह गीत काफी लम्बा है। इसकी प्रारम्भिक पंक्तियाँ ही यहाँ उद्धृत की गई हैं। जन्म संस्कार से जुड़ा नरा काटने का एक संस्कार और होता है, जिसे नरा-विच्छेदन कहते हैं और जन्म होते ही जच्चा-बच्चा के बीच जुड़ा हुआ नरा काटने का काम नर्स या दाई करती है। नरा काटने की परम्परा सम्पन्न करते समय महिलायें यह गीत गाती हैं-

कहाँ रे लय जा रईं जे बंदन बारे,
बाबा नन्द घर लाल भये हैं।
उतई लय जारय जे बन्दन वारे,
काये के छुरा नरा छीन लये हैं।
काये के आखत डारे जे बन्दन बारे,
सुन्ने के छुरा नरा छीन लये हैं,
सूपे के आखत डोर जे बन्दन बारे,
कहाँ रे ले जारई जे बन्दन बारे,
सुरहन गौ के गोबर मंगाये जे
ढिंग घर आंगन लिपाये जे बन्दन बारे।
मुतियन चौक पुराये,
जसोदा चंदन पटरी डारी जे बन्दन बारे।।
सोने के कलश धराये जसोदा,
माणिक दीप उजारे जे बन्दन बारे।
रानी जसोदा चौक में आई,
गोदी में ललन ल्याईं जे बन्दन बारे।।
कहाँ रे लय जा रई जे बन्दन बारे।।

एक स्त्री बन्दनवार ले जा रही दूसरी स्त्री से प्रश्न करती है कि तुम ये बन्दनवार कहाँ ले जा रही हो? पहली स्त्री उसे उत्तर देती है कि मैं नाइन हूँ और बन्दनवार बाबा नन्द जी के यहाँ ले जा रही हूँ, क्योंकि उनके घर पुत्र पैदा हुआ है। सोने के छुरा से जच्चा-बच्चा का नरा काटा गया है और गोबर से घर लीपा गया है। मोतियों से चौक पूरे गये हैं। जसोदा मैया ने पटली बिछवाई है और सोने के कलश रखवाये हैं। मानिक से दीपों को सजाकर उनमें उजाला किया गया है। जसोदा मैया पुत्र को लेकर चौक में आ गई हैं। ये बन्दनवार वहीं ले जा रही हूँ।

जन्म संस्कार से और भी अनेक परम्परायें, क्रिया-कलाप, उत्सव, पूजन आदि जुड़े हुए हैं, जैसे भौंलोटनी, नरा विच्छेदन, चरुआ, दस्टोन, बधावा, पालना, लोरी, कुआँपूजन, आगन्नो, अन्नप्राशन-पासनी, नामकरण, कनछेदन, झालर-मुण्डन, यज्ञोपवीत, वर्षगाँठ आदि जिनके बारे में कुछ की चर्चा हम कर चुके हैं और किन्हीं विशेष की चर्चा आगे कर रहे हैं-

भौंलोटनी

गर्भवती स्त्री या जच्चा जब गर्भाधान की लगभग नौ मास की अवधि पूरी करके प्रसव करती है, तब बच्चा भूमि पर आता है यानी भू-स्पर्श करता है। ज़मीन पर लोटता है और जननी तथा धरती माता के प्रति अपने निकट जुड़ाव को अभिव्यक्त करता है। इसी भू-लोटन की क्रिया को भौंलोटन संस्कार कहा गया है। इसी समय नवजात शिशु की किलकारी फूटती है। शिशु बेटा हो तो थाली बजाई जाती है। यदि बेटी हो तो सूपे पर थपकी मारी जाती है। जन्म स्थल पर जिठानी-देवरानी, सास, नाईन-दाई के

अलावा कोई नहीं जाता। नरा काटने पर बची हुई कनारी को जच्चा-बच्चा के कमरे के किसी कोने में गाड़ दिया जाता है। उक्त स्थान पर लगातार तीन दिन तक आग जलाई जाती है, ताकि वह भस्म हो जाय, जिससे कनारी ठंडी हो जाय, नहीं तो जच्चा बीमार हो जाती है। उसे बीमारियाँ लगातार घेरे रहती हैं और कनारी जलाकर भस्म कर दी जाती हैं, तो जच्चा-बच्चा को कभी कोई रोग नहीं सताता ऐसी मान्यता है।

सीमंतोनयन संस्कार

यह गर्भस्थ शिशु के मानसिक एवं शरीरिक विकास की दृष्टि से चौथे, छठे या आँठवें मास में किया जाता। इस अवधि में गर्भ में पल रहे बच्चे के सुन्दर, स्वस्थ, सदाचारी होने की कामना से गर्भवती स्त्री को अपने कार्यव्यवहार और आचरण आदि को सुधार कर रखना चाहिए।

कुआँ-पूजन

जन्म संस्कार से जुड़ा यह संस्कार-कुँआ पूजन या बारकड़े एक-दूसरे के पर्यायवाची कहे या माने जाते हैं, क्योंकि जब तक इसे न किया जाए, तब तक जच्चा-बच्चा घर के बाहर नहीं आ-जा सकते। ऐसा भी माना जाता है कि इसे न किया जाय तो प्रसूता के स्तनों का दूध सूख जाता है। कुआँ पूजन को जाते समय पूजा की थाली में हल्दी, चावल, रोली, फूल, बताशे, घेंघरी (गेहूँ-चना उबले हुए) तथा दूर्वा होती है। इस तरह माँ बनने के बाद स्त्री अपनी सखी सहेलियों, बुजुर्ग महिलाओं के साथ गीत-गाते हुए कुँए पर जाती है। कुआँ पूजन का गीत देखिए-

ऊपर बदरा घरर-घरर घरराय री,
नेचे गोरी पनियां खों निकरी।
जाय जो कैइयो उन ससुरा बड़े सें,
तुमारी बहू पनियाँ खों निकरी।।
जाय जो कइयो उन जेठा बड़े सें,
चन्दन पाट डरायें हो,
उनकी बहुत पनियाँ खों निकरी,
जाय जो कइयो उन देवरा से,
रेशम डोरी लियाव हो,
उनकी भौजी पनियाँ खों निकरी।।
जाय जो कइयो उन ननदेउ बड़े से,
सोना घड़ोला ल्यांय,
उनकी सलहज पनियाँ खों निकरी।।

इसी प्रकार बधैया गीत भी है, जो जच्चा को बधाई और शुभकामना देते हुए महिलायें गाती हैं-

जन्मे कुँअर कन्हैया बृज में बाजे बधैयाँ,
ढप-ढप बाजे मृदंग-खंजरी उर बाजे सहनैइयाँ।
ग्वाल-बाल सब नाचन लागे, गावें ता-ता थैया,
जसुदा माता पलना झुलावें, बल्दाऊ के भैया।
नन्द बाबा के लाल भये हैं, जसुदा जी के कन्हैया।।

चरुआ

शिशु जन्म होते ही जच्चा के परिवार का मुखिया पंडित, पुरोहित या ज्योतिषी की देखरेख में बच्चे की जन्मतिथि, समय, राशि आदि के अनुरूप जन्म कुण्डली बनवाता है। चरुआ रखने का शुभ मुहूर्त लिखवाता है। चरुआ मिट्टी का होता है, जिसमें पानी भरकर दशमूल (दस जड़ी-बूटियाँ) डाला जाता है। साथ ही खैर की लकड़ी के सात टुकड़े डाले जाते हैं, जिसे 'कांके' कहते हैं। चरुआ में एक ताम्बे का पैसा तथा हल्दी की गांठे, पीपर-सोंठ आदि डाले जाते हैं। परिवार की स्त्रियाँ मिलकर गाय के गोबर से एक स्थान पर लीपती हैं और लिपे हुए स्थान पर आटे से चौक पूर कर चरुआ (मिट्टी का घड़ा) रखती हैं। चरुआ के नीचे गेहूँ फैलाती हैं और चरुआ के चारों ओर गोबर लगाती हैं। उसी पर हरी दूब चिपकाती हैं। चरुआ के चारों ओर सातिया भी बनाया जाता है। कुल देवता के समक्ष चरुआ (घट) का पूजन करते हुए उसके पानी को इतना खौलाया जाता है कि उसका पानी आधा रह जाय। उसे ठण्डा कर प्रसूता नारी को पन्द्रह दिनों तक पिलाया जाता है। साथ ही गुड़-विस्वार के लड्डू खिलाए जाते हैं, जो शुद्ध दूध-घी से बनाए जाते हैं। इन्हीं लड्डुओं को उबालकर भी पिलाया जाता है। यह 'हरीरा' कहलाता है। ये लड्डू (हरीरा) और चरुआ का पानी आगामी पन्द्रह-बीस दिन खिलाया-पिलाया जाता है। इसे खाने-पीने से प्रसूता का स्वास्थ्य ठीक रहता है और कूँख साफ-सुथरी रहती है।

शिशु जन्म के तीसरे दिन बसोरों की सोर होती है, जिसमें जच्चा-बच्चा को प्रसव स्थान से बाहर आँगन में लाकर सूतक हटाने के लिए स्नान कराया जाता है। साफ-सुथरे वस्त्र पहिनाए जाते हैं। इसके आठ-दस दिन बाद दूसरी सोर का आयोजन होता है। इसमें नीम के पत्तों को उबले हुए पानी में प्रसूता और शिशु को पूर्ण स्वच्छता के साथ नहलाती-धुलाती हैं। बालों की सफाई कर देह को भी उबटन कर साफ करती है। शिशु को सूपे में लिटाया जाता है। इस अवसर पर सोहर गीत गाए जाते हैं। महिलाएँ गीत गाती हैं, जिनमें राम-कृष्ण से सम्बन्धित छवियों, उपमाओं और संस्कारों से जुड़े सभी उत्सव-आयोजनों का वर्णन होता है।

दस्टोन-बधावा-पालना और लोरी

प्रसूता स्त्री के लिए शिशु जन्म के साथ सूतक की अवधि आरम्भ हो जाती है, जो लगभग 8-10 दिन तक चलती है। इस काल में प्रसूता को चरुआ का कुनकुना जल पीने को व मसाला-मेवा वाला गुड़ और लड्डू खाने को दिए जाते हैं। इस खान-पान से पुत्र जन्म के कारण हुई शारीरिक कमजोरी को दूर किये जाने की भावना प्रकट होती है। शिशु जन्म के बाद का दसवाँ दिन दष्टोन कहलाता है। दलिया, खिचड़ी, भात आदि हल्का भोजन प्रसूता को खिलाया जाता है। इस प्रक्रिया को 'पंचभात' की या तीसरी सोर उठाने की संज्ञा दी जाती है, दष्टोन नाम तो इसका है ही। परिवार में आई प्रसन्नता को प्रकट करने के लिए खवासन को लड्डू या गुड़ आस-पड़ोस, रिश्तेदारों में बँटवाने दिया जाता है। यह क्रिया एक प्रकार का आमंत्रण भी है। बुलउआ में आई महिलाओं सहित परिवार की स्त्रियाँ दीवार पर एक ओर सूर्य और दूसरी ओर सांतिया का रेखांकन गोबर से करती हैं। सूर्य की आकृति में चने की देवली और सातिये पर हरी बारीक दूब चिपकाती हैं। इस अवसर पर महिलाओं के माथे पर हल्दी-रोली के टीके और पाँवों में हल्दी तथा माहुर का लेप किया जाता है। यह क्रियाये सधवा महिलायें कराती हैं। प्रसवा नारी को चौक पूरे पटा पर बिठाकर उसकी दाहिनी ओर मंगल कलश पर चौमुखी दीपक प्रज्ज्वलित किया जाता है। सास नवजात शिशु को जच्चा की गोद में बिठलाती हैं और शादी का गठजोड़ा वस्त्र प्रसूता के सिर पर ओढ़ाया जाता है। उस पर ननद द्वारा हल्दी से साँतिया की आकृति खींची जाती है। लड़की हो तो पाँच तथा लड़का हो तो सात सातिया खींचे जाते हैं। ननद के हाथों द्वारा चौमुखी दीपक से पारा गया काजल शिशु को लगाया जाता है। जच्चा की सखियाँ देवर से हँसी-मजाक करती हैं। अन्त में घर/बाहर की स्त्रियों द्वारा नवजात शिशु को भी कुछ न कुछ भेंट स्वरूप वस्त्रादि दिए जाते हैं।

इसी मौके पर जच्चा के मायके से पच और ननद की ओर से बधावा आता है, जिसे सभी लोग देखते और खुश होते हैं। नवजात शिशु की बुआ (जच्चा की ननद) की ओर से वस्त्राभूषण, खिलौने आदि आते हैं। प्रसूता के मायके से भी अनेक वस्त्राभूषण, पालना, मिठाई, फल, धनराशि आदि शिशु के मामा-मामी लाते है। इन सब सामान के अलावा सोने का कठुला, हाय आदि होते हैं। हाय पर 'हा' लिखा होता है, जिसका अर्थ होता है कि शिशु को किसी की नजर न लगे। मायके से 'पलना' एवं अन्य सामग्री लाते समय एक जुलूस में महिलायें गाते हुए निकलती हैं। ये लोरी और पालना गीत होते हैं, जिनमें ये गीत गाये जाते हैं-

लोरी

सो जा वारे वीर-वीर की बलैयां ले जा जमुना के तीर
वर पै डारो पालना पीपर पै डारी डोर, सो जा वारे वीर।
वीर की बलैयां ले जा जमुना के तीर,
कौन ने मारी कौन ने कूटो कौन ने दई हैं मारी,
सोजा वारे वीर-वीर की बलैयां ले जा जमुना के तीर।।
बऊ ने मारी दद्दा ने कूटो, जिज्जी ने दई है गारी,
तुम तो सोजा वारे वीर, वीर की बलैंया ले जा जमुना के तीर।।

झालर-मुंडन

काह से झालर उपजे काँह लये अवतार,
झालर मोरी पावनी, कुर वीयों से झालर उपजै।
गोदी में लय अवतार।
झालर मोरी पावनी, झालर जवई मुड़ार हों,
ससुरा घरै होय, सासू घरै होंय।।

जन्म

जो घर होते ससुरा हमारे, बैली देते लुटाय।
जो घर होते जेठा हमारे, अँगना देते सजाय।
जो घर होते देवरा हमारे, कुआँ देते खुदाय।
जो घर होते ननदेऊ हमारे, तुपकें देते घलाय।।

कहा जाता है कि यह गीत सीता जी के वनवास काल में महर्षि वाल्मिकी के आश्रम में जन्में लव-कुश से जुड़ा हुआ है। सीता जी इसमें अपने वनवास काल के अभावों के बारे में बताती हैं कि यदि हम घर होते तो सास, जिठानी, देवरानी आदि चरुआ धराती, पिपरीं (पीपरें) पीसती और पथ्य मिलता। इसी तरह ससुर, जेठ, देवर, ननदेऊ आदि सभी आनन्द में डूब जाते। सीताजी यह महसूस कर रही हैं कि इतना बड़ा परिवार होते हुए भी बच्चों का जन्म वन में हुआ। इस तरह बच्चों का जन्म वन में होने की पीड़ा और अकेलेपन की छटपटाहट उन्हें (सीता जी को) बहुत खलती है। परिवार से विद्रोह की वेदना परिवार के महत्त्व को बढ़ा देती है।

निष्कर्ष यह कि सन्तान का जन्म दुनिया का सबसे बड़ा आनन्द है। सारा परिवार हर्षोल्लास के सागर में डूब जाता है। इसीलिये मानव-जीवन में जन्म संस्कार की महत्ता भी सर्वाधिक है। सर्वमान्य सोलह संस्कारों में से प्रथम संस्कार जन्म है और अन्तिम संस्कार मृत्यु। जन्म आनन्ददायक है, तो मृत्यु दु:ख दायक। इन दोनों की सर्वाधिक व्यापकता दुनिया भर में है।

संदर्भ

1. बुन्देली संस्कृति और साहित्य- डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त
2. बुन्देलखण्ड के संस्कार गीत- संकलन-सुधीर तिवारी
3. रूपक-सपने सुहाने बुन्देली संस्कारन के- वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक'

बुन्देली अनुष्ठान चरुआ

आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल

संतान के जन्म के बाद प्रसूता को पीने के लिए पानी और भोजन की व्यवस्था आवश्यक होती है। सामान्य भोजन और पानी, उसे दिया नहीं जा सकता है। प्रसूता के जीवन का यह संक्रमणकाल है। अशुद्ध जल अथवा भोजन देने से प्रसूता का शरीर अनेक रोगों का घर बन सकता है, यह लोक मान्यता है और वैज्ञानिक तथ्य भी। इसी के सन्दर्भ में प्रसूता को हितकर जल की व्यवस्था के हेतु एक लघु अनुष्ठान के रूप में 'चरुआ' धरने की रीति बुन्देली जनपद में प्रचलित है।

पास-पड़ोस की, घर परिवार की सुहागिन स्त्रियाँ बुलायी जाती हैं। इस अनुष्ठान की प्रमुख होती है प्रसूता की 'सास'। वही सर्वप्रथम अच्छा सुन्दर मिट्टी का घड़ा कुम्हार के यहाँ से मँगवाती है। गाँव का कुम्हार मटका लेकर आता है। सास उसे सम्मान के साथ चावल और गुड़ की बटी दक्षिणा के रूप में देती है, जिसे 'आखौती' कहा जाता है। घड़ा खूब अच्छी तरह से देखा-परखा जाता है। ध्यान रखा जाता है कि बर्तन अच्छा पका हो, उसमें पकने के दरम्यान लगने वाली 'कालिख' न हो। मटके को चारों ओर से गाय के 'गोबर' और 'दूब' से अलंकृत किया जाता है। मटके में गोबर के सहारे 'जौ' (जवा) के स्वस्तिक के प्रतीक की रचना प्रमुख अलंकरण होती है। इस सजावट के बाद वे कुँवारी कन्याओं और सुहागिन स्त्रियों के साथ घड़े को शुद्ध पानी से भरकर चूल्हे पर चढ़ाती हैं, जहाँ सुलभ होता है- वहाँ खैर की लकड़ियों से और जहाँ सुविधा नहीं होती- वहाँ बबूल की लकड़ियों द्वारा चूल्हे को 'चेताते' बुन्देलखण्ड के लोक जीवन में चूल्हा जलाना जैसे शब्द अशुभ माने गए हैं। अतः यहाँ अग्नि प्रज्वलन के लिए 'चेताना' शब्द का प्रयोग विशेष उल्लेखनीय हैं। सास जो अनुष्ठान की प्रमुख होती है, वह घड़े के पानी में कुछ छोटी-छोटी खैर की लकड़ियाँ,

हल्दी की पाँच गाँठें, पीपर, ताँबे का पैसार और दशमूल की औषधियों को थोड़ा कुचलकर एक नये कपड़े की गाँठ में बाँधकर घड़े में डाल देती हैं। घड़ा चूल्हे पर चढ़ा दिया जाता है। ध्यान रखा जाता है कि आँच न तो अधिक तेज हो और न ही कम हो। इस प्रकार मध्यम आँच में 'चरुआ' का पानी पकाया जाता है। इस बीच स्त्रियाँ सामूहिक रूप में चरुआ से सम्बन्धित गीत गाती रहती है, जो प्राय: पारम्परिक 'सोहर' हुआ करते हैं। ये गीत अपने भाव और विचार में अपनी विशिष्टता को संजोये और अनुष्ठान की प्रक्रिया के गूढ़ पक्षों को व्यंजित करते हैं। यहाँ उदाहरण के रूप में चरुआ का एक गीत प्रस्तुत किया जा रहा है–

पंडत बुलाऔ महूरत पुछाऔ,
सुभ घरी चरुआ धराओ बारी सजनी।
दसामूर की पुरिया मँगाऔ,
बाके संगे एक ताँबे को पइसा
हल्दी की गाँठे, पीपर डराऔ।
गउन के गोबर लिपाऔ बारी सजनी।।
चौक पुराकै आखत धराकै,
चरुआ कौ पूजन कराऔ बारी सजनी।
सासो जू आवें चरुआ धरावें,
चरुआ धराई नेंग पाऔ बारी सजनी।
सुभ घरी चरुआ धराऔ बारी सजनी।।

अब हम जनपदीय परम्परा के इस अनुष्ठान पर विचार करें कि यह गीत कितने अर्थ गाम्भीर्य से युक्त है और संकेतों से अनुष्ठान की प्रक्रिया को सूचित करता हैं। सर्वप्रथम हमारे सामने आता है 'चरुआ' शब्द। यह शब्द सहस्त्रों वर्ष पुरानी पवित्र परम्परा से इस अनुष्ठान को जोड़ता है। यह 'चरुआ' शब्द वैदिक 'चरु' शब्द का बुन्देली रूपान्तरण है। वेद में 'चरु' शब्द का अर्थ है मिट्टी का वह बर्तन जिसमें जल रखा जाता है। यास्क मुनि ने अपने निरुक्त शास्त्र में लिखा है– 'चरु' 'मृच्चयो भवति' (निरु. 06/11) अर्थात् 'चरु' मिट्टी का बर्तन होता है। यह 'चरु' शब्द मिट्टी के बर्तन के अर्थ में ऋग्वेद (7/104/2) में तथा अथर्ववेद (8/4/2) और काण्व संहिता (13/11) में भी इसी अर्थ में प्रयोग किया गया है। स्पष्ट है कि वैदिक काल में यह शब्द पानी रखने वाले मिट्टी के बर्तन के अर्थ में प्रयुक्त हुआ करता था। समय बीता और ब्राह्मण ग्रंथों के निर्माण काल में कर्मकाण्ड के अधिक विकसित होने पर यह बर्तन 'चरु' यज्ञ के लिए पकाये जाने वाले चावल के पिण्ड के अर्थ को सूचित करने लगा। शतपथ ब्राह्मण में (5/4/2/1) तथा तैत्तरीय ब्राह्मण में (1/5/10/6) यह 'चरु' शब्द यज्ञ के निमित्त 'पकाये हुए चावल' के अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ है। निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि 'चरुआ' शब्द हमारी सहस्त्रों वर्ष की पवित्र परम्परा से आया है। जो आज भी लगभग उसी अर्थ में मिट्टी के जल भरने के पवित्र पात्र को सूचित कर रहा है।

'चरुआ' में प्रयुक्त 'गोबर' और 'दूबा' इस देश में सदा ही पवित्रता और मंगल के सूचक रहे हैं। याज्ञवल्क्य ऋषि ने जो यज्ञ विज्ञान के वेत्ता थे, उन्होंने कहा था कि दुर्वा प्राणरस है। दूर्वा रक्षक है। यज्ञ में दूर्वा का जो प्रयोग करता है, वह यज्ञ में सर्वोषधि का प्रयोग करता है। (श.ब्रा. 7/4/2/12)

'गोबर' लक्ष्मी का वास माना जाता है, ऐसी धार्मिक मान्यता है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अध्याय 82 में कहा है कि गोबर में लक्ष्मी का वास है। ऋग्वेद के खिल भाग 'श्री सूक्त' में लक्ष्मी देवी को 'करीषिणीम्' विशेषण दिया है, यह जो गोबर की पवित्रता एवं समृद्धि को सूचित कर रहा है। इसी प्रकार हल्दी आयुर्वेद के अनुसार श्रेष्ठ औषधि है, रक्त शोधक है। पुराणों के अनुसार हल्दी मंगल का प्रतीक है। 'ताँबा' भी पुराणों के अनुसार पवित्र 'पावक अग्नि' का प्रतीक है। ताँबा आयुर्वेद के ग्रंथ शालग्राम निघण्टु के अनुसार 'विषघ्न' जल के विषैलेपन को दूर करने वाला, जल को शुद्ध करने वाला कहा गया है। गीत में यह भी कहा गया है कि 'पीपर डराऔ बारी सजनी', आयुर्वेद के अनुसर पीपर रोगी के लिए अति उपयुक्त है। यह एक ही औषधि नियमित रूप से लेने पर अनेक रोगों को दूर करने के लिए पर्याप्त है। 'उन्माद' और वात विकार की सर्व स्वीकृत आयुर्वेद में वर्णित श्रेष्ठ औषधि है। गीत में फिर कहा गया है– 'दसामूर की पुरिया मँगाऔ' दसामूर है दसमूल (दस औषधियों की जड़ें)। 'भावप्रकाश' ग्रन्थ में कहा गया है कि अरनि, सालपर्णी दोनों कटेरी, गोखरू, बेल, अरलू, खंबारी और पाढ़र आदि जड़ों का योग दसमूल कहलाता है। प्रसूता को दस दिन तक इस दसमूल का काढ़ा पिलाया जाये तो प्रसूतिजन्य उपद्रव दूर हो जाते हैं। यही नहीं उदर रोग, पसली का दर्द, त्रिदोष, सन्निपात और सूतिका रोग को भी जड़ से दूर करने वाला ये योग है। अरनि जैसी कुछ औषधियाँ तो प्रसूता के लिए

मानो अमृत ही हैं, वे बबासीर, वायुगोला, गठिया, हृदय की निर्बलता दूर कर गर्भाशय को परिपुष्ट करती है, यह धनवन्तरि निघण्टु का कहना है।

यह है 'चरुआ धरायी' अनुष्ठान में प्रयुक्त होने वाली औषधियों का आयुर्विज्ञान के द्वारा स्वीकृत पक्ष। धार्मिक दृष्टि से इसमें चौक पुराना, कुँवारी कन्याओं को बुलाना, सुहागिन स्त्रियों का होना, 'शुभ मुहूर्त और घड़ी' में अनुष्ठान का सम्पन्न करना आदि प्रक्रियाएँ चरुआ धरायी में प्रयुक्त होती हैं, जिनकी जड़ें हमारी परम्परा में गहरी जमी हैं। सामाजिक दृष्टि से इसमें पास-पड़ोस की स्त्रियों को बुलाना, मंगलगान करना, सास को विशेष सम्मान देना एवं प्रसूता द्वारा उनकी प्रसन्नता के लिए नेग के रूप में उपहार प्रदान करना, प्रसूता को आमंत्रित महिलाओं की शुभ कामनाओं से अभिशिक्त करने की क्रियायें सामाजिक सरोकार और जुड़ाव को बढ़ाती हैं, समरसता प्रदान करती हैं।

प्रश्न उठता है क्या 'चरुआ धरायी' जन्म से सम्बन्धित संस्कारों में गणनीय अनुष्ठान है। हम विचार करते हैं तो पाते हैं कि इस देश में जितने संस्कार प्रचलित हैं, उस पर हमारे देश के महान विचारकों ने चिंतन किया है। किस अनुष्ठान को संस्कार कहा जाये और किसे नहीं, इस पर खूब विचार किया गया है। आचार्य जैमिनी, गौतम, सुमन्तु, अंगिरा, मार्कण्डेय, वेदव्यास जैसे अनेक प्राचीनों ने और आचार्य विनोवा भावे एवं महर्षि अरविन्द जैसे नवीन चिंतकों ने इस पर सोचा है। आचार्य जैमिन के सूत्रों पर भाष्य करते हुए शबरस्वामी ने लिखा है कि 'संस्कारोनामु स भवति यस्मिन जाते पदार्थो भवति योग्यकस्यचित अर्थस्य' अर्थात् संस्कार वह है जिसके करने वे पदार्थ किसी निश्चित अर्थ के लिए योग्य हो जाता है। 'तंत्रवार्तिककार भट्टपाद' इसे और भी स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि 'योग्यताम्' व दधाना: क्रिया: संस्कार: इति उच्यते' अर्थात् योग्यता उत्पन्न करने वाली क्रियाएँ संस्कार हैं। गौतम ने अपनी स्मृति में 48 संस्कार बताये हैं, सुमन्तु ने 25 तथा मार्कण्डेय ने 16 संस्कार बताये हैं। वेदव्यास ने 16 संस्कार कहे हैं। गृह्यसूत्रों ने कुछ अलग ही संस्कार बताये हैं, जैसे अग्निष्टोम, श्रावणी, श्राद्ध आदि। वैष्णवों ने कुछ अन्य संस्कार बतायें हैं, माध्वों ने अलग। योगियों के सम्प्रदाय में अलग ही संस्कार माने गये हैं।

सभी इस बात पर एक मत हैं कि संस्कार के प्रमुख उद्देश्य दो है, पहला हैं- दोषों का परिमार्जन और दूसरा है गुणाधान। दोष जो व्यक्ति में सन्निहित है, उनको दूर करना और जो व्यक्ति में गुण निहित हैं, उनको अत्यन्त तेजस्वी बनाना। एक हीरा है उसके ऊपर लगे कंकड़ पत्थर और मिट्टी आदि को दूर कर साफ करना ये दोषों का परिमार्जन है और इसके बाद हीरे को चमकाने के लिए उसकी कटिंग और पॉलिश करना गुणाधन है। जो रीतियाँ, विधियाँ, क्रियायें व्यक्ति में दोषों का परिमार्जन करें और गुणाधान करें, वह संस्कार हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'चरुआ धराई' एक संस्कार है। दोषों का परिमार्जन-प्रसूता में संक्रमण से उत्पन्न रोगों को तथा रोगों के होने की सम्भावनाओं को निरस्त करने के लिए आयुर्विज्ञान द्वारा स्वीकृत सैकड़ों वर्षों से परीक्षित जल को तैयार करके देना पहले उद्देश्य की पूर्ति करता है। साथ ही कुछ औषधियाँ 'दसमूर' में ऐसी भी जोड़ी गई हैं, जो दूसरे उद्देश्य अर्थात् 'गुणाधान' को भी पूरा करती हैं। वे इस संक्रमण काल में शरीर को कांतियुक्त और पहले से भी अधिक पुष्ट बनाने में मदद करती हैं। उपेक्षा, हताशा और एकाकीपन को दूर करने के लिए, प्रसन्नता का वातावरण बनाने के लिए, परिवार और पड़ोस से जोड़ने के लिए, सामाजिक समरसता को साधने के लिए भी इस अनुष्ठान में सास की प्रमुखता, सुहागिनों का इकट्ठा होना, कुँवारी कन्याओं की उपस्थिति और मंगल गीतों का गाया जाना, ये सब घटक प्रसूता को प्रसन्नता प्रदान करते हैं। इस प्रकार हम देखते है कि यह 'चरुआ धरायी' अनुष्ठान सहस्त्रों वर्ष पूर्व की परम्परा से जोड़ते हुए वर्तमान सामाजिक परिवेश में भी वैज्ञानिक मानदण्डों पर खरा सिद्ध होने वाला, जन्म के उपरान्त होने वाले संस्कारों में से एक प्रमुख 'अंग-संस्कार' है। ऐसा यह 'चरुआ धरायी' बुन्देली जनपद में प्रचलित अनुष्ठान है।

बुन्देली जन्म संस्कार

रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय

शहरी क्षेत्रों और कस्बों-बस्तियों में आजकल प्रसव कराने की सुविधाएँ अस्पतालों में उपलब्ध हैं। परन्तु गाँवों में आज भी दाइयों द्वारा प्रसव कराया जाता हैं। गाँवों में प्रसव कराने और उसके बाद पालन किए जाने वाले रीति-रिवाज अत्यंत सावधानीपूर्वक अपनाए जाते हैं, ताकि जच्चा और बच्चा दोनों स्वस्थ रहें। जब प्रसव पीड़ा आरंभ होती है तो गाँव की बड़ी-बूढ़ियाँ जच्चा को सम्भालती हैं। अनुभवी दाई को बुलाया जाता है, जो सावधानी पूर्वक प्रसव करवाती है। शिशु जन्म के उपरांत उसे नहलाते हैं, उसके पूर्व उसका नाल साफ चाकू से काटते हैं। नवजात शिशु को थोड़ा शहद चटाया जाता है। प्रसव पश्चात् शिशु और नवप्रसूता को घर में एक अलग-थलग स्थान पर खटिया बिछाकर उसके सोने की व्यवस्था की जाती है और इसी समय शिशु को स्तनपान कराते हैं। पाँच या कम से कम तीन दिन तक उन्हें अलग रखते हैं, क्योंकि इस अवधि में छुआछूत माना जाता है, जिसे सारे-सूतक कहते हैं। इस अवधि में नव प्रसूता को बहुत ही परहेज से खाना और पानी देना होता है। सबसे पहले पीने की व्यवस्था की जाती है, इसके लिए कुम्हार से कोरी हंडी बुलाई जाती है। चूल्हा जलाकर उसमें पानी गरम करने रखते हैं। पानी में देशी जड़ी-बूटी डालते हैं। वायविड़ंग, अजवाइन के अलावा कत्था की लकड़ी भी डालते हैं जो गाँव का बढ़ई लाता है। इन लकड़ियों को काँके कहते हैं और बढ़ई को इसका नेग दिया जाता है। कोरी हंडी के ऊपर गोबर को चारों ओर थोड़े-थोड़े अंतर पर लगाकर उस पर चने की दाल चिपकाते हैं। फिर छोटे बच्चों से इस हंडी को हाथ लगवाते हैं। पुत्र जन्म पर सात तथा पुत्री जन्म पर पाँच बच्चे हंडी को हाथ लगाते हैं। इसे हंड़िया छुहाई कहते हैं। बच्चों को भीगी चने की दाल और गुड़ प्रसाद के रूप में बाँटते हैं। जब पानी उबल जाता है, तब इसे ठंडा करके नव प्रसूता को पीने

के लिए देते हैं। जच्चा को सिकाई की आवश्यकता होती है, अत: गुरसी (मिट्टी का पात्र) में आग जलाकर उस पर अजवाइन डालकर जच्चा की खटिया के नीचे रखते हैं। इस प्रक्रिया को धूनी देना कहते हैं।

सोर पाँच या तीन दिन तक रहता है। प्रसूता को इस अवधि में हल्का भोजन देते हैं। उसे गुड़, सोंठ, सूखे मेवों से तैयार गरम पेय पिलाते हैं जिसे हरीरा कहते हैं। सोंठ के लड्डू भी दिये जाते हैं, जिनमें सोंठ, घी, सूखे मेवे, गुड़, सेतमूसरी और कमरकस डाला जाता है, जिससे जच्चा को शक्ति मिलती है और नवजात शिशु को माँ का दूध पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो जाता है।

छठवें दिन माँ और बच्चे को अच्छी तरह नहलाया जाता है। इस दिन से सोर का सूतक खत्म माना जाता है तथा माँ को समुचित आहार दिया जाता है। इस दिन छटी का दस्तूर भी सम्पन्न होता है। दसवें दिन दसटोन होता है, किसी-किसी के घर इसे बाहरवें दिन भी करते हैं, जिसे बारसा कहते हैं। आमतौर पर बच्चे के जन्म के दिन से सोहर (गाना-बजाना) आरंभ हो जाता है। परन्तु दसवें या बारहवें दिन उत्सव का बृहत आयोजन किया जाता है, जिसमें रिश्तेदारों के अलावा गाँव-बस्ती के लोगों को भी आमंत्रित किया जाता है। यह आयोजन व्यक्ति विशेष की हैसियत के अनुरूप छोटा या बड़ा हो सकता है। एक भेदभाव अवश्य देखा जाता है कि पुत्र के जन्म के अवसर पर यह आयोजन बृहत स्तर पर होता है, जबकि कन्या जन्म होने पर अधिकतर आडंबरहीन, केवल परम्परा का निर्वहन कर लिया जाता है।

जन्मोत्सव के पूर्व नाई द्वारा गुड़ दूब (गुड़ के लड्डू) खास रिश्तेदारों जैसे बहू के मायके, ननद- ननदोई इत्यादि के घर भेजे जाते हैं और इसी समय उन्हें दस्टोन, चौक अथवा बारसे की नियत तिथि की जानकारी दी जाती है। ननद-ननदोई और मायके से विशेष उपहार आते हैं, जिनमें वस्त्राभूषण, झूला, चंगेर, अनाज और लड्डू होते हैं, इसे बधावा (पच) कहते हैं। उत्सव के दिन गाँव में बुलौआ (निमंत्रण) दिया जाता है। महिलाएँ इस अवसर पर ढोलक की थाप पर सोहर गाती हैं। शिशु को दीये की 'लौ' से बनाया गया काजल बुआ लगाती है, जिसे काजल अंजाई कहते हैं। यह ध्यान रखा जाता है कि दीये की 'लौ' बच्चा न देखे। उत्सव के समय एक दस्तूर और होता है, जिसे पछीत का नेग कहते हैं। इसमें देवर की भूमिका रहती है। देवर को घर के पिछवाड़े भेजा जाता है और कोई महिला उससे पूछती है कि यह लड़का किसका है, तब देवर उत्तर में कहता है मेरा। इस नेग के उपलक्ष्य में बड़ा भाई छोटे भाई को पैसे, कोई वस्तु अथवा कुछ अपने हिस्से की जमीन देता है। यह दस्तूर मनोविनोद पूर्ण होता है।

बच्चे के जन्म के उपलक्ष्य में गाँव वाले भी उपहार स्वरूप भेंट देते हैं, जिसे हतौना कहते हैं। इस मौके पर आये सामान की कीमत का आंकलन गाँव के प्रमुख व्यक्ति (पंच) करते हैं। इस आयोजन में भोजन की व्यवस्था व्यक्ति विशेष की गुंजाइश के अनुसार की जाती है अन्यथा आमंत्रितों को बताशे देकर विदा करते हैं और निजी मेहमानों को भोजन कराते हैं। उत्सव की समाप्ति के बाद नाई, धोबी इत्यादि को इनाम दिया जाता है।

जन्मोत्सव में महिलाओं द्वारा सोहर गाये जाते हैं। वैसे तो जन्म के तुरन्त बाद से सोहर गाने का सिलसिला शुरू हो जाता है, जो दस्टोन (बारसा) तक चलता रहता है, परन्तु दस्टोन या बारसा के दिन सोहर गायन का विशेष आयोजन होता है। महिलाएँ ढोलक की थाप पर सोहर गाती हैं। पुत्र जन्म पर ही विशेष आयोजन होता है, पुत्री जन्म पर इस तरह की धूमधाम देखने को नहीं मिलती है।

इस अवसर पर गाये जाने वाले सोहर के कुछ मुखड़े बानगी स्वरूप प्रस्तुत हैं-

ललन भये री राते, देदे बुलौआ।

× × ×

मोहे लहर-लहर पीरें आवें इते मोरो कोऊ नईयाँ रे।

पत्नी - *मोरे भोतऊ प्यारे राजा जिठानी बुलाय दियो रे।*

पति - *धना हो तो गुनों की पूरी करम की अधूरी*
हमारी भाभी ने आहैरे।

इस प्रकार एक के बाद एक घर की महिलाओं को बुलाने का पत्नी अपने पति से अनुरोध करती है और पति हर बार ताना देकर मना कर देता है।

जन्मे राम बड़े ही सुख मन में
राजा दशरथ ने घुड़ला लऊआये,

बचो घुड़ला एक दशरथ जी के रथ में।
माता कौशिल्या ने मुतियाँ लुटाये,
बचो मोती एक कौशिल्या की नथ में।

× × ×

नंदरानी आ रहें चढुआ (बधावा) चढ़ाहैं
चढुआ चड़ाई नेग मांगे भले राजा कौड़ी ने दियो एक धेला,
बाहर से राजा पिया तुम ललकारो,
भीतर चले मोरो डंडा भले राजा कौंड़ी ने दियो एक धेला।

× × ×

बधाव लाए ननदे अरे सामरिया, बधाव...
काहे में आ गए सौंठ पीपरा, काहे में आ गये ननद,
अरे सामरिया..
गाड़ी में आ गए सौंठ पीपरा, मोटर में आ गये ननद,
अरे सामरिया.. बधाव लाए.....

× × ×

रतनारे पैजना बाजें अबे राजा धीर धरो रे
रतनारे.....
सास रानी जागें, ननद रानी जागें, ससुरा पड़े पौरन में
अबे राजा धीर धरो रे ....

× × ×

बैरन रात जुदैया में कैंसी करों।
दिन की बैरन सास ननदिया रात की बैरन जुदैया।
मैं कैसी करों।
बैरन रात.....

× × ×

तारो लगाय कुची ले गए, बलम कलकत्ता चले गए।
अंगना में ठाड़ीं सास रानी पूंछे,
काय बहू तुमसे कुछ कै गए,
बलम कलकत्ता चल गए.....
ना कछु कै गए ना कछु सुन गए, बलम कलकत्ता चले
दोरे में ठाड़ी जिठानी रानी पूंछे, काय छोटी लाल कछु कै गए।
बलम कलकत्ता.....
ना कछु कै गए ना कछु सुन गए, हमसें तो न्यारे की कै गए,
बलम कलकत्ता चल गए।

× × ×

कहाँ जागे सारी रात अंखियाँ गुलाबी रंग हो गईं।
एक तो बड़े की बेटी बड़े की बेटी, दूजे शर्माय,
अँखियाँ गुलाबी रंग हो गई।
कहाँ जागे सारी रात अंखियाँ गुलाबी रंग हो गई
एक तो बारी उमरिया, दूजे कोमल बाँह,
अंखियाँ गुलाबी रंग हो गईं।

बुंदेलखण्ड में जन्मोत्सव पर स्वांग खेलने का भी प्रचलन हैं, जिसमें पुरुष ही नारी की भूमिका निभाता है। इस स्वांग में प्रसव के दौरान कष्टों का बखान किया जाता है। प्रसूता के प्रति ननद, सास एवं अन्यों द्वारा किए गए दुर्व्यवहार अभिव्यक्त किए जाते हैं। इन स्वांगों में मनुष्यों की उस मनोवृत्ति पर भी व्यंग्य किया जाता है, जिसके कारण पुत्र जन्म पर प्रसन्नता और पुत्री जन्म की खबर उसे अप्रसन्न करती है। जन्म उत्सव के अवसर पर भांड और नट भी स्वांग खेलने जाते थे, जिनमें गीतों के माध्यम से कभी-कभी निम्न स्तर तक का मजाक किया जाता था।

उदाहरण स्वरूप -

काहे खों कारे कजरा डिग गैर दये।
और विन्नू बूंदा दमकाउत लिलार।
सास ससुर तोरे लंगरा घरे री जनम के गंवार।
बलम तौरा बारी को हिजड़ा री
कैसे बीते तोरे भादों, सावन क्वांर।

मुझे अभी भी याद है जब छोटा ही था, हमारे गाँव में इन्हीं अवसरों पर एक गुंनचैयाँ नाम का स्वाँगिया आया करता था जो स्वरचित तात्कालिक विषयों पर कविता सुनाया करता था। उसकी एक दो पंक्तियाँ मैं उद्धृत कर रहा हूँ-

बैठे-बैठे ले जेहो के कुड़रा कुड़रा मार हो,
मोरी जिंदगानी के तुम ठेकेदारी हो।

डकैतों ने जब गाँव पर धावा बोला, तब कोई भी मुकादम को (मुखिया) बचाने नहीं आया।

हल्के मुकदम पै मार पड़ी बांकी।
कौनऊँ गरीबो ने देरी ने झाँकी।
सरकी परी रई परोसन काकी।

बुन्देलखण्ड में प्रचलित लोकनाट्य एवं स्वांग लोक जीवन में जहाँ हर्षोल्लास पैदा करते हैं, वहीं समाज में व्याप्त बुराईयों को भी उजागर करते हैं। परन्तु आधुनिकता की चकाचौंध में ये कलाएँ विलुप्त हो रहीं हैं।

कुआँ या घाट पूजन

प्रसूति के बाद जन्मोत्सव के अन्तर्गत कई लोकाचार सम्पन्न होते हैं और सबसे अंतिम कार्य कुआँ पूजन अथवा घाट पूजन होता है। साधारणत: यह रस्म प्रसव से सवा महीने बाद सम्पन्न की जाती है। इसमें कुआँ अथवा घाट की पूजन के बाद प्रसूता घर-गृहस्थी के पूरे कार्य सम्भाल लेती है। ऐसा माना जाता है कि वह हर तरह से स्वस्थ और गृह कार्य करने के लिए सक्षम है। सवा महीने का अधिकतम समय है, परन्तु जिस घर में प्रसूता को अकेले ही घर के कार्य सम्भालने हों तो ऐसी परिस्थिति में यह दस्तूर बारह दिन बाद ही कर लिया जाता है।

कुआँ पूजन और पानी भराई की रस्म संध्या समय सम्पन्न की जाती है। नाऊन पुरा-पड़ोस में बुलौआ देकर महिलाओं को इकट्ठा करती है। नवप्रसूता को अच्छे परिधान और गहने इत्यादि पहनाकर उसका श्रृँगार किया जाता है। महिलाओं का समूह उसे लेकर गीत गाते हुए कुआँ अथवा नदी के घाट पर ले जाता है। घाट की विधिवत पूजा की जाती है। नवप्रसूता अपने स्तन से दूध निचोड़ कर कुँए नदी में डालती है। ऐसा करने के पीछे यह धारणा रहती है कि जिस तरह कुँए-नदी में जल खत्म नहीं होता है, उसी तरह जच्चा के आँचल में दूध बना रहे, जिससे नवजात शिशु उसे पीकर स्वस्थ रहे।

औपचारिकताओं के बाद घड़े में जलभर कर नवप्रसूता के सिर पर रखकर महिलाएँ गीत गाती हुई वापस लौटती हैं। घर आने के बाद गगरी उतारने का दस्तूर होता है। गगरी देवर उतारता है और उसे इसका नेग दिया जाता है। आमंत्रित महिलाओं को बताशा देकर विदा किया जाता है। इस दस्तूर के बाद महिला घर का पूरा कार्य करने लगती है। सवा महीने गृहणी को घर के कामों से दूर रखना यह दर्शाता है कि इस दौरान महिला शारीरिक और मानसिक रूप से अपने आपको तैयार कर ले और साथ ही साथ शिशु की भी उचित देखभाल हो जाये।

इस अवसर पर गाए जाने वाले सोहर (दादरे) की संक्षिप्त झलक -

हम पैरें मोतन की माला, हमारी कोऊ गगरी उतारो।
कहाँ गयेरी तोरे सैंया गुसइयाँ, कहाँ गयेरी बारे देवरा,
हाटे गये सइयाँ-गुसइयां, खेलन गये बारे देवरा
एक हात से गगरी समारो, दूजे से कुड़री समारो
हमारी कोऊ गगरी उतारो।

× × ×

नैंचे लतूरी ऊपर घाम री गोरीधन पनियाँ खों निकरीं।
जायजो कहियो राजा ससुर सें, अंगना में कुइया खुंदायें।
जायजो कहियो उन राजा जैठ सें, चंदन की पाटें डराएँ।
जायजो कइयो बारे ननदे सें, सोने की गगरी मँगाएँ
जाय जो कइयो उन लुहरे देवर सें, रेशम की डोरी बुलाएँ
तुम्हारी भौजी पनिया खों निकरी।

× × ×

चलो देवरानी चलो जिठानी हिलमिल जलभर लाएँ लाल।
ऐले कुआँ को तुम भर लइयो पैले खां हम जैहैं लाल।
ऐले कुआँ में उदां न बूंदा, पैले में डुबकइयाँ लाल।
चलो देवरानी चलो जिठानी हिलमिल जल भर लाएँ लाल।

बुन्देली जन्म संस्कार

सुधा तैलंग

भारतीय संस्कृति में कुछ आनुष्ठानिक विधियों द्वारा मानव जीवन को व्यवस्थित किया गया है, जिन्हें हम संस्कार कहते हैं। शास्त्रकारों ने सोलह संस्कार बताये है- गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, उपनयन, वेदारंभ, समावर्तन, विवाह, मृत्यु आदि संस्कारों में कुछ संस्कार तो जन्म से ही जुड़े हैं। जन्म, मृत्यु व विवाह प्रमुख संस्कार हैं। जन्म और विवाह संस्कार आनंददायी तथा मंगल सूचक हैं और मृत्यु संस्कार शोक कारक है। इन संस्कारों के साथ प्रांत, क्षेत्र अथवा अँचल में प्रचलित रीतियों, प्रथाओं को भी धीरे-धीरे शामिल कर लिया गया है। ऐसे में संस्कारों से सम्बन्धित लोकगीत, लोक नृत्य, लोक कथाएँ, लोक साहित्य व परम्पराएँ भी ग्रामीण अँचल में आज जीवन से जुड़े हैं। परिवार, समाज की मर्यादा, रिश्तों व संस्कृति की धरोहर बने ये संस्कार हमारे हृदय को परिष्कृत करने के साथ बुरी भावनाओं का शोधन कर हमारी संस्कृति, सभ्यता व परम्पराओं को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होते हैं।

जन्म

यह प्रमुख संस्कार कहा जाता है, क्योंकि सृष्टि की संरचना ही जन्म संस्कार से जुड़ी है। वैवाहिक जीवन की पूर्णता सन्तानोत्पत्ति द्वारा होती है। हमारी संस्कृति में लोक मान्यता के अनुसार कुल, वंश की परम्परा पुत्र जन्म के द्वारा ही चलती है। ऐसे में जन्म संस्कार पूरे परिवार के लिए हर्ष व उल्लास लेकर आता है। शिशु आगमन की सूचना मंगलदायी है। नवागत मेहमान की अगवानी में सभी जुट

जाते हैं, वहीं नारी भी मातृत्व की गरिमा का अनुभव करते हुये अपने जीवन की सम्पूर्णता समझती है। विवाह के बाद बुजुर्गों के द्वारा 'पुत्रवती भव' व 'दूधो-नहाओ पूतो-फलो' का दिया आशीर्वाद फलीफूत होते देख नवदम्पत्ति हर्ष से पुलकित हो उठता है। गर्भवती नारी का सम्मान बढ़ जाता है। उसकी विशेष देखभाल शुरू हो जाती है, ताकि शिशु स्वस्थ व सुन्दर उत्पन्न हो। गर्भवती नारी संतान उत्पत्ति की अभिलाषा से अपने हृदय के उद्‌गार अभिव्यक्त करती है-

कौना के अंगना, जियरिया लहर-लहर होवे।
महर-महर आवे, पास तो नींद नई आइयो।

जो सास-ससुर, पति-संतान न होने पर कभी प्यार से नहीं बोलते थे, अब तो नये मेहमान के आने की खबर सुनते ही खूब लाड़-प्यार लुटा रहे हैं। नारी का मन भला उलाहना देने से कैसे चूक सकता है?

होय परे है नंद लाल, गायें सखी सोहरे हो।
वो ससुरा जू कमऊ न बोले, मुखंऊ न बोले हो रामा।
बेई ससुरा जू थैली लुटावे, बहू कहै हेरो हो राया।

अगन्नों

गर्भाधान के छठवें, आठवें महीने में अगन्नों, फूल चौक या गोद भराई की रस्म होती है। इस रस्म में सोमवार, रविवार और शुक्रवार के दिन नहीं माने जाते हैं। गर्भवती नारी की गोद फल-फूल, मेवा, वस्त्र-आभूषण से भरी जाती है। घर की महिलाएँ, सुहागिनें उसे स्वस्थ शिशु होने का आशीर्वाद देती हैं। मायके से गर्भवती के लिये लाल कपड़े या साड़ी, फूल-फल, मेवा वगैरह आता है। चौक में बैठाकर पूरा नववधू सा श्रृंगार कर पूजा-पाठ के साथ बुलौआ भी होता है, महिलायें संचत गीत गाती हैं। बारी-बारी से गर्भवती नारी की गोद नारियल, मेवा, फल, वस्त्रों से भरती हैं, सिर पर भीगे चने ढालती हैं। उसके कान में आशीष वचन कहती हैं। ढोलक की थाप, नृत्य-गीत के साथ अगन्नों की रस्म की जाती है, ताकि गर्भवती सुखद, आनंद का अनुभव करते हुए भावी संतान के प्रति ममतामयी बने। घर परिवार से जुड़े।

जन्म और गीत

भारतीय संस्कृति में पुत्र जन्म का विशेष महत्त्व है। आज के युग में बेटी-बेटे का भेद खत्म हो रहा है, पर बुन्देली लोकगीतों में पुत्र जन्म के सांकेतिक अर्थ से जुड़े लोकगीत ही गर्भवती के लाड़-मनुहार, अगन्नों, भू-लोटन, दशारन, कुआँ पूजन रस्मों में आज भी प्रचलित हैं, जो हमें जन्म संस्कारों से परिचित कराते हैं। लोकगीतों में मानव हृदय, नारी की सुकोमल भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति होती है। उल्लास, हर्ष, छेड़-छाड़, मनुहार, परम्पराओं को समेटे लोकगीतों के सुर ढोलक की थाप में जहाँ जच्चा-बच्चा के मन को प्रफुल्लित करते हैं, वहीं पारिवारिक रिश्तों में भी प्रगाढ़ता लाकर स्नेहासिक्त वातावरण सृजित करते हैं। साथ ही सामाजिक सम्बन्धों में भी सरसता आती है। बुन्देलखण्ड अंचल में जन्म अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में यहाँ की संस्कृति, रीति-रिवाज, आचार-व्यवहार, जनमानस की संवेदनाओं, हर्ष-विषाद, उत्साह की अभिव्यक्ति होती है। नारी हृदय की ममता, करुणा, प्रेम-वात्सल्य की भावना से अभिप्रेरित गीतों में सरस रसों की धारा प्रवाहित होती है।

संचत-गीत

बुन्देलखण्ड में प्रचलित लोकगीतों में महारानी कौशल्या के संतान न होने पर महाराज दशरथ से वे संचत (पुत्र) खरीदने का आग्रह करती हैं। क्योंकि उन्हें बिना संतान के राजमहल का सुख वैभव भी नहीं सुहाते। दाम्पत्य जीवन की भावनायें देखिये-

राजा तो पौड़े पलंग पै, रानी मलै पीडोली महाराज!
हँस-हँस पूछो महाराज दशरथ।
कैसी धन अनमनी महारानी
भौतक तो कइये राजा अन्न धन भौतक लक्ष्मी महाराज।
सूनो अयोध्या को राज, अकेली संचत बिना महारानी।

शिशु जन्म से पूर्व गर्भवती की पीड़ा बढ़ रही है। पति से दाई को बुलाने और दाई से ईनाम देने की बात बुन्देली गीत में नारी की भावनाओं को अभिव्यक्त कर रही है-

सात सबद सवैया के
ऊँचो पाटनपुर गाँव जहाँ दाई रहे।
राजा घुड़ला पै भये असवार।
दाई घर निंग चलो।
तुम दाई ओढ़ो दुशाल।

रिमझिम बरसत मेह
भीजत दाई हम जैहें।

कितनी सुन्दर कल्पना है। वहीं दर्द सहने में परिवार का साथ दर्द को कम कर देता है- गीत में देखें-

मोरे उठत कमर रसपीर, अब नईयों जीने की।
सुन राजा रे महाराजा रे मोरी सासु को देव बुलावो।

सास-बहू के रिश्तों में मिठास घोलता गीत बुन्देली क्षेत्रों में आज भी गूँजता है। प्रसव होते ही भू-लोटन प्रथा शुरू की जाती है। दाई नरा छीलती है। नवजात शिशु को कुछ पल के लिये जमीन पर लिटाया जाता है। महिलाएँ गीत गाती हैं-

डरे डरे कहराँय।
गोपाल लाल भों में डरे।
जाय जो कइ यै उन राजा ससुर सों।
थैली देय लुटाय। गोपाल लाल...
जाय जो कइ यै उन रानी सास सो।
चरुआ देय चढ़ाय। गोपाल लाल...

प्रसव के बाद जच्चा को आयुर्वेदिक दवाईयों से युक्त उबला पानी पिलाया जाता है। मिट्टी के घड़े का पूजन हल्दी दूर्वा से करते हुए, सास व अन्य औरतें चूल्हे पर मटके को रखकर पानी उबालती हैं। चरुआ चढ़ाई के गीत गाती हैं। सास को चरुआ चढ़ाई का नेग मिलता है। शिशु जन्म के बाद जच्चा की मान-मनुहार करते पीपर मिला पानी पीने को कहा जाता है, ताकि जच्चा-बच्चा स्वस्थ रहे। पारिवारिक रिश्तों की प्रगाढ़ता को दर्शाता गीत गाया जाता है-

अँगना में हरी-हरी दूब दे।
घिनोचिन पीपरे महाराज।
अँगना में ठाड़े ससुर बहू को
रहे समझाय।
पीलो बहू पिपरन को पानी।

शिशु जन्म के साथ ही घर में चारों ओर बधाई गीत बज उठते हैं। रंग महल शिशु की किलकारियों से गूँज उठता है-

आज तो बधाई बाजे रंग महल में।
हरे-हरे गोबर आँगन लिपाये रंग महल में।
मोतियन चौक पुराई ऐ रंग महल में।

संस्कार लोकगीतों में सांस्कृतिक भावना की अजस्र धारा प्रवाहित होती है। नवजात शिशु की तुलना बाल-गोपाल, नंदलाल, राम व कामदेव से की जाती है- झूला झुलाते माँ के उद्‌गार हृदय से फूट पड़ते हैं-

मनमोहक उदक न जाये सखी री।
धीरे से झुलाओ पालना।
झुला दो भाई श्याम परे पलना।
काऊ भुजरिया की नजर है लागी।
सो रोवत है ललना।

ननद को पता चलता है कि उसकी भाभी ने चाँद से शिशु को जन्म दिया है, तो खुशी से भाव विभोर हो उठती है। अपने पति से कह उठती है-

मोरी भौजी के लालन भये।
नंदलाला भये, मैंने खबर पाई आधीरात।
उठो मोरे राजा खोलो कुची तारे।
ऐचों मुहरे पचास।
मोरी भौजी के लालन भये।

घर-परिवार की महिलाएँ शिशु जन्म पर ढोलक की थाप पर बधाई गीत गाती हैं- सोहर गीत गूँज उठते हैं-

नौ दस महिना के बीच, ललन नौवे हो गये।
बजन लगी आनंद बधैयां, सखी सोहरे गावें।

छठी पूजन

शिशु के जन्म के छठवें दिन ही छठी माता की पूजा की जाती है। शिशु को नये वस्त्र पहनाये जाते हैं। उसकी नजर उतारी जाती है। बुआ या चाची बच्चे को काजल लगाती है। नेग दिया जाता है। प्रसूता के पलंग के नीचे कोरा कागज रखकर कल्पना की जाती है कि छठी देवी द्वारा शिशु का भाग्य लिखा जायेगा। महिलाएँ ढोलक व झांझर के साथ सोहर गाती है।

जसोदा जी के भये नन्द लाल।
बधावो लाई मालनियाँ।

मालिन ल्याही हार तमोलिन बिरियाँ।
भला अच्छो नीके बन्दन हार।

सतिया धराई

बुन्देलखण्ड में सतिया धराई की प्रथा है। जच्चा के कमरे में खाट के नीचे गोबर से सातियां (स्वस्तिक) बनाया जाता है। नवजात शिशु की चादर पर हल्दी-रोली से सातियाँ बनाया जाता है। ये परम्परा ननद ही निभाती है। उसे भाभी नेग देती है। भाभी कहती है-

जाय तो कहियो उन बारी ननद सो
सतिया देय धरावैं।

ननद कह उठती है-

सतियां धराई को नेग दीजो।

ननद को नेग देने की बात भाभी कहती है-

माँगो-माँगो री ननद बैया, जो माँगो सो देंया।
बासन सो जिन माँगो, बैया चौका को सिंगार री।

संस्कार गीतों में ननद-भौजाई का स्नेह छलकता है।

दसटोन

दसटोन की रस्म शिशु जन्म के दसवें दिन धूमधाम से मनाई जाती है। रिश्तेदारों, आस-पड़ौस के लोगों को न्यौता दिया जाता है, इसे बधावा भी कहा जाता है। इस अवसर पर शिशु की बुआ उसके लिये झूला, खिलौने, कपड़े, आभूषण लेकर आती है। दसटोन के अवसर पर गीत-संगीत, नृत्य का आयोजन किया जाता है।

बधाव ल्याई ननदी, अरे साँवरिया।
कहाँ से आई पीपर, कहाँ से आई सोंठ।
कहाँ से आई ननदी, अरे साँवरिया।
सागर से आई ननदी, झाँसी से आई सोंठ।
पन्ना से आई ननदी, अरे साँवरिया।

ननद शिशु के लिए पालना लेकर आती है। सोहर गीतों में मुखरित होता है-

ननद पालना लेकर आई है।
ननद पलना लेके आई।
अलना न लाई, पलना न ल्याई।
बढ़ई चार संगे ले आई।

बधाई नृत्य

प्रसूता की ननद शिशु और भाभी के लिये वस्त्र, खिलौने, झूला बधावा लेकर पहुँचती है। नाच गाकर खुशी की अभिव्यक्ति करती है। महिलाओं के द्वारा बधाई नृत्य किया जाता है। सोहर गीत गाये जाते हैं। बैंड, ढपली के साथ घर के द्वार पर महिलाओं के साथ बधाई नृत्य का दृश्य देखते ही बनता है।

चंगेर नृत्य

बुआ अपने भाई की संतान के लिये झूला, खिलौने, कपड़े आदि बधाई लाती है। उसको बाँस की एक बड़ी डलिया में नाऊन व बुआ सिर पर रखकर गुब्बारों से सजाया जाता है, ढोल नगाड़े के साथ पूरे मोहल्ले में पहले घुमाया जाता है। रास्ते भर बुआ व अन्य महिलायें नृत्य करती है। बुआ द्वारा लाये सामान की डलिया को ही चंगेर कहा जाता है। शिशु को दिये जाने वाले सामान के साथ, औरतें घर के द्वार पर नाचती-गाती हैं। नेग दिये जाने के बाद शिशु को सारा सामान दिया जाता है। बताशे, लड्डू बाँटे जाते हैं। न्यौछावर की जाती है। उत्सव सा माहौल होता है। दसटोन के अवसर पर मधुरला संस्कार गीत गाने की परम्परा बुन्देलखण्ड में आज भी है, ढोलक की थाप पर सुर लहरियाँ गूँज उठती हैं-

अरे हाँ रे मधुरला, बाजै मधुर सुहावनौ।
अरे हाँ रे मधुरला, गऊआ के गोबर मंगइयौ।
अरे ढिकधर आँगन लिपाओ।
अरे हाँ रे मधुरला...
अरे मुतियन चौक पुराइयौ।
अरे चंदन पटली डराइयौ।
अरे हाँ रे मधुरला...
अरे हाँ रे मधुरला कंचन कलश घटाइयो।
अरे चौमुख दियला जलाइयौ।
राम लखन को कठें लगाइयो।
अरे हाँ रे मधुरला...

चौक पूजन

शिशु जन्म के इक्कीस दिन या एक महीने के बाद पंडित जी से शुभ मुहूर्त्त निकलवाया जाता है। प्रसूता व बच्चे को स्नान के बाद नये वस्त्र, आभूषण पहनाकर पूरा शृँगार किया जाता है, हाथ पैरों में आलता, महावर नाऊन लगाती है। मायके से लाये गये कपड़े पहनाये जाते हैं। पति-पत्नि व शिशु को चौक में बैठाकर सत्यनारायण की कथा सुनाई जाती है, हवन-पूजन किया जाता है। बुन्देलखण्ड में सौर (जच्की) के बाद प्रसूता को चौक पूजन के बाद ही शुद्ध होकर रसोईघर, पूजाघर में प्रवेश कराया जाता है। पूजन के बाद घर के बुजुर्ग आशीर्वाद देते हैं, भोज के आयोजन के साथ गीत-संगीत होता है। दादरा, सोहर गाये जाते हैं-

आज दिन सोने को महाराज।
सोने को सब दिन, सोने की रात।
सोने के कलस धराओ महाराज।
आज दिन सोने को महाराज।
मोतियन चौक पुराओ
चंदन पटरी डराओ महाराज।
आज दिन ....

प्रसूता सोलह श्रृँगार कर चौक में बैठती है। उसके स्वागत में महिलाएँ संचत-गीत गाती हैं।

सोने का दियला जलाओ, गोरी धन चौके आई।
चन्दन चौक पुराओ, गोरी धन चौके आई।
बामन-बेद बुलाओ, गुन के गनत लगाओ।
गोरी धन चौके आई..

कुआँ पूजन

बुन्देलखण्ड के जन्म संस्कारों में कुआँ पूजन का विशेष महत्त्व है। कुआँ पूजन बिना जच्चा-बच्चा दोनों घर से बाहर नहीं जा सकते। इस पूजन के बाद वह बाहर के वातावरण में जा सकते हैं। ये नेग, जल पूजन से ही पवित्र होता है। हमारी संस्कृति में जल, कुएँ, नदी को पवित्र और देवी-देवता स्वरूप माना जाता है। ऐसे में प्रसूता को कुएँ पर जाकर पूजन करने व जल भरकर घर लाने की परम्परा में पारिवारिक रिश्तों की प्रगाढ़ता भी जुड़ी है। शिशु जन्म के एक माह बाद ये पूजन किया जाता है। आस-पड़ौस, घर-परिवार में बुलौआ दिया जाता है। पाँच कन्याएँ व सात सुहागिनें प्रसूता के साथ जाती हैं। शिशु को भी साथ ले जाते हैं। सजधज कर प्रसूता सिर पर कलश लेकर जाती हैं। महिलाएँ गीत गाती हैं-

ऊपर बादर घुमड़ाय री गोरी पनियाँ खों निकरी।
जाय जौ कइयो उन राजा ससुरजी सों।
अँगना में कुंईया खुदाव, तुमारी बऊ पनियाँ खो निकरी।
जाय जौ कइयो उन राजा जेठजी सों।
चन्दन पटरी देय डराव, तुमारी बऊ पनियाँ खो निकरी।
जाय जौ कइयों उन राजा देवर जी सों।
रेसम की डोरी मँगाय, तुमारी भाभी पनियाँ खो निकरी।
जाय सौ कइयो उन राजा पियाजी सों।
सोने की गागर बनवाय, तुमारी धना पनियाँ खो निकरी।
ऊपर बादर....

प्रसूता जल पूजन के लिये घर से बाहर निकलती है, ऊपर बादल उमड़ रहे हैं, ऐसे में प्रसूता शिशु बीमार पड़ सकते हैं। गीत में ससुर से कहा गया है कि वो घर में ही कुआँ खुदवा दें, जिससे बहू को बाहर पानी लेने नहीं जाना पड़ेगा। रिश्तों की मधुरता को दर्शाता ये संस्कार गीत नारी हृदय की कोमल भावनाओं को समेटे हुए है।

प्रसूता रूपवती है और मातृत्व गौरव पद को पाकर वो ओर भी रूपमती हो उठी है, कुआँ उसे देखते ही उमड़ पड़ता है। प्रस्तुत गीत में ये भाव प्रस्तुत किये गये हैं-

कोऊ आई सुघर पनिहारी, कुंअला उमर पड़े।

इन गीतों को गाती हुई महिलाएँ जच्चा के साथ कुएँ की जगत पर पहुँचती हैं। गोलाकार गोबर से लीपा जाता है। आरा, हल्दी, चावल, फूलों से चौक पूरा जाता है। हल्दी, गुड़, चावल से कुएँ की पूजा की जाती है। दीपक प्रज्ज्वलित कर आरती होती है। इसके बाद प्रसूता घड़े में रस्सी फँसाकर गर्रा पर पानी भरने कुएँ में मटका या बाल्टी डालती हैं। महिलाएँ गीत गाती हैं-

गर्रा पै डोरी डार गुईंया।

गर्रा पै डोरी डार गुंईया।
गर्रा पै डोरी जब लागे नौंनी।
गोरी गोरी होय बइंया।
गर्रा पै.....
गर्रा पै डोरी जब लागै नौनी।
हरी पारी होई चुरिंया।
गर्रा पै.....
पतरी कमरिया जब लागै नौनी।
गोरी सी होय धनियां।
गर्रा पै.....

पानी भरा घड़ा सिर पर रखकर प्रसूता शीघ्र लौटती है। देवर नेग लेकर घड़ा उतारता है। गीत, संगीत, हँसी-ठिठोली के बीच कुआँ पूजन की परम्परा पूरी होती है। पवित्र जल से ही हमारे यहाँ संस्कार पूजन किये जाते हैं। नदी, तालाब, कुएँ पूजन की परम्परा से जुड़ी पवित्र भावना आज भी हमारी परम्पराओं की पोषक हैं। पारिवारिक, धार्मिक व सामाजिक जीवन के संस्कारों, आदर्शों को प्रतिबिम्बित करती बुन्देलखण्ड की ये परम्परा निश्चित ही आज के दौर में भी उतनी ही उपयोगी व सार्थक प्रतीत होती है। ये संस्कार और परम्पराएँ हमें अनमोल सीख देते हैं। पारिवारिक रिश्तों की प्रगाढ़ता बढ़ाते हमारी संस्कृति को भी जीवित रखते हैं। जन्म संस्कार से जुड़ी बुन्देलखण्ड की परम्पराएँ, रस्में, प्रथायें हमारी अनमोल विरासत हैं, जिन्हें हमें सहेजकर पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित करना होगा। तभी हमारे संस्कार भावी पीढ़ी को सुसंस्कृत करते हुये धरोहर को संजोए रखने को प्रेरित करेंगे।

जन्म सम्बन्धी संस्कार

डॉ. प्रभा पहारिया

हिन्दुओं के धार्मिक और सामाजिक जीवन में संस्कारों का विशेष महत्त्व पाया जाता रहा है। यहाँ धार्मिक जीवन के लिए परिशुद्धता एवं पवित्रता को आवश्यक माना गया है, इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए विभिन्न संस्कारों की व्यवस्था की गयी है। ये संस्कार ही वे माध्यम हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति एक परिष्कृत तथा समाज का पूर्ण विकसित सदस्य बन पाता है। संस्कार वे विधियाँ या धार्मिक अनुष्ठान हैं, जिनके द्वारा व्यक्ति के अहम का समाजीकरण एवं व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करने का प्रयत्न किया जाता है। संस्कारों के अन्तर्गत विभिन्न अनुष्ठान या प्रतीकात्मक क्रियाकलाप आते हैं, जिनके माध्यम से व्यक्ति के जीवन को परिशुद्ध एवं पवित्र बनाने का प्रयास किया जाता है। संस्कार वास्तव में व्यक्ति की आत्म शुद्धि एवं उसे सामाजिक दायित्वों से भलीभाँति परिचित कराने से सम्बन्धित हैं।

गर्भाधान

गर्भाधान जिस कर्म के द्वारा पुरुष स्त्री में अपना बीज स्थापित कर्म के सम्पादन से स्त्री प्रदत्त शुक्र धारण करती है, वही गर्भाधान संस्कार है। गुह्य सूत्र में कहा गया है कि विवाह उपरान्त पति-पत्नी से सहवास करता है और कहता है कि जिस प्रकार पृथ्वी में अग्नि है, उसी प्रकार एक नर भ्रूण गर्भाशय में प्रवेश करे -वह दस माह के बाद एक पुरुष के रूप में उत्पन्न हो।

पुंसवन

पुंसवन शब्द का प्रयोग अथर्ववेद में मिलता है, जिसका अर्थ पुत्र संतान को जन्म देने से है। पुंसवन संस्कार का उद्देश्य पुत्र की प्राप्ति रहा है। आश्वसायन गुह्यसूत्र में बताया गया है कि इस संस्कार को गर्भधारण के तीसरे महीने में सम्पन्न करना चाहिये। इस संस्कार के अवसर पर पुनर्वसु नक्षत्र में उपवास के पश्चात् स्त्री अपने ही समान रंग की बछड़े वाली गाय के दही के साथ दो बीज सेम के तथा एक दाना जौ का खाती है। यह संस्कार उस समय सम्पन्न किया जाता है, जब चन्द्रमा पुष्य नक्षत्र में होता है और स्त्री के दाहिने नाक के नथुने में वट वृक्ष की दाल को कूटकर डाला जाता है और पुत्र रत्न की कामना की जाती है ।

सीमान्तोन्नयन

इस संस्कार में स्त्री के केशों (सीमन्त) को ऊपर उठाया (उन्नयन) जाता था, इससे गर्भिणी को अमंगलकारी और दुष्टशक्तियों के कुप्रभाव से बचाया जा सकता है। इस संस्कार का एक प्रयोग माता के ऐश्वर्य एवं अनुत्पन्न शिशु के लिए दीर्घायुष्य की कामना था।

जातकर्म

यह संस्कार बालक के जन्म के पश्चात् सम्पन्न किया जाता है। इस संस्कार का उद्देश्य बालक को हानिकारक शक्तियों के प्रभाव से बचाना एवं उसके दीर्घजीवी और स्वस्थ होने की कामना करना है।

नामकरण

बारहवें, सौंवे दिन अथवा प्रथम वर्ष के समाप्त होने पर करना चाहिये। इस संस्कार के समय माता और बालक को शुद्ध करना चाहिये। इस संस्कार के समय माता- बालक को शुद्ध वस्त्र से ढककर एवं उसके सिर को जल से गीला कर पिता की गोद में देती है, इसके बाद प्रजापति, तिथि, नक्षत्र एवं देवताओं, अग्नि तथा सोम को आहुतियाँ दी जाती हैं। तत्पश्चात् पिता शिशु के दाहिने कान की ओर झुकता हुआ उसके नाम का उच्चारण करता है। बालक का नाम रखते समय राशि का ध्यान रखा जाता है।

निष्क्रमण

सूत्रों एवं स्मृतियों के अनुसार यह संस्कार जन्म के तीसरे या चौथे मास में सम्पन्न किया जाता था। निष्क्रमण संस्कार के लिए नियत दिन माता बरामदे या आँगन को ऐसे वर्गागार भाग को, जहाँ से सूर्य दिखाई देता है, गोबर एवं मिट्टी से लीपती और उस पर स्वस्तिक का चिन्ह् बनाती है और पिता के द्वारा शिशु को सूर्य दर्शन कराने के बाद यह संस्कार समाप्त हो जाता है।

अन्नप्राशन

इस संस्कार में बालक को प्रथम बार अन्न दिया जाता है। यह संस्कार शिशु जन्म के बाद छठे मास में सम्पन्न किया जाता था। इस अवसर पर शिशु को दही, घी एवं शहद के साथ अन्न दिया जाता है। चाँदी के सिक्के से खीर खिलाने का भी प्रचलन है। इस संस्कार का उद्देश्य शायद माता द्वारा नवजात को दूध पीने से अलग करना रहा है, ताकि उसका शारीरिक विकास ठीक ढंग से हो सके।

चूड़ाकरण

जन्म के तीसरे वर्ष मुण्डन संस्कार को सर्वोत्तम माना जाता है। यह संस्कार घर में किसी मंदिर या धार्मिक स्थान या पवित्र नदी के किनारे सम्पन्न किया जाता है। बच्चों के केशों को गोबर या आटे की लोई में लपेट कर किसी गुप्त स्थान पर फेंक दिया जाता है या पवित्र नदी में बहा दिया जाता है।

कर्ण-भेदन

आभूषण पहनने के लिए विभिन्न अंगों के छेदन की प्रथा सम्पूर्ण संसार की असभ्य एवं अर्द्धसभ्य जातियों में प्रचलित है। जहाँ तक कानों को छेदने का प्रश्न है, नि:सन्देह आरम्भ में अलंकरण के लिए इसका प्रचलन हुआ और आगे चलकर यह उपयोगी सिद्ध हो गया। सुश्रुत की मान्यता है कि रोग आदि से रक्षा एवं भूषण या अलंकरण के लिए बालक के कानों का छेदन करना चाहिये।

विद्यारम्भ

इस संस्कार के द्वारा बालक के मानसिक एवं बौद्धिक विकास का कार्य प्रारंभ होता था। बालक की आयु के पाँचवे वर्ष में यह संस्कार सम्पन्न किया जाता था, इस संस्कार के लिए कोई ऐसा शुभ दिन चुना जाता था, जब सूर्य उत्तरायण में हो। इसमे बच्चा 'ऊँ नमः सिंद्धम' दोहराता है और पट्टी पर लिखता है। इसके उपरान्त उसे अ,आ–इत्यादि सिखाये जाते है।

उपनयन

आचार्य के अनुसार उपनयन का अभिप्राय केवल शिक्षा के ही अर्थ में सीमित नहीं है। यह वह कृत्य है जिसके द्वारा व्यक्ति, गुरू, वेद, यम नियम का व्रत और देवता से समीत्य के लिए दीक्षित किया जाता है। उपनयन केवल द्विज वर्णो के लिए ही था। ग्रहसूत्रों के अनुसार ब्राम्हण बालक का उपनयन संस्कार आठवें वर्ष, क्षत्रिय का ग्यारहवें तथा वैश्य का बारहवे वर्ष में किया जाना चाहिये। उपनयन संस्कार में आचार्य ब्रम्हचारी को तीन धागे प्रदान करता है, जो सत्, रज एवं तमस गुणों प्रतिनिधित्व करते हैं।

संदर्भ

समाजशास्त्र यूनिफाइड – डॉ. जी.पी. अग्रवाल
ऋग्वेद – पृष्ठ नं. 225
इनंटरनेट – विकिपीडिया
यूनिफाइड इतिहास – बाघमारे

जन्म दिवस का लोक विज्ञान

एम.एस. पारासर

जन्म संस्कार दिखने में सामान्य पर वास्तव में अत्यंत प्रेरणापरक असामान्य संस्कार है। शिशु का जन्म मानव समाज की एक नवीन सृष्टि के रूप में होता है। अभी जो शिशु जन्म लिया है, वह आगे चलकर ना जाने कितना महान बनेगा? समाज को कैसी उपलब्धियाँ प्रदान करेगा? माता-पिता, परिवार को वह किन ऊँचाईयों तक पहुँचयेगा? यही आशा-आकांक्षा उस प्रसूत शिशु के साथ जुड़ी हुई होती है। इसी कारण भारतीय मनीषियों ने सर्वदा शुभ एवं मंगल विधान के लिये उसके जन्म को ही संस्कार से सम्बद्ध करने का विधान रचा है। उसे सामाजिक बनाने की यह पहली सीढ़ी है। प्रकारान्तर में देखें तो यह एक सामाजिक जीवन का ऐसा माध्यम है, जो लोकजन के बीच सदाशयता को जोड़ता है। एक नव-आगन्तुक को उल्लास के साथ अंगीकृत करता है। इसी बहाने अपने प्रसूत आनंद और उल्लास को जगाता है, जो शिशु के रूप में उसे निजी विरासत प्राप्त होती है। जन्म पर होने वाला संस्कार संस्कारी के पूरे जीवन के लिये भूमिका तैयार करना होता है। यही कारण है कि उसके जैसे ही जीवन क्रम के अगले प्रत्येक वर्ष में जन्म दिवस मनाने की प्रवृति विकसित हो गई है, जिसमें इस बात की समीक्षा जुड़ी हुई है। अभी तक जीवन के कितने वर्ष बिताये? अच्छे या बुरे। इसके आगे अब क्या किया जाना है? इत्यादि इस तरह संस्कार का अगला रूप जन्म दिवस के रूप में प्रचलन में आया है। वैदिक संस्कृति सामाजिक समरसता एवं उसके उत्कर्ष के लिये संस्कार के विधान छिपे थे, जिनमें कालान्तर में अंत:करण को प्रभावित करने की विशेष क्षमताएँ विद्यमान थी। जन्म संस्कार से सम्बन्धित इन कर्मकाण्डीय पक्षों पर विचार करें, तो निम्नांकित वैज्ञानिक पक्ष सामने आते है। जन्म संस्कार दिखने में सामान्य किन्तु सामान्य में असामान्य संस्कार है। हर वर्ग एवं हर स्तर के व्यक्तियों के बीच इसकी लोकप्रियता इसका ज्वलंत प्रमाण है। एक सामाजिक जीवन का यह एक ऐसा माध्यम है, जो लोकजन के बीच सदाशयता को

अभिवृद्ध करता है। यह प्रसुप्त आनंद और उल्लास को जगाता है, आत्मनिरीक्षण के लिये हरेक को विवश करता है, इसलिये भारतीय समाज जन्म संस्कार विधान शुरू हुआ। सामाजिक लोगों के मन में यह भाव है कि अब तक हमने कितने वर्ष कैसे बिताए, अच्छे या बुरे? अब क्या करना है और क्या नहीं करना? यज्ञीय संस्कारों में अंत:करण को प्रभावित करने की विशेष क्षमतायें होती हैं, इसलिये इस संस्कार को भी यज्ञ अथवा दीप यज्ञ के माध्यम से (जन्म संस्कार) कराने का विधान रहा है। इस संस्कार में कर्मकाण्डीय पक्षों पर विचार करें तो इसमें निहित वैज्ञानिकता अपने आप नजर आ जाती है।

पंचतत्त्व पूजन की वैज्ञानिकता

जन्म संस्कार का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष पंचतत्त्वों से बना है। सृष्टि रचना में इन पंचतत्त्वों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इस संसार में जीवों की रचना प्रत्येक पदार्थ मिट्टी, जल, अग्नि, वायु, आकाश इन पंचतत्त्वों से बनी मानी जाती है, इसलिये इस सृष्टि के आधारभूत ये पाँच दिव्य तत्त्व देवता है। उपकारी के प्रति कृतज्ञता की भावनाओं से अंत:करण ओत-प्रोत रखना भारतीय संस्कृति का अविच्छिन्न अंग है। हम जड़ और चेतन सभी उपकारियों के प्रति कृतज्ञता की भावना अभिव्यक्ति के लिये पूजा प्रक्रिया का अवलम्बन लेते हैं। पूजा से इन जड़ पदार्थों अदृश्य शक्तियों स्वर्गीय आत्माओं का सान्निध्य प्राप्त होता है, उनसे भले ही कोई लाभ होता हो या न होता हो, पर हमारी कृतज्ञता का प्रसुप्त भाव जागृत होने से हमारी आंतरिक उत्कृष्टता बढ़ती हैं। पंचतत्त्वों का पूजन विश्व के आधार स्तम्भ होने की महत्ता के निमित्त किया जाता है।

इस पूजन का दूसरा उद्देश्य यह है कि इन पाँचों तत्त्वों का सामंजस्य बना रहे, इनके सदुपयोग का हमेशा ध्यान रखा जाये, क्योंकि इनके असन्तुलन से अनेक बीमारियाँ, व्याधियाँ एवं बाधाएँ उत्पन्न होती है।

पृथ्वी से उत्पन्न अन्न का कितना, कब और कैसे उपयोग किया जाये, जिससे खाद्यान्न उत्पादन एवं भूख की समस्या नहीं होगी। समुचित भोजन से शरीर स्वस्थ्य रहता है, इसका ध्यान रखे तो पेट खराब नहीं होगा। यदि आहार की सात्विकता, मात्रा एवं व्यवस्था का ध्यान रखा जाये तो न अपच होगी, न किसी रोग की संभावना बनेगी।

जल की स्वच्छता एवं उचित मात्रा में सेवन करने तथा विधिवत स्नान, वस्त्र, बर्तन, घर आदि की सफाई का ध्यान रखा जाये तो समग्र स्वच्छता बनी रहती है। इससे शरीर, मन तथा वातावरण सभी कुछ स्वच्छ रहता है।

अग्नि की उपयोगिता सूर्य ताप को शरीर, वस्त्र, घर आदि में पूरी तरह प्रयोग करने में है। भोजन में अग्नि का सदुपयोग , उसके ताप द्वारा भोजन पकाये जाने में है। शरीर के भीतर अग्नि ब्रह्मचर्य द्वारा सुरक्षित रहती है एवं बढ़ती है।

स्वच्छ वायु का सेवन खुली जगहों में निवास प्रात: टहलने जाना, प्राणायाम, गंदगी से वायु प्रदूषण न होने देना आदि वायु की प्रतिष्ठा के हेतु है।

आकाश की पोल में ईश्वर, विचार, शब्द भरे पड़े है, उनका मानसिक एवं भावना क्षेत्र में इस प्रकार उपयोग किया जाये की हमारी अंत:चेतना उत्कृष्ट स्तर की ओर चले, यह जानना, समझना, आकाश तत्त्व का उपयोग है। इस सदुपयोग के द्वारा हम सुख शांति और समृद्धि का पथ प्रशस्त कर सकते हैं। पंचतत्त्वों का पूजन, हमारे ध्यान को इन्हीं दिशाओं की ओर आकर्षित करता है।

एक महत्त्वपूर्ण हेतु यह भी है कि शरीर पंचतत्त्वों का बना होने के कारण जरा-मृत्यु से बंधा हुआ है। शरीर जीवन का वाहन और माध्यम है। जीव के बिना शरीर जड़ होने से इसका महत्त्व कम है। इसलिये इस शरीर को एक उपकरण मात्र माना जाये। शरीर की सुख-सुविधा को उतना महत्त्व न दिया जाये कि उसकी अंतरात्मा उपेक्षित होकर रह जाये।

आत्मा की उन्नति के लिये पंचतत्त्वों से बना यह शरीर मिलता है। इसलिये उसका सदुपयोग निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति के लिये किये जाना ही पंच-तत्त्व का लक्ष्य है।

दीप दान

जन्म पर जन्म संस्कार के पश्चात् इसकी स्मृति चिंतन बनाये रखने के लिये एवं जीवन की बहुमूल्यता को स्मृति में सदा

बनाये रखने के लिये, जीवन भर जन्म उत्सव मनाये जाते हैं, यह इसी संस्कार का पश्चातवर्ती रूप है। इसमें भी पंचतत्त्व पूजन होती है। जन्म उत्सव का दूसरा कर्मकाण्ड दीप-दान है। जितने वर्ष की आयु हो उतने दीपकों को एक सुसज्जित चौकी पर बनाकर सजाये जाते है। बस्ती वाले घृत दीप एक थाली में इस तरह सजाकर रख ले जाते है कि उनसे ऊँ स्वस्तिक अथवा और कोई शुभ प्रतीक की रचना हो जाये। इन दीपकों के आस-पास पुष्प, फल, अगरबत्तियाँ, गुलदस्ते या कोई दूसरी चीजें सुन्दरता बढ़ाने के लिये रखी जा सकती है।

इस संस्कार में दीप वह संकेत है, जो कहता है कि जीवन का प्रत्येक वर्ष दीपक की तरह प्रकाशवान करता है। यही कारण है कि दीपक को प्रत्येक मांगलिक कार्यों का माध्यम बनाया जाता है तथा उससे प्रमाणिकता मिलती है कि हमारे जीवन की रीति-नीति भी दीपवत होनी चाहिये।

दीपक ज्ञान का प्रतीक है, अज्ञान को अंधकार व ज्ञान को प्रकाश की उपमा दी जाती है। जिस सीमा तक हमारा मस्तिष्क, हृदय अज्ञानग्रस्त है, उतना ही हम अंधेरे में भटक रहे है। मस्तिष्क एवं हृदय का अंधकार दूर करने के लिये ज्ञान के अधिकाधिक मात्रा में संग्रह की प्रेरणा दीप-दान में निहित है।

व्रतधारणा

व्रतों के बंधन में बंधा हुआ व्यक्ति उच्च लक्ष्य की ओर अग्रसर हो सकने में समर्थ होता है। मनुष्य को शुभ अवसरों पर, भावनात्मक वातावरण में, देवताओं की उपस्थिति एवं अग्नि की साक्षी में व्रत धारण करने का विधान है। पालन करने के लिये साहस एकत्रित करना होता है। दुष्प्रवृत्तियों का त्याग व्रतशीलता का आरंभिक चरण है। मांसाहार, तम्बाखू, गांजा, भांग आदि अफीम, शराब आदि नशों का सेवन, व्यभिचार आदि बेइमानी है। जुआ, फैशन परस्ती, आलस्य, गंदगी, क्रोध, चटोरापन, कामुकता, शेखीखोरी, कटुभाषण, ईष्या-द्वेष, कृतघ्नता आदि बुराईयों को त्यागना व्रतों के मूल उद्देश्य है क्या किसी वंश में जन्म लेने के कारण किसी को नीच मानना, स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा अनाधिकारणी समझना, विवाहों में उन्मादी की तरह पैसा फेंकना, पैसे की होली फूँकना, दहेज, मृत्यु भोज, देवता के नाम पर पशुबलि, भूत-प्रेत, टोना-टोटका, अंधविश्वास, गाली-गलोच अनमेल विवाह, श्रम का तिरस्कार आदि अनेक तरह की प्रचलित सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिये व्रत सम्बद्ध अनुष्ठान किये जाते है। जन्म संस्कार के आयोजन में यह अनुष्ठान संयम और नियम की प्रेरणा देता है। यद्यपि व्यक्तित्व सँवारने के अनेक नुस्खे है। भारतीय समाज में सोलह संस्कारों में जन्म संस्कार शेष जीवन को सुखमय बनाने के लिये एक अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण एवं प्रेरक संस्कार है।

जन्म दिन जीवन के अभ्युदय गौरवान्वित होने जा रहे उद्बोधन का पर्व है। यह व्यक्ति के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण दिन है। जन्म दिन पर मनुष्य जीवन के लक्ष्य, उद्देश्य एवं उसके गौरव का बोध करने और कराये जाने का पर्व है। उसमें हर्ष उत्सव के साथ-साथ गहन आत्मचिंतन को भी जोड़कर, अपने अतीत का लेखा-जोखा और भविष्य की नीति निर्धारण पर पूरा ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिये।

दोष-दुर्गुणों के कारण व्यक्ति का जीवनक्रम अस्त-व्यस्त हो जाता है। वह इन दोषों को दूसरों के मत्थे मढ़कर, झूठा आत्म संतोष भले ही कर ले, पर समस्या मानने तथा सारे संसार में गलतियाँ खोजने के गलत दृष्टिकोण के कारण ही, अपना सुधारकर पाना सम्भव नहीं होता, उल्टे जब कोई उस ओर इशारा करता है, तो लोगों को इसमें अपना अपमान लगने लगता है। जिसके कारण यदि व्यक्ति खीज उठता, क्रोध करने लगता तो समझना चाहिये कि सच्ची प्रगति की ओर चलने का एक कदम भी उठा पाना अभी नहीं सीखा गया। जन्म संस्कार व्यक्ति को इस तरह की सोच पैदा करने का अवसर है, या कहें की वर्ष में अपने द्वारा किये गये कार्यों की समीक्षा पर्व है।

जन्म संस्कार

डॉ. नीलिमा गुप्ता

आदिम मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति सामाजिक तथा धार्मिक भावनाओं की अभिव्यक्ति रेखाओं तथा रंगों के माध्यम से अपने हाथों से किया करता था। जिसका विकसित रूप ही आज की लोक कलायें है। 'वास्तव में अनेक व्यष्टियों में व्याप्त एक तत्त्व का नाम 'लोक' है : सामान्य, सरल, भोला, सहज, सहृदय मनुष्य जो सचमुच सज्जन है।'[1] एक अन्य अर्थ में जिसे संस्कृति की संज्ञा दी जाती है, वह लोक से भिन्न नहीं है।[2]

लोक में कला, लोक की कला है। यह जन-जीवन में इस प्रकार गुँथ गयी है कि उसे पृथक करके देखने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। लोक कला सार्वभौमिक तथा सर्वकालिक है। उसने जन-जीवन से प्रेरणा और आत्म सम्बल लिया है।[3] लोक की पूँजी लोक समाज में व्याप्त समस्त विचार आदर्श, मनोभाव, विश्वास, परम्पराएँ, रहन-सहन, रीति-रिवाज, अनुष्ठान क्रियाओं आदि का मिला-जुला रूप है। लोक के तत्त्व लोक जीवन के कण-कण से उत्पन्न होते हैं। अनादि काल से लोक का विस्तार अनन्त की ओर बढ़ते हुये, अपने सर्वयुगीन एवं सर्वसम्मत सम्मान को प्रमाणिकता प्रदान करता रहा है, जिसके अन्तर्गत मानव स्वभाव अर्थात् लोक की मानसिक सम्पन्नता के अन्तर्गत सम्मिलित सभी वस्तुएँ आ जाती हैं। जीवन को सार्थक एवं सुविधा प्रदान करने के लिये लोक मानव ने जन्म, बाल्यकाल तथा प्रौढ़ावस्था से जुड़े विभिन्न रीति-रिवाज, अनुष्ठान, किंवदंतियों, शकुन, भाग्य, ताबीज़ आदि का आश्रय लिया। वस्तुत: लोक मानस की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति ने ही लोक कलाओं को आधार प्रदान किया। 'वह चाहे अनुष्ठानों में अथवा विशेषत: इतिहास, काव्य और साहित्य कला के अपेक्षाकृत प्रदेश से सम्बन्धित रही हो।[4]

संस्कार अथवा आचार लोक की रीढ़ होते हैं। इसके अन्तर्गत वे सभी मानवीय क्रियाएँ आ जाती हैं, जिनसे व्यक्ति जीवन का आधार पाता है। इन लोकाचारों में दैवीय शक्तियों को जीवन सम्बन्धी क्रियाओं का साक्षी मान, इस प्रकार का मांगलिक स्वरूप प्रदान कर दिया जाता है, कि सम्पूर्ण क्रियाएँ आनुष्ठानिक स्वरूप धारण कर लेती हैं। दूसरे शब्दों में लोकाचार लोक द्वारा लोक के लिए निर्धारित वे अलिखित आनुष्ठानिक आचार हैं, जो सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश को एक कसावह देने के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक सम्बल भी देते हैं।

जीवन यात्रा में मनुष्य को केन्द्र में रखकर उसके व्यक्तित्त्व निर्माण के लिये अनेक पड़ाव होते हैं। लोक जीवन में जन्म और मृत्यु इन दोनों ही प्रसंगों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आदिम मानव में शिशु जन्म कैसे होता है? इन सबसे वह आश्चर्यचकित था। अतः इस सम्पूर्ण क्रिया से अनभिज्ञ होने के कारण, वह इन सबका श्रेय अमानवीय शक्तियों को देता था। उसने कल्पना के आधार पर धारणा बना ली है कि मानव जिस लोक से आता है, उसी में चला जाता है और पुनः सबको आश्चर्यचकित करने लिए नवजात शिशु के रूप में इस संसार में आ जाता है। आज भी मानव में न्यूनाधिक रूप में आदि मानव के तत्त्व अवशिष्ट हैं।

संस्कारों का प्रावधान किसी न किसी रूप में प्रायः सभी समाजों में पाया जाता है। भारतीय जनमानस विशेषकर लोक मन अपने जीवन में संस्कारों को विशेष महत्त्व देता है। इन संस्कारों को विधि-विधान तथा अनुष्ठानपूर्वक मनाया जाता है, गीत गाये जाते हैं, जिनके द्वारा स्त्रियाँ अपने हृदय का उल्लास तथा आनंद प्रकट करती हैं। लोक जीवन तथा लोककला के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध के फलस्वरूप, विभिन्न अनुष्ठानों में कला का यह रूप पीढ़ियों से रस्म-रिवाजों में दिखायी देता रहा है।

मनुष्य के जीवन तथा प्रत्येक परिवार में शिशु जन्म एक महत्त्वपूर्ण तथा मांगलिक अवसर होता है। इसी से सृष्टि की रचना होती है। 'हिन्दू धर्म के अन्तर्गत संतानोत्पत्ति एक पुण्य कार्य है, जो प्रत्येक दम्पत्ति के लिए एक लौकिक और परलौकिक उद्धार के लिए आवश्यक है। ऐसी मान्यता है कि निःसंतान व्यक्ति का कभी उद्धार नहीं होता। वह संसार के बंधनों से बंधा रहता है, इसलिये बंध्या स्त्री एवं निर्वंशी पुरुष की अवहेलना की गयी है।'[5] इसीलिये प्राणी को पावन करने वाले गर्भाधान इत्यादि सोलह शरीर संस्कार वेदानुसार पवित्र कर्मों के द्वारा करने योग्य हैं-

वैदिकः कर्माभिः पुण्येनिषेदाकि द्विजात्मानाम्।
कार्य शरीर संस्कारः पावनः प्रेत्य चेहं च।।[6]

वर्तमान युग में गर्भ विज्ञान और स्वप्न विश्लेषण विज्ञान दोनों ही पर्याप्त उन्नत हैं, लेकिन जब ये इतने विकसित नहीं थे, तब भी और आज भी लोक जीवन में, गर्भ और जन्म सम्बन्धी निरीक्षण, लक्षण और निदान के विधानों से युक्त एक व्यवस्थित शास्त्र था।[7] लोक में गर्भिणी के शारीरिक लक्षण, गर्भ की स्थिति, कुछ परीक्षण और गर्भिणी के स्वप्नों की व्याख्या द्वारा लड़का या लड़की उत्पन्न होने सम्बन्धी कुछ भविष्यवाणियाँ भी की जाती हैं। यदि गर्भिणी स्वप्न में मिट्टी भरा गधा कुम्हार को घर लाते देखे तो लड़का होगा। लोक जीवन में कुम्हार को प्रजापति अर्थात् ब्रह्मा का प्रतीक माना जाता है और माटी जीव तत्त्व की प्रतीक है। अगर सांप दिखे और वह हथेली में काट ले तो लड़का होगा। बैंगन, कद्दू, लौकी, दीया और केला दिखे तो लड़का। मूली, तोरी, गूंजे, लड्डू दिखें तो लड़की होगी। यदि गर्भिणी की ऐड़ियाँ लाल, मुख मलीन हो तो लड़का होगा। इसके विपरीत मुखवर्ण यदि दीप्तीयुक्त पिलापी लिये होता है, तो लड़की होगी। प्रसव पीड़ा के समय गर्भिणी का पेट ठंडा होने पर लड़का और उष्ण होने पर लड़की होगी। लड़की का गर्भधारण करने वाली गर्भिणी की कमर भारी तथा लड़के वाली गर्भिणी का पेट भारी होता है। कभी-कभी टोने जैसी परीक्षा भी की जाती है। किसी स्त्री को बच्चा न होने की स्थिति में भी अनेकानेक टोने-टोटके किये जाते हैं। जैसे कूंख वाली स्त्री के आँचल का टुकड़ा काट लेना या जरूले (बिना मुंडन वाले बच्चे) के बाल काट लेना आदि।

गर्भावस्था में कुछ वर्जनाओं का पालन भी किया जाता है, जैसे सूर्य-चन्द्र ग्रहण देखना, कातना, बुनना, सीना-पिरोना तथा काटना सभी वर्जित है। सूर्य एवं चन्द्र ग्रहण के समय गर्भिणी का चेहरा हल्दी लगे पीले वस्त्र से ढँक दिया जाता है। मान्यता है कि ऐसी अवस्था में बच्चा विकलांग पैदा होगा। गर्भिणी का देहरी पर बैठना, लहंगा व साड़ी कसकर बाँधना तथा उसके पीछे से भी किसी का निकलना वर्जित है। गर्भवती महिला का मेहंदी लगाना

भी अशुभ माना जाता है। इस अवस्था में उसे नापाक माना जाता है। सम्भवत: इसीलिए उसका मेहंदी लगाना कार्य वर्ज्य हो। माना जाता है कि ऐसा न करने पर अगली संतान प्राप्ति लम्बे अन्तराल के पश्चात् होती है या लक्ष्मी रूठ जाती हैं।

प्रजनन अनुष्ठान मनुष्य जीवन में अत्यधिक महत्त्व रखते हैं। सम्भवत: इसीलिये गर्भ पोषण को संस्कारों का रूप देकर उन्हें अनिवार्यता प्रदान की गयी है। पंचवासा तथा सतवासा पूजन इसी प्रकार के संस्कार हैं, जिसमें गर्भिणी स्त्री को परिजनों से भेंट रूप में मेवे, फल एवं मिठाईयाँ प्राप्त होती हैं 'जिसे साध पुजाना' भी कहा जाता है। ऐसा माना जाता है कि गर्भिणी स्त्री की सभी इच्छायें पूरी की जानी चाहिए। सम्भवत: इसी उद्देश्य से उसे भेंट स्वरूप उसकी मनपसंद खाद्य सामग्री दी जाती है। छत्तीसगढ़ में प्रथम बार गर्भधारण करने पर गर्भिणी के सम्मान में मंगलकामनाओं के साथ उसे मातृत्व पद की गरिमा का एहसास कराने के लिये 'सधौरी संस्कार' किया जाता है, जिसमें सोहर गीत गाये हैं। गर्भिणी की दशा, स्थिति, पीड़ा की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त पति-पत्नी के मध्य मीठी नोक-झोंक भी दिखाई देती है।

पहली गनेस पद धावौ, मैं चरन मनावौं
ललना विघन हरन जन नायक,
सोहर के पद लगावत हो

सधौरी संस्कार में सात प्रकार के पकवान या रोटियाँ खुरमी, पपची, लड्डू, सोहरी, बिड़िया, कुसमी तथा करी के लड्डू सम्मिलित होते हैं। गर्भधारण में समय की गणना के लिये भी छत्तीसगढ़ में चित्रांकन की सहायता ली जाती है।

परिवार में पुत्र का महत्त्व कन्या से अधिक मानते हैं। भारतीय संस्कृति में पुत्र की प्रबल चाह होती है। गर्भ का ज्ञान होते ही घर की बुजुर्ग महिला गर्भिणी को गुपचुप शुक्र या शनि को पाँच-सात पेमंदी बेर खिला देती है। ऐसा विश्वास है कि बेरों की संख्या के मुताबिक ही लगातार पुत्र होंगे। प्रथम गर्भिणी को मेथी किसी रूप में नहीं खाने देते।[8] लड़की के बाद लड़का होने पर लड़की की पीठ पर भेली फोड़ कर माना जाता है कि भाई कष्ट एवं पीड़ा से मुक्त हो गया है। बच्चों के पीठ की रोमावली कुंडली मारे या फन फैलाये सर्प की आकृति की होना अशुभ माना जाता है। ऐसा बच्चा 'पीठ का बच्चा' नाम से पुकारा जाता है और ऐसा विश्वास है कि वह जीवित नहीं रहता। जीवित रह जाने की अवस्था में गर्म तेल के फोहे या चिमटे से उसे दागा जाता है। कभी-कभी तो चिन्ह मिट जाता है, किन्तु कभी-कभी बच्चे की मृत्यु हो जाती है।

जिन स्त्रियों के बच्चे जीवित नहीं रह पाते, उनके लिये भी अनेक टोने-टोटके प्रचलित हैं, ऐसी स्त्री अपने शिशु को टोना-टोटका स्वरूप ताबीज़ पहनाती है, जिसके भीतर चाँदी के गोल पत्थर पर स्त्री मानवाकृति रेखाओं द्वारा खोदी जाती है। चपटे और तिकोनों की कटावदार बेल निर्मित की जाती है। यह आकृति 'ऊपरवाली' परियों का प्रतीक मानी जाती है। ताबीज़ के अंदर शेर का नाखून, हाथी दाँत तथा लोहे का चाकू होता है। इस ताबीज़ के आनुष्ठानिक महत्त्व के अनुसार ये देवी बच्चे प्रदान करती है और वापस भी ले लेती है। 'अति प्राचीन काल में इसे बेमाता तथा ऋग्वेद काल में इसे पृथ्वी देवी के नाम से पूजा गया। यह ऋग्वेद के आदित्यों की माता अदिति हैं।[9] इनकी पूजा एवं स्मरण से बच्चे को जीवन मिलता है। यदि उस स्त्री का शिशु जीवित रह भी जाता है, तो उसे भी दया का पात्र समझा जाता है। उसका छठी व नामकरण संस्कार उचित समय के स्थान पर विवाह के साथ किया जाता है। मुंडन भी तीन या पाँच वर्ष में न करके किसी विशिष्ट देव स्थान पर किया जाता है। विवाह के पश्चात् भी प्रत्येक वर्ष गुलगुलों से 'छितरी पूजा' की जाती है। उसका नाम छीतरमल रखा जाता है। सौर गृह में ही किसी भोपे, भरारे की मानता कर उसे धकरिन या अन्य को दे दिया जाता है। साथ ही शिशु का मूल्य चुका कर उससे खरीद भी लेते हैं। सामान्यत: यह प्रक्रिया लड़के के लिये ही की जाती है। लड़की के लिये तो तभी ऐसा करते हैं, जबकि बड़ी संख्या में बच्चों की मृत्यु हो चुकी हो। थोड़े बहुत अंतर के साथ इस प्रकार के विश्वास सम्पूर्ण भारत में प्रचलित हैं।

पुत्र पिण्डदान करता है, अत: परिवार में उसकी उपस्थिति अनिवार्य है। पुत्री पराया धन है। लोक विश्वास के अनुसार पिता की मुक्ति पुत्र के अभाव में असम्भव है। इस कारण पुत्र जन्म पर हर्ष मनाया जाता है तथा विभिन्न पारम्परिक रीति-रिवाज का आयोजन अनुष्ठान रूप में किया जाता है। भील लोगों में शिशु जन्म की सूचना ग्रामजनों तक पहुँचाने के लिये ढोल बजाया जाता है।

पुत्र प्राप्ति यद्यपि भारतीय नारी के जीवन की बलवती स्पृहा होती है, तथापि भी तथा अन्य जनजातियों में पुत्री का जन्म भी बुरा नहीं माना जाता। इसका कारण यही है कि पुत्री जब तक पिता के घर में रहती है, आय अर्जित कर उसे सम्बल प्रदान करती है तथा विवाह के समय वधू मूल्य (दापा) दिलवाकर पिता का कल्याण भी करती है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि पुत्र जन्म बुरा माना जाता है। हाँ, ये लोग पुत्र एवं पुत्री दोनों का जन्म हर्षपूर्वक मनाते हैं।

स्त्री के लिये प्रसवकाल अत्यधिक कठिन तथा कष्टप्रद होता है। शल्य चिकित्सा की सुविधाएँ न होने की स्थिति में गर्भिणी की जान जाने का भी खतरा होता था। अत: आसान एवं शीघ्र प्रसव की कामना हेतु कुछ टोटके तथा वर्जनाएँ भी प्रचलित हैं। समय पूरा न होने के पश्चात् भी प्रसव न हो पाने की स्थिति में सोम और मंगल को गर्भिणी को गुड़ डाल कर बनाये गये गुलगुले खिलाये जाते हैं। प्रसव पीड़ा आरम्भ होते ही इसकी सूचना सर्वप्रथम पति को देना वर्जित है। कहा जाता है कि इससे दर्द ठंडे पड़ जाते हैं। चींटियों को आटा डालने तथा आसन्न प्रसवा को भैंस के खूँटे से बाँधने पर माना जाता है कि बच्चा सरलता से होता है। कहते हैं कि गर्भिणी की वेणी की गाँठ खोल देनेपर उसके भीतर की गाँठ भी शीघ्र खुल जाती है। सौर गृह में प्रवेश द्वार पर रखे गये पानी से भरे बर्तन में गर्भिणी एक टका डालकर भीतर जाती है, उसे गायत्री मंत्र पढ़ा पानी भी पिलाया जाता है, जिससे प्रसव शीघ्र ही हो जाता है।

थापे लगाने की प्रथा अति प्राचीन काल से आदिमानव की देन है। प्राचीन गुफाओं के शिलाचित्रों में भी कहीं-कहीं थापों का अंकन प्राप्त हुआ है। कोहबर (मिर्जापुर) की गुफा की छत में तथा कंडाकोट पहाड़ के समीपवर्ती मार्ग में अनेक शिलाश्रयों पर बहुत से गेरूए रंग के ऐसे अनेक हस्त-चिह्न प्राप्त हुए हैं। कहीं एक हाथ तथा कहीं दोनों हाथ के छापे प्राप्त हुये हैं।[10]

शिशु जन्म के समय थापे, दीये तथा कलश रखे जाते हैं, जिसमें घरेलू औषधि तथा गर्म पानी रखा जाता है। लोक भाषा में यह 'चरुआ' कहलाता है। घड़े पर लगाये जाने वाले हल्दी के थापों का आनुष्ठानिक महत्त्व होता है तथा इन्हें शुभ माना जाता है। सम्पूर्ण घड़े पर गोबर से उकेर कर आड़ी -तिरछी रेखायें भी बनायी जाती हैं। राजस्थान की विश्नोई जाति में शिशु जन्म के तीस-इकत्तीस दिन पश्चात् 'चलु' (कलश) की स्थापना कर बच्चे को पवित्र किया जाता है। छत्तीसगढ़ में छठवें दिन 'गृह सूची' तथा स्नातक संस्कार में धोबी, नाई, पौनी, पसारी आदि एक लम्बा बाँस, कपड़ा तथा लोटा लेकर बधाई देने आते हैं तथा नेग पाते हैं। छठी संस्कार के दिन जच्चा-बच्चा को स्नान कराकर घर लीपकर छठी का चित्र निर्मित किया जाता है। प्रसूता स्त्री स्नान के पश्चात् 'दशामाता की नई वेल' धारण करती है, जिसे कच्चे सूत की कूकड़ी दस बार होली की ज्वाला में निकाल कर हल्दी से रंग कर तैयार किया जाता है।

राजस्थान में बालक के जन्म के छ: दिन पश्चात् छठी का थापा साँझ को नायण द्वारा कंकू से लगाया जाता है, जिसके नीचे एक सेर थान, गुड़, चवन्नी (पैसा), लच्छा, कागज, कंकू, कलम रखा जाता है। एक कोरा पाटा रखा जाता है तथा घी का दीपक जलाया जाता है। हरियाणा में इन्हें 'सत्ती देवी', अवधी क्षेत्र में 'छठी जगो' खड़ी बोली वाले प्रदेशों में 'सतवाई' पुकारा जाता है।

लोक विश्वास के अनुसार रात्रि के समय बेमाता (विधाता माता या छठी देवी) आकर शिशु का भाग्य लिखती है। एक अन्य मान्यता है कि शिशु जन्म के अवसर पर यह प्रसव पीड़ित नारी के समक्ष खड़ी रहकर बच्चे के जनमते ही उसका भाग्य लिख देती हैं। इस अवसर पर गीत गाये जाते हैं तथा माता की कहानी कही जाती है। बच्चे के पाँव में लच्छा पहनाया जाता है। आँखों में काजल लगाया जाता है। छठी पूजन के समय जच्चा 'पीलिया' (पीले वस्त्र) पहनती है, जो पुत्र जन्म पर वधू के परिवार द्वारा भेजा जाता है। यह वस्त्र सौभाग्य सूचक तथा संतति कामना का प्रतीक माना जाता है। जच्चा-बच्चा दोनों को 'सौर गृह' (शिशु जन्म के स्थान) से बाहर निकाला जाता है। इस अवसर पर पूरे जाने वाले चौक के मध्य में बेमाता की आकृति तथा स्वस्तिक निर्मित किये जाते हैं। सौर गृह के बाहरी द्वार के दोनों ओर भी गोबर से सातिये (स्वस्तिक) बनाये जाते हैं।

ऋतुचक्र समाप्त होने के पश्चात् भी उस दिन जच्चा की खाट के नीचे सातिया बनाया जाता है, जिसे गेरू से लिपी भूमि पर खड़िया से बनाया जाता है।

लोक वर्ग में 'छठी देवी' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनकी पूजा से माँ व बच्चे दोनों की रक्षा होती है। ये शिशु एवं प्रसूता को आशीर्वाद भी प्रदान करती है। देवी को बच्चों से अत्यधिक स्नेह होने के कारण वे उसके निर्माण के साथ-साथ उसकी रक्षा के दायित्व का निर्वाह भी करती हैं। माना जाता है कि वे एक निशाचरी हैं, जिन्हें प्रसन्न करने हेतु छठी पर उनकी पूजा-अर्चना की जाती है।

जिस कमरे में प्रसूति हुई उसके सामने वाले आँगन में अग्नि इसलिये जलायी जाती है कि कोई प्रेतादि उनके समीप न आ सके। अग्नि प्रज्ज्वलित करने से कोई वन्य पशु बच्चे को वहाँ आकर हानि भी नहीं पहुँचा पाता। नवजात शिशु के समीप एक तीर रखने का उद्देश्य भी कहा जाता है कि वह प्रेतात्माओं से जच्च-बच्चा की सुरक्षा करता है। वास्तविकता यही है कि कोई पशु भीतर आ भी जाये तो तीर खोजने में समय लगेगा, जबकि पास रखे तीर से तुरन्त पशु का सामना कर सकना सम्भव है।

प्रसव के दृष्टिकोण से भारिया अत्यन्त क्रूर वृत्ति के होते हैं। सामान्यत: प्रसव काल में भी भारिया महिला काम करने जाती है और खेत में ही बच्चे को जन्म देती है।

आनुष्ठानिक महत्त्व वाले सातिये को बनाने का उद्देश्य प्रेत-बाधाओं से जच्चा-बच्चा की रक्षा करना होता है। लोक विश्वास है कि छह दिन तक ये सातिये 'छठी सतवई' सौर गृह की रक्षा करते हैं।

लोक वर्ग में अग्नि को देवता तथा पवित्र मान उसकी पूजा जन्म संस्कार के समय भी प्रचलित है। शिशु के जन्म पर की जाने वाली सूर्य-पूजा, अग्नि पूजा का ही अंग है। सिर धोने वाले दिन सूरज की उपासना की जाती है। मेहंदी लगायी जाती है तथा भूमि पर सातिया बनाया जाता है। पुत्र जन्म पर 'पगल्या' (पाँव के चिह्न) भी बनाया जाता है।

भीलों में प्रसूता को सामान्य काम-काज करने की अनुमति पाँचवें दिन सूर्य पूजा के उपरान्त प्रदान की जाती है। इस दिन स्त्रियाँ सूर्योदय से पूर्व ही नहा-धोकर स्वच्छ वस्त्र धारण कर सूर्योदय के समय तीर धारण करती हैं। इस अवसर पर महिलाएँ मंगल गीत गाती हैं। सभी बालक को आशीर्वाद देते हैं। इस संस्कार के सम्पादन के पश्चात् प्रसूता की विशेष स्थिति समाप्त हो जाती है तथा वह अपने काम-काज कर सकती है।

भीली समाज में शिशु के जन्म के पश्चात् प्रथम दीपावली पर शिशु को उस मौसम की पैदावार मक्का पर लिटा कर वहीं सूर्य पूजा की जाती है और बच्चे के वीर, साहसी, तेजस्वी, धन-धान्य से भरपूर सुखी होने की कामना की जाती है। यह संस्कार बच्चे की बुआ द्वारा पूर्ण किया जाता है, जिसके लिये उन्हें नेग भी दिया जाता है। शिशु की माता मक्के के ढेर में एक बाँस रोप कर उस पर लहंगा टाँगकर तथा उसके ऊपर एक लोटा उल्टा कर रख दिया जाता है और इस कृत्य के द्वारा माता उसे सदैव अपना संरक्षण प्रदान करने की कटिबद्धता व्यक्त करती है। दूसरे वह प्रकृति (धरती, आकाश, सूर्य, चन्द्र, वायु, वनस्पति, पशु जगत) से कहती है कि वह बालक प्रकृति का ही हिस्सा है, अत: शिशु के भरण-पोषण तथा रक्षा के लिये उसे प्रकृति की आवश्यकता है। सभी आगन्तुकों को भोज देकर तथा गुड़ बाँटकर उनका आभार प्रकट किया जाता है। राजस्थान में सूर्य पूजा को 'जलवा पूजन' कहा जाता है। बन्ध्या स्त्री द्वारा पुत्र प्राप्ति के लिये किये जाना वाला व्रत, सूर्य को अर्घ्य चढ़ाना तथा षष्ठी माता के समस्त अनुष्ठान तथा व्रत वास्तव में सूर्य के ही उपवास हैं, इन्हें सूर्य-अष्टमी भी कहा जाता है।

वनस्पतियाँ आदिम काल से प्राथमिक आवश्यकताओं यथा- भोजन वस्त्र आदि पूर्ण करने वाली सहचरी रही है। न जाने कब से मानव की यह धारणा रही है कि व धन-धान्य प्रदान करने वाली, आयु बढ़ाने वाली तथा मनोकामना पूर्ण करने वाली है। अत: लोक मानस भी प्रकृति के आभार एवं उपयोगिता को देख उसकी उपासना करना अपना धर्म समझता है। इसलिये पवित्र वृक्ष केले के फल तथा फूल का उपयोग विभिन्न अनुष्ठानों में किया जाता है। मान्यता है कि इसे संतान की वृद्धि होती है। नारियल को संतानोत्पत्ति का प्रतीक माना जाता है तथा कोहड़ा (कद्दू) पुत्र का प्रतीक माना जाता है।

टीका जन्म सम्बन्धी लोक कृत्य का प्रमुख अंग है। सम्भवत: टीका टोटका का ही एक प्रकार है। लोक में शिशु जन्म पर उसे आधि-व्याधि तथा कुदृष्टि से बचाने हेतु टीके लगाये जाते हैं।

नाम से व्यक्ति की वैयक्तिक पहचान बनती है। जनजातियों में अधिकतर बच्चे के जन्म के तीसरे दिन या अधिकतम सातवें दिन नामकरण किया जाता है। नामकरण संस्कार शीघ्र करने का एक कारण यह भी है कि निम्न आर्थिक स्थिति के कारण स्त्री बिना काम किये अधिक समय तक घर पर नहीं बैठ सकती। शिशु का नाम प्राय: उसके पैदा होने के दिन या माह के आधार पर रखा जाता है, जैसे सोमवार के दिन पैदा होने वाले बालकों का नाम सोमु या सोम्या तथा बालिका नाम सोमी या सुमी रखा जाता है। इसी प्रकार मंगल के दिन पैदा होने वाले बच्चे का नाम मंगरू, मंगल, मांग्या, मंगली, मंगती तथा बुध के दिन जन्में बच्चे को बधू, बुधी आदि नामों से पुकारा जाता है। राजपूतों तथा भिलालों में नामकरण समान ढंग से किया जाता है। नामकरण प्रसव करवाने वाली बुजुर्ग महिला द्वारा ही किया जाता है । इस दिन दोपहर को औपचारिक रूप से नाम की घोषणा कर ग्रामजनों को भोज दिया जाता है।

नामकरण, मुंडन, अन्नप्राशन, कर्णछेदन आदि पर नाना प्रकार की अल्पनायें घर-द्वार पर दिखायी देती हैं। जन्म सम्बन्धी संस्कार में एक प्रथा तोरण बाँधने की भी है। तोरण हर्ष का सूचक है। आम की हरी पत्तियों को लाल कलावे में थोड़ी दूर पर बाँधकर 'वंदनवार' या 'तोरण' बनायी जाती है।

संक्षेप में हमारी धार्मिक मान्यताओं ने ही लोक कलाओं को स्थायित्व प्रदान किया है। जीवन के प्रत्येक अंग से जुड़ी लोक कलाओं में, धार्मिक भावना के फलस्परूप ही विभिन्न देवी-देवताओं के लोक-चित्रों की कल्पना की गयी। हमारे षोड्श संस्कार तो लोक कलाओं के अभाव में सूने हैं। शिशु जन्म से लेकर जीवन पर्यन्त अपनाये जाने वाले संस्कार लोक कलाओं को प्रेरित एवं पोषित करते रहे हैं। साथ ही मानव का सम्पूर्ण जीवन इन से जुड़ा है। अत: विभिन्न महत्त्वपूर्ण संस्कारों के अवसर पर कलात्मक अलंकरण निर्मित किये जाते हैं। पूजा स्थल को विभिन्न ज्यामितीय एवं जटिल अलंकरणों से सजाया जाता है।

आधुनिक नृतत्त्वशास्त्री, लोक मनोवैज्ञानिक तथा लोकवार्ता शास्त्रियों के अनुसार लोक जीवन में विविध संस्कारों से सम्बन्धित अधिकतर लोकाचार प्रतीक रूप में प्रचलित हैं। इन प्रतीक आकृतियों का रूप प्राचीन एवं सर्वव्यापी है। लोक जीवन में इन अभिप्रायों के प्रति इतनी अधिक आस्था पायी जाती है कि लोक मानव विभिन्न कठिनाईयों से घिरे होने के पश्चात् भी अवहेलना नहीं करता ।

सन्दर्भ

1. शर्मा डॉ. हरद्वारीलाल, कला मनोविज्ञान, सौन्दर्य, माधुर्य और उदात्त का विवेचन, मानसी प्रकाशन, मेरठ, 1992, पृ. 59
2. परमार श्याम, भारतीय लोक साहित्य, पृ. 10
3. चन्द्रिकेश जगदीश, लोकमानस की रूपरचना लोक कला, आकृति, अप्रैल, 1971
4. बर्न हैण्ड बुक ऑफ फोकलोर, डॉ. सत्येन्द्र द्वारा अनूदित, ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन, पृ. 4-5
5. चौहान डॉ. विद्या, लोकगीतों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृ. 109
6. मनुस्मृति, अध्याय 2, श्लोक 27
7-8. शर्मा मालती, लोक संस्कृति से सरोकार, भारतीय लोक कला मंडल, उदयपुर, 1981, पृ. 74
9. ऋग्वेद 5/6/12
10. गुप्त डॉ. जगदीश, प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला, पृ. 439, 462

पवारों के जन्म संस्कार

गोपीनाथ कालभोर

मानव जीवन एक अद्‌भुत पहेली की तरह धरती पर अपना जीवन यापन कर रहा है। जन्म से लेकर मृत्यु तक आश्चर्यजनक ढंग से मनुष्य को मानव-समाज में रहकर अपनी गुरुतर जिम्मेदारियाँ निभाना पड़ती हैं। यदि मानव का जन्म एक जिज्ञासा जगाता है, तो उसके विवाहित होना, फिर अपनी घर-गृहस्थी को चलाते हुए, कर्म और धर्म का निर्वाह करते हुए जीवन का अकाट्य सत्य मृत्यु को प्राप्त होना, एक अबूझ पहेली की तरह सबके सामने उपस्थित होता है। हिन्दू-धर्म में जन्म यदि प्रथम संस्कार है, तो मृत्यु भी जीवन का अंतिम संस्कार है। जीवन के इन संस्कारों के बारे में राजबली पाण्डेय ने लिखा है कि- 'संस्कार का अभिप्राय निरी बाह्य धार्मिक क्रियाओं, अनुशासित अनुष्ठान व्यर्थ आडम्बर, कोरा कर्मकाण्ड, राज्य द्वारा निर्दिष्ट चलनों, औपचारिकताओं तथा अनुशासित व्यवहार से नहीं है, अपितु अनेक आरम्भिक विचार, धार्मिक विधि-विधान उनके सहवर्ती नियम तथा अनुष्ठान भी सम्मिलित हैं, जिनका उद्देश्य केवल औपचारिक, दैहिक संस्कार ही न होकर, व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार, शुद्धि पूर्णता भी है।'

संस्कारों और संस्कृति के इस देश में प्रथाओं एवं रीति-रिवाजों का प्रचलन भी अत्यंत प्राचीन है। नाना धर्म, विभिन्न जातियाँ एवं कई-कई सम्प्रदायों का यह देश विभिन्न संस्कृतियों का संगम देश कहलाता है। जिस पर भी देश की जो मौलिक सनातन संस्कृति है, वह भी जातिगत आधारों पर अलग-अलग पायी जाती है। फिर भी हिन्दू धर्मावलम्बियों में सोलह संस्कार माने गये हैं, जिनमें गर्भाधान से लेकर मृत्यु संस्कार तक शामिल हैं।

संस्कार का महत्त्व

यहाँ हम जन्म संस्कार का विवेचन करने के पूर्व यह बताना आवश्यक समझते हैं कि संस्कार करने की आवश्यकता क्यों पड़ती है और इनके पीछे इन्हें सम्पन्न करने के उद्देश्य क्या हैं।

हम संस्कार की आवश्यकता एवं महत्त्व पर चर्चा करते हैं तो पाते हैं कि सनातन संस्कृति में पुत्र की कामना इसलिए की जाती रही है, ताकि पुत्र अपने पिता के अन्त्येष्टि कर्म को सम्पन्न कर सके। हिन्दू विधि-विधान के अनुसार पुत्र अपने पिता या माता को अंतिम संस्कार के समय अग्नि देता है, इसलिए परिवार में पुत्र का जन्म होना महत्त्वपूर्ण माना जाता है। पुत्र अपने पिता का पिण्डदान करता है और पिण्डदान से मोक्ष की प्राप्ति होती है, यह हिन्दू दर्शन कहलाता है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पिता के वंश को चलाने वाला पुत्र ही होता है, अत: पुत्र के संस्कार की आवश्यकता पड़ती है, इस हेतु विवाह संस्कार किया जाता है। पिता का ऋण चुकाने के लिए पुत्र की प्राप्ति हो यह भी आवश्यक है, अत: विवाह के पश्चात् सहवास तथा गर्भाधान-संस्कार होता है। पुत्र इन संस्कारों के साथ अपने परिवार के भरण-पोषण की जिम्मेदारी लेकर, अंत में अपने पिता के अंतिम समय में पिता को मोक्ष प्रदान करने हेतु पिण्डदान करता है। यह क्रम पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता है, इसलिए मनुष्य को इन संस्कारों की आवश्यकता होती है।

संस्कारों के उद्देश्य

अपने धर्म एवं जीवन के संस्कारों को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से ही हिन्दू परिवारों में संस्कार किये जाते हैं। एक समय में जब देश में मुस्लिमों के आक्रमण हुए और इस्लामीकरण का दौर चला उसके पश्चात् ईसाईकरण होने लगा, फिर भी हिन्दू धर्म व संस्कृति को क्षति पहुँचने के डर से इन्होंने अपने संस्कारों को नहीं छोड़ा और आज भी ये चल रहे हैं। भले ही संस्कारों में परिवर्तन हो गया हो, किन्तु ये संस्कार अस्तित्व में हैं। इन संस्कारों को करने के पीछे जो उद्देश्य माने जाते हैं वे निम्नांकित हैं-

जीवन को सुरक्षित रखने हेतु
देवी-देवताओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन
हानिकारक तत्त्वों से सुरक्षा- भूत प्रेत दैवीय प्रकोप
संतान प्राप्ति की प्रसन्नता अभिव्यक्ति
धन-सम्पदा की आकांक्षा हेतु
व्यक्तित्व विकास के अवसर
सामाजिक परम्पराओं का सम्मान
नैतिक तथा आध्यात्मिक गुणों का विकास

उक्त समस्त उद्देश्य की परिपूर्णता हेतु संस्कार किये जाते हैं, ताकि मनुष्य में नैतिक, आध्यात्मिक गुणों का विकास हो सकें और भारतीय मनीषियों द्वारा अपनाये गये आचरणों से मनुष्य उत्कृष्ट जीवन प्राप्त करें सके।

संस्कार के तत्त्व

जब भारतीय परिवारों में संस्कारों की शुरूआत होती है, तब कुछ प्रमुख प्रक्रियाओं का निर्वाह किया जाता है ये तत्व निम्नांकित होते हैं।

संस्कारों के प्रति विश्वास
देवी देवताओं के प्रति समर्पण
अग्नि में आस्था
पूजा पद्वति व प्रार्थना
यज्ञ, हवन, तर्पण, दान आदि
दिशा-ज्ञान व निर्धारण
जल की उपयोग विधि
प्रतीकात्मक वस्तुओं का प्रयोग
प्रतिबन्धात्मक बातें
सामाजिक मान्यता व सहभागिता

उक्त तत्त्वों की जानकारी, आचरण में स्वीकारना तथा संस्कार के रूप में निर्वहन मानव के लिए महत्त्वपूर्ण होता है, अत: संस्कार किये जाते हैं। आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सोलह संस्कारों को महत्त्वपूर्ण माना है। इनमें से हम प्रथम जन्म -संस्कार को सतपुड़ान्चल के क्षेत्र में निवासरत पवार जाति के परिप्रेक्ष्य में विशेष अध्ययन द्वारा प्रस्तुत करने का प्रयास करेंगे।

जन्म संस्कार

हम जानते हैं कि भारतीय परिवारों में जन्म को मनुष्य की विशिष्ट उपलब्धियों में गिना जाता है। पुत्र अथवा पुत्री को जो पिता अपनी पौरुष शक्ति तथा अपनी पत्नी के साथ सहवास कर जन्म दे सकता है वही पुरुषार्थी कहलता है। सतपुड़ांचल के क्षेत्र में बसी पंवार जाति जो मूलत: कृषि प्रधान जाति है, बालाघाट जिले से लेकर बैतूल जिले तक में बहुतायत संख्या में निवास करती और पंवारी बोली बोलती है। इनमें गर्भाधान के समय से ही जन्म संस्कार की शुरुआत हो जाती है। बालाघाट में बेनगंगा का तट है और छिन्दवाड़ा-बैतूल में वर्धा तथा सूर्य पुत्री ताप्ती का पावन तट। वर्धा-नदी मुलताई तहसील के खेरवानी गाँव से निकलकर छिन्दवाड़ा जिले के कुछ भाग को स्पर्श करती हुई महाराष्ट्र राज्य में प्रवेश करती है। यहाँ के क्षेत्र में भी वर्धा तट के आसपास वास करने वाले पवार जाति के लोग कृषि कर्म करते हुए अपना जीवन- यापन करते हैं। यहाँ हम बैतूल तथा छिन्दवाड़ा जिले के पवार बाहुल्य क्षेत्र के कृषक समाज में जन्म संस्कार को किस तरह सम्पन्न करते हैं, इसका विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं। जैसा कि मैंने पूर्व में लिखा है कि जब घर की बहू-बेटी पेट से (गर्भवती) होती है, तो गर्भावस्था में उसे खाने-पीने, आराम करने, घूमने-फिरने की विशेष हिदायतें दी जाती है, जैसे-

सीढ़ियाँ न चढ़ना, भारी वजन न उठाना, ऊबड़ खाबड़ तथा गढ्ढे वाली जगह से न चलना, अधिक गरिष्ठ तथा न पचने वाला भोजन न करना, सब्जी-भाजी से युक्त पाचक व पौष्टिक भोजन करना, बैलगाड़ी तथा झूलों आदि पर नहीं बैठना।

स्वस्थ वातावरण तथा स्वच्छ व शांतिपूर्ण माहौल में रखकर जहाँ उसकी गोद भराई का उत्सव मनाया जाता है, वहीं गर्भ में पल रहे पिण्ड (भ्रूण) की रक्षा के लिए जो संस्कार किया जाता है, उसे पवारी में पेण्ड-पूजा (पिण्ड या भ्रूण) कहा जाता है।

पेण्ड पूजा

गर्भधारण करने के सातवें माह में संतान की रक्षा के लिए कुआँ पूजन या पेण्ड पूजा तथा हनुमान जी की आराधना का आयोजन किया जाता है। सातवें माह में गर्भ में पल रहा भ्रूण काफी सक्रिय हो जाता है, अत: इसकी रक्षा हितार्थ पेण्ड पूजा का समारोह किसी कुँए पर जाकर सम्पन्न कराया जाता है। पास पड़ौस तथा सगे-सम्बन्धियों की महिलाओं को न्यौता देकर पेण्ड पूजने हेतु आमंत्रित किया जाता है।

पवार समाज में जिस कन्या का प्रथम गर्भाधान अवसर हो तो सातवें में गर्भवती को हरी-साड़ी, हरी चूड़ियाँ, वस्त्र, फल तथा मेवे आदि गोद में रखे जाते हैं। जब गर्भवती नारी को कुँए पर ले जाते हैं, तो पूजते समय माता-माय (भवानी माँ) व हनुमान जी की प्रार्थना करते हुए आरती उतारी जाती है। आरती के समय प्रार्थना जाती है-

पांढरी की ओ माता माय
मऽमानू तू हय भोरी।
आओ, आ ओ माता माय
करू तोरी बिनती आज की रात
करजो मराअ घरअ वास
दिन ख ले जो कूकु को रेला
रात ख ले जो सहिर वास।।

प्रार्थना के बाद कुँए की पूजा की जाती है, नारियल फोड़ा जाता है और प्रसाद भी बाँटते हैं। इसके बाद गाँव बाहर के हनुमान जी को पूजा जाता है। उसकी आरती के साथ प्रार्थना की जाती है-

पाण्ढरी को रे हनुमान बाबा।
मऽ मानू तू हय भोरो
आओ आ ओ रे हनुमान बाबा।।
करू तोरी बिनती आज की रात
करजो मराड़ घटअ वास
दिन ख लेजो कूकु को रेला
रात ख लेजो सहिर वास।।

लोक गीतों की उक्त प्रार्थना में उपस्थित नारियाँ गा-गाकर यह प्रार्थना करती हैं कि हे पांढरी माय! (पहाड़ियों पर स्थित खेत में बनद्मया देवी माँ तथा हनुमान का बनाया हुआ मंदिर) तू बड़ी भोली है फिर भी माँ तुम मेरे घर आना और रहना। दिन में पूजन हो तो कुमकुम का तिलक स्वीकार करना और रात में शहर में निवास करना।

माँ से प्रार्थना करने के बाद हनुमान बाबा के मंदिर में जाकर गर्भस्थ शिशु की रक्षा के लिए प्रार्थना की जाती है और हनुमान जी से कहा जाता है- हे बाबा हनुमान! दिन में तुम्हें सिंदूर का रेला चढ़ेगा और रात में तुम हमारी प्रार्थना स्वीकार कर घर जाओगे तो हम पर कृपा बनाये रखना। फिर तुम चाहो तो शहर में जाकर बस जाना। ऐसी भक्तिमय अनुनय-विनय करके महिलाएँ उस गर्भवती महिला के साथ घर लौट आती है। कृषक परिवार की महिलाएँ खेती, पशुपालन तथा हाट बाजार करने में कुशल होती है, अत: उनका शरीरिक स्वास्थ्य भी शहरी महिलाओं से ज्यादा ठीक रहता है। हनुमान की कृपा और माँ के आशीर्वाद से बाद में कोई कष्ट शेष नहीं रहता है।

गर्भवती के खान-पान पर ध्यान

चूँकि गर्भधारण कर गर्भस्थ शिशु को प्रसव काल तक बिना क्षति पहुँचाये सम्भालना बहुत जिम्मेदारी का दायित्व होता है, अत: गर्भवती महिला के खान-पान पर सास, ननद, देवरानी, जिठानियाँ बहुत ध्यान रखती हैं।

किसानों के खेतों में उगने वाली हरी सब्जियाँ जैसे पालक, लौकी, कद्दू, आलू, अरहर, पपीता, जाम आदि की फसल रहती है, तो आसानी से गर्भवती को विटामिन युक्त आहार पोषण हेतु मिलता है। पेट में बच्चा होने की अवस्था में खान-पान इतना पोषण युक्त होना चाहिये, जिससे बच्चे का पोषण भी हो जाये।

तीज-त्योहारों व पर्वों के अवसर पर विशेष पकवान भी बनते हैं, जो महिला को खिलाये जा सकते हैं। उसकी रूचि जिस भोजन को ग्रहण करने में होती हैं वही खाने को दिया जाता है। अर्थात् गर्भाधान के समय खान-पान पर भी ध्यान दिया जाता है। यदि खान-पान से कोई शारीरिक कष्ट भी हुआ, तो अनुभवी महिलाएँ ऐसी समस्याओं का समाधान भी करती हैं।

प्रसव काल

वर्तमान समय में स्वास्थ्य सुविधाओं की व्यवस्था बेहतर हो गई है। अनुभवी तथा वरिष्ठ महिलाएँ प्रसवकाल में गर्भवती माता के पास ही रहती है और गाँव में दाई का काम करने वाली महिला को भी प्रसव काल में घर बुला लिया जाता है। सुरक्षित व स्वच्छ कक्ष में प्रसव कराया जाता है। प्रसूति के समय जानकार दाई के निर्देशों का पालन करती हुई घर की वयोवृद्ध महिलाएँ सहयोग करती हैं। शिशु का नाल भी दाई के हाथों से कटवाया जाता है। नाल काटते समय बहुत सावधानी बरती जाती है। शिशु के शरीर से जहाँ नाल जुड़ा रहता है, उस (नाभि) स्थान पर जख्मरोधी लेप लगाकर पट्टी बाँध दी जाती है ताकि बाहरी प्रदूषण से वह स्थान सुरक्षित रहे। प्रसूति के समय प्राय: शिशु का सिर सबसे पहले बाहर आता है, परन्तु कभी ऐसा भी होता है कि शिशु के पैर बाहर आने के साथ जन्म होता है। ऐसे बच्चे को पवार समाज में 'पायर्या' (पैर की ओर जन्म लेने वाला) कहते हैं।

पैर की तरफ से जन्म लेने वाले शिशु (लड़का या लड़की कोई भी हो) के बारे में समाज में यह मान्यता रही है कि किसी महिला व पुरुष का कमर का दर्द या पीठ में हीक भर गई हो तो पायर्या व्यक्ति के तीन-पाँच-सात बार पैरों से ऊपर से नीचे की ओर लगातार तीन दिन तक सुबह शाम उतारने से ठीक हो जाती है। पैर की ओर से जन्म लेने वाले लड़का-लड़की में यह विशेषता होती है। ऐसे बच्चे बड़े होकर उक्त प्रकार की शिकायतों को अपना पैर लगाकर (उतारकर) ठीक करते देखे जाते हैं। जब पायर्या के पैरों से लोगों का दर्द दूर होता है, तो ऐसे बच्चों को सम्मान भी मिलता है और ग्रामीण जीवन को जीने वाले लोग ऐसे पायर्या शिशु अथवा बालिका को सदैव याद रखते हैं।

प्रसूतिका सेवा के अन्तर्गत जन्म के बाद बच्चे को गुनगुने जल में स्वच्छ कपड़ा डालकर शरीर को पोंछते हैं और माँ को भी स्नान कराया जाता है। घर की महिलाएँ या खुद प्रसव के पहले छोटे-छोटे कपड़े जिसे पवारी में 'फरका' कहते हैं, बनाकर रखती हैं। इन फरकों की लंगोट बनाकर कमर तथा पेट पर बाँधते हैं। गाँव की दाई जो प्राय: नाईन समाज की होती है उसके द्वारा प्रसव कार्य निपटाये जाने पर प्रसव वाले घर से उनकी क्षमता के अनुसार अन्न, वस्त्र तथा पैसा आदि देकर सम्मान पूर्वक विदा करते हैं। यद्यपि प्रसव के पश्चात् के कार्यों के लिए भी नाईन (दाई) को कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य माह दो माह या तीन माह के लिए सौंपे जाते हैं, इन कार्यों में - शिशु को स्नान कराना तथा तेल से मालिश (मसाज) कराना, शिशु की माँ को नहलाना तथा शरीर की मालिश करना, जच्चा व बच्चा दोनों को वस्त्र पहनाना तथा

विशेष प्रकार की धूनी देना और माँ के द्वारा शिशु को स्तनपान कराना।

जब नाईन को दान-दक्षिणा अथवा सौहार्द्र भेंट राशि प्रदान की जाती है और दाई अपने घर प्रसन्न होकर जाती है, तो गाँव के परिचित परिवारों की महिलाओं व पुरुषों को नवजात के जन्म लेने की जानकारी देती चलती है। साथ ही उन्हें शिशु को देखने का आमंत्रण भी देती हैं। इस तरह गाँव के किसी घर में यदि बच्चा या बच्ची जन्म लेते है, तो उनकी सूचना गाँव तथा मोहल्लों तक देने में दाई सबसे आगे रहती है।

दाई को उत्सुकता रहती है साथ ही दो-चार महीने तक काम मिलने की आशा रहती है, अत: वह बहुत ईमानदारी व निष्ठा से प्रसूति कार्य को करती है। अपनी आर्थिक दशा सुधारने का दाईन को यह अच्छा अवसर होता है।

छठी कार्य

शिशु जन्म के पश्चात् छठवें दिन छठी कर्म का संस्कार किया जाता है। पवारी बोली में इस प्रक्रिया को 'छठी लिखना' कहा जाता है। छठी लिखने के कार्य में सगे-सम्बन्धियों व रिश्तेदारों को समुचित आदर प्रदान करने की दृष्टि से आमंत्रित किया जाता है। जन्म संस्कार के अन्तर्गत किया जाने वाला यह महत्त्वपूर्ण कार्य है। इसे सम्पन्न करने के पीछे यह माना जाता है कि उसकी भाग्य रेखा इसी दिन खींची जाती है। इस सम्बन्ध में भारतीय परिवारों में यह कहावत बहुत चरितार्थ होती है- 'छठी का दूध याद दिलाना।' यह वही छठी है जो शिशु को स्वस्थ, सुखी व सुंदर रखने के लिए छठी माता की पूजा के रूप में मनायी जाती है।

बिहार क्षेत्र में जो छठ पर्व मनाया जाता है, वह मनुष्य जन्म को सुरक्षित रखने की दृष्टि से ही मनाया जाता है। इस पर्व का भी छठी कर्म से सम्बन्ध माना जाता है। पवार समाज में यह कर्म सिर्फ जन्म के छठवें दिन ही किया जाता है। इसे समाज ने नियमित परम्परा के रूप में सामूहिक व सार्वजनिक कर्म नहीं माना है। जो सम्बन्धी तथा महिला रिश्तेदार छठी लिखने के दिन के पूर्व से आती हैं, वे भी अपनी जिम्मेदारियाँ बाँट लेती हैं, जैसे - मिट्टी का दीया जलाना, काजल-काढ़ना (बनाना), पीपर पीसना, दूध पिलाना, काढ़ा (हरेरा) बनाना एवं लड्डू बनाना।

छठी की पूजन-विधि

परिवार तथा रिश्ते में अनुभवी महिलाएँ एकत्रित होकर प्रसूति कक्ष में एक पाट (पटा) पर श्वेत वस्त्र बिछाती हैं, मिट्टी के दीये में तेल बाती डालकर उसे प्रज्ज्वलित करती हैं और फिर जलते दीपक की लौ पर हंसिया के लोहे का फल गरम करती हैं। फल पर पान के पत्ते रखे जाते हैं, ये पत्ते लौ में जलते हैं और फिर उन जले हुए पत्तों व दीये के लौ से बनी कारस से काजल काढ़ा जाता है। दीपक की पूजा की जाती है, फिर शिशु को नये कपड़े पहनाकर उसकी आँख में बनाया हुआ काजल लगाया जाता है। दोनों हाथों की कलाई तथा पैरों में काला धागा बाँधा जाता है। जो काजल बनाया जाता है, उसी काजल से कागज के टुकड़े पर छठी माँ के नाम से कुछ लिखा जाता है और वही कागज शीतला अष्टमी को शीतला माता के चरणों में अर्पित कर दिया जाता है। शिशु की सुरक्षा तथा उसके स्वस्थ बने रहने की कामना की जाती है। बच्चे के मुँह में शहद की बूंद डालकर चटायी जाती है, साथ ही माँ से शिशु को दूध पिलाने को कहा जाता है। किसी प्रकार का अनिष्ट न हो, अत: प्रसूता की गोद में शिशु को बिठाकर दीपक जलाते हैं, फिर इनके आसपास राई के दाने बिखेरे जाते हैं।

पोषक खाद्य

प्रसव के बाद से ही प्रसूता नारी के कान तथा सिर को कपड़े से बांधकर रखा जाता है, ताकि हवा आदि लगने से बचाया जा सके। प्रसव के दिन से ही प्रसूता माँ हल्का भोजन (दाल का पानी, दलिया दूध) कराया जाता है, साथ ही प्रसव से हुई शरीरिक कमजोरी को दूर करने के लिए 'हरेरा (काढ़ा) पिलाया जाता है। हरेरा पौष्टिक मेवे तथा हल्दी, सौंठ, गुड़, घी, खसखस, मुनक्के तथा अंजीर आदि से बनाया हुआ काढ़ा होता है। सभी वस्तुओं को काटकर कुछ दरदरा रहने दिया जाता है और फिर घी में इन्हें भूनकर पानी डालकर इसका काढ़ा बनाकर पकाया जाता है और प्रतिदिन सुबह-शाम पिलाया जाता है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से, साथ ही प्रसव से हुई शरीरिक कमजोरी को दूर करने हेतु जहाँ साधारण भोजन जैसे दाल का पानी, दलिया (थूली) दूध, सावां का भात, मूंग दाल व सावा की

खिचड़ी तथा दाल के पानी में रोटी की पपड़ी आदि खाने को दी जाती है, वहीं 'जापे' की सामग्री से लड्डू (पौष्टिक) बनाये जाते है।

लड्डुओं का प्रयोग शारीरिक शक्ति तथा शिशु के लिए पर्याप्त दूध मिले इसलिये किया जाता है। पौष्टिक तत्त्वों से युक्त ये लड्डू नित्य के भोजन से हटकर पूरक खुराक के रूप में दिये जाते हैं। लड्डुओं में घी की मात्रा अधिक होती है। बाजार में लड्डू की सामग्री को बाजार में 'जापे का सामान' कहा जाता है और यह सामग्री सम्पूर्ण भारत वर्ष में प्रसूति कार्य हेतु उपयोग में लायी जाती है। प्रसव से हुई कमजोरी, रक्त की कमी को पूर्ण करने, शरीर में शक्ति लाने तथा शिशु के लिए पर्याप्त मात्रा में दूध उपलब्ध हो सके इस निमित्त इनका सेवन आवश्यक होता है।

शिशु का बारसा

बारसा, बारहवें दिन किया जाने वाला जन्मोत्सव कार्यक्रम है। इसे झूले में डालना भी कहते हैं। उत्सव में समाज की महिलाएँ एकत्रित होती हैं, साथ ही बहनें, बुआ, मौसी तथा चाचियाँ भी आती है तब शिशु को झूले में डाला जाता है। उसके सुखी व स्वस्थ जीवन की कामना करती हुई बुआ या बहन मंगल काज की खुशिया मनाती लोक गीत भी गाती है। भाई के घर बहन आई हुई है, अपने भतीजे को बधाईयाँ देने और घुंघरी खाने के लिये। पवारों के रीति-रिवाज व जन्म संस्कार की खुशी में कृषक परिवार के शिशु को जब झूले में डालते हैं, तो मेहमानों को घुंघरी खिलाई जाती है। बहन प्रसन्न होकर गीत गाते हुए कहती है-

भैय्या घरअ् भयो नन्दलाल
काहे की डालू घुंघरी।
हरो लिलो गहूँ कटाय
ओकी म डाल्हूँ घुंघरी
गांव भर ख बुलाहूँ घुंघरी खिलाहूँ
बीर को 'बारसा' मनाहूँ, बाठ्हूँ मऽ ते घुंघरी
भैय्या घरअ् भयो बारो लाल, बाटहूँ मऽ ते घुंघरी।।

भाई के घर नन्द के लाला (कृष्ण) की तरह पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई है, इस खुशी में परम्परानुसार घुंघरी का प्रसाद और गुड़ बाँटने की रीत है। खेत में गेहूँ कट रहा है, जिस की घुंघरी डालने की इच्छा बहन को हो रही है। उसका मन यह भी है कि भतीजे के जन्म की खुशी में वह पूरे गाँव के लोगों को बुलाकर घुंघरी बाँटकर अपनी प्रसन्नता को दर्शायेगी। भतीजे (वीर) का बारसा है, अत: आज उसे झूले में डाला जायेगा।

घुंघरी बांटने के बीच कुछ करीबी महिलाएँ बहन को उकसाते हुए कहती है कि भतीजे के बारसा में आयी हो तो भाई से कुछ माँग लो। बहन बहुत प्रसन्नता से कहती है- हाँ माँगूंगी न अपने भाई से। बहनों को वैसे भी ऐसे समय अपेक्षा रहती है कि भाई कुछ भेंट में दे। अपेक्षा के इस भाव को भाई भाँप लेता है। इसी भाव को उपस्थित महिलाएँ समझ जाती हैं और गीत के माध्यम से भाई-बहिन के भावों को उद्‌गारित करते हुए गाती है-

भाई पक्ष से - *चल-चल बहिना गाय का कोठा*
अच्छी -अच्छी गाय निवाड़ ले...बहिना बाई
बहन पक्ष से - *पाँच बरस को बरद मनायो*
का करू भैय्या तोरी गाय को
भौजी का कंगन दिला बीरन मखअ्
पाँच बरस को बरद मनायो।
भाई कहता है - *भौजी का कंगना ओका मायका सी आया*
कंगना दिया नी जाय ओ बीना बाई
आऊर कई मांग ले मसीअ्
पाँच बरस को बरद मंगायो।।

भाई बहन के उत्तर -प्रतिउत्तर के बीच बैठी हुई महिलाएँ आपस में बैठी बात कर रही हैं कि देखो बीना बाई भतीजे के जन्म-संस्कार में आयी और बारसा में भतीजे के लिये नये कपड़े भी लायी है, परन्तु अपने भाई से सोने के कंगन की अपेक्षा कर रही है। वे भी जो उसकी भौजाई के हाथ में पहने हैं। कैसी बहन है। दूसरी महिला कहती है कि भाई कह रहा है कि मैं कोठा में बँधी गाय दे देता हूँ, परन्तु बहन मानती नहीं, क्योंकि उसका मनाना है कि वह पाँच वर्ष से भाई के बेटे के लिए व्रत कर (संकल्प) रही है, उस संकल्प को मैं साकार होता देख रही हूँ, अत: मैं तो सोने का कंगन ही लूँगी। दोनों के संवाद के बीच तीसरी महिला भाई की भावना को समझकर बीना बाई को समझाती है और कहती है कि - तुम भाभी के हाथों के कंगन क्यों

माँग रही हो, वे तो उसके मायके के हैं। मायके के कंगन तुम्हें नहीं दिये जा सकते। इस तरह हँसी-ठहाकों के साथ घुंघरी गुड़ खाते हुए उत्सव मनता है और अंत में बहन ही अपने भतीजे को भाभी की गोद से उठाकर झूले में डालती है और झूला देने लगती है। कुछ देर झुलाने के बाद उपस्थित महिलाओं से शिशु का नाम रखने को कहती है। महिलायें नामों का सुझाव देती हैं और एक-एक करके पाँच नाम रख दिये जाते हैं। इन नामों का भी जन्म संस्कार से बड़ा गहरा रिश्ता रहता है। यदि लड़की लक्ष्मी पूजा के दिन हुई है, तो लक्ष्मी नाम रख दिया जाता है। मंगलवार जन्मी है तो मंगला या मंगली नाम रखा जाता है। लड़का यदि सावन में पैदा हुआ है, तो सावन्या नाम रख देते है और यदि बच्चों के बचने की संभावना कम होती है तो फिर कुछ भी ऊटपटांग नाम रखे जाते हैं, जैसे - ढेपलया (मिट्टी का ढेला), हगर्‌या (हगने वाला), गौंदन (घास का बिखरा ढेर), चेपट्या (चपटा मुँह वाला), ओझा (झाड़-फूंक करने वाला), खड़कू (खड़कू सिक्का एक दम छोटा), घुड्या (घूरे पर पैदा हुआ), धुड़ल्या (धूल में खेलने वाला) आदि।

बारसा (झूले में डालना) के उत्सव व नाम रखने के साथ, आगन्तुक महिलाएँ अतिथि व रिश्तेदार बच्चे को वस्त्र पैसे आदि देकर अपने दायित्वों से मुक्त हो घुंघरी का आनंद लेते हुए प्रसन्न मन से घर जाते हैं।

तेरहवें दिन प्रसूता को पुनः घर संसार के कार्यों में सक्रिय करने हेतु साथ ही अभी तक जिस जल को छूने तक की अनुमति नहीं होती थी, उसे छूने के लिए बहू बेटी जो भी हो उससे कुआँ पूजन कराया जाता है, बाल्टी से जल निकाला जाता है ताकि प्रसूता नारी घर के काम-काज को भी धीरे-धीरे करने लगे। इस प्रकार जन्म संस्कार के महत्त्वपूर्ण तेरह दिन के पश्चात् बच्चे को जन्म देने वाली माता अपने पुत्र अथवा पुत्री को नियमित दूध पिलाकर उसे झूले में डालकर, झूला झुलाकर, लोरी गाकर, सुलाकर, अपने घरेलू कामों में लग जाती है। माँ झूला देते समय जो लोरी सुनाती है, वह पवारी लोरी गीत के रूप में इस प्रकार है-

जुजू ...मराअ्बारा की गाई....गाई
एना बारा खअ् कोनअ् मार्‌यो
हडु ..हडु
निन्दर कोनऽ करी एना बारा की
हडु हडु .....

लोरी गीत आगे बढ़ता रहता है और शिशु सो जाता है। इसी प्रकार से जन्म संस्कार के सारे क्रिया-कलापों, रीति-रिवाजों का क्रमशः लोप होता जाता है और ममता व प्यार भरा जीवन आगामी- संस्कारों के लिए अपनी शारीरिक व मानसिक तैयारी में जुट जाता है।

मालवी लोक में जन्म

नरहरि पटेल

मालवी लोकगीतों में जन्म-मरण की व्याख्या अद्‌भुत है। लोक गीतों और लोक मुहावरों में इनकी गहरी छाप है। लोक व्याख्याकार से जब हम पूछेंगे तो वह लोक संतों की ओर इशारा कर देगा और कहेगा कि जन्म की कामना में संस्कारी जीवन की कामना करो। ऐसा जीव जो अच्छा इंसान बने, परिवार का नेक सदस्य बने। उसका जीवन बाधाओं से परे, अला-बला से दूर रहे। वह संतों की सीख के सहारे सद्‌गति प्राप्त करे। लोक का जीव मरना नहीं चाहता, न ही सद्‌गति चाहता है। जीवनभर वह ऐसे विचारों और कर्मों में संलग्न रहे कि उसकी दुर्गति नहीं हो। उसकी मति शुचिकर ही बनी रहे अंत तक। 'मति सो गति' इसीलिये मालवी लोक गीतों में सूरज जैसे दैदीत्यवान पुत्र की कामनाएँ हैं। ऐसा पुत्र जो कुलदेवताओं के कदमों पर चलने वाला हो। वह कुल का दीपक बनकर उजाला करे। मालवी लोक गीतों में नीतिपूर्ण आकांक्षाओं की पूर्ति की कामना है। इनमें जन्म को लेकर सद् इच्छाओं और सत्-संकल्पों की तीव्रता है। सदाचार, परोपकार, सद्‌भावना से पूरित सच्चरित्र संतान की प्राप्ति की कामना है। कामना पूरी होने पर उपहार बाँटने का भाव देखिये-

पस भर मोती संगचीया
दीजो रे उस दाई रे हाथ
चारभुज जनमिया

यह कि वह दाई उपहार की पात्र है, जिसके हाथों हमारे घर विष्णु (चतुर्भुज) जैसे पुत्र का जन्म हुआ। बालक के जन्म के साथ ही प्रसूता की सुश्रुषा के मधुर भाव व्यक्त होते हैं- इस गीत में और फिर जोशी से मांगलिक नामकरण के आयोजन का आग्रह और मंगल गान की तैयारी की जाती है।

मालवी लौकिक अनुष्ठानों में सुन्दर, सुशील, योग्य, वीर, यशस्वी संतान के लिए दहकती आग पर नंगे पाँव चलने तक का वर्णन है। इन अनुष्ठानों में पूजा, व्रत-उपवासों में दैवी आराधना के प्रसंग हैं। इन प्रसंगों में सुहागिनें पुत्र कामना में जलती सिगड़ी सिर पर रखती हैं। शुभ संकल्पों से सुहागिनें कामना करती हैं, तन्मय गीतों में-

एक बालूड़ो दे, माता म्हाने एक बालूड़ो दे।
एक बलूड़ा रे कारणे
म्हाये छोड् या माय ने बाप
माता म्हाने एक बालूड़ो दे

हे माँ! तू तो सबकी माँ है। एक पुत्रहीन की तू पीड़ा जानती है माँ! मातृत्व के लिए मैं माँ-बाप का घर छोड़कर ससुराल चली आई और अब तेरे दर पर आई हूँ, नंगे पाँव चलकर। मेरी अरज सुन ले। माँ, मेरी झोली भर दे।

शिशु जन्म के पश्चात् जच्चा की होशियारी की चर्चा होती है, जो सास के चुपके माँ के हस्ते सहेली की सलाह पर अजमा (स्वाथ्यवर्धक औषधि) खाने की दाद पाती है। प्रसूता से घरेलू औषधि पथ्य का बड़ा महत्त्व माना गया है। इन औषधियों (सूंठ, अजवाइन) आदि के निर्माण में देवरानी, ननद, सासू की अवहेलना के भाव लोकगीतों में व्यक्त हैं। यहाँ माँ की हाजिरी का आग्रह पहली प्रसूति में स्वाभाविक होता है। विश्वास किया जाता है कि अन्यों के मुकाबले माँ के हाथों प्रसूति सुधर जाएगी।

सवा मण सूठ अढ़ाई मण अजमो,
अपण दोई मिली खांडा हो पीया धमको लोग सुणेगा।
सासूजी सुणेगा तोवी दोड़या आवेगा, लाडू बंधई माँगेगा...
माता बाई आवेगा तो दन दैन रेवेगा,
दो दन रेवेगा धान थोड़ो खावेगा,
जापो सुधारी घर जाओ ही पिया धमाको लोग सुणेगा।

इस गीत में शिशु जन्म के अवसर पर प्रसूता पति से कहती है कि तुम तो मेरी माँ को बुला लो मदद के लिए। सासूजी आएँगी तो नेग माँगेंगी, जबकि मेरी माँ केवल दो दिन रहकर प्रसूति सुधारकर अपने घर चली जाएँगी। अतः कृपाकर मेरे ससुराल वालों को इस मौके पर मत बुलाओ। इस गीत में पहली प्रसूति पर अन्यों की जगह माँ के सान्निध्य की कामना कितनी स्वाभाविक है।

इसी तरह एक अन्य गीत 'तम पीयो ओ सुहागण पीपलो' में गोरी द्वारा पीपला मूल पीने का आग्रह है। यह औषधि बड़ी तीखी होती है। गोरी जब इसे नहीं पीने का बहाना करती है, तब पति डराता है कि अगर वह पीपला मूल नहीं पीएगी तो वह सौत ले आएगा। भोली प्रसूता को दवा पिलाने का क्या नेक और सरल तरीका है।

मालवा में जन्म पूर्व गाये जाने वाले बंदीछोड़, परिमाता और अन्य देवी-देवता के गीत प्रचलित हैं। शिशु जन्म के साथ अन्य गाये जाने वाले गीत हैं- पगल्या, पालना, घूँघरी, अगरनी, ख्याली और छठी गीत गाने की परम्परा है। इन गीतों के साथ सती माता के गीतों में स्तुति गीत भी गाए जाते हैं। इनमें मन्नत, संकल्पों की पूर्ति की कामना देखने योग्य है।

म्हारो हियो हिलोरा ले म्हाने एक बालूड़ो दे
सीतला ये दियो अगर पालणो, कठे बांधू रेशम डोर
ओरां बंधाऊ माता पालणो, पटसारा बंधाऊ रेशम डोर

जन्म विषय पर गीतों में पूर्वजों की मधुर स्मृतियाँ भी गाई जाती हैं। इनमें नेक व्यक्तित्व के धनी पूर्वजों के पुनर्जन्म की भावना और चाहना स्वाभाविक रूप में होती है-

पूर्वज आया म्हारे घरे पधारो
वी आया म्हारी अली गालियाँ
वी आया म्हारा राम रसई
काचो दूध उफणावाँ म्हारा राज

जन्म के पूर्व और जन्म के बाद परिवार की मनोकामना पूरी होने पर, रतजगे में माता और कुलदेवता के अनुग्रह गीत गाये जाते हैं। इनमें कृतज्ञता के साथ कुलदेवी का सौंदर्य समाया होता

है। देवी गीतों में मानवीय भाव भी देखने योग्य हैं। इनमें इन्सानियत के उदात्त भाव हैं। इन्हें सुनने पर मालवी लोक के सांस्कृतिक सोच का सहज ही अंदाजा लगाया जा सकता है। इन गीतों के माध्यम से इंसानी जिंदगी में, प्रकृति के सहज हितों के रंग मिलेंगे। जन्म के गीतों में पारिवारिक रिश्तों के आदर, प्रेम, स्नेह और सहयोग के बोलों से स्पष्ट होता है कि घर में नवागन्तुक के प्रवेश के साथ ही कितने रिश्ते ले लेते हैं। मालवी माच लोक नाट्य में भी विभिन्न कथानकों के जरिये जन्म प्रसंगों के चित्र प्रस्तुत होते रहे हैं। शिशु जन्म के समय ढोल, थाली, मंगल ध्वनि और लोक नृत्यों के साथ पारिवारिक उल्लास की महक उठती है।

मालवा में संतों, पंथियों, निर्गुण–सगुण भक्तों की रचनाओं में भी लोक में शुभ जन्म के आदरणीय भाव हैं। जन्म मृत्यु के प्रसंगों में कबीर, गोरख की बानियों और पीपा, नित्यानंद, नाथों, चन्द्रसखी के छंदों, पदों, दोहों, कुण्डलियों की भरमार है। मालवा के क्षेत्रों के उमरावों, राजाओं और क्षत्रपों के जन्म प्रसंग उनके चरित्रों के उदाहरण गीतों में भी प्रस्तुत होते हैं। इनमें सामान्य घरों में भी उन जैसे चरित्रों के जन्म के प्रसंग गीत गाये जाते हैं। चन्द्रसखी, नवनिधि कुँवरि और रूपमती का उल्लेख भी लोक रचनाकारों द्वारा आदर के साथ किया जाता है। संतान जन्म पर मालवी महिलाएँ खुशी के मंगल गीत गाते नहीं थकतीं। नये जन्में कुलदीप के चिरंजीवी होने की कामना करती हैं, देखिये–

हो जी युग युग जीवों म्हारा छींकण वाला
झट जन्म्या पट छींकिया
होजी हँसोजी सोवोजी
थारी छब न्यारी

शिशु जन्म पर संदेश वाहक के साथ, पीहर अथवा ससुराल पगलिया पहुँचाये जाते हैं। जन्म का शुभ समाचार देने वाले संदेश वाहक का बड़ा सत्कार होता है और साथ ही गीतों में पति से शिशु जन्म की खुशी में हाथी दाँत का चूड़ा भेंट में लेने का आग्रह गाया जाता है।

कजली बन जाजोजी म्हारा
चूड़ा लावोजी हाथी दाँत का

पगलिया

उड़–उड़ रे म्हारा लाल परेवा
नगर बधावो जाजे
गामनी जाणूँ नाम नी जाणू
कणी घर जाऊँ बधावो रे
गाम जनकपुर नाम जनकजी
वणी घर जाजे बधावा रे
वा रतनारी धीयड़ी तमारी
सीताबाई दीनड़ जायोरे

शिशु जन्म के अवसर पर पूरी प्रकृति पवित्रता से गीतों में सँवर जाती है। गगन, पवन, सूर्य, चाँद और नदियों का सम्मान भी गाया जाता है। सूरज पूजन, जलाशय पूजन और पूरी प्रकृति के उपादानों की पूजन की व्यवस्था के गीत, मालवा के लोक जीवन को उल्लास और खुशी से भर देते हैं। इनमें मनुष्य और प्रकृति के मधुर सम्बन्धों की मधुर गाथा है।

मालवी गीतों में जन्म

डॉ. शशि निगम

प्राचीनकाल से ही वर्णाश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत सोलह संस्कारों को भारतीय समाज में बहुत ही श्रद्धापूर्वक अपनाया गया है। व्यास स्मृति के अनुसार जन्म से मृत्यु पर्यन्त सोलह संस्कार माने गये हैं।

भारतीय संस्कृति में संस्कारों को इतना अधिक महत्त्व दिया गया है कि इनका श्री गणेश शिशु के गर्भ में आने से पूर्व ही हो जाता है। हमारी ग्राम संस्कृति वास्तव में इन्हीं संस्कारों में रची-बसी मानी जा सकती है। मालवांचल भी इससे अछूता नहीं है। यहाँ जन्म, मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह आदि संस्कार बहुत ही आनन्द पूर्वक मनाये जाते हैं।

यद्यपि संस्कार हिन्दुओं के जन-जीवन में अनिवार्य अंग बनकर रहे हैं, तथापि देशकाल एवं परिस्थितियों के अनुसार उनकी वास्तविक आत्मा लुप्त होती गई। सुदूर मालवांचल में फैले विभिन्न ग्रामों के सांस्कृतिक जीवन को अनुभूत करने पर ज्ञात होता है कि मालवांचल भी इसका अपवाद नहीं है। विभिन्न संस्कारों में कुछ संस्कार ही ऐसे रह गये हैं, जिनसे आज भी लोक का भावनात्मक तादात्म्य स्थापित है। जैसे जन्म, यज्ञोपवीत और विवाह संस्कार आदि।

मालवी लोकगीतों में अभिव्यक्त लोक मानस के जन्म संस्कार सम्बन्धी स्पन्दन बड़ी गहराई से अनुभूत किए जा सकते हैं। जन्म संस्कार सम्बन्धी गीतों को दो भागों में बाँटा जा सकता है- गर्भाधान एवं जन्म संस्कार से पूर्व के गीत और जन्म के उपरान्त के गीत।

किसी भी शुभ कार्य में सर्वप्रथम गणेशजी का स्मरण किया जाता है। अत: 'जन्म संस्कार' जैसे शुभ एवं मंगलमय संस्कार के गीतों में भी गणेशजी के गीत गाये जाते हैं।

प्रसूति पूर्व गाये जाने वाले गीतों में सर्वप्रथम 'साद' फिर 'अगरनी' के गीत गाये जाते हैं।

परिवार में बच्चों की किलकारियों से आनन्द एवं उत्साह की लहर दौड़ जाती है। तभी तो यह ज्ञात होते ही कि परिवार में बहू को पहला मास लगा है, अर्थात् शिशु आगमन होने वाला है, तो सास-ससुर तथा परिवार के प्रत्येक सदस्य बहू की इच्छानुरूप वस्तुएँ लाकर उसकी साद पूरी करके आनन्द का अनुभव करते हैं। निम्नांकित गीत में इन्हीं भावों की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है-

पेलो मास गोरी धन लागो, दूसरो मास गोरीधन लागो।
तो थूँकतड़ा दन जावा लागा, कुँखे पुत्र सरीधन लागो।
तो राब-दई मन जावा लागो, कुँखे पुत्र सरीधन लागो।
थूँकतड़ा री साद गोरी ने राण-दई री साद गोरी ने।
तो सासूजी साद पुरावा लागा। कुँखे....
तीसरो मास गोरीधन लागो, चौथो मास गोरीधन लावो।
तो लिम्बूड़ा मन जावा लागो,
तो बोर-खटई मन जावा लागो। कुँखे...
लिम्बूड़ा री साद गोरी ने, बोर खटई री साद गोरी ने।
तो जेठ साद तो देवर साद पुरावा लागा। कुँखे....
पाँचवों मास गोरीधन लागो, छटो मास गोरीधन लागो।
तो आँबा-जाँबू मन जावा लागो। कुँखे...
आँबा-जाँबू री साद गोरी ने नणदल ने नणदोई,
साद पुरावा लागा। कुँखे...
सातवो मास गोरीधन लागो, आठवों माँस गोरीधन लागो।
तो धेवरिया मन अगरनी मन जावा लागो। कुँखे...
अगरनी री साद गोरी ने, घेवरिया री साद गोरी ने।
तो सुसराजी साद पुरावा लागा,
तो सायब साद पुरावा लागा कुँखे...
आठवों मास गोरीधन लागो, नौमो मास गोरीधन लागो
तो हालरिया मन जावा लागो। कुँखे...
हालरिया री साद भले री, तो बेमाता साद पुरावा लागा।

इसी प्रकार एक और गीत जिसमें सभी के मन में उमंग है। अत: ससुरजी, जेठजी, पतिदेव इत्यादि सभी अपनी कुलवधू की सहज इच्छाओं को पूरा करने के लिए तत्पर है-

ऊबा-ऊबा ससुराजी अरज करे,
ववड़ काँई-काँई साद पुरावाँजी।
आँबा नी भावे म्हाने जाँबू नी भावे म्हने,
सुवा पंखी बोर मँगई दीजो।
ऊबा-ऊबा जेठजी अरज करे,
ओ काँई-काँई साद पुरावाँजी।
आँबा नी भावे...
सुवा पंखी...
ऊबा-ऊबा देवरजी अरज करे,
ओ भावी काँई-काँई साद पुरावाँजी।
आँबा नी भावे... सुवा पंखी...
ऊबा-ऊबा सायबजी पूछण लागा,
गोरी ओ काँई-काँई साद पुरावाँजी।
आँबा नी भावे... सुवा पंखी...
सुणो मारुणी म्हारा, म्हारी माता बई ने कीजो,
म्हारी भाबी सा ने कीजो,
छोटी देराणी ने कीजो, थाने सुवापंखी बोर मँगई देगा।
पिया विनती सुनोजी, म्हे तो अरज कराँजी,
म्हने सुवापंखी बोर मँगई दीजो।
म्हारी सासूजी रा छाने, म्हारी बाईजी रा छाने,
छोटा देवरिया रा हाते, थारा दुपट्टा रा पल्ले।
म्हारे सुवापंखी बोर मँगई दीजो।

सातवां मास लगने पर कुलवधू की इच्छा है कि अगरनी का कार्यक्रम सम्पन्न हो जाए तो मैं अपने मायके जाऊँ। अत: ऐसे शुभ अवसर पर वह कहती है- हे स्वामी! मेरे लिए भिन्न-भिन्न आभूषण बनावाईये। जैसे माथे के लिए भँवर, तो कानों के लिए झाले आदि-

माथा ने भँवर घड़ावजो हो केसरिया,
म्हारे टीको रतन जड़ाव।
अगरनी की छब लागी हो केसरिया।
छब लागी बड़ी मोज लागी हो केसरिया।
म्हारो हरभ्यो सोई परवार
अगरनी की छब लागी हो केसरिया।
काना में झालज पड़ावजो हो केसरिया,
म्हारे झूमणा रतन जड़ाव।
अगरनी की छब लागी हो केसरिया
छब लागी, बड़ी मोज लागी हो केसरिया।
म्हारो हरभ्यो सोई परवार

हिवड़ा ने हंस घड़ावजो हो केसरिया,
म्हारे माला पाट पोवाव।
अगरनी की छब लागी हो केसरिया।
हाथा ने चूड़ला पेराव हो केसरिया,
म्हारे कड़ा में रतन जड़ाव।
अगरनी की छब लागी हो केसरिया।
छब लागी बड़ी मोज लागी हो केसरिया,
म्हारो हरभ्यो सोई परवार।
पावाँ ने आयक घड़ावजो हो केसरिया,
म्हारे बिछिया में रतन जड़ाव।
अगरनी की छब लागी हो केसरिया।

अगरनी के पश्चात् शुभ अवसर आता है प्रसूति का, जिसका सभी को बेसब्री से इन्तजार रहता है। इस गीत में कुलवधू अपने पति को सन्देश भेजती है कि जाकर कहना उन पगड़ी पहनने वाले को, उसमें लगे पेचों को निहारने वाले को। वे दाई को इस घर में तुरंत बुलाकर लाएँ–

जाइ ने कीजो उना चीरा का पेरैया के
पेंचा का निरखैया के, दाई ने बेग बुलाव इना घर में
रंग उड़े रे गुलाल, इना घर में।
पाणी पड़े रे तुसार, इना घर में।
आप तो जच्चा रानी, लाल लई सूता,
गोपाल लई सूता, हमने लगाई दौड़ा-दौड़ इना घर..
रंग उड़े रे गुलाल, इना घर में।
पाणी पड़े रे तुसार, इना घर में।
जाई ने कीजो उनी कण्ठी का पेरैया के
चेना का निरखैया के सासूजी ने बेग बुलाव,
इना घर में।
रंग उड़े रे गुलाल, इना घर में।
पाणी पड़े रे तुसार, इना घर में।
आप तो जच्चा रानी लाल लई सूता
गोपाल लई सूता, हमने लगाई दौड़ा-दौड़, इना घर में
रंग उड़े रे गुलाल, इना घर में।
पाणी पड़े तुसार, इना घर में।

प्रसूति के पश्चात् परिवार के लोग उससे आग्रह करते हैं कि तुम्हारी सासूजी ने, जेठजी ने पीपलामूल तैयार की है, उसे पी लो। जिससे बालक के लिए पर्याप्त दूध हो और तुम सुख भरी नींद सो सको–

बाई वो हालरिया ने आबे अरवो थान,
बऊ तमे सुख आवे नींदड़ी।
बाई वो सासुजी थारा घोट-घुटई ने लाया।
सुसराजी ऊबा बीनवे।
बई वो ववड़ म्हारी मोटी घर की धीय।
तम पियो वो सुवागण पीपलो। बाई वो हालरिया....
बई वो जेठाणी थारा घोट-घुटई ने लाया।
जेठजी वो ऊबा बीनवे।
बई वो ववड़ म्हारी मोटा घर की धीय।
तम पियो वो सुवागण पीपलो।
सुसराजी दाजे म्हारा चन्द्रबदन दोई होंट।
पिपलामूल लागे चरपरो।
जेठजी दाजे म्हारा चन्द्रबदन दोई होंट।
पिपलामूल लागे चरपरो। बाई वो हालरिया....
अतरा सुणता आया गोरी रा भरतार।
थें पियो नी सुवागण पीपलो।
पियूजी दाजे म्हारा चन्द्रबदन दोई होंट।
पिपलामूल लागे चरपरो।
गोरी लावाँ-लावाँ थारा पर लोड़ी सोक,
जी थें नी पियो पीपलो।
राँ जद उदियापुर की सिलाड़ी मँगाव।
थें घट-घट छोटी लाव।
म्हे गट-गट पीयाँ पीपलो।

जब किसी स्त्री की गोद में बालक खेले अर्थात् उसे मातृत्व सुख प्राप्त हो, इससे बढ़कर सुख और क्या हो सकता है? अतः प्रसूता अपने प्रियतम से आग्रह कर रही है कि आज मैं बहुत प्रसन्न हूँ। ऐसे अवसर पर सर्वप्रथम बधाई अपनी दाई को देना चाहती हूँ, क्योंकि उसी ने सर्वप्रथम बालक को गोदी में झेला है। निम्नांकित गीत में देखा जा सकता है, बधाई किन-किन को मिल रही है–

पेलो बधावो म्हारी दाई ने दीजो,
आवतो सो दीनड़ झेलियो।
दूसरो बधावो म्हारी सासूजी ने दीजो,

कँवर पटोली में झेलियो।
जुग-जुग जीवजो दाई हमारा,
आवतो सो दीनड़ झेलियो।
जुग-जुग जीवजो सासु हमारा,
कँवर पटोली में झेलियो।
अम्बे हो खम्बे बके हो दीवला,
जाने चतुरभुज जनमिया।
संसार रो सुख आज देखियो,
खोळ दीनड़ियो धवाविया।
तीसरो बधावो म्हारी जेठानी ने दीजो,
चरवे हो फुँको चड़ाविया।
चोथो बधावो म्हारी देराणी ने दीजो,
पड़दा में पलंग बिछाविया।
जुग-जुग जीवजो जेठाणी हमारी,
चरवे हो फुँको चड़ाविया।
जुग-जुग जीवजो देराणी हमारी,
पड़दा में पलंग बिछाविया।
अम्बे हो खम्बे बके हो दीवला,
जाने चतुरभुज जनमिया।
संसार रो सुख आज देख्यो,
खोळे दीनड़ियो धवावियो।
पाँचवों बधावो म्हारा जोसी ने दीजो,
नाना रो नाम धरावसी।
छठो बधावो म्हारा ढोली ने दीजो,
दन दस ढोल धोराविया।
जुग-जुग जीयो ढोली हमारा,
नाना को नाम धरावसी।
जुग-जुग जीयो ढोली हमारा,
दन दस ढोल धोराविया।
अम्बे हो खम्बे बके हो दीवला,
जाणे चतुरभुज जनमिया।
संसार रो सुख आज देखियो,
खोके हालरियो धवावसी।

शिशु जन्म में सर्वप्रथम दाई का सहयोग एवं उसके पश्चात् परिजनों का होता है। शायद इसीलिए उस दाई के हाथ में सबसे पहले अंजली भर मोती उपहार में देने की बात कही गई है, क्योंकि उसके सहयोग से शिशु अर्थात् उनके कुल दीपक का जन्म भली-भाँति हो सका है-

पस भर मोती में संगचीया,
पस भर मोती में संगचीया।
दीजो रे उनी ढाई रे हात,
समचे-समचे चतुरभुज जनमिया।
दीजो रे म्हारा सासु रे हात,
समचे-समचे चतरभुज जनमिया।
दाई ए आवतो सो दीनड़ झेल,
समचे-समचे चतुरभुज जनमिया।
पस भर मोती में संगचीया,
पस भर मोती में संगचीया।
सासु ए कँवर पटोल्या में झेला,
समचे-समच चतुरभुज जनमिया।
पस भर मोती में संगचीया,
पस भर मोती में संगचीया।
दीजो रे ऊनी जेठानी रे हात,
म्हारी देरानी रे हात।
समचे-समचे चतुरभुज जनमिया।

घर में हर्षोल्लास का वातावरण बन जाता है। शिशु एवं परिवार से दाई का भावनात्मक सम्बन्ध हो जाता है। अतः दाई मन्दिरों में तोरण तथा स्वर्ण कलश चढ़ाने की बात कहने के साथ-साथ कीमती कंगन और साड़ी प्राप्त करने का आग्रह करती है-

हरि ना आँगण ऊबी दाई,
राजा दो नी हमने बधाई।
मन्दिर-मन्दिर तोरण बँधाड़ो,
सोना ना कलश मँगाड़ो।
राजा दो नी हमने बधाई,
हरि ना आँगन ऊबी दाई।
राजा दो नी हमने बधाई,
सवा करोड़ ना कंगन घड़ाओ।
दाई ने हात पेराओ,
राजा दो नी हमने बधाई।
हरि ना आँगण ऊबी दाई,
राजा दो नी हमने बधाई।
नतड़ी जो पेरी हतनी पे बेठा,
साड़ी ओड़ी सवाई।

राजा दो नी हमने बधाई,
हरि ना आँगण ऊबी दाई,
राजा दो नी हमने बधाई।

प्रसूति के दस दिन पश्चात् शुभ मुहूर्त देखकर 'सूरज पूजा' करवाई जाती है। अधोलिखित गीत में प्रसूता अपने पति से आभूषण बनवाने का आग्रह करते हुए कहती है कि ये बनवाओ तभी मैं सूरज पूजा करूँगी-

म्हारा माथा ने भँम्मर घड़ाओ केसरिया राज।
हाँ हो पातलिया हो राज।
जदी हम सूरज जुवाराँ जी।
म्हारा काना ने झालज घड़ाओ केसरिया हो राज।
हाँ हो पातलिया हो राज।
जदी हम सूरज जुवाराँ जी।
जाया हो जाया में तो कुकाजी जाया हो राज।
दीनड़ जाई हो राज, पिया म्हारी साद नी पूरी राज,
म्हारा हिवड़ा ने हंसज घड़ाओ केसरिया हो राज।
हाँ हो पातलिया हो राज।
जदी हम सूरज जुवाराँ जी।
जाया हो जाया में तो बेटाजी जाया हो राज।
जाया हो जाया में तो कुँवर जाया हो राज।
कन्या बाई जाई हो राज, पिया म्हारी साद नी पूरी राज
म्हारा हाथा सारू चूड़ला घड़ाओ केसरिया हो राज।
हाँ हो पातालिया हो राज।
जदी हम सूरज जुवाराँ जी।
बेटी जाई हो राज, पिया म्हारी साद नी पूरी राज।
हाँ हो पातलिया हो राज।
जही हम सूरज जुवाराँ जी।
म्हारा पावाँ ने आयक घड़ाओ केसरिया राज।
हाँ हो पातलिया हो राज।
जदी हम सूरज जुवाराँ जी।
म्हारा अंग ने साळू मँगाओ हो राज।
हाँ हो पातलिया हो राज।
जदी हम सूरज जुवाराँ जी।

सूरज पूजा के दिन घुगरी और लापसी (मालवी व्यंजन) का भोग लगाया जाता है। अपने निकट सम्बन्धियों को घुंगरी बँटवाई जाती है। ऐसे शुभ अवसर पर जब नाईन प्रसूता की ननद के घर घुगरी दे आती है, तब उसके प्रति जो मन के भाव हैं, वह व्यक्त हुए हैं, इस गीत में-

बाई वो ताँबा के री, तोलड़ी मँगाड़ो,
म्हारे रूपा वरण घुंगरी।
बाई वो तेड़ो-तेड़ो नावीड़ा री नार,
म्हारी नगर बँटावो घुंगरी।
बाई वो दीजो-दीजो ऐले-पेले पार,
नणदल मत दीजो घुंगरी।
बाई वो नावीड़ा रो असल गँवार,
नणदल घर दई आयो घुंगरी।
बाई वो पियुजी से लड़िया आखी रात,
म्हारी पाछी लई दो घुंगरी।
बाई वो भावज थारी ओछा घर की दीय,
वा पाछी माँगे घुंगरी।
बाई वो आदी थारा बालुड़ो समझाव,
म्हाने आदी दई दो घुंगरी।
बीरा रे बालूड़ा ने लाडू दई बिलयाव,
थारी सगळी लई जा घुंगरी।
बीरा रे म्हारे आँगण गंगा-जमना।
हूँ नत की राँदूँ घुंगरी।
बीरा रे जो हूँ होती नरधणिया री नार,
थारी बाँधी लाती घुंगरी।
बीरा रे आयो-आयो राखी रो तेवार,
थारे राखी फूणज बाँध सी।
बाई वो म्हारे हे या राठोड़ा री रीत,
म्हारी साळी राखी बाँधसी।
बाई वो आयो भाणेजा रो ब्याव,
थारे मामेरो कूण लावसी।
बीरा रे म्हारे हे यो मुँडे बोल्यो वीर,
म्हारे मामेरो लुई आवसी।
बीरा रे तम तो बीजो समदरिया रा हंस,
म्हारी भावज समदर डेंडकी।
बीरा रे तम तो बीजो सूर्या गाय रा साँड,
म्हारी भावज कटकणी कुतरी।

सूरज पूजा के पश्चात् सवा महीने में जलाशय पर जाकर पूजन करके वहाँ से एक कलश में जल भरकर लाया जाता है। उस अवसर पर यह गीत गाते हैं–

म्हारे आज जलवाय की रात हो रसिया।
लई दो वाला चूनड़ी।
रखड़ी में रतन जड़ाव।
म्हारा गला सारू माला घड़ाव,
बजट्टी में रतन जड़ाव।
म्हारे आज जलवाय की रात हो रसिया।
लई दो वाला चूनड़ी।
म्हारी बाँव सारू बाँवठिया घड़ाव,
बाजूबंद झदिया लगाव।
म्हारा हाथाँ ने चूड़ला चीराव,
सोयटी सो छन्द लगाव।
म्हारे आज जलवाय की रात हो रसिया।
लई दो बाला चूनड़ी।
म्हारा पाँव सारू बिछिया घड़ाव
अणवट रतन जड़ाव।
म्हारी एड्या सारू तोड़ा घड़ाव
साँकला रतन जड़ाव।
अंग सारू सालू रंगाव, अँगिया रतन जड़ाव।
म्हारे आज जलवाय की रात हो रसिया।
लई दो वाला चूनड़ी।

जन्म संस्कार सम्बन्धी एक और गीत जिसमें माँ अपने बालक के लिए आँगन में पालना बँधवाना चाहती है, जिससे आते–जाते दादाजी, काकाजी आदि झूला दे सकें–

नाना थारो पालणो बँधई दूँ पटसाल रे।
कुका थारो पालणो बँधई दूँ पटसाल रे।
आवतड़ा ने जावतड़ा थारा दादाजी झूला देसी रे।
आवतड़ा ने जावतड़ा थारा काकाजी झूला देसी रे।
तू हुल रे नाना दुलरे, तू दूध बतासा जीम रे।
थारो सोना को साँकलियो, थारे रूपा को मादलियो।
थारे रेसम लाम्बी डोर, लाल म्हारे आँगण नाचे मोर।

देवी–देवताओं की कृपा से ही घर में आनन्द–उल्लास का अवसर प्राप्त होता है। इसलिए कृतज्ञ जन उन्हें धन्यवाद देना, उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना, कैसे भूल सकते हैं? तभी तो वे कहते हैं– हे माता! भेरुजी! सती माता! पूर्वज महाराज! देवमहाराज! आपकी कृपा से हमारे यहाँ नन्हा बालक आया है, अतः अनुरोध है कि आप सूर्यवंशी गाय का दूध ग्रहण करें–

माता तमारा दिया बाला पूत,
के दूद पियो सुरिया गाय को।
सती माता तमारा दिया बाला पूत,
के दूद पियो सुरिया गाय को।
पूरब ज तमारा दिया बाला पूत,
के दूद पियो सुरिया गाय को।
भेरुजी तमारा दिया बाला पूत,
के दूद पियो सुरिया गाय को।
देव म्हाराज तमारा दिया बाला पूत,
के दूद पियो सुरिया गाय को।

इस प्रकार जन्म संस्कार के अवसर पर नारी कण्ठों के माध्यम से अनेकानेक लोकगीत सुने जा सकते हैं, जो आनन्द की अनुभूति कराने के साथ–साथ यहाँ के सांस्कृतिक परिवेश को भी अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं।

जन्मे राम आनन्द भयो मन में

रमेश चन्द्र तोमर 'निमाड़ी'

लोक गीत लोक कंठों की धरोहर है। एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ, एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचने वाले लोकगीत, शब्द और स्वर के दोहराव से संचारित होते हैं। दोहराव लोकगीतों का दोष नहीं गुण हैं- उनकी शक्ति है, जिसके कारण नयी पीढ़ी सरलता से अपनी स्मृति से गीतों और उनके अर्थ ग्रहण करने में सक्षम होती है।

लोक गीतों में व्यक्तिगत अभिव्यक्ति का कोई स्थान नहीं होता। लोकगीतों को बनने में एक या दो वर्ष पर्याप्त नहीं होते, अनुभव से गुजरते हुए उसे सौ से भी अधिक वर्ष लग सकते हैं। एक लोकगीत पीढ़ियों से खरे अनुभव से तपकर बनता है। तभी तो उनकी मार्मिकता, काव्यात्मकता, साहित्यिकता अधिक सरल-स्पष्ट और व्यापक होती है। लोक में गीत के माध्यम से दृश्यता की बात कहने की परिपाटी सबसे अधिक प्रिय और सम्प्रेषणीय रही है। इसलिये गद्य की बजाय पद्य को जनसमुदाय ने हर समय अपनाया है। लोकगीत संस्कृति के संवाहक हैं। लोकगीतों में संस्कृति के समस्त संवेदी संस्तर मौजूद होते हैं। लोक वाचिक परम्परा में पर्व और संस्कार से सम्बन्धित गीत जितने अधिक मात्रा और व्यापक रूप में मिलते हैं। उतने कोई भी अन्य गीत नहीं गाये जाते हैं। लोकगीतों में हर्ष-उल्लास, सुख-दुःख, विरह-वेदना, हास्य- परिहास, ईर्ष्या व आचार-विचार, रीति-रिवाज, परम्परा, प्रथा, रूढ़ियाँ, धर्म-कर्म, आध्यात्म और अनुष्ठान, अतीत और वर्तमान के सारे संस्कार में सहज रूप से मिलते हैं। निमाड़ी लोकगीत विन्ध्य और सतपुड़ा के मध्य बहती नर्मदा और तपती काली मिट्टी के कारण खरी बोली के गीत कहे जाते हैं। निमाड़ी लोकगीत गरम जलवायु के ऊष्मगीत हैं। निमाड़ी के अनाम लोकगीतकारों ने अपने जीवन के समस्त तेजस तत्त्वों को समाहित कर दिया हैं, जिनमें लोक चेतना के सारे मंत्र और मिथक अक्षुण्य हैं। लोकगीत, लोक काव्य की रचना है। यही काव्य रचना आगे चलकर लोक का कण्ठहार बन गई।

निमाड़ी लोकगीतों में राजा दशरथ, रानी कौशल्या, नन्द-यशोदा, वासुदेव-देवकी, शंकर-पार्वती और माता-अंजनी के साथ बहन सुभद्रा भी मानव रूप धारण करके इन गीतों में प्रतिष्ठित हुई हैं। राजा दशरथ के यहाँ कौशल्या ने राम जैसे पुत्र को जन्म दिया। वासुदेव-देवकी ने कृष्ण जैसे पुत्र को जन्म दिया। शंकर-पार्वती ने गणेश जी को जन्म दिया। माता अंजनी ने बलशाली हनुमान को जन्म दिया। ऐसा हमारा बालक भी राम, कृष्ण, गणेश और हनुमान जी जैसा हो। प्रत्येक दम्पत्ति की यही आशा होती है। प्रत्येक जन अपने आपको वासुदेव, दशरथ, नन्द बाबा, शिव के समान महसूस करता है। वही माता पुत्र को जन्म देकर अपने आपको रानी कौशल्या, देवकी, यशोदा और माता पार्वती के समकक्ष मानती है।

शास्त्रों और पुराणों में जन्म के पूर्व (गर्भाधान) से लगाकर मरणोपरान्त तक के सोलह संस्कार बताये गये हैं। इनके नाम निम्नानुसार हैं- गर्भाधान, पुंसवन, सीमान्त, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्न-प्राशन, तपन, विद्यारम्भ, कर्ण छेदन, उपनयन, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन, विवाह और अन्तिम संस्कार (मृत्यु संस्कार)।

किसी व्यक्ति को सुसंस्कृत बनाने के लिये शिक्षा, सत्संग, वातावरण आदि अनेक बातों की आवश्यकता होती है। संस्कार ही मनुष्य को सुसंस्कृत बनाते हैं। जीवन में आगे बढ़ने में सहायक होते हैं। मनुष्य को गुण, कर्म, स्वभाव की दृष्टि से उच्च स्तर की ओर उठाने में इन संस्कारों से सहायता मिलती है। सोलह संस्कारों में से कुछ महत्त्वपूर्ण संस्कार समारोहपूर्वक किये जाते हैं। कुछ यूँ ही छोड़ दिये जाते हैं। हम यहाँ जन्म संस्कार से सम्बन्धित निमाड़ी संस्कारों और गीतों की व्याख्या करेंगे।

गर्भाधान संस्कार

शिशु के जन्म के पूर्व एक संस्कार होता है। इसे शास्त्रों में पुंसवन संस्कार कहा गया है। प्रथम बार गर्भाधान का अर्थ है- स्त्री के 'माँ' बनने की प्रक्रिया और घर में एक नवागन्तुक शिशु का आना। गर्भाधान एक पवित्र संस्कार है, जिसके माध्यम से सन्तान की प्राप्ति होती है। शास्त्र में कहा गया है-

गर्भस्य आधान वीर्य स्थापना यस्मिन या कर्मणातत गर्भाधान।

गर्भ में वीर्य की स्थापना ही गर्भाधान संस्कार है। इस संस्कार का जिक्र एक गीत में है, जिसमें धरती और कोख दोनों की तुलना की गई है-

श्रावण वरस्या भादव वरस्या,
वरसण लाग्या मेऊला,
केशरीया सायब देओ
नारायण ललना।

सावन में रिमझिम पानी बरसा। भांदव में पानी की झड़ियाँ लगीं। हर तरफ पानी बरसने लगा है। हे केसरिया सायब! धरती भी ऋतुमती हो गई है। हे स्वामी! मुझे एक पुत्र की कामना है। धरती पर हरियाली छा गई और पत्नी की कोख भी हरी हो गई है।

गर्भधारण की प्रथम खबर गर्भधारण करने वाली स्त्री को हो जाती है। उसके शरीर में असामान्य बदलाव आने लगता है। बार-बार चक्कर आना, जी मचलाना, उल्टी जैसा जी करना और उल्टियाँ होने पर घर में पता चल जाता है कि नया शिशु आने वाला है। खबर सारे घर में फैल जाती है। रिश्तेदारों को, गली मोहल्ले वालों को खबर सुनकर प्रसन्नता होती है। घर के लोग बहू का विशेष ध्यान रखते हैं। खान-पान, उठने-बैठने का, उसकी मनपसन्द वस्तुएँ उपलब्ध कराने का पूरा ध्यान रखा जाता है। ऐसे समय में इमली, नीम्बू, कच्चा आम आदि खट्टी चीजें खाने का मन गर्भवती का होता है। देवर और ननद दोनों भाभी की फरमाईश पूर्ण करते हैं।

प्रकृति का चक्र चलता रहता है। सातवाँ मास लगने वाला होता है। बहू की गोद भरी जाती है। ब्राह्मण को बुलाकर शुभ मुहूर्त पूछा जाता है। ब्राह्मण के बताने पर बहू के मायके खबर भेजी जाती है। इस प्रसंग को इस गीत के माध्यम से उकेरा गया है।

कृष्ण जी मन हरख घणेरी
रूक्मणी की अगरनी।
तेड़ो-तेड़ो ब्राह्मण रूक्मणी
का मोरीत पुछाड़ो जी।।
सात सोमवारिया मोरीत पुछाड़या,

ये मोरीत मन माया जी।
लिखी पत्रिका कुदनपुर भेजो
रूक्मणी की अगरनी।।
ढेल बठी समधण बोल्या,
समधण कहाँ सी आया जी।
कई हम अजुध्या सी आया समछत
रूक्मणी की अगरनी।
पाँच पदारथ छेड़ बाँध्या
रूक्मणी वणीण सिधार्‌यो।
कृष्ण जी सारू हलमल वागो,
अरू जरी को फेरो जी
रूक्मणी सारू नवरंग चून्दड़ी,
लीला दरियाव की चोली।
पेरी ओड़ी नऽ धन पाठ पर बट्‌या
सुभद्रा बाई मसला सा बोल्या
जो म्हारी भावज बेटो जलमाया
चून्दड़ हम लेवाँ जी
जो म्हारी नणद बेटो जलमाया
चून्दड़ हम देवाँ जी।।

कृष्ण जी के मन में अपार खुशी है। उनका मन प्रफुल्लित और आनंदित है। रानी रूक्मिणी की गोद भरी जायेगी। पूरा महल खुश है। श्रीकृष्ण जी ने ब्राह्मण को बुलाया और पूछा कि पंचांग देखकर बताइये कि कौन-सा दिन शुभ होगा? जब रूक्मिणी की गोद भरी जाय। तब ब्राह्मण ने पोथी देखकर बताया कि सोमवार के दिन का मुहूर्त ठीक है। सभी को सोमवार का मुहूर्त पसन्द आया।

श्रीकृष्ण जी ने पत्रिका लिखी और अपनी ससुराल कुन्दनपुर भेजी। पत्रिका लेकर ब्राह्मण कुन्दनपुर पहुँचा। दरवाजे पर बैठी समधन ने आदर सहित ब्राह्मण को घर में बुलाया, आसन पर बिठाया और आदर सत्कार करने के बाद पूछा- तुम कहाँ से आये हो? और क्या काम है? तब ब्राह्मण ने कहा कि समधन जी हम अयोध्या जैसो पवित्र नगर द्वारिका से आये हैं। हमें श्री कृष्ण जी ने भेजा है। आपकी पुत्री रूक्मिणी की गोद भरने का शुभ मुहूर्त सोमवार का है। इस शुभ अवसर पर आप सभी को आना है। माता का मन आनन्द से भर उठा। उन्होंने अपने बेटे रूक्मांगद से कहा- रूक्मांगद ने बाजार जाकर पाँच प्रकार के मेवे तथा श्रीकृष्ण जी के लिये सुन्दर जामा बनवाया और रेशमी जरी का साफा लिया। अपनी बहन रूक्मिणी के लिये नवरंग चुन्दड़ी ली तथा समुद्र के समान नीले पानी के रंग की चोली सिलवाई। वह सभी सामान लेकर घर आया। सभी परिवार तब तैयार होकर द्वारिका पहुँचा।

शुभ मुहूर्त में रूक्मिणी जी ने स्नान किया, कपड़े पहने और स्त्रियों ने उन्हें पाट पर बिठाया, ननद सुभद्रा ने अपनी भाभी के ललाट पर कुमकुम लगाया और गोद भरी। तब उसने आसन पर बैठी अपनी भाभी से व्यंग्य किया और कहा- हे भाभी! जब तुम पुत्र को जन्म दोगी तो यह नवरंग चुन्दड़ी मैं नेग में ले लूँगी। भाभी ने खुशी-खुशी अपनी ननद से कहा- हे प्यारी ननद रानी! यदि मैं पुत्ररत्न को जन्म दूँगी तो यही नवरंग चुन्दड़ी मैं तुम्हे नेग में दे दूँगी।

परिवार जन बेटी के यहाँ भेंट सामग्री लेकर पहुँच जाते हैं। मुहूर्त के शुभदिन बहू को स्नान करवाया जाता है। सिर धोया जाता है और बाल खुले ही छोड़ दिये जाते हैं। फिर नये वस्त्र, गहने पहनाये जाते हैं। नाक में नथ अवश्य ही पहनाई जाती है। यह निमाड़ की एक प्रथा है। हर शुभ कार्य होता है जिसमें नथ से मुख-मंडल की शोभा द्वि-गुणित हो जाती है। साथ ही नथ सम्पूर्ण सोलह शृँगारों को पूर्ण करती है। इसके बाद गाँव में बुलावा दिया जाता है। सुहागन बहन-बेटियाँ जमीन को शुद्ध करके दो स्थानों पर स्वस्तिक बनाती हैं। एक स्वस्तिक पर ज्वार या गेहूँ की ढेरी लगाकर उस पर ताम्बे का मांगलिक कलश शुद्ध जल से भरकर उसमें आम के पत्ते और नारियल रखती हैं। साथ ही पूजा की थाली में गणेशजी के साथ कुमकुम-चावल और अन्य पूजा सामग्री के साथ दीप प्रज्ज्वलित करके रखती हैं। दूसरे स्वस्तिक पर पाट बिछाया जाता है। फिर शुभ मुहूर्त होने पर बहू को लाया जाता है। तब तक गाँव की महिलाएँ आकर बिछाये गये पाट के आसपास बैठ जाती हैं। ननद रानी हाथ में चावल के दाने लेकर अपनी भाभी का हाथ पकड़कर पाट पर बिठाती हैं और चावल के दाने वहीं छोड़ देती हैं। फिर जेठानी, ननद या अन्य महिला जिसको पहला पुत्र हुआ हो वह महिला बहू की गोद भरने आगे आती है।

बहू के सामने रखे कलश और गणेश जी की पूजा करने

के बाद बहू को कुमकुम और चावल से बधाती है। फिर बहू के आँचल में पाँच आंजली गेहूँ, बिजौरा, सूखा नारियल और एक रूपया तथा पाँच प्रकार के सूखे मेवे, काजू, बादाम, पाँच प्रकार की मिठाई और पाँच प्रकार के फल रखे जाते हैं। बहू का मुँह मीठा कराया जाता है। मिठाई का टुकड़ा खिलाकर फिर चार सुहागन स्त्रियाँ उठकर बहू को बधाती हैं। नेग स्वरूप बहू की गोद में मिठाई, फल, ब्लाउज कपड़े या अन्य जो भी भेंट सामग्री देती हैं। गाँव की आई प्रत्येक महिला बहू की गोद भरने के लिये फल, मिठाई या अन्य सामग्री लाती हैं। एक के बाद एक उठकर बहू को नेग देती हैं।

गाँव की जो महिलाएँ बहू के आसपास आकर बैठती हैं। वे खोला भरने, अगरनी या गोद भरने का गीत गाती हैं।

चादर लेवो भाई चादर लेवो
चादर लई म्हारी बहू कऽ देवो
बहू म्हारी वंश वदाड़से।।
गोरा-गोरा अंग पर सोइये चादर।
पुत्र जन्मी लऽ बहू करसे आदर।।
बहू म्हारी वंश वदाड़से।।
गजरा लेवो भाई गजरा लेवा।
गजरा लई म्हारी बहू कऽ देवो।।
पुत्र जन्मी तऽ बहू करसे मुजरा।
बहू म्हारी वंश वदाड़से।।
केला लेवो भाई केला लेवो
केला लई म्हारी बहू कऽ देवो
गोरा-गोरा मुख मऽ सोइये केला।
पुत्र जन्मी नऽ बहू करसे मेला
ववू म्हारी वंश वदाड़से।।
अनवट लेवो भाई अनवट लेवो
अनवट लई म्हारी बहू कऽ देवो
गोरा-गोरा पाँव पर सोहे अनवरट
पुत्र जन्मी नऽ ववू निसर्‌या पनघट
बहू म्हारी वंश वदाड़से।।
बेसर लेवा भाई बेसर लेवो
बेसर लई म्हारी ववू कऽ देवो
गोरा गोरा मुख पर सोइये बेसर।
पुत्र जन्मी नऽ बहू करसे मवसर।।
बहू म्हारी वंश वदाड़से।।

चादर लीजिये, चादर लीजिये। चादर लेकर मेरी बहू को दीजिये। बहू मेरी वंश वृद्धि का प्रतीक है। उसके गोरे-गोरे अंग पर यह चादर खूब खिलेगी। चादर ओढ़कर बहू सबका आदर करेगी। सम्मान करेगी। चरण स्पर्श करेगी।

गजरे लीजिये, गजरे लीजिये। गजरे लेकर मेरी बहू को दीजिये। बहू के गोरे-गोरे हाथों पर गजरे शोभायमान होंगे। गजरे पहनकर बहू हम सबको अपना प्यारा सा मुख दिखाएगी। बहू मेरी वंश वृद्धि का प्रतीक है।

केले लीजिये, केले लीजिये। केले लेकर मेरी बहू को दीजिये। केले बहू को खिलाइये। केला खाने से मेरी बहू उज्ज्वल से पुत्र को जन्म देगी। पुत्र जन्म के बाद बहू अपने बच्चे के साथ मेला देखने जायेगी। यानी पुत्र जन्म की खुशी में पुनः एक बार मेरे घर में मेला जैसा आनन्द उत्सव होगा।

अनवट लो यानी बिछिये लीजिये। बिछिये लेकर मेरी बहू को पहना दीजिये। बहू के गोरे-गोरे पैरों में बिछिये बहुत सुन्दर लगेंगे। बिछिये पहनकर बहू पनघट पर जलदेवी का पूजन करने समारोह में जायेगी। बिछिये पहनकर बहू पनघट पर पानी भरने जायेगी। तब वह बहुत सुन्दर लगेगी।

नथनी लीजिये, नथनी लीजिये। नथ लेकर मेरी बहू को दीजिये। मेरी बहू की सुन्दर नाक में नथ अत्यधिक शोभायमान होगी। नथ पहनने से बहू का सुन्दर मुख मंडल खिल उठेगा। नथ पहनकर बहू विवाह जैसे मांगलिक कार्य को सम्पन्न करेगी। विवाह के शुभ अवसर पर निमाड़ में नथ पहनना अनिवार्य होता है। नथ सौभाग्य सूचक है। महिलायें खोला भरने या अगरनी का गीत गाती हैं, जो हिन्दी से अधिक प्रभावित है।

आओ री सुहागन नारी मंगल गाओ री
जनक दुलारी की गोद भराओ री
आज राम घर शुभ घड़ी आई
सोने का कलश सिया रानी से भराओ री
आओ री सुहागन नारी...
नयनों में कजरा मुख गर्व की क्रान्ति

रूप अनूप सिया पर छायो री
आओ री सुहागन नारी...
माथे पे बिन्दिया सिर पर सिन्दूर
चार सुहागन मिल मंगल गाओ री
आओ री सुहागन नारी...
माता कौशल्या बली-बली जाये
लाड़ली बहु मेरी हौले-हौले चालो री
आओ री सुहागन नारी मंगल गाओ री

आज की शुभ घड़ी में राजा राम पिता बनेंगे। इस शुभ घड़ी में सोने के कलश पर आम्र पल्लव और नारियल रखकर उसे सीताजी के सामने रखा जाता है। सीता जी की आँखों में काजल लगा है और मुख मंडल पर गर्वभरी लालिमा दिखाई देती है। उसका रूप अतुलनीय और अवर्णनीय दिखाई देता है। निश्चित रूप से सीता जी पर ऐसा रूप सौन्दर्य छाया होगा, जिसका वर्णन नहीं हो सकता है। सिर्फ कल्पना की जा सकती है। सीता जी के माथे पर माँग के बीचों-बीच सिन्दूर लगा है और उसके ऊपर अमूल्य सोने की बिन्दिया शोभायमान है। चार सुहागन स्त्रियों ने उनका मिलकर अनुपम श्रृंगार किया है। इस खुशी की घड़ी में कौशल्या जी वारी-वारी जाती हैं। अपनी लाड़ली बहू से कहती हैं- बहू अब जरा धीरे-धीरे चलना।

धरती, आकाश, कामधेनु, घोड़ी और बहू के माध्यम से प्रकृति का सुन्दर वर्णन इस बधावा गीत में किया गया है।

पयलो बधावो धरती न झेल्यो
धरती का जाया दाड़िम दाग।
नणद बाई सोना अँगूठी हीरो तमारो
दूसरो बधावो आकाश नऽ झेल्यो
आकाश का जाया चाँद सुरीज
नणद बाई सोन्ना अँगूठी हीरो तमारो
तीसरो बधावो गऊवा नऽ झेल्यो
गव्वा का जाया हालऽ हामऽ
नणद बाई सोन्ना अँगूठी हीरो तमारो
चौथी बधायो घोड़ी झेल्यो
घोड़ी का जया तेजी कवाया
नणद बाई सोन्ना अँगूठी हीरो तमारो
पाँचवो बधावो सुलोचना बहू नऽ झेल्यो
उनऽ जाया अमुक लाल
नणद बाई सोन्ना अँगूठी हीरो तमारो।।

पहली बार धरती ने ऋतुमती होकर गर्भधारण किया। धरती की कोख से प्रकृति का जन्म हुआ। हरी-हरी घास फल-फूल वनस्पति उत्पन्न हुई। नदी-झरनों का जन्म हुआ और दाड़िम (अनार) जैसा फल उत्पन्न हुआ। पहली बधाई माता धरती को दीजिये, जिसने हमें जीवनदान दिया है। हे ननद रानी! तुम्हारे भैया मुझे सोने की अँगूठी में जड़े हीरे की तरह प्रिय हैं।

दूसरी बार आकाश ने गर्भधारण किया और उसने सूर्य-चन्द्रमा को उत्पन्न किया। सूर्य ने प्रकाश फैलाकर दिन बनाया। सूर्य ने अन्धकार को दूर किया। पानी को वाष्प में बदल कर वर्षा करवाई। खेती की, फसलों को पकाया। सूर्य के अस्त होते ही चन्द्रमा ने अपनी धवल चाँदनी से तारों के समूह से रात्रि को सुन्दर बनाया। चाँदनी में कुमुदिनी खिलती है। चाँदनी रातें सभी को प्रसन्न करती हैं। दूसरी बधाई आकाश को दीजिये, जिसने हमें प्रकाश दिया। फसल पकाकर जीवनदान दिया। हे ननद रानी! सोने की अँगूठी में जड़े हुए हीरे के समान तुम्हारे भैया मुझे प्रिय लगते हैं।

तीसरी बार माता कामधेनु के सदृश्य गौमाता ने गर्भधारण किया और नन्दी जैसे वृषभ (बैल) को जन्म दिया। गाय का दूध मक्खन, घी सभी निरोगी होता है। गाय माता के गौमूत्र से औषधि बनती है। गाय के गोबर से घर-आँगन लीपे जाते हैं। गोबर से खेती के लिये खाद बनाया जाता है। बैल से ही कृषि का सम्पूर्ण कार्य होता है। अतः तीसरी बधाई गो-माता को दीजिये, जिसने हमें दूध, मक्खन, औषधि, खाद और बैल प्रदान किये। हे ननद रानी! तुम्हारे भैया मुझे सोने की अँगूठी में जड़े हीरे की तरह प्रिय लगते हैं।

चौथी बार घोड़ी ने गर्भधारण किया। घोड़ी ने 'उच्चश्रवा' जैसे अश्व को या घोड़े को जन्म दिया, जो रणक्षेत्र में गया और अपने सवार को विजय भी दिलाई। घोड़ा मनुष्य की सवारी के काम आया। वहीं घोड़ा राजमहल की शान-शौकत बना। हे ननद रानी! तुम्हारे भैया मुझे अतिप्रिय लगते हैं। जिस प्रकार सोने की

अँगूठी में जड़ा हीरा, उसी प्रकार तुम्हारे भाई मुझे प्रिय हैं। चौथी बधाई घोड़ी को दीजिये।

पाँचवी बार सुलोचना बहू ने गर्भधारण किया और निश्चित रूप से पुत्र को जन्म दिया। मेरी वंशवृद्धि की। ऐसी मेरी पाँचवी बधाई सुलोचना बहू को है। हे ननद रानी! मुझे तुम्हारे भाई बहुत ही प्रिय लगते हैं। उसी प्रकार जैसे सोने की अँगूठी है। उसमें तुम्हारे भाई हीरे की तरह जड़े हैं, जो मेरे हृदय में समाकर मुझे प्रिय लगने लगे हैं।

बधावा गीतों की झड़ी सी लग जाती है। यहाँ पर इनका संक्षिप्त उल्लेख ही किया गया है। बहुत से बधावा गीत निमाड़ी में मौजूद हैं। बधावा गाकर महिलाएँ शक्कर-बताशे बाँटने को कहती हैं। घर की जेठानी, बुआ या ननद शक्कर लेकर आती है। बाँटना चाहती हैं, तो महिलाएँ कहती हैं- 'पयल नाव कऽ' पहले पति का नाम उच्चारण करो। तब बतासे या शक्कर लेंगी। तब सास शक्कर की थाली लिये कहती है।

काँच की कटोरी मऽ अनार का दाणा
सासरा जी की गोद मऽ अमुक जी का स्याणा।।

ऐसे ही नामों का उच्चारण जेठानी, बुआ, ननद को अपने पति का नाम दोहे में लेकर करती हैं। शक्कर बाँटी जाती है। फिर महिलाएँ चली जाती हैं।

मायका लयणा हो तो बेटी मायके जायेगी अन्यथा मायका लयणा ना हो तो बेटी ससुराल में ही रहेगी। अर्थात् 'लयणा' शब्द का मतलब है- मैके में गोद भरकर गई लड़की को बच्चा होना। स्वस्थ रहा तो 'मायका लयणा' होता है, और मायके में गोद भरकर गई बेटी ने मरे हुए बच्चे को जन्म दिया या बच्चा मर गया तो 'मायका लयणा नहीं' कहलाता है। अर्थात् अशुभ माना जाता है। अत: बेटी को ससुराल में छोड़ दिया जाता है। मायका लयणा हो तो बेटी मायके जाती है। बहू को कुमकुम घोलकर कपाल पर 'मखट' लगाकर चावल लगाये जाते हैं। फिर उसके आँचल जो वस्तुओं से भरी होती है। गोद बाँध देते हैं। चावल के दाने हाथ में रखकर उसे उठाया जाता है और मन्दिर तक ढोल बाजे के साथ ले जाते हैं। 'मायका लयणा नहीं है', अत: बेटी को ससुराल में ही छोड़कर पारिवारिक जन भोजन करके घर लौट जाते हैं।

प्रकृति का चक्र चलता रहता है। नौ माह पूर्ण होते हैं। पत्नी (बहू) को प्रसव वेदना उठती है। प्रसव वेदना से पत्नी दोहरे धनुष बाण की तरह नम जाती है। कुशल दाई माँ को बुलाया जाता है। दाई माँ सभी पुरुषों को बाहर जाने को कहती है। घर बड़ा हुआ तो दाई माँ बहू को अलग कमरे में ले जाती है। घर छोटा हुआ तो परदे बाँधकर कमरे का रूप दिया जाता है। पति को पत्नी से विशेष प्रेम होता है। वह वहीं बैठा रहता है। पत्नी-पति से क्या कहती है? इस प्रसव पीड़ा गीत में देखिये-

पीड़ आवऽ ओ मारूणी दुणी नवी जाय
मारूंणी की पीड़ सायब दोयली।
घड़ी दो घड़ी सायबा बागा सिधारो
बाग मऽ फूल गुलाब का।।
तम हो बाग बगीचा तम न बणो फूल गुलाब।
पीड़ आवऽ न मारूणी हुणी नवी जाय।
मारूणी की पीड़ सायब दोयली।।
घड़ी दो घड़ी सायब पनघट सिधारो
पनघट पर पणिहारी नीत नवा।।
तम गोरी पनघट ओ गोरी तम पाणि हारी।
तम बणो हो पणिहारी नित नवा।।
पीड़ आवऽ न मारुणी दुणी नयी जाय।।
मारूणी की पीड़ सायब दोयली।।
घड़ी दो घड़ी सायब रसवई सिधारो
तम रसवई हो गोरी तम बणाओ नऽ भोजन नित नवा
पीड़ आवऽ न माझणी दुणी नवी जाय।
मारूणी की पीड़ सायब दोयली।।
घड़ी दो घड़ी सायब मयला सिधारो
गयला मऽ खेलो चवसर सार।।
तम ममता हो गोरी, म्हारी तम सार नऽ तम फाँसा।
तम खेलो न चवसर सार।।
पीड़ आवऽ न मारूणी दुणी नवी जाय।।
मारूणी की पीड़ सायब दोयली।।

पत्नी को प्रसव वेदना है। वह वेदना से तड़प रही है। कुछ देर के लिये प्रसव पीड़ा रुकती है। पति को चिन्तामग्न देखकर पत्नी कहती है- आप यहाँ से हट जाइये। मेरी चिन्ता छोड़िये।

प्रसव वेदना में मैं यूँ ही दोहरी हो रही हूँ। ऊपर से आप यहाँ खड़े हैं। मुझे लज्जा आ रही है। ठीक से प्रसव भी नहीं हो रहा है। प्रसव पीड़ा में मारूणी (पत्नी) धनुष की तरह दोहरी हो रही है। तेज प्रसव पीड़ा से गोरी बेहाल है।

पति-पत्नी की दशा देखकर चिन्तित है। वह वहीं बैठा है। तब पत्नी-पति से कहती है- हे स्वामी! आप यहाँ से कहीं घड़ी दो घड़ी के लिये बगीचे में घूम आओ। फूलों को देख आओ। बाग में सुन्दर गुलाब के फूल खिले हैं। उन्हें देखकर तुम्हारा मन बहल जायेगा। तब पति कहता है- तुम ही मेरी बाग-बगिया हो, तुम ही मेरे लिये प्रिय गुलाब का फूल हो। मैं तुम्हें ऐसी हालत में छोड़कर कहीं नहीं जा सकता।

तब पत्नी-पति से कहती है- हे स्वामी! आप घड़ी दो घड़ी के लिये पनघट पर चले जाइये। वहाँ अनेक नई-नई स्त्रियाँ पानी भरने आयेंगी। उन्हें देखकर तुम्हारा दिल बहल जायेगा। तब पति कहता है- मुझे कुछ नहीं देखना। जब तुम खुद कुएँ से पानी लाती थीं, तब कितनी सुन्दर लगती थीं। नित्यप्रति तुम्हारा नया रूप देखकर मेरे मन में, मेरी आँखों में तुम्हारा रूप समा गया है और किसी को देखने की इच्छा नहीं है। इस हालत में मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा।

तब पत्नी कहती है- चलो तुम कहीं नहीं जाते तो मत जाओ। पर रसोई में जाकर खाना खा लो। तब पति कहता है- जब तुम रसोई में नित्य प्रति खाना बनाती थीं, उस खाने का स्वाद कुछ और ही होता था। अब तक इतना अच्छा खाना खाया है। अब तो कुछ भी इच्छा नहीं है। तुम्हें इस हालत में मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा।

तब पत्नी कहती है- हे स्वामी! आप कहीं नहीं जाते तो मत जाइये। जाओ अपने दोस्तों में जाकर कम से कम चौपड़ ही खेल आओ, तो तुम्हारा मन बहल जायेगा। तब पति कहता है- मेरी बात सुनो, रात में मैंने तुम्हारे साथ जो चौपड़ की बाजियाँ खेलीं, उन बाजियों को मैं कैसे भूल सकता हूँ। अब चौपड़ खेलने की इच्छा नहीं है। मेरा मन कहीं भी नहीं जाने का हो रहा है। मेरा तो तुम्हीं सर्वस्व हो और इस हालत में मैं तुम्हें छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा। कहीं कुछ हो गया तो मेरा क्या होगा?

एक निमाड़ी कहावत है- 'दो जीव वालई बाई को एक पाँव सरग मऽ न एक पाँव नरक मऽ' अर्थात् गर्भवती महिला का एक पाँव स्वर्ग में है, अर्थात् प्रसव सकुशल हो गया बच्चा स्वच्छ पैदा हो गया, तो स्वर्ग के समान सुख और प्रसव बिगड़ गया तो महिला की मृत्यु भी हो सकती है या बच्चा मरा हुआ पैदा हुआ हो तो नर्क के समाान होता है। एक पाँव स्वर्ग में और एक पाँव नर्क में कितना सटीक उदाहरण है।

दाई माँ कुशलता से बच्चे को जन्म दिला देती है। नाला खनन स्वच्छ चाकू या ब्लेड से करती है। फिर शिशु को साफ कर उसकी जीभ पर शहद से 'ओम्' लिखती है। केसर और शहद के घोल को बच्चे की ताट पर लगाती है, ताकि बच्चे को सर्दी जुकाम न हो। सौर की ईड़ा-पीड़ा, अवेड़ और समेट कर दाई माँ गौशाला या कच्चे घर के फर्श में गड्ढ़ा करके गाड़ देती है। वहीं पर कुमकुम चावल से पूजा की जाती है। लोक श्रुति है- क्या तेरा नाला यहाँ गड़ा है। जहाँ नाला खनन होता है, उस स्थान से बच्चे को विशेष प्रेम होता है, वह जन्म-भूमि प्रेम है- दाई माँ बच्चे को ठीक से सुलाती है? बच्चे को बगल में लिटाती है। थाली बजाकर शुभ सूचना देती है। आपके घर पुत्र रत्न का जन्म हुआ है। लड़की होती तो सूपा बजाया जाता है।

पुत्र रत्न के उपलक्ष्य में दाई माँ को नेग दिया जाता है। फिर ढोल-बाजे बजवाये जाते हैं। पटाखे छोड़कर खुशी का इजहार किया जाता है। मिठाई बाँटी जाती है। गोत्र परिवार वालों के घर ढोली भेजकर शुभ की सूचना दी जाती है। ढोली गोत्र-परिवार के घरों में जाकर ढोल बजाता है। और नेग प्राप्त करता है। अब से 'विरदी' यानी सूतक हो गया। अब शुभ कार्य में, पूजा-पाठ में कोई गोत्र-परिवार वाले भाग नहीं ले सकते हैं। सूतक या विरदी समाप्त होने पर ही पूजा-पाठ और शुभ कार्य में भाग लिया जा सकता है।

यह तो हुई ससुराल में बहू के प्रसव होने की बात। एक ऐसा चित्र भी है। पति-पत्नी ने एक स्वप्न देखा था। हमारे घर पुत्र होगा तो खूब खुशियाँ मनायेंगे, मिठाई बाँटेंगे, ढोल बजवायेंगे, पटाखे छोड़ेंगे। पति-पत्नी को गर्भावस्था में छोड़कर नौकरी पर चला जाता है। समय पूर्ण होने पर पत्नी मायके में पुत्र रत्न को जन्म देती है पर उदास है, ये सारी खुशी उसे अच्छी नहीं लग रही

है। आज उसे अपने पति की याद आ रही है। आज उसके पति होते तो यह खुशी द्विगुणित होती, पर मजबूर है पति, नौकरी पेशा है।

देवकी न बालो कान्हो जलमियो
किको जलमियो।।
ये तो वासुदेव हो राजा वसऽ परदेश
सोयलो भल आदियो।।
देवकी नऽ लिख्या कागज मोक लिया,
चिठ्ठी मोकलिया,
घर आओ नऽ नणद बाई रा वीर
हुलरीया रा बाप,
ये तो हम कसा आवाँ सुन्दर रंग बावली,
ये तो राव जी हम कऽ आवा नी दे,
चिठ्ठी लिखवा नी दे।
सोयलो भल आवियो।।

देवकी के समान माता ने पुत्र को जन्म दिया है। पर वासुदेव यानी स्वामीजी के बिना सब सूना है। स्वामी परदेश में नौकरी करने गये हैं। देवकी माता के मन में उल्लास तो है, पर वह पति के बिना अधूरा है। जिस दिन, जिस घड़ी का उन दोनों को इन्तजार था, वह शुभ दिन और घड़ी आ गयी, पर पति घर में नहीं है। इस वक्त वे यहाँ होते तो कितना खुश होते। माता ने यह खुशखबरी देने, पति को बुलाने हेतु पत्र लिखा और राणा जी के देश भेज दिया। पत्र में लिखा- ननदी के वीर! जल्दी से घर आईये। आपके घर पुत्र हुआ है। जिस दिन की हम काफी समय से प्रतीक्षा कर रहे थे। वह शुभ दिन आ गया है। पुत्र का मुख देखने के लिये शीघ्र आ जाओ। जैसे ही स्वामी (वासुदेव) को चिठ्ठी मिलती है, वे मन ही मन संकुचित हैं। सोच में पड़ गये कि अपनी पत्नी की चिठ्ठी का क्या उत्तर दें? उन्होंने वापस चिठ्ठी लिखी। हे मेरी सुन्दर साँवली पत्नी! मैं कैसे आऊँ? आनन्द में डूबी पगली, इस खुशी के मौके पर मैंने क्या-क्या स्वप्न सजाये थे? सब धरे के धरे रह गये। मैं होता तो रंग-गुलाल होता, मिठाई बाँटता, ढोल बजवाता, क्या नहीं करता। सभी इच्छाएँ मन में रह गई। राजा जी मुझे चिठ्ठी तक नहीं लिखने देते! एक पल भी फुर्सत नहीं होती। इतना सारा काम है कि एक घड़ी चैन नहीं आये तो कैसे? राणा जी मुझे तनख्वाह भी नहीं देते हैं। काम होते ही दूसरे काम में उलझा देते हैं। काम पूरा होने के बाद आऊँगा। चिठ्ठी लिखने के बाद स्वामी हताश हो जाते हैं। मैंने किन घड़ियों में नौकरी की थी, जो छुट्टी तक नहीं मिलती। पुत्र जन्म की शुभ घड़ी को भी नहीं देख सकता? कैसी है नौकरी-पेशा लोगों की मजबूरी, मन की उमंग मन में धरी रह गई है।

बच्चे के जन्म के दूसरे दिन सुबह बहू के शरीर में ताकत बनी रहे कमजोर न हो, इसलिये सफेद मूसली, सोंठ, अजवाइन और अन्य औषधियों 'कयड़ा पानी' खिलाया-पिलाया जाता है। इसे हल्वे के रूप में बनाकर बहू को दिया जाता है, ताकि उसका शरीर स्वस्थ रहे।

पाँचवी पूजन का अनुष्ठान बच्चे के जन्म के पाँच दिन बाद किया जाता है। इस दिन कच्चे सूत को हल्दी से रंगकर पीला किया जाता है और उसके पाँच डोरे बनाये जाते हैं। लड़के के हाथ-पाँव में डोरे बाँधे जाते हैं। एक डोरा कमर में बाँधते हैं। लड़की हुई तो हाथ-पाँव में डोरा बाँधने के बाद एक डोरा लड़की के गले में भी बाँधते हैं। इस रस्म को 'पान दोर्‌या' रस्म कहते हैं। इस दिन पाँच सुहागन महिलाओं को भोजन पर आमंत्रित किया जाता है। रस्म को पूर्ण करने के बाद महिलाएँ गीत गाती हैं-

अनऽ सरवरीया गोरसड़ा सा घोल्या,
कई महिड़ो बिलोवता मांखण नित वयऽ जी।
कई अनऽ सरवरिया देवकी देवी न्हाया रे,
कुल ना बधावण कृष्ण जी जलमिया।
कई कृष्ण जलम्या-जलम्या वसुदेव घर दियो रे,
चरण छियो नऽ हो बाई सुभद्रा भतीजो तमारो।
अनऽ सरवारीया गौरसड़ा सा धोल्या रे,
कई महिड़ो बिलोवता माखण नित वय ऽ जी।
कई अनऽ सरवरिया अमुक बहू न्हाया रे,
कुल ना वंधावण अमुक भाई जलमिया,
कई अमुक भाई जलमिया-जलमिया अमुक घर दीयो रे,
चरण छियो नऽ अमुक बाई भतीजो तमारो।

तालाब दूध से भरा है। उसे बिलोकर दही से माखन बनाया जा रहा है और वही माखन बह रहा है। घर में सुख-समृद्धि इतनी है कि दूध-घी की कोई कमी नहीं है। ऐसे सरोवर में देवकी ने स्नान किया और कृष्ण जैसे पुत्र को प्राप्त किया।

वासुदेव के वंश को बढ़ाने कृष्ण जी आ गये। सुभद्रा ननदी! मैं तुम्हारे चरण स्पर्श करती हूँ। तुम्हारे घर भतीजा आया है। इसका मुख देखकर आशीर्वाद दो। ऐसी कामना सरोवर में अमुक बहू ने स्नान करके अमुक जैसे पुत्र को प्राप्त किया। अमुक भाई की वंशवृद्धि हुई। अमुक के आने से कुल दीपक आ गया है। हे ननदी! मैं तुम्हारे चरण स्पर्श करती हूँ। तुम्हारे घर में भतीजा आ गया है। उसका मुख मंडल देखकर उसे आशीर्वाद दो। लोकगीतों में सबसे अधिक इस बात का ध्यान रखा जाता है कि वे सदैव उदात्त भाव और उर्ध्वगामी चेतना का क्षरण नहीं हो। महिलाओं को गुड़-घी युक्त खिचड़ी खिलाई जाती है। संध्या समय में सास, जेठानी, बड़ी बुजुर्ग महिला एक चौकी पर हल्दी के घोल से 'छठी माता' की पुतली बनाई जाती है। उसके पास पाँच गौर, पैसा-सुपारी, कलम, कागज और दवात रखी जाती है। इसी चौकी पर आठ पत्ते अकाव के रखे जाते हैं और इनके साथ कलियाँ भी रखते हैं। अकाव के पत्ते रखने से बच्चे को चर्म और खसरा रोग नहीं होता, लोक मान्यता ऐसा कहती है। उस चौकी पर जलता हुआ दीपक रखा जाता है। आज विधाता माता बच्चे का भविष्य लिखने आयेंगी। छठी माता भाग्य देवी ही हैं। छठी पूजा के बाद मिट्टी या आटे के दीपक में तेल भरकर उसमें चार बत्तियाँ लगाई जाती हैं। इससे काजल पाड़ा जाता है। काजल बनाने की क्रिया में जलते दीपक पर काँसे की थाली उल्टी रखी जाती है। हवा के लिये स्थान होता है। इस कालिख में घी डालकर मन्थन करके डिब्बी में भर लेते हैं और यही काजल बच्चे की आँखों में लगाया जाता है।

छठी माता तमरा दियेला बाला पूत कऽ,
दूध पिवाड़ो हो सूर्या गाय को।
मोटी माता तमरा दियेला बाला पूत कऽ,
दूध पिवाड़ो हो सूर्या गाय को।।
कायत की कलम नऽ कायतऽ को कागदे,
सोन्ना की दवात नऽ चाँदी की कलम
छठी माता हो लेख लिखो तमरा हाथ सी
छठी माता तमरा दियेला बाला पूत कऽ
सुख लिख दिजो हो तमरा हाथ सी।'

छठी माता भाग्य देवी हैं। बच्चे का भाग्य लिखने वाली छठी माता उसके स्वप्न में आकर बच्चे के साथ खेलती है। हँसती और हँसाती हैं। बच्चे की माता कहती है कि कृपावन्त छठी माता तुमने मेरी गोद भरी है। तुमने मुझे चाँद सा बालक दिया है। हे माता! जरा कृपा करके उसे देखो और आशीर्वाद दो। कामधेनु गाय माता का अमृत के समान दूध पिलाओ। मैंने उसका भाग्य लिखने के लिये सोने की दवात और चाँदी की कलम रखी है। तुम अपने हाथ से इसका भाग्य लिखना। यह तुम्हारा दिया हुआ पुत्र है। इसके भाग्य में संसार के सारे सुखों को लिखना। विश्व में कोई भी माँ अपने पुत्र के भाग्य में इससे बढ़कर किसी भी देवी से क्या माँगेगी? माँ से बढ़कर पुत्र की सुख कामना और कौन कर सकता है। लोकरीति यह भी है कि 'छठी माता का लेख टलता नी' याने भाग्य में लिखा कभी नहीं मिटताा है।

बच्चे को पैदा हुए जब सात दिन हो जाते हैं, तब बहू को जिस कमरे में सुलाया जाता है, उसे लीपा जाता है। जच्चा-बच्चा को स्नान करवाया जाता है। बच्चे को नए वस्त्र पहनाये जाते हैं। जच्चा की खटिया की जगह बदली जाती है। इसे निमाड़ी में 'खाटलो फेरणू' याने खटिया का स्थान बदलना कहते हैं। आज से बच्चे को छूना और देखना शुरू हो जाता है। आज ही पगल्या बनवाए जाते हैं, जो बेटी की ससुराल भेजे जाते हैं। यदि बच्चा ससुराल में हुआ हो तो पगल्या मायके भेजे जाते हैं।

पगल्या का मतलब शिशु जन्म का शुभ संदेश है। लोक में चरण पूजन का आम रिवाज है। कई मठ-मन्दिरों में पत्थर के पद चिन्हों की ही पूजा होती है। पैरों को हमारे लोक में बहुत शुभ मानते हैं। शिशु के पद चिन्ह प्रतीकात्मक होते हैं। पैरों का रेखांकन नवागत का संकेत है। शरीर में भृकुटि और पैर पूजने योग्य होते हैं। भृकुटि पर तिलक लगाया जाता है और चरण स्पर्श किया जाता है। 'पगल्या' कागज पर लाल या गुलाबी रंग से बनाए जाते हैं। पगल्या पंडित द्वारा बनाये जाते हैं। कोरे कागज पर दोहरी लाइन या बार्डर बनाकर एक कोने में चन्द्रमा बनाये जाते हैं। ये शाश्वत देवता हैं। फिर बीच वाले भाग में मंगल के देवता भगवान श्री गणेश बनाये जाते हैं। उनके ठीक नीचे दो चरण चिन्ह याने 'पगल्या' बनाये जाते हैं। उनके नीचे पलना जच्चा-बच्चा बनाया जाता है। नीचे कलश स्वस्तिक, झुनझुना (घुंघरा) और अन्य खिलौने का अंकन भी करते हैं। महिला का नाम, बच्चे का नाम, जन्म तिथि, दिन, समय और चरण तथा गण आदि का उल्लेख किया जाता है। पगल्या बनकर आने के बाद गली-मोहल्ले में

बुलावा दिया जाता है। महिलाएँ इकठ्ठा होती हैं। पगल्या के कागज को चौकी पर रखा जाता है। कागज के पगल्या पर हल्दी की गाँठ और सवा रूपया रखा जाता है। घर की बहन-बेटी पगल्या के कागज की पूजा करती है और महिलाएँ 'पगल्या गीत गाती हैं-

कई गोकुल मऽ वाजा वाजिया
मथुरा मऽ धुरया रे निसाण।
म्हारी राजमहल पगल्या मोकलो पुत्र का
यशोमती पेलई पिंजरी।।
देवकी न जायो बालो कान्ह
म्हरी राजमल पगल्या मोकलो पुत्र का
कई सवा गज धरती दल चढ़ी
उनका गौत्र मऽ भयो आनन्द
म्हारी राजमल पगल्या मोकली पुत्र का
कई घोड़िला छट्या मामा कंस का,
मथुरा मऽ मचो धमसाण
म्हारी राजमल पगल्या मोकलो पुत्र का।।

कृष्ण जन्म की खुशी में बाजे बज रहे हैं। ध्वजा पताका लहरा रही है। नन्द बाबा के यहाँ आनन्द उत्सव मनाया जा रहा है। मथुरा में भी पताकाएँ लहरा रही हैं। अर्थात् वासुदेव-देवकी के मन में अपार हर्ष हो रहा है। यद्यपि वे कंस के कारागार में बन्द थे। देवकी ने कृष्ण जैसा पुत्र पैदा किया है। जिसे यशोदा के यहाँ भेज दिया है। यशोदा पुत्र प्राप्त कर पीले रंग के वस्त्र पहनकर खुशी मना रही है। यशोदा मैया ने हल्दी के उबटन से स्नान किया। सोने के आभूषण पहने और पीले वस्त्रों में वे 'पीली चिड़िया' जैसी दिखाई दे रही है। इसका एक अर्थ यह भी है, भय से देवकी भी पीली पड़ गई है। एक तो प्रसव पीड़ा दूसरा यह कि कहीं कंस को पता न चल जाये। 'पेलई पिंजरी' कितनी सटीक उपमा इस गीत में की गई है। आखिरकार कंस ने नवजात शिशुओं को मार डाला। मथुरा में युद्ध जैसी घमासान हो गई है।

इस गीत का दूसरा पहलू यह भी है कि, मेरे राजा सदृश्य स्वामी मेरे पुत्र प्राप्ति का सन्देश मेरे मैके भेजिये। यशोदा ने पुत्र को जन्म दिया है। पगलिये भेजकर यह शुभ संदेश भेजिये। पुत्र जन्म की बात लड़की की ससुराल पहुँचती है। नाना-नानी के मन में अपार खुशी होती है। मानो सवा गज धरती ऊपर उठ गई हो। मानो सवा गज मिट्टी की तह चढ़ गई है। याने आनंद की कोई सीमा नहीं है। पूरा परिवार आनंद उत्सव और उल्लास के समुद्र में गोते लगा रहा है। उनके पूरे कुटुम्ब व परिवार में आनंद छा गया है। इस खुशी के मौके पर मामा लोग भी पीछे कैसे रहते। पहला शिशु प्राय: मायके में होता है। यहाँ मामा मौजूद होते हैं। मामा के मन के हर्ष उल्लास से अनोखा समा बँध जाता है। मामा ढोल बाजे बजाकर नृत्य करके खुशी मनाते हैं और भांजे के लिये वस्त्र आभूषण लेते हैं। महिलाएँ दूसरा वंछावा गाती हैं।

काई बधाई छे जी आज बाबा नन्द घर।
काई आनन्द भयो आज बाबा नन्द घर।।
एक लक्ष गौवा ब्राह्मण दिवी
माणी मणासो दियो दान बाबा नन्द घर।।
काई बधाई हो जी ...
दधि जो लेकर ग्वालन आई
दधि रो मची गयो कीच बाबा नन्द घर।
काई बधाई हो जी ...
फूलड़ा जो लेकर मालन आई,
चम्पा चमेलिया रो हार बाबा नन्द घर।।
काई बधाई छे जी ...
चार सखी मिल कृष्ण निपजायो
कंस को करे निरवंश बाबा नन्द घर।।
काई बधाई छे जी ...
चन्द्र सखी मिल मंगल गावऽ
घर-घर आनन्द बधाई बाबा नन्द घर
काई बधाई छे जी आज बाबा नन्द घर।।

चार सहेलियाँ आपस में बातें कर रही हैं। आज क्या खुशी है, जो बाबा नन्द के घर द्वार पर इतनी भीड़ है। क्या आज कोई उत्सव है? या कोई पर्व है। एक ने कहा- क्या तुम्हें पता नहीं है। आज बाबा नन्द के यहाँ लड़का पैदा हुआ है। इस खुशी पर अपार जनसमूह बाबा नन्द के घर बधाई देने के लिये, बालक को देखने के लिये उमड़ पड़ा है। बाबा नन्द ने इस खुशी के मौके पर एक लाख गायों का दान किया है। याचकों को ढेरों सा सोना-चाँदी, आभूषण दिये। यह समाचार सुनकर ग्वालिनें आईं। उनके सिर पर दही की मटकियाँ थीं। उसी दूध-दही की मटकियों से

सभी ने होली खेल ली। आँगन में दूध-दही का कीचड़ मच गया। बधाई की खुशी में मालन फूलों के हार और वंदनवार बाँधने हेतु आई है। चार सहेलियों ने मिलकर कृष्ण जी का जन्म करवाया। जो कंस के काल हैं, जो दुष्ट कंस के वंश को समूल नष्ट करने वाले हैं। चन्द्रसखी कहती हैं- सभी सखियाँ मिलकर मंगलगान कर रही हैं। आज बाबा नन्द के घर कृष्ण का जन्म हुआ है।

गीत गाकर महिलाएँ शक्कर लेकर चली जाती हैं। फिर नाई को बुलाकर उस पगल्या कागज को बाँधकर उसके साथ शक्कर की पुड़ियाँ बनाकर दी जाती है, जो गोत्र-परिवार वालों के घरों में दी जाती है। पाटीदार समाज में भाई पगल्या लेकर जाता है। वहाँ उसे नेग स्वरूप एक जोड़ी कपड़े भेंट दिये जाते हैं। नाई पगल्या लेकर बेटी की ससुराल पहुँचता है। नाई का स्वागत सत्कार होता है। खाना खिलाया जाता है। गली-मोहल्ले में बुलावा दिया जाता है। महिलायें इकठ्ठा होती हैं। पगल्या के कागज को चौक पर रखकर चार सुहागनें कुमकुम चावल से बधाती हैं। महिलाएँ बधावा गीत गाती हैं-

आज कंचन दिन उगियो
उगियो-उगियो राजा दशरथ बार।
बधावो म्हारो म्हाँ आवियो।।
चन्दन से भवन लिपाड़जो
मोतीयन चऊक पुरावजो।।
बधावो म्हारो म्हाँ आवियो।
पटोलई रा पाट बिछावजो।
सोन्ना का कलश मेलाड़ जो।
बधावो म्हारा म्हाँ आवियो।।
पाट पर बठ्या राणी कौशल्या।
गोदी मऽ रामचन्द्र बालऽ
बधावो म्हारा म्हाँ आवियो।।
आरती संजोवो बाई सुभद्रा
वीरा जी कऽ लेवो रे वधाय।
बघावो म्हारा म्हाँ आवियो
पाँच रूपया बड़ण धारी आरती
गज अरूड़ा आरती रो नेग
बघावो म्हारा म्हाँ आवियो।

आज स्वर्ण के समान दिन उदित हुआ है। आज का दिन बड़ा शुभ और आनन्दकारी है। राजा दशरथ के लिये आनन्द उल्लास का दिन है। इस आनन्द उत्सव के लिये सारे राजभवन को चन्दन से लिपाया गया है और मोतियों से चौक पूरे गये हैं। आज की खुश खबरी के लिये राजा दशरथ को बधाई। पटोले की साड़ी पहनकर कौशल्या जी तैयार हैं। साड़ी का रंग पीला है। सुन्दर आसन जो रेशमी और चाँदी-सोने के धागों से बना है, बिछाया गया है। सामने सोने का कलश आम्र पल्लव और नारियल युक्त है, आसन के सामने भरकर रखा गया है। पीले पटोले की साड़ी पहनकर रानी कौशल्या जी पाट याने आसन पर बैठी हैं। उनकी गोद में रामचन्द्र जी हैं। बहन सुभद्रा को बुलाओ। आरती संजोकर बहन सुभद्रा जी भैया को कुमकुम का टीका लगाती हैं। नेग स्वरूप सुभद्रा जी की आरती में पाँच रूपये डाले गये हैं और उपहार स्वरूप उन्हें हाथी और घोड़े दिये गये। महिलाएँ दूसरा बधावा गीत गाती हैं-

जन्मे राम आनन्द भयो मन मऽ
राजा दशरथ नऽ हाथी लुटाया।
बचो एक हाथी कजली बन मऽ।।
जन्मे राम आनन्द ...
राजा दशरथ नऽ घोड़ा लुटाया
बचो एक घोडो सूरज का रथ मऽ।।
जन्मे राम आनन्द ...
राजा दशरथ नऽ गौव्वा लुटाई
बची गौवा एक कजली बन मऽ।।
जन्मे राम आनन्द भयो ...
राजा दशरथ नऽ साड़ी लुटाई
बची एक साड़ी द्रोपदी का अंग मऽ।।
जन्मे राम आनन्द भयो...
राजा दशरथ नऽ मोती लुटाया।।
बचो एक मोती कौशल्या की नथ मऽ।।
जन्मे राम आनन्द भयो मन मऽ।।

राजा दशरथ के यहाँ बहुत दिनों तक सन्तान नहीं थी। जब चार-चार सन्तानें एक साथ पैदा होती हैं, उनकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता। राम का जन्म हुआ। यह सुनकर राजा दशरथ के मन में अपार खुशी हुई। राजा दशरथ ने पृथ्वी के सभी हाथियों

का दान कर दिया, सिर्फ एक ऐरावत हाथी कदली वन में बचने दिया, बाकी सभी हाथी दान कर दिये। राम जन्म के उपलक्ष्य में दशरथ जी ने घोड़ों का दान किया तो सभी घोड़े दान कर दिये, सिर्फ सूर्य के रथ में जुता एक घोड़ा बचा रह गया, जिससे सूरज की गति शेष है। राम जन्म की खुशी में राजा दशरथ ने गायों का दान किया तो सिर्फ एक गाय कामधेनु बची रही, क्योंकि वह देवताओं की गाय है, जो सबके मनोरथ पूर्ण करती है। राजा दशरथ ने वस्त्रों का दान किया, तो सिर्फ एक अमूल्य अखुट लज्जा बचाने वाली साड़ी द्रोपदी के शरीर पर बाकी रह गई। राजा दशरथ ने सोना चाँदी और मोतियों का दान दिया तो सिर्फ एक राम रूपी मोती कौशल्या जी का बाकी बचा था। बाकी सब कुछ दान कर दिया है। ऐसी खुशी, ऐसा दान सृष्टि में कभी नहीं हुआ है। पुत्र बड़ा होकर पिता का सहारा और मददगार होता है। पयलो बेटो न पयलो रोटो, यानी पहला पुत्र और पहली फसल फायदेमंद होती है। पहला पुत्र बड़ा होकर पिता के काम में मदद करता है।

नाई आता है। उसे गोत्र-परिवार वालों के घर ले जाया जाता है। वह शक्कर की पुड़िया देता है। परिवार वाले उसे नाई को नेग स्वरूप गेहूँ, रूपये-पैसे देते हैं। नाई से पूछा जाता है- 'केतरा पावणा, पावणी बुलाया ज' अर्थात् कितने मेहमानों को बुलाया है, नाई बतलाता है। घर-परिवार वाले, गोत्र-परिवार वाले बच्चे को देखने जाने की तैयारी करते हैं। बच्चे के लिये नये वस्त्र खरीदे जाते हैं। कोई भी आभूषण होना जरूरी है। अत: बच्चे के लिये पायजेब, कड़े, कन्दौरा, पोहची खरीदते हैं। बेटी या बहू के लिये पीले रंग की सुन्दर साड़ी-पेटीकोट, ब्लाउज जलदेवी पूजन के निमित्त खरीदते हैं। बच्चे के लिये खिलौने तथा बेटी के लिये पौष्टिक लड्डू बनाकर उसकी ससुराल जाते हैं।

जलवाय पूजन

शिशु के जन्म के 13 दिन बाद जलवाय पूजी जाती है। यदि शिशु मूल नक्षत्र में पैदा हुआ है, तो उसकी जलवाय 26 दिन बाद पूजी जाती है। यह लम्बी प्रक्रिया है। बच्चे का मुख पिता नहीं देख सकता। यज्ञ-हवन होता है, तब यह कार्य सम्पन्न होता है। प्रसूता द्वारा जल और वायु के पूजन का लोक विधान है। जलवायु से जलवाय हुआ है। इसे कहीं कुआँ पूजन भी कहा जाता है। दरअसल प्रसूता जच्चा के लिये यह पहला दिन होता है। जब वह घर से बाहर निकलती है और जल तथा वायु के सम्पर्क में आती है। प्रसूता के शरीर में शिशु जन्म के बाद कई परिवर्तन और परिवर्द्धन होते हैं। उसे जलवायु के साथ सम करने के लिये 'जलवाय' पूजन का प्रतीकात्मक अनुष्ठान किया जाता है। मातृत्व स्त्री का चरम लक्ष्य है। सन्तान उत्पत्ति से ही स्त्री सम्पूर्णता को प्राप्त करती है। इसके लिये समस्त मातृदेवियों के प्रति उनकी कृतज्ञता स्वाभाविक है। जल में अथवा जल के समीप प्राय: मातृदेवियों का निवास माना जाता है। इसलिये प्रसूता मुहूर्त के अनुसार शाम के समय घर से समारोहपूर्वक निकलकर सबसे पहले जल की पूजा करती है। जल ही जीवन है और वायु प्राण है। इसलिये जलवाय पूजन किया जाता है।

ननद, देवर दोनों निमाड़ी लोकगीतों में उपेक्षा के पात्र रहे हैं। जब भाभी की गोद भरी जा रही थी, तो भाभी ने नवरंग चून्दड़ पहन रखी थी। ननद ने भाभी को पाट पर बिठाते समय कहा- भाभी यदि तुम पुत्र को जन्म दोगी, तो मैं नेग स्वरूप यही नवरंग चून्दड़ लूँगी। भाभी ने भी सहर्ष स्वीकार कर लिया कि पुत्र जन्म के उपलक्ष्य में मैं यह नवरंग चून्दड़ तुम्हें दे दूँगी। पुत्र जन्म के बाद ननद रानी ने नेग माँगा तो भाभी अपने वायदे से मुकर जाती है। ननद रानी के मान-सम्मान को ठेस लगती है और उसे गुस्सा आना स्वाभाविक है। दोनों में अनबन हो जाती है।

जलवाय के दिन घुघरी बनाई जाती है और उसे गाँव में बाँटा जाता है। अब तो ये रीति-रिवाज बन्द हो गये हैं, लेकिन गीतों में यह परम्परा अभी भी है। घुघरी गीत में भाभी की नाराजगी को देखें-

बाई ओ हासिया गऊँ की घुघरी रंधाड़ी
बाई ओ कटिया गऊ की लापसी
बाई ओ तेड़ो-तेड़ो नाविड़ा रो पुत्र
सयर मऽ वाटो घुघरी
वीरा रे दीजे, दीजे सगला सयर कऽ
म्हारी नणद कऽ मत दीजो घुघरी।।
बाई ओ दिवी-दिव सगला सयर मऽ
नणद कऽ दई आयो घुघरी।
तम उठो स्वामी लिलोड़ी पलाड़ो
वईण घर जाओ पावणा।।

तम तो आओ वीरा बठो परसाल
मन की कराई देव बात वो
बईण बात करा बसे वार,
थारी भावज माँग घुघरी।।
बईण ओ आधी घुघरी बालुड़ा समझावऽ।
आधी म्हारी पाछी देवा
वीरा रे म्हारा आँगणा गंगा जमना ववऽ
हाँऊ नित की राँधू घुघरी।।
वीरा रे म्हारा बाला कऽगुड़ दई समझावऽ
सगलई लई जा घुघरी।।
वीरा रे लायो जात कुजात
म्हारी पाछी बुलाई घुघरी।।
वीरा रे तम बणओ देऊल मऽ का देव
म्हारी भावज जल मऽ की मेढ़की।
वीरा रे गयको अम्बो गयरी ओकी छायो
कड़वो लिमड़ो कड़वी ओकी छाया
कड़वा भावज रा बोलणा।

हे सहेली! मैंने हसिया गेहूँ की घुघरी बनाई और कटिया गेहूँ के आटे से लापसी (हलवा) बनाया है। हे स्वामी! आप नाई के लड़के को बुला लाओ। वह गाँव भर में घुघरी बाँट आयेगा। पति महोदय नाई के लड़के को बुलाकर लाते हैं। पत्नी नाई के लड़के से कहती है- सारे गाँव में घुघरी बाँट आना। पर मेरी ननद को घुघरी मत देना। जब नाई का लड़का गाँव भर में घुघरी बाँटकर घर आता है, तब भाभी पूछती है- किस-किस को घुघरी बाँट आये? तब नाई का लड़का कहता है- गाँव भर में घुघरी बाँट आया और तुम्हारी ननद को भी दे आया हूँ। तब पत्नी-पति से कहती है- हे स्वामी! आप नीला घोड़ा तैयार करो और अपनी बहन के घर जाओ और घुघरी वापस लेकर आओ। पति महोदय घोड़े पर बैठकर अपनी बहन के घर जाते हैं। बहन-भाई का आदर सत्कार करके आसन पर बिठाती है और कुशलता पूछती है। तब भाई कहता है- बहन बात करूँगा तो देर होगी।

हे बहन! जो नाई का लड़का घुघरी दे गया है। उसमें से आधी घुघरी रख लो। अपने बच्चे के लिये और आधी मुझे वापस कर दो। तुम्हारी भाभी ने घुघरी वापस बुलाई है। बहन आधी घुघरी में तुम अपने बच्चों को खिलाकर समझा लेना और आधी मुझे वापस कर दो। तब बहन ने कहा- भैया! वह घुघरी तो मैंने तुम्हारे सम्मान के खातिर रख ली। मैं घुघरी का क्या करूँ? आधी क्या तुम तो पूरी की पूरी वापस ले जाओ। मेरे आँगन में गंगा-जमुना बहती हैं। सब तरह का सुख है। मैं तो नित्य प्रति ताजी घुघरी बनाकर बच्चों को खिला दूँगी। मैं अपने बच्चों को मिठाई, गुड़ देकर समझा लूँगी। तुम तो सम्पूर्ण घुघरी ले जाओ। बहन दु:खी मन से कहती है। भाई तो मेरा अपना है, अपना खून है, पर भाभी किसी ओछे घराने की है, जिसने अपनी संकुचित भावना दिखा दी। जो मुझे दी गई घुघरी वापस लेने तुम्हें भेजा है। हे भाई! तुम्हें मेरा आशीर्वाद है कि तुम मंदिर के देवता बनना और मेरी भाभी जल की मेढ़की बने। आम की गहरी छाया होती है। आम की छाया मीठी होती है। आम का फल भी मीठा होता है। कड़वे नीम की छाया सुखद होती है, लेकिन नीम फल (निमोली) कड़वी होती है। कड़वापन अपनी जात दिखा देता है। मेरी भाभी के कटुवचन आज मेरे सीने को छेद गये हैं। भाई तुम्हारी वंशवृद्धि होती रहे। यही मेरी कामना है। संसार में ननद-भौजाई की प्रवृत्ति का सार इस गीत में समा गया है।

जलवाय के दिन सभी पारिवारिकजन बेटी की ससुराल पहुँच जाते हैं। जच्चा को मेहन्दी लगाई जाती है। पैरों में आलता (गुलाबी रंग) लगाया जाता है। फिर पीले वस्त्र जो मैके से आते हैं, पहनाये जाते हैं। आभूषणों के साथ नथ अवश्य ही पहनाई जाती है। पूजा की थाली में घुघरी, पीले किये बिनौले (बाखला) मिट्टी का टूटा टुकड़ा, पैसा-सुपारी और तेरह छोटी तिकड़ी जैसी गोल रोटियाँ, सिन्दूर के साथ अबीर-गुलाल, कुमकुम-चावल, ज्वार के दाने और सिन्दूर रखा जाता है। कटोरे में हल्दी घोलकर रखी जाती है। सभी तैयारी होने के बाद संध्या समय जच्चा के कंधे पर हँसिया रखा जाता है। उसके सिर पर पानी से भरे कलश रखे जाते हैं। ढोली ढोल बजाता हुआ आगे-आगे चलता है और महिलाएँ प्रसूता को आगे करके उसके पीछे चलती हैं। एक महिला हल्दी का कटोरा लेकर रास्ते भर हल्दी के छीटे मारते चलती है। जलवाय पूजन नदी या कुएँ पर होता है। नदी या कुएँ पर जाकर उस स्थान को साफ करके पानी से धोकर शुद्ध करके एक चौखटनुमा आकृति हल्दी के घोल से बनाई जाती है। बीच में स्वस्तिक बनाया जाता है। जच्चा के सिर से कलश उतारकर सामने रख दिये जाते हैं। चार कोनों पर चार आटे के

दीपक तेल पूरित करके चार-चार बत्तियाँ लगाकर प्रज्ज्वलित करते हैं। एक दीपक सामने रखा जाता है। स्वस्तिक पर पैसा, सुपारी, पाँच गौर रखकर सम्पूर्ण पूजा सामग्री चढ़ाई जाती है। नारियल फोड़ा जाता है, फिर जच्चा कटोरे से हल्दी लेकर चौखट के दोनों तरफ दोनों हाथ हल्दी में डुबाकर पहले दो हाथ ऊपर की ओर दो निचली तरफ और एक हाथ से एक छापा कलश पर लगाया जाता है। जच्चा के हाथ धुलाकर कपड़े से साफ करके उसे वहीं खड़ा करके उसे दायें-बायें घुमाकर पानी की धार पाँच बार छोड़ी जाती है। महिलाएँ जलदेवी का गीत गाती हैं-

जलदेवी माता परमेश्वरी वो
थारा मढ़ मऽ गोबर धोलसे कुण वो
गोबर धोलसे बाला की मावली वो
मन का मनोरथ पुर्वीया ओ देवी
दिवलो बलऽ न जलदेवी पूजसा
जलदेवी माता परमेश्वरी वो।।
थारा मद मऽ घुघरी चढ़ाव कुण वो
घुघरी चढ़ावसे वाला की मावली वो
मन का मनोरथ पुर्वीया ओ देवी
दिवलो बलऽ मऽ जलदेवी पूजसा।।
जलदेवी माता परमेश्वरी वो।।
थारा मढ़ मऽ बाखला चढ़ावसे कुण को
बाखला चढ़ावसे बाला की मावली वो
मन का मनोरथ पुर्वीया ओ देवी
दिवलो बलऽ मऽ जलदेवी पूजसा

जलते दीपक के साथ पूजा शुभ मानी जाती है। जब तक जलदेवी की पूजा होती है। साथ वाली महिला दीपकों में तेल पूरित करती रहती है। दीपक पूजा का साक्षी होता है। पूजा करने के बाद प्रसूता की देवरानी-जेठानी-ननद जो भी हो, उस पूजा सामग्री को समेटकर कलश में भर लेती हैं। फिर हाथ धोकर कपड़े से पोछ लेती है। उस सामग्री भरे कलश को लेकर घर आने की तैयारी करती है। हल्दी से भरा कटोरा अब जच्चा के हाथ में दिया जाता है। वह रास्ते भर हल्दी से छींटे देते हुए घर लौटती है। महिलाएँ जलवाय का दूसरा गीत गाती हैं-

अमुक गाँव का गोयरा अच्छा-अच्छा पेला ऐचाय
पुत्र जल्मी नऽ पेला पेरिया
ये तो कुण भाई पेला रा साँदला
ये तो कुण भाई नऽ खरचा छे दाम शोभागेण
पुत्र जल्मी नऽ पेला पेरिया
ये अमुक भाई पेला रा साँदला
ये तो अमुक भाई न खरचा छे दाम शोभागेण
पुत्र जन्मी नऽ पेला पेरिया
ये तो कुण ववू पेला रा साँदला
ये तो कुण ववू पेरणा जोग।।
पुत्र जल्मी नऽ पेला पेरिया।।
ये तो अमुक ववू पोला रा साँदला
ये तो अमुक ववू पेरण जोग ओ शोभागेण
ये तो कुण गरासिया की डिकरी
पुत्र जल्मी नऽ पेला पेरिया
ये तो अमुक गरासिया की डीकरी
ये तो रमेश भाई शोभागिया री बहू ओ शोभागेण
पुत्र जल्मी नऽ पेला पेरिया
ये तो अमुक भाई की बेतुली
या तो अमुक भाई छोगालिया की नार ओ शोभागेण
पुत्र जल्मी नऽ पेला पेरिया

अमुक ग्राम के आसपास बाजार लगा है। उसमें अच्छी-अच्छी साड़ियाँ बिक रही हैं। उन साड़ियों में मनपसंद पीले रंग की साड़ियाँ भी हैं। इन पीली साड़ियों को कौन-सा भाई खरीदेगा? किसे यह साड़ी अच्छी लगेगी? कौन सा भाई इसका मूल्य चुकायेगा? कौन सौभाग्यवती इसे पहनेगी। इसे अमुक भाई ने पसंद किया। मूल्य पूछकर अमुक भाई ने इसके दाम चुकाये हैं। इस पीली साड़ी को कौन-सी बहू पहनेगी। वह किसे पसंद आयेगी। इस पीली साड़ी को अमुक बहू पहनने योग्य है, क्योंकि उन्होंने पुत्र को जन्म दिया है। पुत्र जन्म के समय पीली साड़ी पहनना बहू के लिये सुख-शान्ति का द्योतक है। इसे सौभाग्यवती उषा बहू पहनेगी, जिससे वह खूब फबेगी।

इसे पहनकर अमुक बहू शहर बाजार में जायेगी। बाजार के लोग उसके लावण्यमयी रूप को और उसकी साड़ी को देखकर पूछेंगे। यह किसकी लड़की है? यह सौभाग्यवती किसकी बहू है? ये तो अमुक जी सरदार की बेटी है और अमुक भाई की

पुत्रवधू है। पुत्र जन्म के उपलक्ष्य में पीला वस्त्र पहनकर ही जलदेवी का पूजन करने जा रही है। यह किस भाई की बहन है? किसकी पत्नी है? यह तो अमुक भाई की बहन है और ये प्रिय अमुक भाई की सौभाग्यवती पत्नी है।

गीत गाते हुए महिलाएँ जच्चा को लेकर घर जाती हैं। जच्चा घर के अन्दर मध्यगृह के दरवाजे के दोनों ओर पाँच-पाँच छापे हल्दी से लगाती है। उसकी कुमकुम चावल से पूजा करती है। आज पुत्र को जन्म देकर पीला वस्त्र पहनकर हल्दी में हाथ डुबोकर छापे लगाकर उसका नारी जीवन पूर्ण रूप से सफल हो गया। अब हल्दी का काम समाप्त हो गया। बच्चे को एक चद्दर की झोली बनाकर उसे दो महिलाएँ हाथों से पकड़ती हैं, उसमें शिशु को सुलाते हैं। अन्य लड़के-लड़कियाँ झोली के नीचे से निकलते हैं। ब्राह्मण द्वारा रखा गया नाम उच्चारण करते हुए पूर्व से पश्चिम की ओर गीत की कड़ियों के साथ निकलते हैं।

चल रे नाना खेलणऽ चालां
अमुकभाई को नाम लेता जावां
गुड़ घुघरी खाता जावां
चल रे नाना स्कूल जावां
अमुक भाई को नाव लेता जावां
गुड़ घुघरी खाता जावां
चल रे नाना गुल्ली अंटिया खेलण जावां
अमुकभाई को नाव लेता जावां
गुड़ घुघरी खाता जावां
चल रे नाना चेंडू खेलण जावां
अमुक भाई को नाव लेता जावां
गुड़ घुघरी खाता जावां

बच्चे का नाम आज 'अमुक' घोषित हो गया। चल रे बच्चे खेलने चलें। अमुक भाई खेलने चलें, साथ में गुड़ घुघरी खाते चलें। चल रे भाई स्कूल चलें। अमुक भाई का नाम लेते चलें। साथ ही गुड़ घुघरी खाते चलें। चल रे भाई अमुक गुल्ली डंडा खेलने चलें, चल रे भाई गेंद खेलने चलें। साथ में गुड़ घुघरी खाते चलें। जलवाय पूजन में आमंत्रित महिलाओं को भोजन कराया जाता है। फिर महिलाएँ बच्चे को 'खाणा-दाणा' अर्थात् रूपये नेग के रूप में देती है-

अमुक गाँव बड़ो बाको छे
आकी सात गली नऽ एक बाको छे
अमुक गाँव बड़ो बाको छे
हाँऊ धस्या ऐ चूं नऽ ज्वार माता का
हाँऊ पाँय लागू नऽ धरती माता का।
अमुक गाँव बड़ो बाको छे
हाँऊ रोटा करूँ नऽ ज्वार माता का।
पाँय लागू नऽ आग माता का।।
अमुक गाँव बड़ो बाको छे।।
ओकी सात गली नऽ एक जायो छे।।

महिलाएँ नृत्य करती हुई गाती हैं। साथ ही नृत्य की संगत के लिये तालियाँ बजाती हैं। अमुक ग्राम बड़ा बाका है। इसकी सात गलियाँ और एक नाका (स्टेशन) है। मैं ज्वार माता के डंठल चुनती हूँ। मुझे ऐसा लगता है, जैसे मैं धरती माता के चरण स्पर्श कर रही हूँ। मैं ज्वार की रोटी बनाती हूँ, तो मुझे लगता है जैसे मैं अग्नि माता को प्रणाम कर रही हूँ। समधनें गीत गाकर नृत्य करती हैं-

घुघरो काँ भूली आई वो नणद बाई
घुघरोक्यों नी लाई
इना बाला नऽ मांडी हट वो नणद बाई
घुघरो क्यों नी लाई
तुमक किन्नऽ बुलाया हो नणद बाई
घुघरो क्यों नी लाई।
भगल्यो नी लाया टीपी नी लाया।
हाट हलावता आया हो नणद बाई।
घुघरो क्यों नी लाई।
कड़ा नी लाया कन्दौरो नी लाया।
लुगड़ा की आस लई आया हो नणद बाई।
घुघरो क्यों नी लाई।
सांजी नी लाया पतासा नी लाया
एक दिन गीत नी गवाड़िया हो नणद बाई।
घुघरो क्यों नी लाई।
जीम्या चुटिया नऽ घोरी-घोरी सोया।
पछा चल्या कुल्हा झाड़ी ओ नणद बाई।
घुघरो क्यों नी लाई।

ननद को उलाहने के स्वरूप यह गीत नृत्य के साथ गाया जाता है। यह जन्म के समय शक्कर बतासे बाँटते समय गाया जाने वाला नृत्य गीत है। ननद बाई आप मेरे बच्चे के लिये एक झुनझुना (घुंघरा) तक नहीं लाईं। मेरे बच्चे ने हठ पकड़ ली है। आप खाली हाथ कैसे आ गईं। झुनझुना क्यों नहीं लाईं। झबला-टोपी बच्चे के कपड़े भी नहीं लाईं। खाली हाथ कैसे आईं? ननद बाई आपको जरा भी शर्म नहीं आई, खाली हाथ कैसे आ गईं। मेरे बच्चे के लिये कड़ा, कन्दौरा तक नहीं लाई और मन में यह आशा लेकर आई हो कि नेग में मुझे साड़ी तो जरूर मिलेगी। साड़ी कोई रखी थोड़े है, जो तुम्हें मिल जायेगी। मेरे बच्चे की खुशी में एक भी दिन गीत नहीं गवाये, उल्टा खाना खाकर खर्राटें भर-भर के गहरी नींद सोती रही। काम धन्धा कुछ किया नहीं। अब हाथ झटककर वापस चलीं। तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा।

इस गीत में ननद की घोर उपेक्षा की गई है। ननद के आत्म सम्मान को ठेस पहुँची। वह अपने भतीजे का मुख देखकर वापस चली जाती है।

दूर देश सी नणद बाई आया राज
आई नऽ वटला पऽ बठी गया कि सई हो राज
उठो-उठो म्हारी मान गुमानेण भावज राज
बड़ी गुमानेण भावज राज
अपणां हुई जोण मिलई लेवा कि सई हो राज।
म्हारा खोला मऽ भतीजो तमारो राज।
सामऽ कोठी ओ नणद बाई मिलई लेवो कि सई हो राज।
उठो-उठो म्हारी मान गुमानेण भावज राज।
बड़ा गुमानेण भावज राज।।
अपणां हुई जोण मिलई लेवां कि सई हो राज।
हमरो नऽ हो नणद बाई ग्यारस को उपास राज।
वासी टुकड़ा ओ नणद बाई खाई लेयो कि सई हो राज।
उठो-उठो म्हारी मान गुमानेण भावज राज।
बड़ी गुमानेण भावज राज।।
अपणां हुई जोण मिलई लेवां कि सई हो राज।
घाघरो बिछाओ नणद बाई लुगड़ो वयड़ो राज
डावां कवला नणद बाई सोई जावो कि सई हो राज।
ऐतरो जो कयता नणद बाई रोश भरायो।
आँसू नमऽ कीच मची गयो कि सई हो राज
दूर देश सी भाई तमरा आया राज।
आँगना मऽ कीचड़ सो कसो मच्चो कि सई हो राज।
दूर-दूर देश सी नणद बाई आया राज।
बारा बेड़ा सी उनका पाँय धोया कि सई हो राज।
आगऽ लंगऽ भाई पाछऽ भोलई भावज राज।।
दुई जोण बईण मनावणऽ संचर्‌या कि सई हो राज।
पछा फिरो पछा फिरो म्हारी मान गुमानेण बईण
बड़ा गुमानेण बड़ण राज।
टिमण्यो घड़वा तोला तीस को कि सई हो राज।
टिमण्यो धारी साली कऽ पेरावो राज।
धारी सासु कऽ पेरावो राज।
माड़ी की जाई बईण भलई जावो।।

दूर देश से यात्रा करके अपने भतीजे को देखने भाई-भाभी से मिलने ननद मायके आती है। ननद को आई देखकर भाभी ने अनदेखा कर दिया। भाभी ने स्वागत भी नहीं किया। ननद मन मारकर ओटले पर आकर बैठ गई। अपनी थकान मिटाने के बाद ननद ने भाभी से कहा- मेरी मान-सम्मान वाली भाभी, हम दोनों गले मिल लें। भाभी तो जली-भुनी बैठी थी। उसने कहा- मैं उठ नहीं सकती। सामने जो अनाज भरने की कोठी रखी है। उससे मिलकर अपने गले मिलने की इच्छा पूरी कर लो। ननद मन मसोसकर रह जाती है। पुनः ननद ने कहा- भाभी मुझे भूख लगी है। चलो दोनों मिलकर भोजन कर लेते हैं। तभी भाभी ने कहा- बाईसा मेरा तो आज एकादशी का उपवास है। आप सुबह का बासा खाना खा लो। बाद में ननद ने कहा- भाभी चलो हम दोनों सो जायें। तब भाभी बिस्तरों की असमर्थता बताते हुए कहती है- बाई घाघरा बिछा लो और साड़ी ओढ़कर सो जाओ। इतना अपमान सहन करते-करते ननद को गुस्सा आ गया। आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली और वह इतना रोई की आँगन गीला हो गया। रो-धोकर ननद वापस ससुराल लौट जाती है।

इधर पतिदेव दूर देश से नौकरी से वापस आते हैं। घर आकर आँगन में कीचड़ देखकर पूछते हैं- कीचड़ कैसे हुआ है? तब पत्नी ने कहा कि आपकी प्रिय बहन आई थीं। मैंने उनका स्वागत सत्कार किया। बारह घड़े पानी से उनके पैर धोये। इसलिये आँगन में कीचड़ हो गया है। पति ने पत्नी से पूछा- कहाँ है मेरी

बहन? पत्नी ने कहा- वह तो वापस चली गई। पति ने पूछा कि कितनी देर हुई है। पत्नि ने कहा- अभी थोड़ी देर पहले ही वह गई है। भाई अपनी बहन को मिलने के लिये उसी रास्ते चल पड़ा। अभी थोड़ी दूर जाने के बाद बहन दिखाई दी। पति के पीछे पत्नी भी आती है। कहीं ननद मेरी चुगली ना कर दे। भाई-बहन को मनाता है और कहता है- हे बहन! घर चलो। मैं तुम्हें सोने का टिमन्या (गले का आभूषण) बनवा दूँगा। वह भी बीस तोले का। बहन तो सिर से पैर तक गुस्से में भरी हुई थी। बोली- भैया टिमन्या या आभूषण मेरे कोई काम के नहीं है। ये आभूषण अपनी साली और सास को पहनाना। मैं ऐसी ही भली हूँ। बहन क्रोध में भरकर अपनी ससुराल चली जाती है।

सुबह 'चऊक पाट' होता है यानी पति-पत्नी और बच्चे को एक ही पाट पर बिठाया जाता है। पति-पत्नी का गठबंधन करके बिठाये जाते हैं। सभी महिलाएँ यथायोग्य नेग देती हैं। बच्चा मैके में हुआ है, तो दामाद को भी एक जोड़ी कपड़े दिये जाते हैं। मेहमान महिलाओं को साड़ी या बर्तन नेग स्वरूप देते हैं। मेहमान वापस अपने घर लौट जाते हैं।

क्रमशः अब शिशु तीन माह का हो गया है। अब बेटी को भेजने की तैयारी की जाती है। नाती के लिये पालना बनवाया जाता है। एक जोड़ी बिस्तर बच्चे के लिये 'पाथरनी' यानी छोटी गोदड़ियाँ बनाई जाती है। पालना कैसा है? इस गीत में देखिये-

तुम तो चालो सखी मथुरा मऽ जावां
मथुरा मऽ आनन्द बधावो।।
रानी देवकी नऽ जायो छे कान्ह
वसुदेव घर आनन्द बधावणा।।
तू तो मथुरा का चतुर सुतार
धड़जो रे बाला साडू पालणौ
पालणो घड़जो रे दादुर मोर
अरू घड़जो रे बन की कोयल।
ये तो दादुर मोर तो उड़ी जाय
शब्द सुहावणा बन की कोयल।
देवो न सुभद्रा बाई हिंडोलना।
तू तो सोइ जा रे नाना वीर
वंश वधऽ वसुदेव

हे सखी! चलो मथुरा नगरी चलें। मथुरा में आज आनन्द उत्सव है। माता देवकी ने भगवान श्रीकृष्ण को जन्म दिया है। वासुदेव के घर आनन्द उत्सव है। जाकर उन्हें बधाई दे आयें।

हे मथुरा के चतुर सुतार! तू बच्चे के लिए पालना बनाना। पालना ऐसे बनाना, जिसमें मोर-पपीहा और कोयल उतारना। ऐसे मोर उतारना की देखते-देखते उड़ जायें और कोयल ऐसी बनाना की पालने में सोये हुए बच्चे को मीठी-मीठी आवाज सुनाएँ, जिसे सुनकर बच्चे को अच्छी नींद आती रहे। चतुर सुतार ने देवकी की कल्पना अनुसार पालना गढ़ दिया। उस पालने को वासुदेव के राज दरबार में बाँधा गया है। बहन सुभद्रा को बुलाओ। बहन सुभद्रा आओ, अपने प्यारे भाई को झूला झुलाओ। बहन सुभद्रा झूले दे रही है और मन ही मन कहती है- हे वीर! तू सो जा, तू ही इस वंश का दीपक है। तू ही मेरा सब कुछ है। जब तू बड़ा होगा तो मेरे पिता का नाम रोशन करेगा। मेरे पिता की वंशवृद्धि का प्रतीक तू ही है।

बच्चा बढ़कर तीन माह का हो जाता है। ससुराल वाले बहू को लाने का शुभ मुहूर्त पूछते हैं। शुभ दिन बहू को लेने जाते हैं। बेटी को मायके में आये पाँच माह हो गये। उसे मायके से विशिष्ट लगाव हो गया है। माता-पिता को चिन्ता है। 'बेटी भर्‌या खोला आाई, भर्‌या खोला चली जाय' यानी गोद भरकर आई थी। अब गोद में बच्चे को लेकर सकुशल ससुराल पहुँच जाये। बेटी को सामान बाँधकर ससुराल विदा कर दिया जाता है।

ससुराल जाने पर दादा-दादी, सास-ससुर, जेठ-जेठानी, ननद खुश हो जाते हैं। नन्हें शिशु की सभी हाथों हाथ लेकर प्यार करते दिखते हैं। दादा-दादी के लिये नया खिलौना घर में आ गया है। अब उनका समय शिशु की देखभाल में व्यस्त रहने लगा। माँ-बेटे का हर पल ख्याल रखती है। स्नान कराती, दूध पिलाती, काजल लगाती, नये वस्त्र पहनाती और पालने में सुला देती है और प्यार से लोरी गाती है, ताकि बच्चा सुख से सो जाय-

नाना सा भाई का नाना-नाना पाय
ठुमक-ठुमक भाई बाड़ी मऽ जाय
बाड़ी मऽ का वनफल तोड़ी नऽ खाय
ऐतरा मऽ आई गई मालेण माय

भाई का लई लिया झंगा न झूल।
हाथ मऽ दई दियो कमल को फूल
हाट रे भाई हाट रे कुतरा
भाई म्हारो सोवऽ झेकालई मऽ
कुतरा जाय होलई मऽ
हाट रे भाई हाट रे कुतरा
हाट रे कुतरा छर ओ बिलई।।

मेरे छोटे से भाई के छोटे-छोटे पाँव हैं। मेरा छोटा सा भाई ठुमकती हुई चाल से बाड़ी में जा पहुँचा है। वह बाड़ी में लगे हुए वनफल तोड़कर खाने लगता है। इतने में मालन माँ आ जाती है। उसने मेरे भैया के झबला और टोपी छीन लिये और छोटे से भाई के हाथ में कमल का फूल दे दिया है। हे मेरे भाई! सो जा, ऐ कुत्ते भाग जा। मेरा भैया झोली में रो रहा है। ए कुत्ते तू भाग जा। तू तो होली चौक में चला जा। भाग जा। ऐ कुत्ते हट जा, ऐ बिल्ली तू भी भाग जा।

मातृत्व को प्राप्त करके नारी सम्पूर्ण नारी कहलाती है। मातृत्व से ममत्व का जन्म हुआ है। मातृत्व के बिना ममत्व अधूरा होता है। बेटी, बहन, पत्नी बनकर उसे वो सम्मान नहीं मिला, जो उसे 'माँ' बनकर प्राप्त हुआ है। माँ की ममता का कोई मोल नहीं है। माँ बच्चे के दु:ख, बीमारी में आँखों में रात काट देती है। हर तकलीफ में माँ बच्चे का ख्याल रखती है। खुद गीले में सोती है और बच्चे को सूखे में सुलाती है। खाना नहीं खाने पर मनुहार करके खिलाती है। नज़र लगने पर नज़र उतारती है। माँ ही बच्चे की प्रथम पाठशाला है। माँ से ही बच्चे को अच्छे संस्कार मिलते हैं। माँ ही बालक की प्रथम गुरू भी है।

निमाड़ में जन्म संस्कार

छोगालाल कुमरावत 'सुजस'

संसार की प्रत्येक वस्तु जिस रूप में उत्पन्न होती है, वह उसी रूप में काम में आने योग्य नहीं होती है, किन्तु दोष परिमार्जन गुणाधान और हीनाङ्गपूर्ति इन त्रिविध संस्कारों द्वारा संस्कारित हो जाने पर वह कार्योपयोगी बन जाती है। जैसे खेत में उत्पन्न हुए जौ, गेहूँ व धान को प्रथम संस्कार से भूसी-छिलका दूर करके दूसरे संस्कार से कूट पीसकर आटा बनाकर तथा तीसरे से घी-नमक आदि मिलाकर भोजनोपयोगी बनाया जाता है। कपास को भी काकड़े निकालकर धुनने-कातने के बाद बुनकर वस्त्र बनाते, फिर रंग-रोगन, सिलाई-कढ़ाई आदि द्वारा पहनने योग्य बनाते हैं। ठीक इसी प्रकार मनुष्य में भी मातृ-पितृ दोष- जन्य अनेक कमियाँ स्वभावत: होती हैं, उनकी निवृत्ति के लिये अनेक प्रकार की शिक्षाओं से उसे सुशिक्षित करके विवाह द्वारा अर्द्धांग की पूर्ति से ब्रह्म-सायुज्य प्राप्ति के योग्य बनाया जाता है। इन्हीं सब क्रियाओं को भारतीय संस्कृति में 'संस्कार' कहते हैं। याने मानव जीवन को पवित्र, चमत्कारपूर्ण व उत्कृष्ट बनाने वाले शास्त्र विहित कुछ अनुष्ठानों को संस्कार कहते है-

आत्मशरीरान्यतर निष्ठो विहित क्रिया जन्योऽविशय विशेष: संस्कार।

अर्थात्- संस्कार में शारीरिक और मानसिक मलों का अपाकरण होता है तथा आध्यात्मिक पूर्णता की, जो मानव जीवन का परम लक्ष्य है, सहज ही प्राप्त होती है। विभिन्न जातियों की भाँति विभिन्न प्रांतों में विभिन्न संस्कार प्रचलित है। उनमें से जन्म सम्बन्धी संस्कारों की हम ही चर्चा करेंगे, जो निमाड़ में प्रचलित है। निमाड़ में सभी संस्कारों के लोकगीत-कहावतें आदि मिलेंगे। निमाड़ में संस्कार व लोकगीतों का चोली-दामन का साथ है। बिना लोकसाहित्य के कोई संसकार सम्पन्न नहीं होता है। ऐसे ही निमाड़ में जन्म

सम्बन्धी अनेक संस्कार, अनुष्ठान, परम्पराएँ और लोकाचार है, जिनके सहारे हमारी संस्कृति सजीव है, संवेदनशील है तथा पोषित होती रहती है। उनमें प्रमुख खोळ भरनू, छठी पूजा, जलवाय इत्यादि हैं।

खोळ भरनू- निमाड़ में शिशु जन्म के पूर्व एक संस्कार होता है, जिसे निमाड़ी में 'खोळ भरनू' कहते हैं। खोळ भरनू याने 'गोद भराई' की रस्म को अगरनी संस्कार कहा जाता है।

निमाड़ में जब कोई महिला विवाहोपरान्त गर्भधारण करती है, तो उसका प्रथम प्रसव मायके में होता है। ससुराल से गर्भवती स्त्री को अपने मायके में भेजने का आयोजन होता है। उसे ही 'खोळ भरनू' कहा जाता है। गोद भराई की रस्म गर्भाधान के सातवें महीने के शुक्ल-पक्ष (उजाळई) में ब्राह्मण से मुहूर्त पूछकर खोळ भरते हैं। खोळ भरवाकर अपने घर ले जाने हेतु मायके से कई महिलाएँ उसके ससुराल में आती है। तब तक गर्भवती स्त्री नहा-धोकर सोलह श्रृँगार करके तैयार हो जाती है। गर्भवती स्त्री को उसके मायके व ससुराल पक्ष की सारी महिलाएँ एकत्र होकर उसे उत्तर या पूर्व मुखी करके पाट पर बैठाती हैं। फिर ससुराल पक्ष की सुहागिन बहू-बेटी उसके सामने पानी का हाथ फेरकर रंगोली का कलश या माण्डना बनाकर उस पर जल से भरा कलश स्थापित करती हैं, फिर गर्भवती स्त्री की 'आड़' भरती है। आड़ भरने का अर्थ है- कपाल पर कंकु का लेप लगाकर उस पर चावल लगाना। तत्पश्चात् दो सुहागिनें (कहीं पर चार) उसे कंकू चावल से बधाती हैं, फिर गर्भवती स्त्री की गोद में पाँच वस्तुएँ डाली जाती हैं, जिसमें बिजौरा लौंग, नारियल व अन्य दो ऋतु फल होते है। इन्हें डालने की भी एक पौराणिक परम्परा है, उसके अनुसार गर्भवती अपने साड़ी के पल्लू को अपनी गोद में फैला लेती है, तब बधाने वाली एक सुहागिन उसकी पस (अंजुली) को गेहूँ से भरती है दूसरी बँधाने वाली सुहागिन उस गेहूँ भरी पस पर सर्वप्रथम श्रीफल रखती है, वह गर्भवती उस पस को अपनी गोद में डालकर, पुनः अपनी पस याने अंजुली बना लेती है, तब सुहागिनें पुनः गेहूँ डालकर पस भरती जाती है। उन पर अलग-अलग पाँच प्रकार के फल रखकर गोद भरवाती जाती हैं। नारियल व बिजौरा आवश्यक होता है। इधर भराई की रस्म जब तक चलती है, तब तक एकत्रित महिलाएँ लोकगीतों से भी उसकी गोद भरती जाती है। रस्म होने के बाद शक्कर या बताशे बाँटकर गर्भवती की खुशी-खुशी विदाई की जाती है। इस गोद भराई संस्कार में जो लोकगीत गाये जाते है, वे निम्नांकित हैं-

आओ री सुहागिन नारी, मंगल गाओ री।
जनक दुलारी की गोद भराओ री।।
आज राम घर शुभ घड़ी आई।
सोने का कलश सीया राणी से भरावो री।।
आओ री....ऽ...
नयनों में कजरा मुख गर्व की कान्ती।
रूप अनूप सिया पर हटायो री।।
आओ री....ऽ...
माथे पे बिंदिया सिर पर सिंदूर।
चार सुहागन मिल माँग सजावो री।।
आओ री....ऽ...
माता कौशल्या वारी-वारी जाये।
लाड़ली बनु म्हारी धीर-धीरे चली रे।।
आओ री....ऽ...

हे सुहागनों! आओ और मंगल गीत गाओ क्योंकि हमारी जनक दुलारी सीता की गोद भरने की रस्म पूरी करनी है। आज सीतापति राम के घर शुभ घड़ी आई है। गोद भरने में स्वर्ण कलश स्थापित करो, तब सीता की गोद भरो। सीता को सोलह श्रृँगार कराओ और आँखों में कजरा लगाओ, जिससे मुख मंडल की शोभा बढ़े। सीता का रूप अनुपम दिखने लगा है। भाल पर बिंदियाँ और माँग को सुहागिनों ने सिंदूर से सुशोभित किया है अर्थात् सोलह श्रृँगार से सीताजी को सजा दिया, इसके बाद गोद भराई होने लगी तो माता कौशल्या सीता पर वारी-वारी गई, उनकी प्रसन्नता चरम पर थी। सीता की गोद भरने के बाद कौशल्या ने अपनी बहू को कहा-लाड़ली बहू! अब जरा सम्हलकर चलना। गोद भराई के समय गाये जाने वाला एक गीत और देखिए-

नानी-नानी नाजूकड़ी नऽ आव ऽ छे अगरनी।
गारी थारा आँगणिया मऽ जोशीड़ो ते आवऽ।।
जोशीड़ो ते आव गोरी का मोहरित पूछाड़ राज।
नानी नानी नाजुकड़ी .....ऽ.....
पियु छोटा गोरी मोटा, लोग करगऽ हाँसी।

हँसी करऽ तो करनऽ दीजो, अपणा काज सिधारो राज।।
नानी नानी नाजुकड़ी .....ऽ.....
गोरी थारा आँगणिया मऽ बजाजी ते आवऽ।
बजाजी ते आव गोरी का, सालूड़ा इसावो राज।।
नानी नानी नाजुकड़ी .....ऽ.....
गोरी थारा आँगरिया मऽ सोनीड़ो ते आव।
सोनीड़ो ते आव गोरी का, गयणा इसावो राज।।
नानी नानी नाजुकड़ी .....ऽ.....
गोरी थारा आँगरिया मऽ मालिड़ो ते आव।
मालिड़ो ते आव गोरी का, गजरा इसावो राज।।
नानी नानी नाजुकड़ी .....ऽ.....

छोटी बहूरानी का अगरनी संस्कार है, घर पर जोशीजी आये हैं। उन्होंने गोद भराई का उचित मुहूर्त निकाला है। गोद भराई का मुहूर्त निकलते ही बजाजी (वस्त्र व्यापारी) उनके घर आया, उससे गोरी के लिए नए-नए परिधान खरीदे गये। बजाजी के बाद सोनी आया, उससे गहने लिए गये। फिर माली से फूल, माला, गजरे लिए गये । इन सबके आने पर गोरी के मोटी दिखने पर और साजन के पतले दिखने पर सब हँसी-ठिठोली भी करते थे, तो गोरी कह देती थी कि हमें अपना कार्य करते रहना चाहिए दुनिया हँसे तो हँसती रहे।

गोद भराई के बाद जब स्त्री का नौ माह का गर्भकाल पूरा हो जाता है, तब उसे आनंद देने वाली प्रसव होती है। वह अपनी पीड़ा पति महोदय को बताती है, जिसकी बानगी इस निमाड़ी गीत में दखिये-

दिल म्हारो धड़कऽ गोड़ा दुखऽ जी,
जी हो उठऽ कम्मर मऽ पीड़ा।
चिंता म्हारी कुण करऽ जी ।।
ससरा म्हारा राजबई जी,
जी हो सासु आरत भंडार।
चिंता म्हारी ....ऽ.....
जेठ हमरा कचेरी गया जी,
जी हो जेठाणी बालूड़ारी माय। चिंता ....ऽ.....
देवर म्हारो स्कूल गयो जी,
जी हो देराणी अण्जाई नार। चिंता ....ऽ.....
नणद हमारी पुतळया खेलऽ जी,
जी हो नणदोई परायो पूत। चिंता ....ऽ.....
मैड़ा ऊपर मैड़ो जी,
व्हाँ सुता नणद बाई का बीर। चिंता ....ऽ.....
अंगठो मरोड़ी जगाविया जी,
जागो जागो नणद बाई का बीर। चिंता ....ऽ.....
हमरी चिंता तम करोजी,
मड़-मड़ मेड़ा उतर्या जी। चिंता ....ऽ.....
जी हो दायणी लाया बुलाया,
जाजम परदा बाध्या जी। चिंता ....ऽ.....
जी हाँ न्याख्या छे छपर पलंग,
जोधन जाओगा डीकरी जी।
तमन उंगता सी पियर पोउचावा जी,
जो धन जाओगा डीकरो जी,
म्हारा दादा को बंस बढ़ाओ जी।
सांझ हुए दिवळा जाया जी
गोरी नऽ जाया चतुरज लाल,
आनंद बधाविया जी।

प्रसव पीड़ा से पीड़ित गोरी अपनी पीड़ा किसे बताये? परिवार के सास-ससुर, जेठ-जेठानी, देवर-देवरानी और ननद - ननदोई सभी अपने-अपने कामों में व्यस्त हैं। सास-ससुर पहलई करने में लगे है। देवर स्कूल में पढ़ाने गया और देवरानी अंजानी है। ननद खेल-खिलौनों में लगी है तो ननदोई पराया पुत्र है। जेठजी कचहरी गये और जेठानी अपने बच्चों में व्यस्त है। ऐसे में प्रसविता की चिंता वह किसे बताये? ऊसरी पर सोये हुए अपने प्रियतम पति को उनका अंगूठा मरोड़कर जगाती है और अपनी पीड़ा बताती है। तब पति महोदय दाई को बुलाकर लाते हैं। घर में ही प्रसूता के लिए पर्दे बाँधकर और पलंग बिछाकर उसका कक्ष अलग बनाता है तथा कहता है कि पुत्री को जन्म दोगी तो मायके में भेज दूँगा और पुत्र का जन्म हुआ तो मेरे दादाजी का वंश बढ़ेगा। उनको खुशी होगी। फिर प्रसूता को पुत्र हुआ तो चारों ओर बधाईयाँ आने लगी। सब आनंद में खुश हो गये। बधाईयाँ गाई जाने लगी।

देवकी नऽ बाळो कृष्ण जायो जी।
नगाड़ा वाजऽ रूणझुण जी।।

घर का ससरा जी कऽ यूँ जाई कयजो।
बारा दिन बजन्त्री बजाड़ो जी ।।
घर का जेठजी कऽ यूँ जाई कयजो।
बारा दिन बंदूक छोड़ाव जी ।।
घर का देवरजी कऽ यूँ जाई कयजो।
बारा दिन मिठई बटावो जी ।।
घर का नणदोई जी कऽ यूँ जाई कयजो।
बारा दिन नणदबाई भेजाड़ो जी।
घर की दिन नणदबाई कऽ यूं जाई कयजो।
बारा दिन सांजी बहाड़ जी ।।
घर की सासुजी कऽ यूँ जाई कयजो।
बारा दिन बालूड़ो सम्हाळो जी।।
घर की जेठाणी कऽ यूँ जाई कयजो।
बारा दिन रसोई सम्हाळो जी।।
घर की पड़ोसेण कऽ यूँ जाते कयजो।
बारा दिन मंगल गावो जी।।

हमारे लिये बच्चे का जन्म भले ही साधारण घटना हो, परन्तु लोकगीतों की दुनिया में बालक की तुलना देवकी के कृष्ण से की जाती है। सब उसे लल्ला व कान्हा पुकारते हैं। जिस प्रकार देवकी को कृष्ण जन्म हुआ तो नगाड़े बजे, वैसे ही जच्चा कहती है कि मेरे ससुरजी को कहना कि बारह दिन तक खुशी के बाजे पूरे गाँव में बजवायें। मेरे जेठजी को कहना कि वे बारह दिन तक बंदूक की सलामी दे। मेरा देवर बारह दिनों तक सबको मिठाई बताशे बाँटे तथा मेरे ननदोई को संदेश देना कि हमारी ननदबाई को हमारे घर रहने को बारह दिन भेजें। जो बालक की खुशी में बारह दिन तक गीत गाकर सांजी बाँटे और बँटवाये। मेरे सास को कहना कि वह बारह दिन तक बालक की साज सम्हाल में मदद करें। जेठानी जी इतने ही दिन चूल्हे चक्की की जिम्मेदारी सम्हालें तथा इतने ही दिन पड़ोसिनों को कहना की घर-आँगन में मंगल गीत गायें और खुशियाँ मनायें।

लोकगीत में बार-बार बारह दिनों का जिक्र इसलिए किया गया है कि इन बारह दिनों तक विभिन्न तरह के आयोजन होते है, जिसमें जच्चा-बच्चा को नहलाना, पांचवी पूजन, छठी पूजन, नाखून निकालने की रस्म, सावड़ेन को खाटलो हेड़नू, जलवाय पूजन, सांजी शक्कर वाटनू इत्यादि हैं।

शिशु जन्म के पाँचवे दिन शाम को पाँचवी पुजाई जाती है, जिसमें पाँच छोटी कंकर की गौर बनाते हैं और दीवाल पर ताजा लीप-पोतकर पाँचवी व छठी माता की प्रतीक स्वरूप पुतलियाँ बनाकर प्रसूता से पुजवाई जाती है।

पाँचवी पूजन में रखी गौर और दीवार पर बनाई छठी माता की ही पूजा करवाई जाती है। छठी पूजन में छठी माता के पास पैसा, सुपारी, सफेद कागज, कलम दवात भी रखने की परम्परा है। इसके रखे जाने का प्रतीकात्मक अर्थ यह है कि इस दिन छठी माता शिशु का भाग्य रात्रि में लिख जाती हैं। छठी पूजन के समय शिशु को परिवार की दो सुहागिनें कपड़े की झोली बनाकर उसमें लिटाकर पकड़े रहती हैं, तब घर के छोटे बच्चे उस झोली के नीचे से अच्छी-अच्छी बातें गाते हुए निकलते हैं, जैसे-

चल भय्यु अपण पड़न चला।
चल म्हारा भाई/ बईण अपण लिखणऽ चला
चल म्हारी बइण/ भैया अपण खेत मऽ चला।
चलो मेरी बहण/ भैया अपण खेत मऽ चला।
चल भय्यु अपण खेलन चला।

पूजन के समय आटे का दीपक जलाकर उसके ऊपर खापरी से काजल बनाकर जच्चा-बच्चा की आँखों में लगवाते हैं। इस अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में से एक गीत देखिये-

छठी माता तमरा दियेला बालपूत कऽ,
दूद पेवाड़ो हो सूर्या गाया को।
कायन की कलम नऽ कायन की दवात कागद,
सोन्ना की दवात नऽ चाँदी की कलम।
छठी माता हो लेख लिखो हो तमरा हात सी।
छठी माता हो तमरा दियेला बाला पूत कऽ,
सुख लिखी दीजो हो तमरा हाथ सी।

हे छठी माता! आपके द्वारा दिये गये इस बालक को सूर्यागाय का दूध पिलाओ। हे छठी माँ! सोने की दवात व चाँदी की कलम से अपने हाथों से इस बालक के भाग्य में सुख ही सुख लिख दो। यही हमारी विनती है।

प्रसूता का सातवें (कहीं-कहीं दसवें) दिन सौर उठाई करते हैं, सूतक निकालते है। इस दिन जच्चा-बच्चा को नहला-

धुलाकर स्वच्छ स्थान पर बिठाकर घर की अन्य स्त्री प्रसूता कक्ष को पूरी तरह पुनः लीप-पोतकर नया रूप देती हैं। उसके बिस्तर को भी धोकर साफ किया जाता। जच्चा-बच्चा की सारी उपयोगी सामग्री कपड़े, बर्तन आदि को पुनः अच्छे से साफ करते है। फिर वापस जच्चे-बच्चे को वहीं पर स्वच्छतापूर्वक आड़ करके रहने को कहते हैं। फिर उसके बाद कोई भी प्रसूता व बच्चे को छू सकता है। सौर उठाने का मतलब ही सूतक समाप्त होने से है। इस दिन खिचड़ा भी बनाया जाता है। इस दिन से प्रसूता को सभी तरह के भोजन करने की भी शुरुआत की जाती है। इसके पहले सातों दिन तक प्रसूता को औषधियुक्त पौष्टिक हलवा ही दोनों समय खाना होता है। ताकि उसका शरीर पुनः स्वस्थ व परिपूर्ण हो जाये।

जलवाय पूजन अर्थात् जल और वायु की पूजा से है। जल और वायु जिसके बिना जीवन असम्भव है। उस अस्तित्त्व के प्राणदायी तत्त्वों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने का इससे बढ़कर और कौन-सा शुभ अवसर हो सकता है। हमारे ऋषि-मुनियों, पूर्वजों ने शायद इसीलिए यह परम्परा शुरू की होगी कि जच्चा के साथ नवजात शिशु के मन में इन तत्त्वों के प्रति सम्मान रहे और खुद बाद में बड़ा होने पर इनका महत्त्व समझे।

जलवाय पूजन शिशु जन्म के बारहवें, तेरहवें, इक्कीसवें अथवा सवा महीने में पूजन किया जाता है। छठी में जहाँ प्रसाद बाँटने हेतु ज्वार को कूट कर खिचड़ा पकाया जाता है, उसकी जगह जलवाय में गेहूँ को भिगोकर-कूटकर 'घूँघरी' बनाई जाती है। तभी से कहावत प्रचलित है कि 'मनऽ थारी घुंघरी खायेल छे'। इसी दिन से प्रसूता व शिशु को बाहरी वातावरण में लाया जाता है। उनका (जच्चा-बच्चा) बाहर आना-जाना इस पूजा के बाद ही शुरू होता है। इसे कहीं-कहीं कुआँ पूजन भी कहते हैं। जलवाय पूजन में प्रसूता श्रृँगार करके सिर पर कलश रखकर परिवार पड़ोस की महिलाओं के साथ समारोहपूर्वक किसी कुएँ, तालाब या नदी के तट पर जाती है। साथ जाने वाली महिलाएँ गीत गाते हुए चलती हैं। प्रसूता की गोद में बच्चा व कांधे पर हँसिया (शस्त्र रूप) में रखा होता है। जल स्थान पर जाकर जल से लीपकर चौक बनाकर उस पर पाँच कंकर की गौर रखकर सात दीपक के साथ सात-सात पापड़ी, पान, सुपारी, नाड़ा, गुड़, कपड़ा और काकड़ों को हल्दी में रंगकर 'बाकले' चढ़ाती है। अंत में प्रसादी घुँघरी चढ़ाई जाती है। जल देवी से सुखमय जीवन की कामना की जाती है। कहीं-कहीं पर जलवाय पूजन घर के पणिहारे में भी किया जाता है। पणिहारी का अर्थ घर में पानी रखने का स्थान से है। जलवाय पूजन के समय भी अन्य स्त्रियाँ जलदेवी के गीत गाती रहती हैं-

जलदेवी माता परमेश्वरी वो।
थारा मड़-मड़ गोबर धोकसे गुण वो।
गोबर मड़ घोळसे बाळा की मावली वो।
मन का मनोरथ पूर्निया वो सई।।
दिवळो बळऽ नऽ जलदेवी हो पूजसा।
जलदेवी माता परमेश्वरी वो।।
थारा मड़ घुंघरी चढ़ावसे कुण वो।
घुंघरी चढ़ावसे बाळा की माउली वो।।
मन का मनोरथ .....ऽ.....
थारा मड़ बाखला चढ़ावसे कुण वो।।
बाखला चढ़ावसे बाळा की माउली वो।
मन का मनोरथ .....ऽ.....
थारा मड़ खापरी चण़ावसे कुण सोद्ध
खापरी चढ़ावसे बाळाकी माउली वो।।
मन का मनोरथ .....ऽ.....
थारा मड़ नायेळ चढ़ावसे कूण वो।
नायेळ चढ़ावसे बाळा की माउली वो।।
मन का मनोरथ .....ऽ.....

हे जलदेवी माता! तुम्हारे मंदिर को गोबर से कौन लीपेगा? तब सखी कहती है कि- बच्चे की माँ लीपेगी, क्योंकि उसने अपने सब मनोरथ प्राप्त कर लिये है। पुत्र रत्न पाकर उसके सारे मनोरथ पूर्ण हो गये हैं। ऐसे ही इसमें नारियल, घूँघरी बाकले, खापरी, दीपक लगाने के जवाब में शिशु की माँ सब कुछ जलदेवी को चढ़ायेगी व दीपक जलाकर आरती भी करेगी।

जलवाय पूजन के बाद शिशु को झोली में लिटाकर अन्य बच्चे उसे झूला देते हुए गाते भी जाते हैं, तब अंत में उन्हें गुड़-घूँघरी खाने को प्रसादी दी जाती है-

चल रे नाना खेलण जावा।
अमुक भाई को नाव लेता जावा।।

गुड नऽ घुंघरी खाता जावा।
चल रे नाना स्कूल जावा।
अमुक भाई को नाव लेता जावा।।
गुड़ नऽ घुंघरी खाता जावा।।
चल रे नाना चेंडू खेलण जावा।
अमुक भाई को नाव लेता जावा।
गुड़ नऽ घुंघरी खाता जावा।।

चल रे नन्हें भैया, खेलने को चलें। अमुक भैया को भी साथ में ले चलें, और साथ में गुड़-घूँघरी भी खाते चलते हैं। ऐसे ही अमुक भैया को लेकर स्कूल जाते हैं। गेंद खेलने जाते है। जीवन की व्यावहारिकता का पाठ सीखने की परम्परा शुरू हो जाती है।

सूतक निकलने के पश्चात् कुछ जातियों में पगल्या भेजने का रिवाज है। पगल्या का अर्थ शिशु जन्म का शुभ संदेश पत्र से है। पहली संतान मायके में होती है तो उसका संदेश उसके घर पगल्या के रूप में भेजा जाता है। पगल्या में कोरे कागज पर शिशु के नन्हें दो पग बनाये जाते हैं। उसके नीचे उसकी जन्म तिथि, समय, वार, नक्षत्र, चरण, नाम आदि पंडित से पूछकर लिखते या फिर पंडित से ही पगल्या बनवाते हैं। पगल्या के चित्रांकन में उसके खेल-खिलौने हाथी-घोड़े आदि भी अंकित करते हैं, वर्तमान में तो सीधे छपे-छपाये मिलते है। पगल्या के साथ हल्दी गाँठ और सवा रूपया भी रखते हैं। पगल्या को नाई-ब्राह्मण या घर का कोई व्यक्ति ले जाता है। इस दिन भी महिलाएँ गीत गाती व शक्कर साजी बाँटती हैं।

शिशु का पाँचवें या सातवें माह में उचित मुहूर्त में मुँह झूठा कराया जाता है। इसमें नागरवेली पान पर चाँदी का सिक्का रखते हैं, उस पर खीर, पूड़ी, प्रसाद रखकर शिशु के मुख से छुआते है।

जमाल प्रथम या तीसरे वर्ष में निकाले जाते हैं। जमाल दो तरह से निकाले जाते हैं, एक सामान्य व दूसरा मान-मनौती से। मान-मनौती में जिस देवी-देव की मन्नत होती है, वहीं पर सामूहिक रूप से पूजा-अर्चना करके जमाल निकाले जाते हैं। कुछ परिवारों मे कुलदेवी के सामने छुरा लगाने अर्थात् छुवाने के बाद जमाल निकालने का भी रिवाज है। जमाल बुआ की गोद में ही निकाले जाते है। जमाल निकालने के बाद उसके सिर पर कंकु का स्वस्तिक बनाया जाता है। अर्थात् शिशु शरीर के शिखर की पूजा हो जाती है।

जनेऊ संस्कार ब्राह्मणों में अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह संस्कार सात वर्ष से लगाकर उसके विवाह के पूर्व कभी भी किया जाता है। जनेऊ संस्कार से ब्राह्मण का दूसरा जन्म माना जाता है, तभी तो उन्हें द्विज कहा जाता है। इसमें जात कर्म के हिसाब से 'बटुक' का पूरा विवाह ही हो जाता है। जनेऊ संस्कार में विवाह की हर रस्म होती है, जिसमें हल्दी लगना, मंडप होना, बारात निकालना, मामेरा, बेण्डबाजा, खाना खिलाना इत्यादि किया जाता है। केवल दुल्हन नहीं होती है। इसी संस्कार के बाद जनेऊ धारण किया जाता है। ऐसे कई तरह के संस्कारों में से संस्कारिता के बीज फूटते हैं और हमारी संस्कृति पोषित होती है।

जन्म पूर्व के संस्कार

डॉ. पुष्पा रानी गर्ग

संसार में सभी प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ मनुष्य योनि है। मनुष्य सबसे श्रेष्ठ प्राणी है। उसे कर्म करने की स्वतंत्रता प्राप्त है। उसे ईश्वर ने बुद्धि-विवेक दिया है, जिसका प्रयोग करके वह अपना मनुष्य जन्म सार्थक कर सकता है। निकृष्ट कर्मों में लिप्त होकर वह अपना मनुष्य जन्म व्यर्थ भी गँवा सकता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मनुष्य जीवन बहुत दुर्लभ है। इसे प्राप्त करने के लिए जीव प्रयत्न भी करता है, लेकिन वह अपने कर्मों के अनुसार ही योनि प्राप्त करता है। मनुष्य जैसे कर्म करता है, वैसा ही उसका प्रारब्ध बन जाता है और वही प्रारब्ध उसके जन्म का कारण बनता है। कभी-कभी ईश्वर की कृपा से भी प्राणी को मनुष्य योनि प्राप्त हो जाती है। इसके लिए संत शिरोमणि बाबा तुलसीदास लिखते हैं-

कबहुँक करि कसना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही।।

कभी-कभी बिना हेतु के स्नेह करने वाला ईश्वर जीव को मनुष्य योनि दे देता है। इस प्रकार उसे अपना जीवन सुधारने का, सत्कर्म करने का अवसर प्राप्त होता है। मनुष्य योनि प्राप्त करके वह अच्छे कर्म करे, इसके लिए उसे जन्म के पूर्व भी संस्कारित करने की आवश्यकता है।

इस हेतु हमारे यहाँ सोलह संस्कारों का विधान है। सबसे पहला संस्कार है- गर्भाधान। गर्भाधान के समय भी माता-पिता बालक को संस्कारित कर सकते है। गर्भाधान के समय माता-पिता को जो भाव होता है, वह बालक में सहज ही आ जाता है। पुराणों में ऐसी

कथा आती है कि हिरण्य कश्यप भगवान विष्णु को अपना शत्रु मानता था। उसके राज्य में जो भी विष्णु भगवान का नाम लेता, जप-यज्ञ आदि करता, उसे दण्ड भोगना पड़ता। हिरण्य कश्यप अक्सर शत्रु भाव से भगवान विष्णु की चर्चा करता रहता था। एक बार वह पत्नी कयाधु के साथ रति क्रीड़ा कर रहा था तब संयोग से वह भगवान विष्णु की ही चर्चा कर रहा था। उस समय जो संतान कयाधु के गर्भ में आई, वो भक्त प्रहलाद थे। प्रहलाद को गर्भ में भक्ति के संस्कार मिले। उनकी माता कयाधु को अपहरण करके इन्द्र ले गये। इन्द्र से देवर्षि नारद ने कयाधु को छुड़ा लिया। उन्होंने एक निर्जन स्थान पर एक आश्रम में रख दिया। वे अक्सर उसे हरि नाम कीर्तन सुनाते, भगवान विष्णु की अनेक कथाएँ सुनाते। इस प्रकार माँ के गर्भ मे ही प्रहलाद को भक्ति के दृढ़ संस्कार प्राप्त हो गये।

निश्चय ही गर्भाधान के पश्चात् संतान को गर्भ में ही अच्छे संस्कार देने की आवश्यकता होती है। माता-पिता बच्चे में जैसे गुण विकसित करना चाहें, वैसे ही संस्कार दें। गर्भावस्था के समय माता को बच्चे के प्रति बहुत संवेदनशील व सतर्क रहने की आवश्यकता होती है। वह अच्छे काम करे, सबसे प्रेम-पूर्ण व्यवहार करे, झगड़ा करने से बचे, झूठ-कपट, चोरी आदि दुष्कर्मों से बचे। माता यदि ऐसे कार्य करेगी तो बच्चे में ऐसे दुर्गण आ ही जाएँगे। वह अच्छी संतान प्राप्त करने के लिए अच्छे लोगों के साथ रहे, अच्छी बातें करे व सुने। गर्भवती माता को कुसंस्कार देने वाले दृश्य नहीं देखने चाहिए। गर्भवती माता यदि ऐसे दृश्य देखती है तो बालक पर उसका सीधा प्रभाव पड़ता है। बालक में भी झूठ-कपट छल की प्रवृत्तियाँ घर कर जाती है। हमारे यहाँ कहा जाता है कि गर्भावस्था के समय में माता को अच्छी, भक्ति-भाव से पूर्ण पुस्तकें पढ़नी चाहिए। ईश्वर का स्मरण करते रहना चाहिए। दूसरों के प्रति प्रेम-भाव-दुखियों के प्रति दया, सहानुभूति क्षमा का भाव रखना चाहिए। सुन्दर चित्र देखने चाहिए। वीर पुरुषों के, संतों के भगवान के चित्र अपने कमरे में लगाना चाहिए। सात्विक भोजन करना चाहिए। इन सब बातों का ध्यान रखकर माता बच्चे को जन्म के पूर्व ही अच्छे संस्कार दे सकती है।

इस संदर्भ में द्वापर युग की महाभारत के पूर्व की एक कथा प्रसिद्ध है। अभिमन्यु जब माता सुभद्रा के गर्भ में थे, तब अक्सर परमवीर, महाधनुर्धर तथा युद्ध निपुण अर्जुन युद्ध सम्बन्धी चर्चा करते थे। एक दिन वे शैय्या पर लेटे-लेटे सुभद्रा को बताने लगे कि युद्ध में चकव्यूह में कैसे प्रवेश करते हैं और कैसे सावधानी पूर्वक उसका भेदनकर बाहर निकलते हैं। सुभद्रा ने चक्रव्यूह में प्रवेश करने की बात तो सुन ली, इसके बाद उन्हें नींद आ गई। चक्रव्यूह से बाहर निकलने की बात वह नहीं सुन पाई। माता के सुनने से गर्भ में स्थित बालक अभिमन्यु युद्ध में चक्रव्यूह में प्रवेश करने की कला सीख गया। उससे बाहर आने की कला वह न सीख सका। आगे चलकर महाभरत युद्ध में वह कौरवों द्वारा बनाए चक्रव्यूह में प्रविष्ट तो हो गया, लेकिन बहार नहीं निकल सका और शत्रुओं द्वारा मार डाला गया।

इस कथा से स्पष्ट है कि गर्भ में स्थित बालक को मनचाहे संस्कार दिये जा सकते हैं। यह बात आधुनिक विज्ञान ने भी मान्य की है। गर्भावस्था के दौरान माता जो कुछ देखती है, सुनती है, पढ़ती है, उसकी जैसी मनोवृत्ति होती है, उसका बच्चे पर सीधा प्रभाव पड़ता है। कहा जा सकता है कि बच्चा माँ के मुख से खाता है, माँ के कानों से सुनता है, माँ की आँखों से देखता है। माँ के क्रिया-कलापों का बच्चों पर पूरा प्रभाव पड़ता है।

कभी-कभी ऐसा भी देखने में आता है कि अच्छे चरित्रवान माता-पिता के यहाँ दुष्चरित्र संतान पैदा हो जाती है और दुष्चरित्र राक्षसी प्रवृत्ति के माता-पिता के यहाँ अच्छी संतान पैदा हो जाती है। रावण और प्रहलाद का उदाहरण सामने है। हिरण्यकश्यप दैत्य का पुत्र प्रहलाद भगवान विष्णु का महान भक्त हुआ, वहीं पुलत्स्य ऋषि का पौत्र, मुनि विश्रवा का पुत्र रावण राक्षसी प्रवृत्ति का हुआ। रावण का गर्भाधान गलत समय में हुआ था।

रावण की माँ कैकसी दानव पुत्री थी। एक दिन संध्या समय (संधि काल) में उसने पति विश्रवा से रति क्रिया की याचना की। उसके पति ने उसकी इच्छा जानकर उसे समझाया कि यह समय उपयुक्त नहीं है। प्रातः संधिकाल में, शाम के संधिकाल में, ग्रहण काल में पूजा-साधना करनी चाहिए। इस

समय के मिलन से जो संतान गर्भ में आएगी, वह राक्षसी प्रवृत्ति की होगी। लेकिन कैकसी ने उनकी बात नहीं मानी। आखिर पत्नी की इच्छा के सामने उन्हें झुकना पड़ा। उस असमय के उनके मिलन से रावण गर्भ में आ गया। वह प्रकाण्ड विद्वान हुआ, महान तपस्वी हुआ, अमित बलवान हुआ, लेकिन राक्षसी प्रवृत्ति के कारण उसने अपनी शक्ति, अपनी विद्वत्ता व तपस्या का दुरूपयोग किया। ऋषि पुत्र होने पर भी वह राक्षस कहलाया। इस कथा से स्पष्ट है कि संतान को भी पति-पत्नी को अनुचित समय के मिलन से बचाना चाहिए।

तात्पर्य यह है कि केवल मनुष्य योनि प्राप्त मनोरथ सिद्ध नहीं होता। बालक का उचित समय गर्भ में आना आवयश्क है। इसके अतिरिक्त उसे गर्भ में ही सुसंस्कार दिए जाने चाहिए। गर्भकाल के नौ महीने बालक को जो संस्कार मिलते हैं वो ही उसका स्थायी स्वभाव बनाते हैं। साथ ही जन्म के पश्चात् पाँच वर्ष की अवस्था तक उसे चारों ओर का परिवेश भी प्रभावित करता है। इस समय बालक कोमल गीली माटी की तरह होता है। इस समय उसे जैसा आकार दिया जाए, जैसे संस्कार दिए जाये, वह वैसा ही बन जाता है।

बंजारा जन्म गीत

डॉ. हंसा कमलेश

वेद मंत्रों के अनुसार मानव जीवन में सोलह संस्कारों का वर्णन मिलता है।, जो जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त सम्पन्न होते हैं। बंजारा जाति संस्कारों के वेद मंत्रों से अनभिज्ञ हैं। इस सम्बन्ध में शोध कार्य में जानकारी संकलन के वक्त राड़ी तांड़े के एक बुजुर्ग[1] ने संस्कारों सम्बन्धी अपना मत दिया दिया है कि सोलह संस्कारों का वर्णन बंजारों में नहीं मिलते, क्योंकि यह जाति घुमन्तू एवं अनपढ़ रहने के कारण शास्त्रों से दूर रही है। इस जाति में प्रमुखत: तीन संस्कार सम्पन्न होते हैं, जिसमें जन्म, विवाह एवं मृत्यु संस्कार प्रमुख है।

जन्म संस्कार

बंजारा जाति में जन्म संस्कार आनंदमयी घटना मानी जाती है। शिशु जन्म के पश्चात् परिवार जनों को अत्यधिक प्रसन्नता होती है। सबसे अधिक खुशी माता को होती है, क्योंकि वह माँ बनकर मातृत्व प्राप्त करती है। बंजारा समाज में जब तक स्त्री माँ नहीं बनती, तब तक उसे महत्त्व नहीं मिलता। शिशु जन्म से पूर्व ही गर्भधारण के पश्चात् संस्कार आरम्भ हो जाते हैं। गर्भधारण के बाद स्त्री अपनी शारीरिक एवं मानसिक रूप में अलग प्रकार का परिवर्तन अनुभव करती है। गर्भवती खट्टा खाना चाहती है। अपनी भौजाई से कच्चे आम खाने की इच्छा प्रकट करते समय यह गीत गाती है–

बाई ये कसो तो वरोच मारे जीवड़ान।
काई खायेन दु बाई मारे जीवड़ान
आमली सारू जीवन खींचाव बाई।
खेतेती अंबा तोड़ लानी ये भौजाई।
खाटो-खाटो खावु वाटरो मारे जीवड़ान।

मेरे मन में कुछ महसूस हो रहा है। अत: मुझे कुछ खाने को दे दो। इमली खाने की इच्छा हो रही है। इसलिए भाभी आप खेत से आम तोड़ लाओ, क्योंकि खट्टा खाने का मन हो रहा है। इस तरह प्रारम्भिक लोकगीतों से संस्कारों की शुरुआत दिखाई देती है। इसे अलग-अलग भागों में बाँटा गया है।

प्रसव

बंजारा जाति में प्रसव को 'जणणो' कहते हैं। प्रसव की प्रक्रिया को ईश्वर की कृपा मानते हैं। तांड़ो में बंजारा स्त्री की प्रसव स्थिति में कोई देखभाल तक नहीं करता, क्योंकि समाज में प्रचलन रहा है कि प्रसव सहज क्रिया है, प्रभु की देन है। ईश्वर की कृपा से सब कुछ अच्छा होकर रहेगा, यही विश्वास इस जाति में आज भी है। विशेषत: यह भी देखा गया है कि स्त्रियाँ शिशु को जन्म देने तक काम करती हैं, ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनमें कई स्त्रियों ने खेत में काम करते वक्त शिशु को जन्म दिया हो। शिशु को जन्म देना यह स्त्री का पुनर्जन्म माना गया है। स्त्री के जीवन-मरण का प्रश्न होते हुए भी बंजारे अपनी पत्नी को प्रसव पीड़ा के पश्चात् अस्पताल लेकर नहीं जाते, क्योंकि उनका अस्पताल पर विश्वास नहीं है। प्राचीन काल में उपचार की सुविधा नहीं थी। स्त्रियों को प्रसव पीड़ा अधिक महसूस होने लगी तो अपनी कुल देवता की पवित्र धूनी की अंगार माथे पर लगाते हैं। स्त्री एक गीत में दादी से अपनी इस वेदना का वर्णन करती है-

दादीये थामलं मारे जीवड़ान।
कडेमा सुळा लागरोचं।
पेटेमा काळजो तोडरोच।
दादीये थामलं मारे जीवड़ान।

दादी मेरे प्राण थम गये है। कमर में सुई जैसी चुभन हो रही है। पेट में कलेजा टूट रहा है। दादी मेरे प्राण थम गये हैं।

दाय माता

प्रसव क्रिया में सहायता करने वाली स्त्री को डाईसळ या दायमाता कहते हैं। सहायक दायमाता को तांड़े में आदर पूर्वक सम्मान देते हैं। स्त्री को प्रसव पीड़ा होने लगती है, तभी कोई स्त्री डाईसाण (डाईसाळ) के पास जाकर उसे साथ चलने के लिये याचना करती है।

डाई मार याड़ी चाल झपको घरेन।
तोन रूपेरों हासलो दरा दियुं।
तेन ज्यार गेंव्हु दियुं।
तेन याड़ी पामड़ी दारा दियु।

दाई मेरी माँ! मेरे घर जल्दी चल। तुझे चाँदी का गहना दूँगी। तुझे गेहूँ और ज्वार दूँगी। तुझे वस्त्र भी दूँगी। इस तरह से उसे साथ ले जाने के लिये कुछ देने का वादा किया जाता है।

थाली और नगाड़ा बजाना

प्रसव के पश्चात् स्त्री को लड़का हुआ अथवा लड़की यह समाचार सर्वप्रथम दायमाता से परिवारजनों को मिलता है। यदि लड़का हुआ तो तांड़े के मध्य भाग में जाकर नगाड़ा बजाया जाता है और यदि लड़की हुई तो थाली बजाई जाती है। समाचार पहुँचाने की यह विधि परम्परागत है। संतान सम्बन्धी समाचार मिलने के पश्चात् तांड़े की सभी स्त्रियाँ आकर गीत गाकर बधाई देती हैं। उसमें नायक की पत्नी भी सहभागी होती है। तत्पश्चात् बधाई पर 'नातरो' नाम का गीत सभी स्त्रियाँ गाती हैं-

पेल मड़ाये नामे मारी धरती रो लेस्या।
धरती रो जावे तळ नीपजो ये।।
दूसरो मड़ाये नामे मारे मेलिया रो लेस्या
मेलिया रो जावे तळ नीपजो ये ।।
तीन मड़ाये नामे मारे गोसाई से जाय आणद वदाव।
गोसाई से जावे तळ नीपजो ये ऽऽऽ ।।
चार पड़ाये नामे मारे गावड्ली रो लेस्या
गावडली रो जाव बसु धोरये ऽऽऽ ।।
पाच मड़ाये नामे मारे छोळलड़ी रो लेस्या।
छेळलडी रो जाव चलहल बोकड़े ऽऽ।।

छे मड़ाये नामे मारे घोड़ली रो लेस्या
घोड़ली रो जाव तेजी हाण होकरे ।।
सात मड़ाये नामे मारे भेसलड़ी रो लेस्या।
भेसलड़ी रो जाव समदर होलोळो।।
आठ मड़ाये नामे मारे जणती रो लेस्या
जणती रो जाव ओरो भरये ऽऽऽ।।
नवमड़ो मड़ाये नामे मारे नायकेडे रो लेस्या
नायके री नगरीये आणद वदावे ऽऽ।।

सर्वप्रथम हम धरती को नमन करते हैं, जिसके तल पर तुमने जन्म लिया। दूसरा नमन महाराज को करते हैं। तीसरा नमन हम शिवशंकर जी (गोसाई) को करते हैं, जिसकी कृपा से तुम्हारा जन्म हुआ। चौथा नमन हम गौ माता को करते हैं, तुम्हारे कल्याण के लिये गौ माता को किया गया प्रणाम 'बसु' (वृषभ) के पास भी पहुँचेगा। नमन हम बकरी को करते हैं, साथ ही बकरे को भी करते है, जो बलि देते समय काम आयेगा। छठा नमन हम घोड़ी को करते हैं, जिसका उपयोग तुझे जीवन में होगा। सातवाँ नमन हम भैंस को करते हैं। समुद्र की उफान जैसे तुम्हारे मन को शांत रखे। आठवाँ नमन तुम्हें जन्म देने वाली माता को करते हैं, जिसकी वजह से तुम इस पृथ्वी पर आये। नौवाँ नमन हम हमारे नायक को करते हैं, जिसके तांड़े में तू सुख एवं शांति से रहेगा। 'वेळकप' का गीत खत्म होते ही दूसरे 'नातरो' गाये जाते हैं। 'वेळकप' को प्रथम संस्कार माना गया है। यह विधि शिशु एवं माता को नहाने के पहले किया जाता है। यह होने तक दोनों को नहलाते नहीं। इसके लिये आवश्यक सामग्री लापसी[2] तैयार करते हैं। लापसी के साथ गुड़ और नारियल की आवश्यकता होती हैं। सभी सामान एकत्र होने के पश्चात् घर के चूल्हे को 'धाबुकार'[3] पद्धति से चढ़ावा चढ़ाते हैं। यह पूजा विधि सम्पन्न होने के पश्चात् एक बड़ी सी थाली में पूरा सामान रखते है। साथ में नारियल (गुड़ को थोड़ा मोटा पीसकर उसकी थूली बनाई जाती है। तत्पश्चात् उसे गुड़ के साथ पानी में पकाया जाता है, जिसे लापसी कहते है। यह एक प्राचीन पूजा विधि है। कढ़ाई, लापसी व शिमय्या इन पदार्थों से अग्नि पूजा की जाती है। यह सामान एक थाली में रखते हैं। उसमें अगरबत्ती लगाते हैं। साथ में एक घड़ा भर पानी लाते हैं। तत्पश्चात् पूजा करने वाला इन पदार्थों के पाँच निवाले चूल्हे के अंगारे पर घी के साथ रखता है। सीधे हाथ में पानी लेकर अंगारों के चारों ओर छिड़कते हैं और चूल्हे को नमस्कार करते हैं। यह पूजा विधि दिन में किसी भी समय कर सकते हैं।) की कतरन एवं गुड़ लेकर उस परिवार की बड़ी स्त्री आँगन में आकर लोगों को बाँटती है। बाँटते समय कुछ स्त्रियाँ नातरों गाती हैं–

मारे ...घर आंबलिया सोये।
मारे...घर ढळ दोई चाँद ।।
बाळुला आमलाये।
गळ रस आम्बलो ऽऽऽऽ।।

नाल काटना

प्रसव प्रक्रिया के पश्चात् पहली विधि है। नाल एक ओर गर्भाशय से निकलती है और दूसरी ओर गर्भस्थ बच्चे की नाभि से जुड़ी रहती है। इसे 'नाळो' कहते हैं। इसे काटने के पश्चात् घर आँगन के बाँईं ओर एक गड्ढा खोदकर उसमें प्रसव का रक्त और नाळो को गाड़ दिया जाता है। इस विधि के पश्चात् माता शिशु को स्तनपान कर नहालाती है। शिशु को दिन में दो बार नहलाया जाता है। शिशु की मालिश कर पैरों पर औंधा लेटाकर स्त्रियाँ नहलाती हैं, जिससे शिशु तुरन्त सो जाता है। शिशु सो जाने के पश्चात् दादी माँ गाती है।

याड़ी बाप दिने जनम
नव मिना नव दाड घाली पेटे में
बाळा सो जोर।

लापसी

शिशु जन्म के पश्चात् माता को लापसी खिलाते हैं। लापसी गेहूँ के मोटे पिसे हुए आटे को भूनकर उसमें घी और गुड़ डालकर पानी में उबालकर तैयार किया जाता है। गाढ़ा होने पर उसे खाया जाता है। स्वादानुसार स्त्रियाँ इसमें काजू, बादाम डालती हैं। लापसी तैयार करते वक्त स्त्रियाँ गाती हैं–

बाईये लापसी मा टोपरो घाली काईं?
बाईये लापसी मा बादाम घाली काईं?
बाईये लापसी मा काजू घाली काईं?
बाईये लापसी मा इलायची घाली काईं?

नातरो

बंजारा जनजाति में जन्म संस्कार सम्बन्धित 'नातरो' नामक विधि सम्पन्न करने की परम्परा रही है, जिसमें बालक के सम्बन्ध में प्रशंसात्मक गीत गाये जाते हैं।

हाटडिया मत जाजो भाटन ये
भाटन भोली खेलन ये
हाटेर वाटेपर तो वेडो घालो ये।

गोरियों तुम सीधी सरल हो, इसके पश्चात् आप सभी को सावधान रहना है। क्योंकि हमारे घर में कान्हा ने जन्म लिया है। अब वह तुम्हें सरलता से बाजार जाने नहीं देगा, बल्कि तांड़े की गोरियों का रास्ता रोकेगा।

जळवा धकाणो

जन्म संस्कार में 'जळवा धकाणो' विधि भी बंजारों में महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। 'जळवा धकाणो' का अर्थ माता द्वारा अग्नि को प्रणाम करना होता है। इस विधि को सम्पन्न करने के लिये घर के आँगन में एक गड्ढा बनाया जाता है, जिसमें अग्नि प्रज्ज्वलित की जाती है।

इस संस्कार में पाँच निर्वस्त्र बच्चे माता के सिर पर पानी भरा घड़ा रखते हैं। माता वह घड़ा लेकर गड्ढे के पास आती है। वहाँ घड़ा रखकर दायें पैर के अँगूठे से पानी को अग्निमय गड्ढे में बहाया जाता है। अग्नि शांत होने के पश्चात् माता अग्निमय गड्ढे को प्रणाम करती है। तत्पश्चात् माता उन बच्चों को 'कुरल'[5] नामक प्रसाद देती है।

ये वेई माता सुतळी ढेरों
कातती-कातती वर आयेस
सुई दोरा लेन पर जायेस।।

सुतली और ढेरा (बंडल) लेकर इधर आ। सुतली या बंडल पुरुष की पहचान देते हैं। सुई डोरा लेकर उस पार चले जाना। सुई-डोरा लड़की के सांकेतिक अर्थ में लिया जाता है। तात्पर्य यह है कि फिर से लड़का ही होने दे लड़की नहीं। राजस्थान के प्रथा के अनुसार लड़की अशुभ मानी जाती है।

धुंड संस्कार

शिशु जन्म के पश्चात् आने वाली होली के शुभ अवसर पर धुंड संस्कार सम्पन्न करने की परम्परा इस समाज में है। जन्म संस्कार में धुंड की विधि बंजारा समाज में अत्यंत लोकप्रिय है। इस विधि के अवसर पर मस्ती में नाचने गाने के लिये बड़ी व्याकुलता के साथ बंजारे होली की प्रतीक्षा करते हैं। धुंड संस्कार सम्पन्न करने के लिए होली के दूसरे दिन सूर्योदय से पूर्व ही अग्नि जलाकर होली माता का दर्शन शिशु को कराया जाता है। इस संस्कार में होली पूजा को विशेष महत्त्व दिया जाता है। दूसरी विशेष बात यह कि इस संस्कार के अवसर पर लठ्ठमार होली भी खेली जाती है, जिसका आकर्षण आज भी तांड़े में बरकरार है। इस संस्कार के अंत में स्त्री-पुरुष एकत्रित होकर शिशु को आशीष देते हैं-

चरीक चरीया चम्पा ढोल।
जू-जू चराये ले रोला।।
पेलो बेटा नाईकी करीये।
दूसरो बेटा कारभारी करीये।।
तीसरो बेटा खादु चराये।
चौथो बेटा घेड़ चराये।।
पाँचवे बेटा छेंळी चराये।
छोंवो बेटा माँ-बाप पोसीये।।

इस गीत का भाव यह है कि 'धुंड संस्कार' में शिशु को आशीष देकर उसके कर्म को निश्चित करने की परम्परा रही है। इस समाज में यह धारणा है कि पहला बेटा परम्परा के अनुसार तांड़े का नायक बनेगा। दूसरा बेटा तांड़े का कारभारी पद सम्भालेगा। तीसरा बेटा गाय की चरवाही करेगा। चौथा बेटा घोड़ों की देखभाल करेगा। पाँचवा बेटा बकरियाँ सम्भालेगा और अंतिम बेटा माता-पिता की देखभाल करेगा।

केश निकालना

इस समाज में केश निकालने की विधि को 'जावळं काडणो' कहते हैं। हर व्यक्ति अपनी मनोकामना के अनुसार विधि-विधानसे और निश्चित समय पर इस संस्कार को सम्पन्न करता है। विशेषत: केश निकालने की विधि बकरे की बलि देने के पश्चात् पूर्ण होती

है। इस संस्कार में सम्मिलित होने के लिये घर का मुखिया अपने रिश्तेदारों को आमंत्रित करता है। सामूहिक भोजन के पश्चात् रात्रि में सत्संग का कार्यक्रम होता है। गीतों के माध्यम से स्त्रियाँ बच्चे के लिये ईश्वर से दुहाई माँगती है।

बाईए गुरूबाबा रो असीस छं,
तारे बाळापर।
बाईए गुरूबाबा आचोज करीय,
तारे बाळानं।

अर्थात् हे माता! गुरू बाबा का आशीर्वाद तुम्हारे बच्चे के साथ है। गुरू बाबा तुम्हारे बच्चे को अच्छा रखेंगे। उसी प्रकार केश निकालते समय भी गीत-गाये जाते हैं।

मामारो भाळंजो बेसमो गोदे मं
हातेमा खेलना रमरों डोले मं।
मामारी शिकें मानरोये कोई रमरोये।।
मामारो भाळंजो बेसमो गोदे मं
नावी आयो तांड़े म कतंळी हाते मं
बाळारे जावळ कोडे नयें जरा रमदो मन
मामारो भाळजो बेसमो गोदे मं।।

अर्थात् मामा का लाड़ला भांजा उनकी गोद में है। हाथ में खिलौना लेकर खेल रहा है। मामा उसका मन बहलाने के लिए उसको गोद में लेकर खेल रहे हैं। नाई तांड़े में आया है, उसके हाथ में उस्तरा है, जिससे बच्चे के केश निकालने हैं। इसलिए हे मामा! बच्चे को गोद में लेकर कुछ पल उसका ध्यान बटाओ, जिससे नाई केश अच्छी तरह से निकाल पाये।

जन्म के गीत

जन्म संस्कार भारतीय संस्कृति के सोलह संस्कारों में से एक महत्त्वपूर्ण संस्कार है। हिन्दू धर्म के अन्तर्गत सन्तानोत्पत्ति एक पुण्य कार्य माना गया है, जो प्रत्येक दम्पत्ति के लिये उसके लौकिक एवं पारलौकिक उद्धार के लिये आवश्यक है। सन्तानोत्पत्ति सृष्टि के विकास का अद्‌भुत रहस्य है। स्त्री-पुरुष इस विकास के मूल साधन हैं। भारत के प्राचीन शास्त्रों में स्त्री-पुरुष के इस गौरवमय कृत्य को धार्मिक क्रियाकलाप का रूप प्रदान किया गया है।

प्रजानार्थ महाभागा: पूजार्हा गृह दीप्तय:।
स्त्रिय: त्रियश्चगेहेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन।।

जन्म के समय गाये जाने वाले सोहर गीतों में भी हिन्दू धर्म के सन्तानोत्पत्ति सम्बन्धी विचारों का निरूपण प्रकट हुआ है। पुत्रोत्पत्ति के लिये स्त्रियाँ अनेक देवी-देवताओं की प्रार्थना-उपासना करने का उपक्रम करती हैं।

जन्म संस्कार पर गाये जाने वाले गीतों को सोहर, बधाय (बधाई) और जच्चा गीत कहते हैं। इन गीतों को कहीं-कहीं मंगल गीत भी कहते हैं। डॉ. कृष्ण देव उपाध्याय के अनुसार सोहर शब्द की व्युत्पत्ति शोभन शब्द से मानी जाती है। प्राचीन समय में पुत्र जन्म पर ही गीत गाने की परम्परा रही है। कन्या के उत्पन्न होने पर गीत नहीं गाये जाते थे। पर अब समय के साथ-साथ सोच और विचारधारा भी परिवर्तित हुई है। अब कन्या के जन्म पर भी गीत गाये जाते हैं।

बच्चे के जन्म होने पर घर तथा पड़ोस की स्त्रियाँ एकत्र होकर सोहर गाती हैं। इन गीतों को जच्चा गीत भी कहा जाता है। ये गीत छ: दिन बाद या दसवें दिन (दष्ठौन) गाये जाते हैं। छठी के दिन छठी के गीत तथा दसवें दिन दष्ठौन के गीत गाये जाते हैं। तीन दिन में सूतक उठती है। अनहानि पूजते हैं, जहाँ बच्चे का नरा गाड़ते हैं। बच्चा पैदा होते ही तीन दिन तक हरीरा और कूचा देते हैं। तीन दिन बाद मायके वाले दाल, चावल, रोटी, घी, गुड़ देते हैं। जहाँ नरा गाड़ते हैं, वहाँ धूप देते हैं। बुआ काजल लगाती है, और नये कपड़े पहनाती है। बुआ बधाई (बधाया) कराती है। झंगा टोपी लेकर आती है। सवा महीने बाद मायके वाले पूरे कुटुम्ब के कपड़े, दलिया, दाल, चावल, घी, शक्कर आदि सामान लाते हैं। जेवर भी लाते हैं, जच्चा-बच्चा के मूल लगते हैं तो मूल कटाते हैं, नौ दिन, पन्द्रह दिन, सत्ताईस दिन के मूल लगते हैं। मूल लगने पर पिता बच्चे का मुँह नहीं देखता है। मूल पूरे होने पर तेल की कटोरी में बच्चे का मुँह पिता देखता है, इसलिये इसे जोशी ग्यारी कहते हैं। सवा महीने बाद साफ-सफाई होती है, बामन ग्यारी होती है, इसके बाद जच्चा चौके में जाती है। बामन ग्यारी होने के बाद शुद्ध होते हैं। उसमें भी मायके वाले कपड़े लाते हैं। सवा महीने बाद घाट पूजा करते हैं। जब तक घाट पूजा नहीं होती, तब तक पानी नहीं भरते हैं, घिनौची (परण्डी) नहीं

छूते, नदी, नाला पार नहीं करते हैं। इसके बाद गीत गाते हैं यथा –

बधाया

1 *काकणवा मांगे ननदी लालन की बधाई*
इक रूपया मेरे ससुरा की कमाई
अठन्नी ले जा ननदी लालन की बधाई
काकणवा मांगे ननदी लालन की बधाई।।
इक अठन्नी मेरे जेठा की कमाई
चवन्नी ले जा ननदी लालन की बधाई
काकणवा मांगे ननदी लालन की बधाई।।
इक चवन्नी मेरे देवरा की कमाई
इकन्नी ले जा ननदी लालन बधाई
काकणवा मांगे ननदी लालन की बधाई।।
ये काकणवा मेरे राजा की कमाई
कुतंगा ले जा ननदी लालन की बधाई
काकणवा मांगे ननदी लालन की बधाई।।
बड़ी बाई आज अंगना में नाचे
छोटी बाई आज अंगना में नाचे
कि राजा पिया माथे की बेंदी मांगे
गोरी धना बहना को मना मत करियो
आज को दिन बार-बार नहीं आवे

2 *बड़ी बाई आज अंगना में नाचे*
छोटी बाई आज अंगना में नाचे
कि राजा पिया कानो की झुमकी मांगे
गोरी धना बहना को मना मत करियो
बड़ी बाई आज अंगना में नाचे
छोटी बाई आज अंगना में नाचे
कि राजा पिया गले का हरवा मांगे
गोरी धना बहना को मना मत करियो
आज को दिन बार-बार नहीं आवे
बड़ी बाई आज अंगना में नाचे
छोटी बाई आज अंगना में नाचे

3 *सीता के वन में लाल हुये*
लालन के खिलैया कोई नहीं
इधर सासु नहीं इधर अम्मा नहीं
परदा का तनैया कोई नहीं
सीता के वन में लाल हुये
लालन के खिलैया कोई नहीं
इधर जिठानी नहीं इधर काकी नहीं
लड्डू को बंधैया कोई नहीं
सीता के वन में लाल हुये
इधर दिरानी नहीं उधर भाभी नहीं
रसोई का तपैया कोई नहीं
सीता के वन में लाल हुये
इधर ननदी नहीं इधर बहना नहीं
जच्चा का गवैया कोई नहीं
कजला का अंजैया कोई नहीं
सीता के वन में लाल हुये

4 *ननदिया छिनार*
झंगा-टोपी ले के आयी
झंगा भी लाई वा ने टोपी भी लाई
ताल भर बेल दर्जी संग लेकर आई
ननदिया छिनार
झंगा-टोपी ले के आयी
लड्डू भी लाई वाने पेड़ा भी लाई
ताल भरे बेला बनिया संग ले के आई
ननदिया छिनार
झंगा-टोपी ले के आयी
पायल भी लाई वाने छूटा (करधोना) भी लाई
तल बेला सुनरा संग ले के आई
ननदिया छिनार
झंगा-टोपी ले के आयी

जच्चा

1 *मेरी जच्चा लली कुरचा के बटुआ खोलो लली*
छरछन्दों लली, फरफन्दो लली कुरचा के बटुआ खोलो लली
जच्चा की सासू ने मांगे दो लडुआ
जच्चा ने तोड़ लये दोय गलुआ
मेरी जच्चा लली कुरचा के बटुआ खोलो लली
जच्चा की जिठानी ने मांगी माथे की बेंदी
जच्चा ने ठोक दई किल

मेरी जच्चा लली कुरचा के बटुआ खोलो लली
जच्चा की देरानी ने मांगी हाथों की मूंदरी
जच्चा ने तोड़ दई चार उंगरी
मेरी जच्चा लली कुरचा के बटुआ खोलो लली
जच्चा के पड़ोसन ने मांगे दोय लडुआ
जच्चा ने फेंक दई दोय लुढ़िया
मेरी जच्चा लली कुरचा के बटुआ खोलो लली

जच्चा

2 *पीलो बहू सोठ पिपलिया*
ललन होले दूध पिये महाराज
अंगना में ठाड़े ससुर समझावे
कि पीलो बहू.....
नहीं पिऊँ सोठ पिपलिया
ससुर कड़वी लगे महाराज
अंगना में ठाड़े जेठ समझावै
कि पीलो बहू सौठ पिपलिया
ललन होले दूध पिये महाराज
नहीं पिऊँ सोठ पिपलिया
जेठ कड़वी लगे महाराज
अंगना में ठाड़े देवरा समझावै
कि पीलो भाभी सोठ पिपलिया
ललन होले दूध पिवे महाराज
नहीं पिऊँ सोठ पिपलिया
लाला कड़वी लगे महाराज
अंगना में ठाड़े ननदैव समझावै
पीलो सालज सोठ पिपलिया
ललन होले दूध पिवे महाराज
नहीं पिऊँ सोठ पिपलिया
ननंदेव कड़वी लगे महाराज
अंगना में ठाड़े राजा जी समझावे
पीलो गोरी धना सोठ पिपलिया
ललन होले दूध पिवे महराज
नहीं पिऊँ सोठ पिपलिया
राजा जी कड़वी लगे महाराज
अंगना में ठाड़े सासूजी समझावे
काटो धना की नाक
निकालो घर से
ललन होले दूध पिवे महाराज
पिलई जा सोठ पिपलिया
ललन होले दूध पिवे महाराज

3 *अंगना लगा दो कोई बैर*
जच्चा को मन बैरन पे
ससुर हमारे बड़े महाराजा
अंगना में लगा दई बैर
जच्चा को मन बैरन पे
जिठानी हमारी बड़ी जलकुकड़ी
जड़ से कटा दई बैर
जच्चा को मन बैरन पे
देवर हमारे बड़े महाराजा
अंगना में लगा दई बैर
जच्चा को मन बैरन पे
दिरानी हमारी जलकुकड़ी
जड़ से कटा दई बैर
जच्चा को मन बैरन पे
ननदेऊ हमारे बड़े महाराज
अंगना लगा दई बैर
जच्चा को मन बैरन पे
ननदी हमारी बड़ी जलकुकड़ी
जड़ से कटा दई बैर
जच्चा को मन बैरन पे
राजाजी हमारे बड़े महाराजा
अंगना लगा दई बैर
जच्चा को मन बैरन पे
सोतन हमारी जनम की बैरन
जड़ से कटा दई बेर
जच्चा को मन बेरन पे।

सोहर

1 *राजा जी मेरे भोतई भोरे जी*
साहिब जी मेरे भौतई भोरे जी

काहो तो गोरी धना मोटी सी हो रई
राजा पिया मोहे बादी चढ़ गई
राजा जी मेरे भोतई भोरे जी
साहिब जी मेरे भौतई भोरे जी
काहो तो गोरी धना कछु पीली सी पड़ गई
राजा पिया मोहे पीलिया हो गओ
राजा जी मेरे भोतई भोरे जी
साहिब जी मेरे भौतई भोरे जी
काहो तो गोरी धना कछु पेटे से बढ़ गए
राजा जी मेरे भोतई भोरे जी
साहिब जी मेरे भौतई भोरे जी
काहो तो गोरी धना परदा से तन गए
राजा पिया मोहे ताप चढ़ी है
राजा जी मेरे भोतई भोरे जी
साहिब जी मेरे भौतई भोरे जी
काहो तो गोरी धना रोनो सुना रओ
राजा जी पिया दोई बिल्ली सी लाड़े
राजा जी मेरे भोतई भोरे जी
साहिब जी मेरे भौतई भोरे जी
काहो तो गोरी धना ललना कोके खेले
राजा पिया ललन अपने खेले
राजा जी मेरे भोतई भोरे जी
साहिब जी मेरे भौतई भोरे जी

2 *तीजे महीना को सपनो सुनो मेरी सासू जी महराज*
सुनो मेरी सासू जी महाराज
चन्दा सूरज दोई छुटक रहे अंगना महाराज
चौथा महीना को सपनो सुनो मेरी सासूजी महाराज
धड़क-धड़क रही कछु हो रओ जी मेरी सासूजी महराज
पांचवो महीना को सपनो सुनो मेरी सासूजी महाराज
जा बगल से वा बगल हो रहे महाराज
छठवें महीना को सपनो सुनो मेरी सासूजी महाराज
जैसे चमेलिया लिपट रही महाराज
सातवें महीना को सपनो सुनो मेरी सासूजी महाराज
जैसे कि चम्पा-चमेली फूल रही अंगना सासूजी महाराज
आठवें महिना को सपनो सुनो मेरी सासूजी महाराज
आंगना मेरे पलना हो डरे महाराज
नौवे महीना को सपनो सुनो मेरी सासूजी महाराज
आंगन मेरे राम-लखन खेल रहे सासूजी महाराज

3 *कोने के अंगना चमेलिया तो लहर-लहर करे हो लाला*
कोने की धनिया गरब से तो हुई हो लाला
सास सोवे ओभरी नननी सोवे झने ओभरी हो लाला
पिया सोवे अटारी खबर वाकि को लेवे लाला
छोटो सो देवरा में तेरे पइया लांगू सास बुलाय लाओ हो लाला
दर्द की मारी गौरीघना विघन होय हो लाला
भई भुनसारे लालन भए गाने लगे सोहर बाजन लगाई
बधाई बटन लगे लड्डू लुटन लगी मोहरे हो लाला।

शब्दार्थ - **कुरचा** = छुपा के रखने वाले पैसे। **छरछन्दों-फरफन्दों** = चालाक। **गलुआ** = गाल। **लडुआ** = लड्डू। **नननी** = ननद। **छींट** = ब्लाउज। **भोतई** = बहुत। **भोरे** = भोले। **गोरीधना** = पत्नी। **कोके** = कौन।

संदर्भ

1. सुनील खन्धारे, शोध छात्र, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन
2. राठौड़ गणपत- बंजारा लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, चन्द्रलोक प्रकाशन, 128/106 जी ब्लाक किदवई नगर, कानपुर, 2002
3. राठौड़ आत्माराम कनीराम- गोर बंजारा इतिहास व लोकजीवन, गोखट प्रकाशन मोटा, पुसद, जिला यवतमाल, 1994
4. राठौड़ मोतीराज - गोरमाटी, बंजारा सांस्कृतिक साहित्य परिषद्, संजय नगर औरंगाबाद, 1998
5. चह्वाण मोहण लक्ष्मणराव-बंजारा बोली, भाषा-एक अध्ययन, सूर्या प्रकाशन, आनंद विहार, कानपुर- 2007
6. स्वयं द्वारा किया गया सर्वेक्षण

कोरकू जन्म संस्कार

डॉ. धर्मेन्द्र पारे

संसार की अन्य जातियों की भाँति कोरकू जनजाति में भी मातृत्व सामर्थ्य स्त्री जीवन की सार्थकता और अनिवार्यता से जुड़ी है। कोरकू जनजाति में यह जानकारी तो है कि स्त्री और पुरुष के संसर्ग से ही संतानोत्पत्ति संभव है, किन्तु कोरकू जनजाति में पक्के तौर पर भरोसा किया जाता है कि संतानोत्पत्ति देव कृपा से ही संभव है। हिन्दुओं की भाँति कोरकू जनजाति में भी प्रबल विश्वास है कि केवल व्यक्ति के शरीर का अंत होता है और आत्मा बार-बार जन्म लेती है। कोरकू जनजाति में यह विश्वास भी किया जाता है कि जन्म लेने वाला शिशु उनका अपना ही कोई पूर्वज है। एक कुल की आत्मा उसी कुल में दुबारा जन्म लेती है। उनके अनुसार पूर्वजों की आत्माएँ अपने वंश परिवार में जन्म लेने के लिए प्रतीक्षारत होती हैं। संतान का न होना कोरकू जनजाति में दैवीय प्रकोप माना जाता है। विवाह के कितने दिनों के बाद स्त्री को गर्भवती हो जाना चाहिए, ऐसा कोई निश्चित नियम तो नहीं है, फिर भी साल भर के भीतर परिवार में इस बात की चिंता होने लगती है और परिवार के लोग विशेषकर बूढ़ी महिलाएँ इस दिशा में प्रयासरत हो जाती हैं। कोरकू संसार की प्रत्येक चीज दैवीय होती है। उसके निवारण के लिए परम सत्ता का एक मात्र प्रतिनिधि पड़िहार होता है। संतानहीनता की दशा में स्त्री को पड़िहार के पास ले जाया जाता है। पड़िहार के शरीर में देव आत्मा प्रवेश करती है और फिर पड़िहार उस देवात्मा से बात कर संतानहीनता के कारण और उपाय सम्बन्धित को बताता है। इस क्रिया को बैठक लेना भी कहा जाता है। इस बैठक में पड़िहार सम्बन्धित व्यक्ति को बताता है कि अमुक आत्मा या देव के नाराज होने के कारण उसके यहाँ संतान की उत्पत्ति नहीं हो पा रही है। यह बैठक प्राय: मंगलवार या शुक्रवार या कृष्ण पक्ष की अष्टमी या नवमीं तिथि को होती है। पड़िहार उस स्त्री के ऊपर से एक मुट्ठी ज्वार या गेहूँ उतारकर मंत्र पढ़ते हुए दाने अपने रजालिया की तरफ फेंकता है। वह इन दानों को झेल लेता है, झेले हुए दानों की गणना कर पड़िहार उसके निहितार्थ समझाता है। इस अवसर पर पड़िहार उस महिला को बेल या ताबीज पहनने के लिए भी दे सकता है। इस प्रक्रिया के फलस्वरुप यदि स्त्री गर्भधारण कर लेती है, तो पड़िहार को भेंट दी जाती है। भेंट में मुर्गी, बकरा या नारियल कुछ भी लिया

जा सकता है। यदि पड़िहार की इस क्रिया के बाद भी संतान नहीं हो तो उसे देव प्रकोप ही समझा जाता है। शायद ही कोई कोरकू पड़िहार की इस पद्धति पर कभी संदेह करता हो। हिन्दू समाज की अन्य पिछड़ी जातियों में भी देवों और पड़िहारों की ऐसी ही संबद्धता देखी जा सकती है। यदि संतान नहीं हो रही हो तो कोरकू लोग दूसरे भुमका या पड़िहार के पास भी जा सकते हैं या फिर वे जादू-टोने भी कर सकते हैं। इसमें सबसे प्रचलित विश्वास है कि किसी बाल-बच्चे वाली स्त्री के सिर के कुछ बाल चुपके से काटकर संतान चाहने वाली स्त्री के नहाने वाले स्थान के नीचे गाड़ दिए जायें और उस पत्थर पर बैठकर वह माह भर तक स्नान करे तो उसे संतान प्राप्ति हो जाती है। संभवत: पितृसत्तात्मक हिन्दू समाज की भाँति ही संतानहीनता के लिए स्त्री को ही दोषी माना जाता है। इस कारण कोरकू स्त्री में संतान उत्पत्ति की लालसा अत्यंत प्रबल होती है। कोरकू जनजाति में ऐसे गीत प्राप्त होते हैं, जिनमें बाँझ समझी गई स्त्री की व्यथा बहुत मार्मिकता के साथ अभिव्यक्त हुई है। यहाँ सबसे उल्लेखनीय पहलू यह है कि संतान कामना में स्त्री हमेशा पुत्र कामना ही नहीं करती। कोरकू जनजाति के वे गाँव जो हिन्दू जाति की आबादी वाले गाँवों से सीधे-सीधे संपर्क में नहीं है, वहाँ संतान कामना में पुत्र लालसा उल्लेखनीय रूप से कम देखने को मिलती है, किन्तु वे गाँव जहाँ अन्य जातियाँ भी निवास करती हैं, संतान कामना के गीतों में पुत्र प्राप्ति की लालसा समान रूप से बलवती मिलती है। इसे अन्य जातियों का स्पष्ट प्रभाव माना जाना चाहिए, बल्कि कोरकू जनजाति में पहले ऐसे गीत भी गाये जाते थे, जिनमें माताएँ संतान की कामना में पुत्री चाहती हैं। कोरकू जनजाति के गीतों के प्रारंभिक संकलनकर्ताओं ने ऐसे गीतों का उल्लेख किया है, जिसमें माँ कहती है कि हे बहन! मेरी प्रार्थना ईश्वर ने सुन ली है। मैं गर्भवती हो गई हूँ। मुझे भी दर्द की खुशी है। नौ माह बाद लड़की होगी, जब वह बड़ी होगी, मेरे साथ पनघट पर जायेगी, वहाँ से पानी पत्थर लायेगी, उस पत्थर की चक्की बनायेगी, चक्की में अनाज पीसेगी, देख पेट में हलचल मची है। ऐसा लगा वह काम में हाथ बँटा रही है।[1] किसी भी समाज की मानसिकता के साथ लोकगीतों में भी बदलाव आ जाता है। बदलाव के इन कारणों को भी समझा जाना चाहिए। दूसरा अर्थ यह भी है कि कोरकू जनजाति में पुत्री की कामना का स्थान पुत्र कामना ने ले लिया है। सर्वेक्षण के दौरान इस प्रकार के कुछ गीत प्राप्त हुए हैं, जिनमें पुत्री के जन्म की खुशी और जश्न के इज़हार के लिए हरदा शहर में जाकर बंदूक दागने की बात की गई है। जैसे-जैसे कोरकू जनजाति अन्य हिन्दू जातियों के सम्पर्क में आती गई, वैसे-वैसे इस जनजाति पर अन्य जातियों के मान मूल्य का प्रभाव बढ़ता गया है। कोरकू जनजाति के जन्म सम्बन्धी गीत इसके उदाहरण के रूप में हमारे सामने आते हैं। बढ़ते पुत्र मोह के गीत इसके उदाहरण हैं, किन्तु आज भी कोरकू जनजाति में पुत्री का जन्म हिन्दू समाज के समान दु:ख का कारण नहीं बनता। शायद ही कोई कोरकू हो जिसने भ्रूण हत्या की हो। इसके पीछे एक कारण यह भी है कि कोरकू जनजाति में दहेज प्रथा नहीं है, बल्कि इस जनजाति में भी अन्य जनजातियों के समान वधू मूल्य अर्थात् वर पक्ष से राशि- अनाज और बैल इत्यादि लिए जाते हैं। एक और प्रमुख बात यह है कि कोरकू जनजाति में किसी तरह का जातिगत विभाजन नहीं है, न ही हिन्दू समाज की तरह यहाँ नाई और धोबी जातियाँ विद्यमान हैं, जिनकी संस्कारों के समय पेशेगत भूमिका होती है।

गर्भकाल के निषेध

जब कोरकू स्त्री गर्भवती हो जाती है, तब भी उसकी दैनिक दिनचर्या पर शुरू में कोई अन्तर नहीं आता। वह पूर्ववत् ही श्रमपरक कार्यों में रत रहती है। गर्भकाल के दौरान कोरकू स्त्री को कोई बुरी आत्मा का प्रकोप न हो जाये, इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है। गर्भवती स्त्री पर घोड़े की छांव पड़ना बुरा माना जाता है। गर्भवती स्त्री का किसी श्मशान से गुजरना और हल बक्खर आदि को उलांघना भी बुरा माना जाता है। गर्भवती स्त्री के द्वारा मछली पकड़ना और सूअर का मांस खाना प्रतिबंधित होता है। सुई में धागा डालना और अपने गोत्र के वृक्ष या प्राणी को काटना भी बुरा माना जाता है। गर्भवती स्त्री को इस बात की भी हिदायत होती है कि वह पानी ढोते वक्त अपने सिर पर घड़े पर घड़े रखकर न लाये। उस स्त्री को अपनी कमर पर भी भरा हुआ घड़ा रखकर नहीं लाना चाहिए, अन्यथा उसकी होने वाली संतान अधूरी रह जायेगी, अर्थात् गर्भपात हो जायेगा। एक मान्यता यह भी है कि गर्भवती स्त्री को आम के पेड़ के नीचे से नहीं गुजरना चाहिए, अन्यथा उसकी प्रजनन सामर्थ्य नष्ट हो जायेगी।[2] गर्भवती स्त्री को रजस्वला स्त्री से भी दूर रहना चाहिए। ऐसी भी मान्यता है कि जब उल्लू बोल रहा हो या कुत्ता और सियार रो रहे हों, तब भी आसन्न प्रसूता को घर से बाहर नहीं निकलना चाहिए। उसको इस बात की

भी सावधानी रखना चाहिए कि साँप उसका रास्ता न काटे। एक अन्य विश्वास यह भी बताया है कि यदि गर्भवती स्त्री को पुत्र की कामना है तो उसको पूर्ण चन्द्रमा की रात्रि में नहाना चाहिए और यदि वह होने वाली संतान पुत्री चाहती है तो उसे प्रथम तिथि की रात्रि में स्नान करना चाहिए।[3] हालाँकि स्टीफन फुक्स द्वारा उल्लेखित सभी विश्वासों की पुष्टि नहीं हो सकी किन्तु इनकी सत्यता पर संदेह भी नहीं किया जा सकता, क्योंकि कोरकू जनजाति में क्षेत्र और गाँवों के अनुसार भी विश्वास बदल जाते हैं।[4] गर्भवती स्त्री को किसी तरह की समस्या होने पर दाई या अनुभवी महिला ही इलाज करती है। कोरकू स्त्रियों के प्रसव में दाई की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। प्रसव घर के ऐसे स्थान पर होता है, जो खाना बनाने के स्थान से हटकर हो तथा घर के मुख्य रास्ते के ठीक सामने न हो। इसके पीछे यह सोच होती है कि बुरी आत्माएँ और नजर के सामने प्रसूता न आ पाये। रसोई से दूरी पवित्रता की खातिर रखी जाती है। लगातार श्रमरत रहने से कोरकू स्त्रियों के प्रसव प्रायः सहजता से सम्पन्न हो जाते हैं। वन क्षेत्रों में बसे गाँवों में प्रसव कष्ट हो रहा हो तो तुरंत पड़िहार से पूछा जाता है। प्रसव को आसान बनाने के लिए पड़िहार पूजा-पाठ, मंत्र आदि करता है। कोरकू जनजाति में ऐसी भी मान्यता है कि यदि प्रसूता को बहुत कष्ट हो रहा हो और संतान जन्म नहीं ले पा रही हो तो उस स्त्री के पति के बायें पाँव को धोकर उस पानी को प्रसूता को पिलाने से प्रसव आसानी से हो जाता है। इस विश्वास का उल्लेख कुछ अन्य समाजशास्त्रियों ने भी किया है। प्रसव को आसान और कष्ट रहित बनाने के लिए कुछ अन्य विश्वासों के विषय में रसेल और हीरालाल ने भी उल्लेख करते हुए कहा है कि बंदूक या पिस्तौल की नली या इसी तरह की तेज गति से निकलने वाली चीजों को धोकर लिया गया पानी प्रसूता को पिलाने से भी कोरकू स्त्री को प्रसव सुगमता से सम्पन्न हो जाता है, ऐसी कोरकू मान्यता है।[5] किन्तु मुझे अपने सर्वेक्षण के दौरान बंदूक-पिस्तौल की नली से निकले पानी को पिलाने वाली मान्यता की जानकारी कहीं नहीं मिली है। मुझे भी इस बात में संदेह है कि कोरकू जनजाति में बंदूक और पिस्तौल जैसे महंगे हथियार बहुत ही कम पाये जाते हैं। पिस्तौल तो बिल्कुल ही नहीं। बंदूक भी कई गाँवों में नहीं होती। ऐसी स्थिति में यह विश्वास कैसे चल पड़ा, विचारणीय है।[6] कोरकू महिला को प्रथम प्रसव सामान्यतः अपने मायके में ही होता है। प्रसव गाँव की किसी वृद्ध महिला के द्वारा सम्पन्न होता है, जिसे सुइनी सानी या दायन माय कहा जाता है। उन गाँवों में जहाँ नहाल लोग भी निवास करते हैं, वहाँ यह कार्य नहाल जाति की स्त्री द्वारा किया जाता है। गर्भवती कोरकू स्त्री को शायद ही अपने प्रसव की निश्चित तिथि का ज्ञान रहता है। इसका एक कारण तो यह है कि इस प्रकार की वैज्ञानिक सोच और गणना का अभाव। कोरकू स्त्रियों को अपने मासिक चक्र और गर्भवती होने के माह की ठीक-ठीक जानकारी नहीं होती, इसलिए बहुधा ऐसा भी होता है कि उनको कहाँ और कब प्रसव पीड़ा हो जायेगी, इसका अंदाज नहीं रहता। बहरहाल वे लक्षणों के आधार पर समझ जाती हैं और उस दौरान आम तौर पर घर पर ही रहती हैं। प्रसव के दौरान दाई को बुलाया जाता है, साथ में अन्य स्त्रियाँ भी सहयोग करती हैं, किन्तु कुँआरी लड़कियों का उस कक्ष में प्रवेश वर्जित होता है। इसके पीछे ऐसी मान्यता है कि यदि कुँआरी लड़की वहाँ उपस्थित रहेगी तो वह बाँझ हो जायेगी। प्रसूता को जमीन पर लिटा दिया जाता है। प्रसव को आसान बनाने के लिए सुइनी सानी अर्थात् दाई प्रसूता की मालिश आदि करती है। सामान्यतः प्रसव आसानी से सम्पन्न हो जाते हैं, किन्तु इसमें कठिनाई हो तो पड़िहार से संपर्क किया जाता है और वह इसके लिए कारण बताते हुए भेंट पूजा प्राप्त कर लेता है। पड़िहार हमेशा आत्माओं के प्रकोप की बात ही बताते हैं। अब कुछ गाँव जो शहर के आसपास हैं, इक्का-दुक्का कोरकू लोग अस्पताल में भी स्त्री को ले जाने लगे हैं। प्रसव के दौरान यदि जन्में शिशु का सिर पहले बाहर आता है तो इसे शुभ माना जाता है और यदि शिशु के पाँव पहले बाहर आते हैं तो उसे अच्छा नहीं समझा जाता है। बालक को गर्म पानी से साफ किया जाता है। माँ और शिशु को सबसे पहले जमीन पर ही लेटना होता है। इसके पीछे यह विश्वास है कि हम सब धरती माँ से ही उत्पन्न हुए हैं और अंततः हमें धरती में ही समाना है। अतः धरती माँ को प्रथम स्पर्श जरूरी होता है।[7] प्रसव के दौरान यदि माँ या शिशु की मृत्यु हो जाये तो इसे बहुत बुरा माना जाता है। ऐसा समझा जाता है कि मरने के बाद माँ चुड़ैल बन जाती है। शिशु जन्म के बाद उसकी नाल काटने का कार्य दाई करती है। इसमें छुरी, दराती या बाँस की खपच्ची का इस्तेमाल होता है। इस नाल को घर के एक कोने में गड्ढा खोदकर गाड़ दिया जाता है। हिन्दू जातियों के समान ही पुत्र जन्म पर थाली और पुत्री जन्म पर सूपड़ा बजाया जाता है, किन्तु सभी गाँवों में ऐसा नहीं होता। शिशु जन्म के बाद प्रसूता को कहीं-कहीं तीन दिन तक जमीन पर ही सोना होता है। इन दिनों में

प्रसूता को दाई के निर्देशानुसार ही भोजन दिया जाता है। तीसरे से लेकर बारहवें दिन तक कभी भी नवप्रसूता द्वारा जल स्थान की पूजा की जाती है। इसे बारसा भी कहा जाता है। जिस दिन यह पूजा होने वाली होती है, उस रात तड़के ही दाई गाँव के अन्य नाते रिश्तेदारों के घर के सामने राख से गोला बना आती है। इस प्रतीक को आमंत्रण समझते हुए सभी स्त्रियाँ सम्बन्धित के घर जुट जाती हैं। प्रसूता को नये वस्त्र पहनाकर नदी या कुएँ तक पूजन के लिए ले जाती हैं। पूजन के बाद उस स्थान से कंकड़ लाकर घर के चारों ओर फेंके जाते हैं, इस भावना और विश्वास के साथ कि इससे शिशु पर बुरी आत्माओं का प्रभाव नहीं पड़ेगा। आज के दिन जिस स्थान पर नाल गाड़ी जाती है, उसकी भी पूजा की जाती है, उस दिन घर में हैसियत के अनुसार भोजन बनता है और दाई को उपहार देकर विदा किया जाता है।

नामकरण

बच्चों का नामकरण इस दौरान ही घर का कोई बड़ा बुजुर्ग व्यक्ति कर देता है। कोई-कोई व्यक्ति यह भुमका या पड़िहार से भी करवाता है। कई बार बच्चों को घर में कुछ नाम से पुकारा जाता है और स्कूल में दाखिला लेते समय नाम कुछ और कर दिया जाता है। कुछ बच्चों का कान भी छिदवाया जाता है, किन्तु अब कान छिदवाने का रिवाज बहुत कम रह गया है। यही स्थिति गुदने की है। बुरी आत्माओं के भय से कोरकू संसार हमेशा ग्रसित रहता है, इसलिए वे तरह-तरह के टोने-टोटके करते हैं। विदा होने के पूर्व दाई शिशु को काले धागे बाँध जाती है। प्रसव के कुछ दिनों बाद तक शिशु और माँ को अपवित्र समझा जाता है। लगभग माह भर बाद स्नान पूजन की क्रिया होती है, उसके बाद माँ और शिशु स्पर्श योग्य समझे जाते हैं। कोरकू जनजाति के वे गाँव जो शहरों से दूर हैं, जहाँ रास्ते दुर्गम हैं और अन्य जातियों से सम्पर्क कम है, वहाँ बाल मृत्यु दर की घटना ज्यादा हुई है। उन गाँवों में शिशु की सुरक्षा का एकमात्र दारोमदार पड़िहार पर ही होता है। गरीबी और जानकारी की कमी के कारण बच्चों का उचित टीकाकारण भी नहीं हो पाता। न ही कोरकू जनजाति में दो बच्चों के बीच अंतराल रखने का कोई प्रयास किया जाता है। हिन्दू समाज की पिछड़ी और अनुसूचित जातियों में जो-जो अंधविश्वास और टोने-टोटके या रीति-रिवाज प्रचलित हैं, कमोवेश वे सभी कोरकू जनजाति में थोड़े या ज्यादा रूप में देखने को मिल जाते हैं। शिशु की देखभाल भी माता-पिता की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती है। यदि उस परिवार की आजीविका पूर्णत: दूसरों की सेवा चाकरी और मजदूरी पर निर्भर होती है तो वह स्त्री जल्दी ही काम करने लगती है, अन्यथा प्रसूता को कुछ माह आराम मिल जाता है।

बहरहाल कोरकू जनजाति के पास जिस चीज की अपार समृद्धि है, वह है नृत्य और गीत। बच्चे के जन्म संस्कार से सम्बन्धित गीतों की संख्या अनगिनत है। इन गीतों को खांचा ऊमून कहा जाता है। ये गीत महिलाओं द्वारा गाये जाते हैं, जिनमें कहीं तो बंध्या की व्यथा के दर्शन होते हैं, तो कहीं मानवती नायिका अपने मातृत्व सामर्थ्य पर गर्व अभिव्यक्त करती नजर आती है। यहीं कुछ गीत स्त्री समानता और स्वातंत्र्य की भावना को गुंजार करते हुए बेटी के जन्म पर हर्ष और गर्व की बात करते हैं। कुछ ऐसे गीत भी मिलेंगे, जिन्हें उम्र में परवर्ती माना जाना चाहिए, जो अपने भीतर सामंती समाज की सोच समाये होते हैं। कहीं सुइनी सानी अर्थात् दाई की मान-मनुहार तो कहीं पति और भावी पिता की व्यग्रता छलक पड़ती है। कुछ गीत उन हजारों कोरकू गीतों की तरह भोले और निर्मल भावों से लहराने लगते हैं, जिनमें प्रकृति और उसके उपादान क्रीड़ा करते हैं। उदाहरणार्थ-

चलो बमना बालकों घर मा
बालकों घर में बालक रोये
बंझोरी घर में बिडकी रोवे
बालकों घर में सोना की झूल
बंझोरी घर में लोहा की झूल [8]

चलो ब्राह्मण बालक! वो घर में चलो। जिस घर में बालक रो रहा हो। बाँझ स्त्री के घर में बिल्ली रो रही है। बालक वाले घर में सोने का झूला है और बाँझ के घर में लोहे का झूला।

खांचा ऊमून बच्चों के जन्म के दस दिन बाद मनाया जाता है। कोरकू जनजाति में किसी तरह की जाति प्रथा नहीं है। केवल सगोत्री विवाह नहीं होते। देसी कोरकू और जंगल कोरकू (जिन्हें कई नामों से जाना जाता है) में भी परस्पर वैवाहिक रिश्ते नहीं होते। किसी ब्राह्मण पुरोहित से अनुष्ठान भी नहीं करवाये जाते किन्तु, अब कहीं-कहीं उन गाँवों में जिनमें अन्य जातियाँ भी निवास करती हैं, पुरोहित कर्मकांड व अनुष्ठान में आने लगे हैं। चूँकि टेमलावाड़ी गाँव में सभी जातियाँ निवास करती हैं, इसलिए

यह गीत एक अपवाद इस रूप में है कि इस पर अन्य जातियों के बीच रहने के कारण उनके रीति-रिवाजों का प्रभाव स्पष्ट दिखायी देता है।

कोरकू जनजाति में सौंदर्य के अपने मानक हैं। ये सारे मानक उसकी सहोदरा और उसके मन प्राण में बसी प्रकृति से ही आते हैं। एक माँ अपने बच्चे की सुंदरता 'भरदूम पक्षी' के समान चाहती है-

रेंगोली डो बारे रेंगोली डो
बारे रेंगोली इंजकेन भरदुम
कोन डोके कौन-कौन विजा रेंगोली
रेंगोली डो बारे रेगला डो बारे रेंगोली इंजकेन
चोबो चुरगी मुट्ठी को लिजा सावींजा रेंगोली [9]

पत्नी अपने पति से कह रही है कि मेरा बच्चा भरदूम नामक पक्षी की तरह सुन्दर होना चाहिए। तुम मुझे अच्छी सुन्दर चोली और अच्छा लुगड़ा ले देना, इसी से मेरी शोभा बढ़ेगी। (यह बात नवप्रसूता माँ की ओर से कही जा रही है।)

कष्टों से उत्पन्न और परवरिश पाया बालक भविष्य में कहीं पराया न हो जाये, यह आशंका कोरकू स्त्री को हमेशा सताती है। वह गीत में अपनी अभिव्यक्ति करते हुए कहती है-

राम जूर जूर गारोरी गारोरी बेटा बिजोरा
बेट केन नौ महिना पेटो में समायो गारोरी बेटा
बेटा के कोचा ढूंढ खिलायो गारोरी
बेटा मे सूखा जगह सुलायो
माय तो आला जगा सोइयो गारोरी
मेठा नी ढीबा जा बेटा बिजोरा गारोरी
बेटा बिजोरा बूलू नी पालकी जा बेटा [10]

बेटा! मैंने तुम्हें धार-धार आँसुओं में कष्ट उठाकर पाला है। बेटा! मैंने नौ महीने तुम्हें गर्भ में रखा है। बेटा! मैंने तुम्हें कच्चे दूध से पाला है। तुम्हें सूखी जगह पर सुलाया और स्वयं गीली-गीली (या नम) जगह पर सोई हूँ। मैंने आँख का दीपक बना लिया (रात भर जागती रही) मैंने अपनी जांघ को पालकी (झूला) बना लिया और तुम्हारी परवरिश की है।

कोरकू मातृत्व को सम्मान देता है और बंध्यत्व को तिरस्कृत। सृजन और निर्माण उसका स्वप्न है। अनुत्पादकता उसका कभी ध्येय नहीं हो सकता -

रानी डो रानी डो रानी माय बेरिया पालंगो
सोवेडो माय खुदुमा खुड हास
बार डो बाझोरी बये डो बाझोरी माय रीटा पालंगो सोवे
रीटा पालंगो सोवे डो माय रोचो मा रोचो रोवे
रानी डो रानी रानी डो माय बेरिया पालंगो सोवे
बार डो बांझोरी बार डो बांझोरी माटा रीटा पालंगो सोवे
रीटा पालंगो सोवे डो माय रोचे मा रोचो रोवे
फूजो डो फूजो सीताराम जा फूजो डो माय नागर निशान झूरे [11]

(घर में बालक का जन्म हुआ है) शिशु की माँ रानी की भाँति बिस्तर और पलंग पर सोई है। उसका शिशु भी पलंग पर गदगद करते हुए हँस रहा है। इधर बाँझ स्त्री का पलंग रीता है, उस पर कोई नहीं सोया है। वह रो रही है। शिशु के घर में खांचा ऊमून पर पूजन उत्सव रखा गया है। घर पर देव की प्रतिष्ठा में झंडा लहरा रहा है।

कोन मा कोन डो पुग्या जा कोन पुग्या जा
कोन जा सोना जा कोन
सोना जा कोन के रेशमों झूड़ा डो
बागे रेशमा डोरा डो सालोनी नी
अचारेन परदा आऊगे [12]

बेटे का जन्म हुआ है। वह ओझा जैसा है, लेकिन इसे ओझा मत समझना। यह सोने का बेटा है। रेशम की डोर से झूला बाँधो। अपने लुगड़े के पल्गे से ओढ़ा दो।

माँ-बेटी के जन्म पर प्रसन्न तो है, किन्तु वह इस कटु तथ्य को आज से ही जानती है कि उसकी बेटी को एक दिन पराये घर जाना है। माँ का वात्सल्य आसन्न विछोह को प्रथम दिन से ही महसूस करता है। वह कहती है-

आजे डो कोन्जई आजे डो कोन्जई राजो
गद्दी सुबाई आमा कोरा कोकेडा पढ़ाई डो
कोन्जई रोचो न रोचो माराटेन बोचोवा डो
कोन्जई आम नी इयां नी कोन्जई कोन्जई
आमा गाव नी ऐल्ले नी वाने डो कोन्जई [13]

आओ बेटी! आओ आज राजगद्दी पर बैठो! तुम कोरे कागज लेकर पढ़ाई करने जाओ। बेटी माँ की आँखों से बूँद-बूँद आँसू लरज रहे हैं। बेटी! तुम्हारा घर तो ससुराल ही है। बेटी! यह गाँव तुम्हारा नहीं है।

भारत की कितनी जातियाँ हैं, जिनमें बेटी के जन्म का इस तरह स्वागत किया जाता है? मेघालय की खासी जनजाति में अवश्य बेटी के जन्म पर खुशियाँ मनाई जाती हैं, किन्तु वह जनजाति तो स्पष्ट रूप से मातृ-सत्तात्मक जाति है।

कोरकू जनजाति के द्वैत को, अंतर्विरोध को और बदलते हुए समाज को उसके गीतों से ही जाना जा सकता है। कतिपय गीतों में अभिव्यक्त समाज पारंपरिक हिन्दू समाज की भाँति ही सामने आता है-

गुड गुड को चिन्दी आई डो इयां माई
रीगी ओ इयां माई इयां भाई रीगी वो
टोपी ना सीवे ओ इयां माई हो तो बेटा
राज कमाय कोन्जई हो तो मोरी माई
रात दिन राड मचाये, आखू बोचोगेवा जा कोन्जई [14]

तरह-तरह की चिन्दी (कपड़े की कतरन) आई है मेरी माँ! आप इनसे मेरी टोपी सिलो मेरी माँ! यदि बेटा होगा तो राजपाट कमायेगा। बेटी होगी तो रात दिन सबको रुलायेगी। मेरी आँख से आँसू गिरायेगी बेटी।

होरे कूखाडू रूड मा रूड आजे डो
जल्मी आयोम सोने की खिवाडू खोलो
हीरा लाल टेगेनवा डो जल्मी आयोम [15]

तीतर का पूरा समूह सड़क-सड़क आया है। जन्म देने वाली मेरी माँ सोने के किवाड़ खोल दो, हीरालाल खड़ा होने लगा है।

डुगीकू डुगीकू खाडू राजन डेई
सुसून मारे चोजा मा आसीबा चोजा मा
जुजुमवा डुगीकू खाडू जा सुसुन वा
पैसी भी बागो धैला भी बागो
डुगूकी खाडू सुसून वा चाना भी दाना बागो जा
डुगीकू दाना बागो जा कोलीमीटो डोंगोर जा
डुगीकू मिया नी मिटर जा डोंगोर बायल लाये जा
कुलू भी जोपे राजन जा डाई जा डाई
डुगीकू खाडू भी सुसून वा जा मारे [16]

बंदरों ही बंदरों का समूह नाच रहा है- हे राजा भाई! क्यों माँ, क्यों पिताजी? वे क्या खायेंगे, देखो बंदर ही बंदर नाच रहे हैं। अपने पास तो पैसा भी नहीं, धेला भी नहीं। बंदर चने के दाने मत खाओ। जाओ कालीभीत के जंगल में जाओ। एक मीटर जंगल में जाकर जंगल पिंडी खोदो। शेर भी खायेगा भाई। बंदर ही बंदर नाच रहे हैं।

मिया नी दाना जोवन जा जगमा बारी नी दाना जोवन जा
बारी नी दाना जोवन जा जगमा कन्या कुवरा डाखे
कन्या कुवरा डाखे जा जगमा हरदा शहरन बुढकी आरगे [17]

माँ का प्रसव सम्पन्न करने वाली दायन (दाई) माता-पिता से कह रही है कि - मैंने चाहे अन्न का एक दाना खाया, चाहे दो दाने खाये, पर इस (नवजात) कुमारी का! कन्या का (संसार में आने का) कार्य सम्पन्न किया है। (आशय इसे जीने का हक मिल गया है, प्रसव ठीक से सम्पन्न हो गया है) अब आप इस खुशी में हरदा शहर में जाकर बंदूक छोड़ो।

कन्या के जन्म पर इस तरह के उत्साह और हर्ष की अभिव्यक्ति वही समाज कर सकता है, जहाँ स्त्री पुरुष समान हों। कालान्तर में, संस्कृतिकरण के चलते इस समाज में भी पुत्र लालसा बढ़ी है, किन्तु आज भी इस समाज में कन्या जन्म पर कतिपय हर्ष भरे गीत मिलते हैं।

बोऊहो बोऊडोकोई ओ बोऊडो आना कोना
फिर ऽ ओ सासु ओ सासु सासु जागीया दुखे मारी सासु ओ
आना कोना फिरऽ ओ सासु हो सासु मारी हो सासु
इयां लाज कोसू लाकेन सुयीनी
सानी के सालेज ओ सासु ओ... [18]

गर्भवती बहू को सास कह रही है कि बहू तुम इस तरह बेचैन होकर क्यों घूम रही हो? बहू का उत्तर है कि सासू मेरी जांघ दु:ख रही है, इसी कारण मैं बेचैन घूम रही हूँ अर्थात् मेरा प्रसव नजदीक है। मेरा पेट दु:ख रहा है, तुम जल्दी से प्रसव सम्पन्न कराने वाली सयानी बूढ़ी दाई को ले आओ।

जारे राजा जारे राजा राजा नीली घोड़ा के सिंगारो रे

चलो मायू चलो मायू माय मेरी रानी को निभाई लेवो
नहीं रे बेटा नहीं रे बेटा बेटा मोरो घेरू रे सूना है रे
चलो डायनी माय चलो मायू माय तेरे लेने सवारी ना लायो
हारे बेटा हारे बेटा बेटा मोरो मुसरा रे ठाड़ी लेवो
चलो वो डायनी माय चलो मायू माय तेरा मूसरा वो साड़े बारा
चलो वो डायनी माय चलो मायू माय मेरी रानी को निभाई लेरे
एकोजा जाय धरती डालो माय एकी जा पाय आगशो डाले [19]

पत्नी- जाओ राजा! नीले घोड़े को तैयार करो (सजाओ)। पति दाई माँ से- चलो माँ! चलो मेरी रानी का प्रसव सम्पन्न कराओ। दाई माँ- नहीं बेटा! मैं नहीं चल सकती, मेरा घर सूना पड़ा है। पति - चलो माँ ! चलो मैं तुम्हारी सवारी के लिए घोड़ा लाया हूँ। दाई माँ- हाँ! तो बेटा बताओ मेरी धाड़की (मजदूरी) क्या दोगे, बोलो? पति-चलो दाई माँ! चलो तुम्हारी धाड़की साढ़े बारह रूपये दे दूँगा। चलो मेरी पत्नी का प्रसव सम्पन्न कराओ। एक पाँव धरती पर और एक पाँव आसमान में रखकर (उड़ते हुए) जल्दी चलो।

आला जड़ूको सायला रे
राजा सूखा जड़ूको सायला नहीं रे
इंजनी जेनोमा को बंझोटी
जा राजा धामू टीसो सेने मारे
आमा रानी ककोटा केनवेन्ज
राजा आमा रानी झूला में झूले
आमा रानी बंझोटी जा राजा
धामू टाला कोमाय सेने [20]

जैसे पेड़ की जड़ आली (गीली और नम) है तो सब कुछ है और यदि जड़ सूख जाए तो कुछ भी नहीं! उसी तरह बाल-बच्चे वाले पति-पत्नी ठीक हैं। बिना बाल बच्चों के रहना ठीक नहीं। बिना बाल बच्चों वाली महिला को घाम (धूप) में काम करना पड़ता है और बच्चे वाली माँ कुछ देर तो झूले में बच्चे के साथ झूल ही लेती है। अगर तुम्हारी पत्नी बाँझ होगी तो सदा घाम (धूप) में काम करना पड़ेगा।

संसार में तीन प्रकार की ऐषणाओं-लोकेषणा, पुत्रेषणा और वित्तेषणा ने राजा से लेकर रंक तक सबको पीड़ित किया है। कोरकू जनजाति में लोकेषणा से पीड़ित तो कोई नहीं मिलता। वित्तेषणा की हवस भी नहीं मिलती। कतिपय जगह जीवन के अभावों का जिक्र अवश्य मिलता है, किन्तु संतान की इच्छा और पुत्रेषणा कुछ गीतों में अभिव्यक्त हुई है-

इनी आम्बे जेमानी बिडे वाजा राजा
बंझोटी या इनी आम्बे जेमानी बिडे बोले
इनी आम्बे जेमानी जोमे वाजा राजा
बंझोटिया इनी आम्बे जेमानी जोमे बोले
इनी आम्बे चिड़िया पखारे जोमे वाडो रानी
बंझोटी इनी आम्बे होरया पंखोर जोमे बोले
चिड़िया पंखोरचोज मेनटेन मांडी वाजा
राजा बंजोला चिड़िया पंखोर चोज मेनटेन मांडी
चिड़िया पंखोर सुवला बारेन आजोमेडो रानी
बंझोटी चिड़िया पंखोर सुबला बारेन आयो मेरे
चिड़िया पंखोर फूल बान्डो पुत्र बान्डो मेन्टेनी मांडी वाजा
राजा बंझोटिया फूल बान्डो पुत्र बान्डो मेन्टेनी मांडी बोले
भगवान करनी नी ढाके डो रानी जेनोमा को बंझोटी रे
नामी आम्बे बिडे माजा राजा बंझोटा नामी आम्बे बिडे बोले
नामी आम्बे जेमानी जोमेवाडो रानी बंझोटी नामी आम्बे जेमानी
नामी आम्बे जेमानी जोमेवाडो रानी बंझोटी
नामी आम्बे जेमानी जोमे बोलेजोमे बोले [21]

संतानहीन दंपत्ति आपस में बात कर रहे हैं - ये आम बोने वाला कौन है? हे स्वामी! मैं पूछती हूँ ये आम कौन बोयेगा? यह आम कौन खायेगा? इन आमों को खाने वाला कौन है ? ये आम तोते और पक्षी खायेंगे। मेरी प्रिया, यह आम तो पक्षी खायेंगे। तोता-मैना क्या बोल रहे हैं बताओ? तोता-मैना के बोल सुबह-सुबह सुन लो। बताओ बाँझ, तोता मैना सुबह-सुबह क्या बोले? वे बोले, तुम्हारा पुत्र नहीं है। पर यह तो ईश्वर के ऊपर है, मेरी रानी! तो अब ऐसा आम बोयेंगे कि जिससे अपना नाम रह जाये। पर यह प्रसिद्ध आम भी कौन खायेगा? मेरी प्रिया, बताओ कौन खायेगा?

कोरकू जनजाति मृत्यु के बाद और जन्म के पूर्व की जिज्ञासा में डूबी रहती है। उसका यह जिज्ञासा भाव गीतों में उभरकर आता रहता है-

राजा राजा राजा जा हीरा कुंवरा
राजा मारे हीरा कुंवरा राजा मारे

इयां लाज कुसुवाजा हीरा कुंवरा
राजा मारे हीरा कुंवरा राजा मारे
आमा लाज कुसुवाकेन सुईनी
सानी केन हाकोयेज डो हीरा कुंवरी
रानी मारे हीरा कुंवरी रानी मारे
कुठी टाला मुठी ढाना मिया सारा
बारी सारा ढोगे माडो हीरा कुंवरी रानी मारे
हीरा कुंवरी रानी मारे
हीरा जोसी केन हाकोयेज डो हीरा कुंवरी
रानी मारे हीराकुंवरी रानी मारे
आमा लाज कुसुवामाको कैनीया कुंवर डाउवा
डो हीराकुंवरी रानी मारे [22]

मेरे हीरे जैसे पति! मेरा पेट दुख रहा है। मेरी हीरे जैसी प्रिया! तुम्हारा पेट दुखता है तो प्रसव सम्पन्न करवाने वाली दाई माँ को बुलवा लो। कोठी के भीतर के दाने हाथ में लेकर एक बार, दो बार, सब पड़िहारों से दिखा लो या किसी अच्छे ज्योतिष को बुलवा लो। तुम्हारा पेट दुखता है तो कन्हैया जैसा बालक जन्म लेगा ओ मेरी प्रिया !

चोको चावल पीला हलदी झूडो बाईकेन न्यूटा कूले
झूडो बाई डो झूडो बाई डो सारी राटे बलटन बाई केन नारूयेरे
चोको चावल पीला हलदी बुलुरी बाई केन न्यूटा कूले
बुलुरी बाई डो बुलुरी बाई डो सारी राटे बलटन बाईकेन नारूयेरे
चोको चावल पीला हलदी सोसो बाईकेन न्यूटा कूले
सोसो बाई डो सोसो बाई डो सारी
राटे बलटन बाईकेन नारूयेरे [23]

चोखे चावल और हल्दी से झूडो बाई को न्यौता भेज दो। झूडो बाई! ओ झूडो बाई! आज पूरी रात तुम प्रसविनी माँ का ध्यान रखना। चोखे चावल और हल्दी से बुलरी बाई को न्यौता भेजो। बुलरी बाई! ओ बुलरी बाई! तुम आज सारी रात प्रसविनी माँ की रखवाली करना। चोखे चावल और हल्दी से आज सोसो बाई को न्यौता भेजो। सोसो बाई! ओ सोसो बाई! आज सारी रात तुम प्रसविनी माँ का ध्यान रखना।

दस गल रूपीया ढामा मखान सुईनी
केन ईखी गल रूपीया ढामा मखान सुईनी केन ईखी
ऊरानी जोजलोम मखान रे बलेमा जल्डी सेने जा
गल रूपीया ढामा मखान सुईनी
केन ईखी गल रूपया ढामा मखान सुईनी
केन ईखी चेचेरेज नी नाड़ी मखान रे बालेमा जल्डी सेने जा
गल रूपीया ढामा मखान धोबन
केन ईखी गुदड़ी नी टाटम मखान रे बालेमा चट्टो सेने जा
मोनुवा नोटो मखान नायन
केन ईखी नेरूखो नी चेरेज मखान रे बलेमा चट्टो सेने जा [24]

दस रूपये पैसे हो तो दाई को दे दो। घर लीपना पोतना हो तो हे पति! जल्दी चले जाओ। दस रूपया पैसा हो तो दायन (दाई) को दे दो। शिशु की नाल कटवाना हो तो पति जी जल्दी चले जाओ। दस रूपया हो तो धोबिन को दे दो। गुदड़ी धुलवाना हो तो जल्दी चले जाओ। पाँच रूपया हो तो नाईन को दे दो। अंगुली के नाखून कटवाना हो तो जल्दी चले जाओ।

ये बहना डो ये बहना लेना डो बुलवा ईन डायेन ये बहना डो
ये बहना बहना बुलवा डो ईन डायेन ये बहना डो
ये बहना बहना बुलवा डो ईन डाये ये डाई जा ये डाई
इयां उरान नी डायेन मारे कजली गाय नी कोनकेन मारे
ये डाई जा ये डाई इयां उरान जा कपली गेई
जा कोनकेन मारे ये बहना बुलवा डो
ईन डायेन ये बहना ये बहना ये बहना बहना बुलवा डो
ईन डायेन ये बहना डो ये बहना कपली गेई कोनकेन मारे
ये डाई जा ये डाई ईन भी से असली कोन्जई जा डाई
ये डाई जा झाडी टालटेन ईन उलडे मारे [25]

ओ बहन! देखो बहन को बुलावा आया है। कहा है मैंने तो बच्चे को जन्म दे दिया है। बहन को बुलावा आया है कि मैंने तो जन्म दे दिया, कजली गाय जन गई है। पिताजी मेरे घर तो कजली गाय जन गई है। मैंने तो जन्म दे दिया। पिताजी मैं भी तो तुम्हारी असली बेटी हूँ। पिताजी मैं झाड़ी के बीच चल रही हूँ।

आरे मिगना सियेन डो मिगना सियेन मिगना सियेन डो
कोयला बोले नदी किनारे मिगना मिगना डो
कोयला वाले मारे कोयला चिड़िया बोले वा डो
आयोम इयां मेड्डा नी डो जोरो माटे कोयला कोडो
चिड़िया बोले वा डो आयोम कोयला चिड़िया बोले वा डो मारे
नदी किनारे मिगना सियेन डो मिगना सियेन डो
कोयेला बोले मारे कोयेला चिड़िया बोले वा डो

आयोम इयां मे डाडा बोचोवा डो मारे[26]

अरे मिगना को झाड़, अरे मिगना को झाड़! उस पर कोयल बोल रही है। नदी के किनारे मिगना का पेड़ है। देखो कोयल और चिड़िया बोल रही है। मेरी माँ (वर्ना) आँख से आँसू गिरेंगे। माँ देखो चिड़िया बोल रही है। नदी के किनारे मिगना का पेड़ है।

खिटी को खिटी टाला कलमी आमे वोचोकेन जा
बाला कुवेरो कोली कुबेरा खिटी टाला
कल्मी अम्बे बोचोकेन जा
बाला कुवेरा सिपीर सिपीर कोयो
ऐचकेन डेई अम्बे बोचोकेन जा
बाला कुवेरा सिपीर सिपीर कोयो
ऐचकेन कल्मी आमे बोचोकेन जा
बाला कुवेरा कैरी आमे शाला की जा
बाला कुवेरा मिया पाडा राजा जोजे मिया पाडा
रानी जोपे राजा मनसा पुराकीजा
वाला कुवेरा मिया पाडा रानी जोपे मिया पाडा
राजा जोपे रानी मन्सा जूरा की जा वाला कुवेरा[27]

खेतों के बीचों बीच कलमी आम गिर रहे हैं। काले और कुँवारे खेत के बीच कलमी आम गिरेंगे। काले कुँवारे खेत में रिमझिम पानी बरस रहा है। हवा चल रही है। बहुत आम गिर रहे हैं। इन आमों को छील देना। एक टुकड़ा राजा ने खाया एक टुकड़ा रानी ने खाया। राजा के मन की बात पूरी करो। रानी के मन की बात पूरी करो।

नीला लिजा ऐबेरे डो नीला कण्टी रानी
नीला पार डोंगरा डो डोयराये
इयां नी सोना ढाना बारी कोनकिन्जा राजा
राजा जा जेमा सिरेन बाये
मिया को साला जेवा डो रानी
रानी डो माय डो बामेरान बाये
आजोमेजा राम भगवान इयां कोन किन्जकेन डो चाले
अमाको टगली उरीये डो नीला कण्टी रानी
रानी डो नीला पार डोंगरो डो डोयराये[28]

हरा लुगड़ा पहनकर नील कण्ठी रानी हरा-भरा जंगल देखने चलो। तो पत्नी ने कहा - मेरे सोने के दानों जैसे दो छोटे-छोटे बच्चे हैं, उन्हें किसके पास छोड़ें ? पति ने कहा- मैं एक सलाह दूँगा मेरी रानी कि अपने माँ और बाप के पास इन छोटे बच्चों को छोड़ आओ। पत्नी ने कहा- हे ईश्वर! हे मेरे भगवान !! मेरे इन बच्चों को देखते रहना। पति ने कहा - तुम अपनी तागली पहन लो ओ नीलकण्ठी रानी और हरा-भरा जंगल देखने चलो।

बालटेन घर में सोने की दिवाला
बालटेन घर मे ंसोने न दिवाला बालेवा भाई
बाजंती घर में कोंस की दिवाला हिन्दोरे[29]

बच्चे की माँ के कमरे में सोने का दीया जल रहा है। जच्चा के कमरे में यह सोने का दीया भाई ने जलाया है। इस दीये जलते घर में बाजे बज रहे हैं और झूले-झूले जा रहे हैं, जबकि बाँझ स्त्री के घर में काँसे का दीया हिल रहा है (मानो उसकी लौ बुझने ही वाली हो)।

संदर्भ

1. भारतीय जनजाति कोरकूओं के लोकगीत -डा० नारायण चौरे द्वारा आर० बी० शांडिल्य को संदर्भित गीत पृष्ठ 10 प्रकाशक- विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर
2. The Korkus of the Vindhya Hills. Inter-India Publications, 1988, New Delhi, page 221-222
3. उपर्युक्तानुसार ही
4. वही
5. The Tribes and Castes of the Central Provinces of India, Part II—Vol. III, page 550
6. वही 563
7. जसदी बाई कासडा ग्राम-केकड्या, जिला बैतूल
8. -12. ग्राम- टेमलावाड़ी स्रोत व्यक्ति- सीताराम बैठे
13.-16. ग्राम-आमाखाल स्रोत व्यक्ति - माखन
17. ग्राम-मुरलीखेड़ा स्रोत व्यक्ति- लक्ष्मण
18. ग्राम-आमाखाल स्रोत व्यक्ति- माखन
19.-20. ग्राम-मातापुर स्रोत व्यक्ति- पार्वती बाई
21.- 24. ग्राम-मातापुर स्रोत व्यक्ति- प्यारी बाई
25.-27. ग्राम-आमाखाल स्रोत व्यक्ति- माखन
28. ग्राम-मातापुर स्रोत व्यक्ति - पार्वती बाई
29. ग्राम-छुरीखाल स्रोत व्यक्ति- शांतिलाल कोसडे

भिलाला जन्म संस्कार

डॉ. (श्रीमती) गुलाब सोलंकी

निमाड़ की भिलाला जनजाति में हिन्दू धर्मानुसार सोलह संस्कार नहीं मनाए जाते हैं। इस जनजाति में मुख्य रूप से तीन संस्कार जन्म, विवाह और मृत्यु ही मनाए जाते हैं। भिलाला जनजाति में बच्चे का जन्म सौभाग्य का प्रतीक होने के कारण अत्यन्त खुशियों से भरा होता हैं। बच्चे के आगमन पर थाली, सूपड़ा, ढोल के बजाने के साथ शक्कर, मिठाई और बताशे वितरण किए जाते हैं।

जन्म संस्कार का आरंभ गीतों से होता है। जन्म गीतों से हमारी सामाजिक मान्यताओं का पता चलता है। बच्चे का जन्म भले ही एक साधारण सी घटना हो, लेकिन लोकगीतों की दुनिया में जब किसी के यहाँ बच्चे का जन्म होता है, तो उसका स्वागत गीतों से किया जाता है। उसकी तुलना कामदेव के रूप में की जाती है।

म्हारा घर मदन सिंह जलमियो
हऊ तो जोशी घर भेजू बधाओ
म्हारा घर पोथी पुराण लई आव
पोथी वाचे नानो सो बालुड़ो
पुराण वाचे ओको बाप ।
हऊ तो सोनी घर भेजू बधाओ ।
म्हारा घर कढ़ा-तोढ़ा लइ आव।

मेरे घर बच्चे ने जन्म लिया है। मैं जोशी के घर संदेशा भेजती हूँ। वह पोथी और पुराण लेकर आये। बच्चा पोथी एवं उसके पिता पुराण पढ़ेंगे। सोनी के घर बधाई भेजो, सोनी कड़े और तोड़े लेकर आयेगा।

नहाई जऽ धोई देवी देवकी
ओ नऽ दियो पलंगऽ पर पाँव
भोलई दायण हो, धन को ससुरो जमाव
तुम जागो न ससुराजी सुहावणा हो
गड्यात्त-गड़ित हेड़ाव
तुम्हारी बहुवर हो राजा जायों नंदलाल
बधाई बाबा नन्द घर।

स्नान कर देवकी (जच्चा का नाम) ने पलंग पर पाँव रखा है। भोली दायण! तुम सौभाग्यशाली ससुर को जगाओ। हे ससुर! उठो। गड़ा हुआ धन निकालकर बँटवा दो, तुम्हारी बहू ने सुन्दर बच्चे को जन्म दिया है।

उड़-उड़ रे म्हारा काड़ला सुहटड़ा
भाई घर संदेशो पोचावजे
बईण नानु जायो ए झगल्या टोपी बुलाये

जच्चा अपने भाई को संदेशा भेज रही है। वह कहती है- हे काले कौए! तुम उड़कर जाओ और मेरे भाई से कहना, तुम्हारी बहन ने बच्चे को जन्म दिया है।

जन्म के तीन दिन बाद जच्चा और बच्चा के कपड़े और बिस्तर बदला जाता है। बच्चे और उसकी माँ को हल्दी में रंगे धागे हाथ में बाँधे जाते हैं। बच्चे के जन्म के छटे दिन छठी पूजन किया जाता है। लोकमान्यता है कि आज के दिन छठी माता स्वयं आकर बच्चे के भाग्य में लेख लिखती हैं।

छटी माता तमरा दियला बालापूत
दूध पिवाड़ो हो सूर्या गाय को ।
मोटी माता हो तमरा दियला बालापूत
दूध पिवाड़ो हो सूर्या गाय को ।
कायन की कलम न कायन की दवात
सोना की कलम चाँदी की दवात
छठी माता लेख लिखो तमरा हाथ सी
सुख लिखी दीजो तमरा हाथ सी।

हे छठी माता! यह पुत्र आपके द्वारा दिया गया है ।इसे सूर्या गाय का दूध पिलाया है। हे छठी माता! अपने हाथों से बालक का भाग्य लिख देना ।

सूरज पूजन

छठी पूजन के बाद सूरज पूजा होती है। गाँव की महिलाएँ मंगल गीत गाती हैं। सूर्य भगवान को जल-गुड़ आदि खिचड़ी का भोग लगाया जाता है।

जल देवी माता परमेसरी वो
थारा मठ गोबर घोलावतो कुण वो।
गोबर घोलाय बालो की माड़ो वो
जल देवी.....
नायल चढ़ाव कूण वो थारा मठ
नायले चढ़ाव बाला की काकी।

हे जल देवी! तुम्हारे मंदिर में लीपने के लिए गोबर कौन लायेगा। कौन लीपेगा। बालक की माताएँ और काकी नारियल चढ़ायेगी, तुमने उनकी मन्नत पूरी की है।

जलवाय

जलवाय के दिन बच्चे की माँ उपवास करती है। घर में साफ-सफाई की जाती है। गाँव की सभी महिलाओं को, शक्कर साजी का बुलावा दिया जाता है। नवजात बच्चे के मामा, मौसी, बुआ आदि रिश्तेदार आते हैं, बच्चे के लिए कपड़े और शक्कर बताशे लाते हैं। महिलाएँ इस खुशी के अवसर पर उपस्थित दादा-दादी, काका-काकी और पिता से दारू (शराब) मांगती हैं। उस दिन गेहूँ या ज्वार को कूटकर 'घूँघरी' बनाई जाती है। उपस्थित बच्चों और महिलाओं को वितरित की जाती है।

महिलाएँ बच्चे को नये कपड़े पहनाकर कपड़े की झोली में डालकर झुलाती हैं और बच्चे झोली के नीचे से निकल कर गाते हैं-

आव रे नाना खेलण चला
आव रे नाना घूँघरी खावा
आव रे नाना भणन चला
आव रे नाना खेत म चला।

नवजात बच्चे को खेलने का आमंत्रण, घूँघरी खाने का न्यौता एवं पढ़ने तथा खेत में चलने का आग्रह बच्चे से करते हैं। महिलाएँ हँसी-मजाक एवं व्यंग्य गीत गाकर मनोरंजन करती हैं।

बड़ी चटक सी आई वो नणद बाई
नणद बाई को किन ने बुलाया ।
झगल्या भी लाई न टोपी भी लाई
घूँघरू अरू घर भूली आई वो
नणद बाई को किन ने बुलाया।

बच्चे की बुआ जल्दी-जल्दी में बच्चे के लिए आवश्यक सामग्री लाना भूल गयी है, उसी का चित्रण किया गया है। महिलाएँ बच्चे को झूला, झुला रही हैं और गाती हैं-

चंदन का थारा पालणा
रेशम लम्बा डोर
जरा धीरे-धीरे झूलों लल्ला
पलना है, कमजोर,
नणद आयेगी शक्कर बँटाएगी
माँगे उसका नेग,
मैं हाथ जोडू पाव पडू
नोट दई न बिदा करूं
चंदन का थारा पालणा
रेशम लम्बा डोर
सासू आयेगी पतासे बँटाएगी
मांगे उसका नेग
मैं हाथ जोड़, पँव पडू
नोट दई न बिदा करूं
चंदन का थारा पालणा
रेशम लम्बा डोर

माँ अपने नव-जात शिशु से कहती है, तुम्हारे लिए चंदन का पालना बनाया है, किन्तु डोर कमजोर है। तुम्हारी बुआ शक्कर बाँटने आयेगी, मैं उनके हाथ-पाँव जोड़कर कुछ दे दूँगी और कुछ बचा लूँगी।

मणभर सोठ सवा मण आजमो
तम तो धमाधम कूटो हो राज।
लोग सुणग काई कयग ।
सासूजी सुणगत दौड़ी-दौड़ी आवग
आवग न दस दिन रयग ।
रयग न सीरो पूरी खायगे
मणभर.....

जच्चा को स्वास्थ्य वर्धक आहार दिया जाना है। जिसके लिए सौठ अजवाइन ओखली में कूटा जा रहा है।

संदर्भ

1. डॉ. जी. सोलंकी- शोध प्रबंध।
2. रामनारायण उपाध्याय- निमाड़ का साहित्य।
3. कृष्णदेव उपाध्याय- लोक संस्कृति की रूपरेखा।
4. डॉ. सत्येन्द्र- लोक साहित्य।

जनजातीय जन्म संस्कार

राधाकृष्ण बावनिया

अखिल विश्व की रचना ब्रह्मा ने की है, ऐसी मान्यता है। इसके अतिरिक्त यह भी माना जाता है कि महाप्रलय के बाद मनु और श्रद्धा ही शेष रहे थे। मनु और श्रद्धा की संतानें मानव कहलायी। जो भी हो, ईश्वर की कृपा के बिना, उसके अनुग्रह के अतिरिक्त इस संसार की कल्पना करना भी निरर्थक है। यह भी सच है कि ईश्वर ने मानव के अतिरिक्त अन्य असंख्य जीवों को उत्पन्न किया, जो पृथ्वी ही नहीं समस्त ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। प्राणियों की प्रजातियों के विकास, उसकी अभिवृद्धि, संरक्षण में प्रत्येक प्राणी कि भूमिका सार्थक ही नहीं, अपितु बहुत महत्त्वपूर्ण भी है।

पृथ्वी पर प्राणी जगत में प्राणियों की प्रजातियों का संवर्धन नर-मादा के सहवास से ही सम्भव होता है। संसार के प्राणी मात्र में खाने-पीने, सोने-बैठने, चलने-फिरने, सहवास और संकट आदि की गंध सरलता से समझने की क्षमता होती है, किन्तु सभी जीवों में मनुष्य ही एकमात्र ऐसा जीव है, जिसे बुद्धि के साथ विवेक और तार्किक शक्तियाँ भी ईश्वर ने प्रदान की है।

आविष्कार करना मानव मस्तिष्क की सामान्य प्रक्रिया है, जो हम वर्तमान में देख रहे हैं। वह सब उसी का परिणाम है। मनुष्य का स्वभाव मनोरंजन प्रिय रहा है। मनोरंजन उत्साह का सृजन करता है, जीवन शक्ति को बल देता है, इसीलिए हमारे हर काम के साथ कोई न कोई उत्सव जुड़ा है। उत्सव न केवल भारत में अपितु विश्व में प्रचलित है। यह बात अलग है कि संसार के अलग-अलग देशों में जाति में, देश-काल परिस्थिति के अनुसार उत्सव मनाने का स्वरूप बदल जाता है। उनके प्रकार और ढंग भिन्न हो

सकते हैं, लेकिन उत्सव मनुष्य मात्र को प्रिय होते हैं, इसमें दो मत नहीं हो सकते।

हमारे देश में जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त भाँति-भाँति के उत्सव होते रहते हैं। कारण स्पष्ट है- इससे मन सदा प्रसन्न रहता है, किन्तु धीरे-धीरे ये उत्सव रूढ़ियों में परिवर्तित होते गये। इतना ही नहीं, ये समाज विशेष की धरोहर भी बन बैठे।

नर-नारी जब किशोरावस्था से यौवनावस्था में पदार्पण करते हैं, तब उनकी शारीरिक और मानसिक आवश्यकता के अनुसार वे विवाह बंधन में बंधते हैं तथा दाम्पत्य जीवन में प्रवेश करते हैं। यह नामकरण विवाहोपरांत ही किया जाता है, हमारे यहाँ ही नहीं, अपितु विश्व में विवाह को भी एक उत्सव का रूप दिया गया है।

विवाह के बाद स्त्री-पुरुष के समागम से गर्भाधान होता है और यहीं से होता है आनंद और उत्साह का प्रादुर्भाव। जब कोई घर की बहू गर्भवती होती है, तब घर में आनंद की लहर दौड़ जाती है, क्योंकि उस परिवार में एक नये सदस्य का आगमन होने वाला होता है। पारिवारिक वृद्धि होती है।

जब कोई बहू प्रथम बार गर्भवती होती है, तब प्रचलित प्रथा अनुसार उसके गर्भ के सातवें महीने में उसे मायके, नैहर या पीहर वाले प्रथम प्रसव के लिए नया चाँद देखकर उसका भाई या परिवार का वयोवृद्ध व्यक्ति लिवाने आते हैं और उसे ले जाते है।

गर्भवती को जब ससुराल वाले विदा करते हैं, तब अलग-अलग समाज में अलग-अलग रीति-रिवाज हैं। कहीं-कहीं गर्भवती को नये वस्त्र पहनाकर विदा करते हैं, किन्तु अन्य जातियों की तरह जनजाति में गोद भराई की रस्म नहीं होती है। ये तो केवल सामान्य तरीके से ही बहू को विदा कर देते हैं। इसमें न तो गाना होता है और न ही नाचना, पर हाँ अतिथियों का आतिथ्य सत्कार (शराब) मुर्गा या बकरे से करने का रिवाज प्रचलित है किन्तु अब देशकाल परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण ऐसे सत्कारों में भी परिवर्तन हो रहा है।

गर्भवती अपने मायके में प्रसव के बाद तक कुछ दिन रहती है। प्रसव के पूर्व और बाद में भी गर्भवती के खाने-पीने का उसके घर वाले बहुत ध्यान रखते हैं। वर्तमान युग में आवश्यकतानुसार चिकित्सकों से नियमित परीक्षण करवाते हैं और समय-समय पर लगने वाले टीके भी लगवाते हैं। जिससे न केवल गर्भवती स्वस्थ रहती है, अपितु आने वाला शिशु भी स्वस्थ जन्म ले, इसका पूरा ध्यान रखा जाता है।

प्रसव उपरांत जच्चा-बच्चा को गरम पानी में नीम के पत्ते डालकर नहलाया जाता है। साथ ही उन्हें साफ पकड़े पहनाकर खटिया पर सुलाया जाता है। इतना ही नहीं, खटिया के सिरहाने तीर भी रखा जाता है तथा नवजात शिशु को नरम कपड़े में लपेटकर रखा जाता है।

जलवाय (जलवा) पूजन का कार्यक्रम प्रसव के सातवें दिन होता हैं। इस दिन घर के साथ ओटले (आँगन) को गोबर से लीपा जाता है। संध्या समय आटे से दो चौक माँडते हैं। चौक माँडने के कई प्रकार हैं, किन्तु प्रमुखता से तीन चौकों का माँडना प्रचलित है। एक चौक पर शिशु की माँ (जच्चा) को बैठाकर उसके सिर पर सफेद धोती ओढ़ाकर उसकी गोद में नवजात शिशु को बैठाया जाता है तथा माँ के हाथ में तीर दिया जाता है।

अब दूसरे चौक पर पानी का कलश रखकर उसके ऊपर नारियल (श्रीफल) रखा जाता है। इसके पश्चात् शिशु की बुआ द्वारा शिशु और उसकी माँ का हल्दी कुमकुम से तिलक किया जाता है तथा सूत के धागों पर हल्दी का लेप लगाकर उसे शिशु के दोनों हाथों में बाँधा जाता है। इसके पश्चात् सात प्रकार के धान के पीसे आटे व हल्दी के लेप से माँडने माँडते हैं और उसमें सात कंकड़ रखते हैं। जिस पर सात प्रकार के धान चढ़ाते हैं तथा पूजा की थाली में रखे दीपक की लौ से काजल बनाकर उन सात कंकड़ों को काजल से पूजते हैं, अर्थात् उन पर काजल लगाते हैं।

पूजन होने के पश्चात् शिशु की माँ इस पूजन सामग्री को एक ही बार में अपने दोनों हाथों में भरकर पास रखे घड़े में डाल देती है और फिर घड़ा अपने सिर रखकर अपने परिवार की स्त्रियों के साथ निकट के जलाशय में विसर्जित करने जाती है। सामग्री विसर्जन के बाद वह शिशुवती शुद्ध पानी से वही घड़ा भरकर सिर पर रखकर वापस आती है। इसके बाद वह शिशुवती अपना स्वयं का काम करने लग जाती है, जिसे पहले उन कामों को करने से घरवाले रोकते थे।

प्रसूति के सवा महीने बाद शिशु की बुआ और मौसी द्वारा आस-पास की समाज की महिलाओं को बुलाकर बधावा गीत गाकर खुशियाँ मनाती हैं और बताशे बँटवाती है। इसके बाद वह शिशुवती घर के सभी काम भी करने लग जाती है।

जलम लियो ये नंदलाल
कि माई मक दाया बताइ द
जलम लियो ये नंदलाल
कि माई मक जिमई बताइ द
एक झगो न दूजी टोपी
न तीजो फुंदो लगाइ द
जलम लियो ये नंदलाल
कि माई मक बुआ बताइ द
एक पतासों द दूजी सक्कर
के लालाजी मक मठई बताइ द
जलम लियो ये नंदलाल
कि मक पड़ोसन बताइ द

जिमई-दादी

शिशु जब नौ माह का हो जाता है, तब उसके मामा के द्वारा उसके बाल काटे जाते हैं। जब बाल काटे जाते हैं तब शिशु की बुआ अपने आँचल में कटे बालों को झेलती है, जिसके बदले उसको नेग दिया जाता है। इसके अतिरिक्त इन कटे बालों को गेहूँ में मिलाकर एक बाँस की टोकनी (छबड़ी) जो मिट्टी से भरी होती है, उसमें बोकर पानी से सींच देते हैं। धीरे-धीरे ये बोये जवारे (उग जाते हैं) बड़े हो जाते हैं। कुछ दिन बाद इन्हें पानी में (कुआँ या नदी) में विसर्जित कर देते हैं।

परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है, इसलिए जलवायु के कारण अलग-अलग देशों में भिन्न-भिन्न भाषा, रीति-रिवाज, बोली और परिधानों का प्रचलन है।

किसी भी जनपद में एक प्रकार की बोली नहीं बोली जाती है, क्योंकि प्रत्येक 30-35 कि.मी. की दूरी पर बोली में परिवर्तन हो जाता है और तो और रीति-रिवाजों में भी भिन्नता आ जाती है। रहन-सहन तथा खान-पान में भी एकरूपता नहीं होती वे भी बदल जाते है, फिर केवल जनजातीय परिवार इससे कैसे अछूते रह सकते हैं? वे भी वातावरण के अनुसार अपने आपको उस परिवेश में ढाल लेते हैं। यही कारण है कि जनपदीय बदलाव के साथ अन्य जातियों सहित जनजातियों के रीति-रिवाजों, संस्कारों और बोलियों में भी परिवर्तन स्पष्ट दृष्टिगोचर होते हैं।

कुछ जनजातियों में पहले पक्ष में बताए गए रीति-रिवाजों से भिन्न दूसरे क्षेत्र की जनजातियों में जन्म संस्कार भी बदल जाते हैं। प्रचलित प्रथा के अनुसार इनमें भी जब कोई नई बहू गर्भवती होती है, तब उसके गर्भ के सातवें या नौवें महीने में गर्भवती के मायके वाले नया चाँद और दिशाशूल देखकर लिवाने आते है। गर्भवती को लिवाने के लिए कोई बड़ा-बूढ़ा नहीं, अपितु कम उम्र के भाई आते हैं।

गर्भवती को उसके पीहर भेजने के पहले उसे नहलाकर सुहागन का नया श्रृंगार कर, नये वस्त्र पहनाकर, आटे का चौक मांडकर उस पर बैठाकर गोद भराई की जाती है। गोद भराई कार्यक्रम में परिवार के अतिरिक्त आस-पास की, समाज की और अन्य महिलाओं को बुलवाकर यह रीति सम्पन्न की जाती है। गर्भवती की गोद में अर्थात् उसकी साड़ी के पल्लू में नारियल रखते हैं तथा किसी लड़के की माँ द्वारा पस (दोनों हाथों की हथेलियों को मिलाकर) भर कर पाँच बार चावल उसकी गोद में रखते हैं। कहीं-कहीं गीत भी गाते हैं तथा इस कार्यक्रम में आने वाली महिलाओं को गुड़ या बताशे बाँटे जाते हैं।

किसी भी परिवार की लड़की की प्रथम प्रसूति उसके मायके में करवाने का चलन है। गाँवों में प्रसूति करवाने के लिए पहले दाई या नाइन को बुलवाते थे, और आज भी दूरस्थ अंचलों में यही क्रम चल रहा है, किन्तु वर्तमान में हर समाज जागरूक हो गया है, इसलिए प्रसूति के लिए चिकित्सालयों में जाते हैं।

जब गाँव में प्रसूति होती है, तब जन्म के बाद जच्चा (प्रसूता) और नवजात शिशु को गरम पानी से सफाई कर कपड़े बदलते हैं तथा शिशु को नरम कपड़े में रखा जाता है। इसके अतिरिक्त शिशु के मुँह में एक बूँद दारू (शराब) में पानी मिलाकर दी जाती है तथा प्रसूता को गुड़ में बनी थूली (घाटा) और मक्का की रोटी खिलाई जाती है। पाँचवें दिन सूरज पूजा करवाते हैं। सूरज पूजा के लिए आटे का चौक मांडते हैं। जिस पर पाट या (गादी, रजाई) गोदड़ी बिछाकर प्रसूता को उस पर बैठाया जाता

है। प्रसूता को चौक पर बैठाने के पूर्व उसकी ननद अर्थात् शिशु की बुआ को गुड़ खिलाया जाता है, अर्थात् उसका मुँह मीठा करवाया जाता है, फिर वह अपनी भाभी (प्रसूता) का पल्ला पकड़कर घर से बाहर जाती है और चौक पर पूर्व की ओर मुँह करवा कर बैठाती है। चौक के सामने आटे से सूरज और चाँद की आकृति का माँडना माँडकर उसके सामने पानी से भरा लोटा (कलश) रखते हैं। लोटे (कलश) के ऊपर नारियल रखकर उसके मुँह पर नाड़ा बाँधा जाता है। फिर प्रसूता की गोद में नवजात शिशु को बैठाकर शिशु की बुआ या परिवार की किसी सुहागन स्त्री के चार मुठिया से उसकी नजर उतारती हैं तथा वे मुठिया चारों दिशाओं में एक-एक फेंक देती है। इसी प्रकार गुड़ की थूली (घाटा) के भी चार मुठिया से चारों दिशाओं के देवी-देवताओं को अर्पण करती है।

इसके पश्चात् सूरज की पूजा कुमकुम हल्दी से करवाती हैं, साथ ही गेहूँ और चने की बनी घूघरी और गुड़ को भी सूरज को अर्पण करती है, अर्थात् भोग लगाती है। सूरज की पूजा के बाद महिलाओं द्वारा जच्चा गीत गाया जाता है।

एक पतासा का नव सौ टुकड़ा
एक टुकड़ो चुहलज का पाछे मैं कियो
एक टुकड़ो बालक की ममई क दे दो
न वा बठी-बठी चाटज
आवतै चाटज न जावतै चाटज
एक टुकड़ो झोळी जागे मै कियो
बाळक की माय हिचकड़ा दी न चाटज

जच्चा गीत गाने के बाद इस कार्यक्रम में आने वाली सभी महिलाओं को घूघरी और गुड़ बाँटा जाता है तथा आस-पास के घरों में भी इसका वितरण किया जाता है। शाम को नवजात शिशु के आगमन की खुशी में सभी स्त्री-पुरुष परिवार सहित दारू पीकर मादल की थाप पर नाचते-गाते हैं और आनंद मनाते हैं।

शिशु जन्म के इक्कीसवें दिन उसके बाल काटे जाते हैं। शिशु के बाल उसके फूफा काटते हैं और उसकी बुआ उन बालों को अपने आँचल में झेलती है, फिर परिवार वाले बुआ को नेग या उपहार देते हैं।

बैगा जनजाति में जन्म संस्कार

डॉ. विजय चौरसिया

सभ्य दुनिया की तमाम कृत्रिमताओं से दूर सभ्यताजनित अनेक वर्णनाओं और आडंबरों से परे एक अलग संसार है, जिसकी उन्मुक्त और आधुनिकता के प्रदूषण से रहित स्वच्छ हवा में आदिम गंध से महकते वनफूल खिलते, झूमते और थिरकते हैं। जी हाँ, इसी भारत वर्ष में जहाँ हम आज इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं, आये दिन अंतरिक्ष में रॉकेट भेजने की तैयारियाँ भी होती हैं। यहाँ ऐसे लोग भी बसते हैं, जिन्होंने रेलगाड़ी की शक्ल तक नहीं देखी। इनका रहन-सहन, खाना-पीना, बोल-चाल आधुनिक मानव से बिलकुल ही भिन्न है। सम्पूर्ण भारत में सबसे ज्यादा आदिवासी मध्यप्रदेश में ही निवास करते हैं तथा सम्पूर्ण एशिया महाद्वीप में यही एक आदिम जनजाति बची है, वह है प्रकृति पुत्र बैगा।

बैगा छोटा नागपुर की आदिम जनजाति भूईयाँ की मध्यप्रदेशीय शाखा है, जिसे भूमिया बैगा कहा जाने लगा। सर्वप्रथम बैगाओं ने ही छोटा नागपुर छत्तीसगढ़ में प्रवेश किया, लेकिन बाद में यह जनजाति मण्डला, डिण्डोरी, शहडोल, अनूपपुर, उमरिया, राजनान्दगाँव, बिलासपुर, कवर्धा, सिवनी, छिन्दवाड़ा एवं बालाघाट के दुर्गम वनों में निवास करने लगी। डिण्डोरी एवं बिलासपुर जिले के बीच का भाग बैगा चक कहलाता है।

बैगाओं की मुख्य सात शाखाएँ इस प्रकार हैं- भूमिया, बिंझवार, भरौतिया, नाहर या नरौटिया, भैना, कोड़वान, मुड़िया या मुरिया। बैगा जनजाति के लोगों की त्वचा का रंग प्रायः गहरे काले से लेकर हल्का बादामी तक होता है। इनकी नाक चौड़ी तथा होठ मोटे एवं आँख औसतन कम गोल और काली होती है। बैगा पुरुष या महिलाएँ अपने बाल जीवन में एक ही बार जन्म के समय कटवाते हैं। बैगा पुरुष अपने बालों के जूड़ा को बैगा झालर कहते हैं। जन्म से मृत्यु तक वे अपने बाल कभी नहीं कटवाते। इनके बाल

लम्बे गहरे काले तथा घुँघराले होते हैं। ये बालों को जूड़े के रूप में बाँधते हैं। सजे सँवरे बैगा युवक के बालों के जूड़े को देखकर कौए की आकृति उभरती है। महिलाओं के बाल गहरे काले और औसतन लम्बे होते हैं। महिलाएँ कभी भी अपने बालों में साबुन का प्रयोग नहीं करतीं। बैगा युवक-युवती की ऊँचाई मध्यम होती है। कमर क्षीण तथा ऊपर का हिस्सा चौड़ा एवं जाँघे तथा टांगे मजबूत होती हैं।

बैगा समाज में लड़के और लड़कियों को एक ही समान देखा जाता है। बैगा महिला के गर्भवती होने पर किसी भी प्रकार की खुशी नहीं मनाई जाती है। घर में लड़का पैदा हो या लड़की दोनों में समान रूप से खुशी मनायी जाती है। कभी-कभी अचानक जंगल या खेत में प्रसव पीड़ा उठने तथा प्रसव हो जाने पर गर्भवती महिला स्वयं प्रसव करा लेती है। प्रसव के बाद वह नवजात शिशु को ऑवल समेत अपनी साड़ी में अच्छी तरह से लिपटाकर घर आ जाती है। घर आने के बाद नवजात शिशु की कमल नाल काटी जाती है। घर में, घर की या गाँव की सियानिन (बुजुर्ग महिला) प्रसव कराने का कार्य करती है। जिसे दाई या सुनमाई भी कहते हैं। दाई शीघ्र प्रसव के लिए अंडी की जड़ की अँगूठी बनाकर गर्भवती महिला की अँगुली में पहनाती है, जिससे शीघ्र प्रसव हो जाता है। बच्चा पैदा होते ही सुनमाई हँसिया से नवजात शिशु का नरा (कमल नाल) काटकर उसमें कंडा की राख लगा देती है। नरा कट जाने के बाद दाई नवजात शिशु को बाँस के सूपा में सुला देती है। सूपा में कोदों -कुटकी के कुछ दाने डाल दिये जाते हैं। नवजात शिशु के ऑवल या कनेरी को जच्चा वहीं जमीन में गाड़ देती है। फिर उसे कंडा की धीमी आँच से ढंक देते हैं। प्रसव होने के बाद प्रसूता को खड़े करके उसका पेट दबाया जाता है। जिससे गर्भाशय का खराब खून बाहर गिर जाता है। फिर जच्चा-बच्चा को कोदों के पैरा में अच्छे से ढककर सुला देते हैं। दूसरे दिन सुबह प्रसूता को केंकें वृक्ष की दातून करने को दी जाती है। इसके बाद कुदई का भात और उड़द की दाल खाने को दी जाती है। एक सप्ताह के अंदर कमल नाल स्वत: नवजात शिशु के शरीर से अलग हो जाती है, शेष बची कनेरी (कमल नाल) को गिरने के बाद उसे वहीं जमीन में गाड़ देते हैं। उसके बाद ही घर की सफाई होती है, जिसे सोहर उठाई कहते हैं। इसी दिन छठी पूजा भी होती है। प्रसूता को माई बेला की जड़ का छिलका चबाने को देते हैं। प्रसूता को नहलाने के लिए रुहीना जड़ की छाल और केंकें वृक्ष की छाल को पानी में उबालकर देते हैं।

जिस घर में लड़कियाँ ही पैदा हो रही हों, तो जन्म के बाद नवजात शिशु को जिस सूपा में सुलाया जाता है, उसमें सभी प्रकार की धान को मिला के रख दिया जाता है। इनकी ऐसी मान्यता है कि ऐसा करने से प्रसूता की कोख का नरा बदल जाता है तथा आगे होने वाली संतान लड़का या लड़की ही होगी। इसे बर्रा दाना मिलाना कहते हैं।

प्रसव के छठवें दिन प्रसूति गृह की सफाई एवं गोबर से लिपाई की जाती है। जिस स्थान पर ऑवल या कनेरी गाड़ी जाती है, उस स्थान को पहले मिट्टी उसके बाद गोबर से लीपा जाता है। प्रसूता नदी में स्नान करने जाती है। वह काली मिट्टी से अपने बाल तथा देह को कई बार धोकर शुद्ध करती है। वह अपने कपड़े धोती है। घर आकर राई के तेल तथा हल्दी से स्वयं तथा नवजात शिशु की मालिश करती है। उस दिन उसके लिए परिवार के अन्य सदस्य भोजन बनाते हैं। भोजन में कोदों का भात और राहर की दाल खाने को देते हैं। छठी के बाद जच्चा घर-बाहर के सभी कार्य करने लगती है। परंतु उसे रसोई घर में जाने नहीं दिया जाता है। उसी दिन प्रसूता सुनमाई के चरण छूकर आशीर्वाद प्राप्त करती है। परिवार के सदस्य पाँच बोतल शराब सुनमाई को भेंट स्वरूप प्रदान करते हैं, उक्त शराब को सुनमाई परिवार के अन्य सदस्यों के साथ बैठ कर पीती है। सातवें दिन नवजात शिशु का पिता शिशु के सिर के बाल काट देता है। जिसे बैगा झालर कहते हैं। तीन माह तक वह रसोई में प्रवेश नहीं कर सकती न पति से संसर्ग कर सकती है।

नामकरण

प्रसूता के गृह प्रवेश के दूसरे दिन नवजात शिशु के नामकरण का संस्कार होता है। इस दिन परिवार तथा गाँव के सभी लोगों को आमंत्रित किया जाता है। नामकरण संस्कार के समय घर की सियानिन (बुजुर्ग महिला) या आजी नवजात शिशु को घर से बाहर लाती है और घर की देहरी में पैर पसारकर बैठ जाती है। नवजात शिशु को अपनी गोद में बैठाती है। नवजात शिशु के पैरों को नीचे लटकाते हैं। नवजात शिशु के पैरों को काँसे की थाली में

रखते हैं। शिशु सियानिन की गोद में बैठा रहता है। शिशु के नाम रखने का कार्य गाँव का कोटवार, भोई, मुकद्दम या आजा करता है। नामकरण, दिन, महीना, स्थान, पशु-पक्षी, देवताओं, अधिकारियों और बच्चे की शक्ल-सूरत, रंग, चेष्टाओं के आधार पर किया जाता है। वह बच्चे के पैरों को शराब से धोकर उसे आशीर्वाद देता है। इस प्रकार सभी लोग आकर बच्चे के पैर शराब से धोते हैं और नेग स्वरूप थाली में पैसे डालते हैं। इसके बाद स्त्री-पुरुष सभी शराब का सेवन करते हैं और दाल-भात का भोजन करते हैं। इस जनजाति में ऐसी मान्यता है कि विवाह के समय सजन या मगरोही चित्त पड़े तो पहली संतान लड़का और पट पड़े तो लड़की पैदा होती है।

नवजात शिशु के नाम निम्न प्रकार से रखे जाते हैं- अघनू, इतवारी, अक्ला, असाढ़ू, बहोरन, बनिया, चरका, छत्तू, बोंदरा, दरोगा, ढुलिया, देवार, गजरू, गोंडू, हदहा, हल्कू, जोहन, काना, लोधा, माहू, मदरू, मुंशी, ननकू, पदरू, पल्टू, फग्गू, लीहा, रेन्जर, रावण, पिटटू, रिज्जू, रुरा, समारू, शुकलू, सुरता, सवनू, टून्टू, ठक्कू, तिरचू, तिल्हा, खितहा, जंगलिया, जमादार, फागू, नजरू, मंगलू, बंजारी आदि।

इसी प्रकार लड़कियों के नाम इस प्रकार रखे जाते हैं- बैसाखिन, भद्दी, इतवरिया, बुधवरिया, सुमरिया, मंगली, सुकवरिया, बोदरी, धनिया, गुगली, लमिया, लमनिन, लच्छो, कोती, बजारिन, बजराहिन, फगनी, भुखिया, दमरिन, माहो, बिजलो, दवारिन आदि।

जड़ी-बूटियों से प्रसव

बैगा जनजाति के लोग सदियों से वैद्य का कार्य करते आ रहे हैं। ये अभी भी इन जड़ी-बूटियों और तंत्र-मंत्र से अपना उपचार करते हैं। आधुनिक चिकित्सा पद्धति पर उन्हें जरा भी विश्वास नहीं है। वे अपने उपचार के लिए आज भी डॉक्टर या किसी बाहरी व्यक्ति की सहायता नहीं लेते। बैगा जनजाति के लोग महिला के गर्भवती होने के बाद से ही अपने वन परिसर में पाई जाने वाली जड़ी-बूटियों से गर्भवती महिला की चिकित्सा करते हैं।

बैगा जनजाति के लोग शीघ्र प्रसव के लिये अंडी की जड़ की अँगूठी बनाकर अंगुली में पहनाते हैं। जिससे प्रसव शीघ्र हो जाता है। प्रसव के बाद प्रसूता को माई बेला की जड़ चबाने को देते हैं तथा रुहीना पेड़ की छाल को पानी में उबालकर उससे स्नान कराते हैं। जोगी लटी की जड़ (शतावर) को गुड़ के साथ पीसकर खाने से प्रसूता की खून की कमी दूर होती है और दूध उतरने लगता है। दूधिया की जड़ को खिलाने से भी दूध उतरने लगता है।

गर्भधारण कराने के लिये पंचगुंदिया के पाँच बीज, पाँच खुराक या पारस पीपर के ढाई बीज या शिवलिंगी के पाँच बीज तथा गांजा के पाँच बीज दोनों को मिलाकर कुल दस बीजों को महिला को तीस दिनों तक दिया जाता है। इन तीस दिनों के बीच सोमवार को उपवास भी रखना पड़ता है । इन बीजों को माहवारी के सात दिनों के बाद से दूध तथा शक्कर के साथ तीस दिनों तक पीने देने से गर्भ ठहर जाता है। गर्भवती महिला को काली मूसली को सूखाकर खाने के लिए देते हैं। ऐसी मान्यता है कि ऐसा करने से बाँझ महिला को भी बच्चे पैदा होने लगते हैं। दस बीजों की दवा लेने के साथ-साथ उसे अपने पति के साथ संसर्ग बनाए रखने की सलाह भी दी जाती है।

परिवार नियोजन के लिये बहला ककोरा वृक्ष कांदा को गुड या शराब के साथ खिलाने से संतान की उत्पत्ति बंद हो जाती है। निरवाज जिसे निरवंशी भी कहते हैं, यह एक छोटा झाड़ होता है। उसकी जड़ एवं पत्तियों को कूटकर छानकर पाउडर बना लेते हैं। जिसे गुड़ के साथ गोली बनाकर स्त्री की माहवारी के सात दिनों बाद से सात दिनों तक लगातार खिलाते हैं। जिससे संतान होना बंद हो जाता है। इसी दवा को पंद्रह दिनों तक पुरुष को भी खानी पड़ती है।

इस प्रकार बैगा जनजाति के लोग महिला को गर्भवती होने से जीवन पर्यंत तक जड़ी-बूटियों द्वारा शारीरिक रोगों से निदान पाते हैं।